

सिम्स लिंक - कवेन्स कवे - चाइल्ड
6 ~, 2444

बी० / १८५

५ / २८

~~फ / ३२५~~



अनुवादचन्द्रिका

अथवा

अनुवाद-व्याकरण-निबन्ध-परिचायिका

प्रणेता
श्रीचक्रधरशर्मा शास्त्री,
एम० ए०, एल० टी०

प्रकाशक
श्रीजगदीशचन्द्र नौटियाल,
नौटियाल-पुस्तक-भण्डार,
२६, सुन्दरबाग, लखनऊ।

प्रथम संस्करण] १९५४ [मूल्य २॥)

प्रकाशक
श्रीजगदीशचन्द्र नौटियाल,
२९ सुन्दर बाग, लखनऊ।

मुद्रक
भृगुराज भार्गव
नव-ज्योति प्रेस
लखनऊ (फोन ३६४

विषय-सूची



ओं नमः परमात्मने

तद्दिव्यमव्ययं धाम सारस्वतमुपास्महे ।
यत्प्रसादात्प्रलीयन्ते मोहान्धतमसच्छटा ॥

प्राक्कथन

रचना का उद्देश्य—भारतीय संस्कृति का स्रोत एवं राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की जननी, संस्कृत भाषा का अध्ययन उसके नियमबद्ध व्याकरण की दुरूहता के कारण कठिन हो गया है। तथापि इस तथ्य को तो सभी देश-विदेशी भाषा-विशारदों ने माना है कि संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यन्त वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित है। निःसन्देह उसके प्राचीन ढङ्ग के अध्ययन तथा अध्यापन से आजकल के सुकुमार बालकों का अपेक्षित बुद्धिविकास नहीं होता और न उन्हें वह रुचिकर ही प्रतीत होता है। इसी कठिनाई को ध्यान में रखते हुए हमने संस्कृत भाषा के अध्ययन एवं अध्यापन को आज कल के वातावरण के अनुकूल सरल तथा सुबोध बनाने का प्रयत्न किया है।

वाक्य-रचना—वाक्य-रचना में भाषा का प्रयोग होता है। भाषा ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा मानव-समाज अपने भाव और विचार दूसरों पर प्रकट करता है। भाषा में वाणी का ही नहीं, अपितु संकेतों का भी समावेश है। लिखने और बोलने में हम भाषा का ही प्रयोग करते हैं; जैसे—संस्कृत भाषा, अङ्गरेजी भाषा, हिन्दी भाषा आदि का।

'संस्कृत भाषा' उस भाषा को कहते हैं, जो संस्कृत अर्थात् शुद्ध एवं परिमार्जित

हो। भाषा वाक्यों से बनती है; वाक्य में अनेक शब्द रहते हैं और प्रत्येक शब्द में ध्वनियाँ* रहती हैं। उदाहरणार्थ—

"चन्द्रगुप्त एक प्रतापी राजा था।" इस वाक्य में पाँच शब्द हैं और प्रत्येक शब्द में पृथक्-पृथक् ध्वनियाँ हैं। 'चन्द्रगुप्त' शब्द में 'च्+अ+न्+द्+र्+अ+ग्+उ+प्+त्+अ' ग्यारह ध्वनियाँ हैं। 'एक' में 'ए+क्+अ' तीन ध्वनियाँ हैं।

यह लिपि, जिसमें हम इन अक्षरों को लिख रहे हैं, 'देवनागरी' कहलाती है। आजकल संस्कृत तथा हिन्दी भाषाएँ इसी लिपि में लिखी जा रही हैं। प्राचीन काल में संस्कृत भाषा ब्राह्मी लिपि में लिखी जाती थी।

स्वर और व्यञ्जन—ये ध्वनियों के दो भेद हैं। स्वर और व्यञ्जन में ध्वनि का अन्तर है। स्वर के बोलने में मुख-द्वार कम या अधिक खुलता है, वह बिलकुल बन्द या इतना संकुचित नहीं किया जाता कि हवा रगड़ खाकर बाहर निकल सके। व्यञ्जन के उच्चारण में मुख-द्वार या तो सहसा खुलता है या इतना संकुचित हो जाता है कि हवा रगड़ खाकर बाहर निकलती है। इसी रगड़ या स्पर्श के कारण व्यञ्जन स्वरों से भिन्न हो जाते हैं। स्वर तीन प्रकार के होते हैं— ह्रस्व, दीर्घ और मिश्रित। दीर्घ स्वर के उच्चारण में ह्रस्व स्वर की अपेक्षा दुगुना समय लगता है। व्यञ्जनों को हल् अक्षर भी कहते हैं, जैसे—क्, ख्, ग् आदि। संस्कृत एवं हिन्दी भाषाओं में इन्हीं अक्षरों (स्वरों एवं व्यञ्जनों) का उपयोग होता है।

स्वर {
अ इ उ ऋ ऌ—ह्रस्व (एक मात्रिक)
आ ई ऊ ॠ—दीर्घ (द्वि मात्रिक)
ए ऐ ओ औ—मिश्रित†

---

*मानव की वाणी के उस छोटे-से-छोटे अंश को ध्वनि कहते हैं, जिसके टुकड़े न किये जा सकें। ध्वनि के उस छोटे से लिखित अंश को ही वर्ण अथवा अक्षर कहते हैं।

†मिश्रित स्वर विकृत और दीर्घ हैं, जैसे—अ+इ=ए।

व्यञ्जन	(कु)	क	ख	ग	घ	ङ—कवर्ग	स्पर्श*
	(चु)	च	छ	ज	झ	ञ—चवर्ग	
	(टु)	ट	ठ	ड	ढ	ण—टवर्ग	
	(तु)	त	थ	द	ध	न—तवर्ग	
	(पु)	प	फ	ब	भ	म—पवर्ग	
			य	र	ल	व—अन्तःस्थ	
			श	ष	स	ह—ऊष्म	

ं अनुस्वार
ँ अनुनासिक
: विसर्ग

२५ वर्ण--क से लेकर म तक—स्पर्श कहलाते हैं। ४ वर्ण--य र ल व—अन्तःस्थ हैं, अर्थात् इनके उच्चारण करने में भीतर से कुछ अधिक बल से साँस लानी पड़ती है। पाँचों वर्गों के प्रथम और द्वितीय अक्षर (क ख, च छ आदि) तथा ऊष्म वर्णों को 'परुष व्यञ्जन' और शेष वर्णों (ग घ आदि) को 'कोमल-व्यञ्जन' कहते हैं। व्यञ्जनों के दो और प्रकार हैं—अल्पप्राण तथा महाप्राण। पाँचों वर्गों के पहले और तीसरे वर्ण (क ग, च ज आदि) अल्पप्राण हैं तथा दूसरे और चौथे वर्ण (ख घ, छ झ आदि) महाप्राण हैं। वर्गों के पञ्चम वर्ण (ङ् ञ् ण् न् म्) अनुनासिक व्यञ्जन कहलाते हैं। ध्वनि के विचार से वर्णों के कण्ठ आदि स्थान हैं।*

---

*व्यञ्जन के उच्चारण में मुख के किसी न किसी भाग का दूसरे भाग से कुछ न कुछ स्पर्श अवश्य होता है; जैसे च् के उच्चारण में जिह्वा का तालु से तथा त् के उच्चारण में जिह्वा का दाँतों से स्पर्श होता है।

*ध्वनि के विचार से वर्णों का स्थान—अ आ : ह क् ख् ग् घ् ङ् (कण्ठ)
इ ई य् श् च् छ् ज् झ् ञ् (तालु)
ऋ ॠ र् ष् ट् ठ् ड ढ् ण् (मूर्धा)
लृ ल् स् त् थ् द् ध् न् (दन्त)
उ ऊ ⌣प ⌣फ प् फ् ब् भ् म् (ओष्ठ)
ए ऐ (कण्ठ तालु), ओ औ (कण्ठ ओष्ठ)
व् (दन्त ओष्ठ), अनुस्वार (नासिका)
ङ् आदि का स्थान (कण्ठ नासिका आदि)

अनुवाद—किसी भाषा के शब्दार्थ को दूसरी भाषा के शब्दों में बदलने को अनुवाद कहते हैं।

[अनु=पश्चात्, वद्=वाद=कहना; एक बात को फिर से कहना यानी एक बात को अन्य शब्दों में बदल करके कहना। इस यौगिक अर्थ के अनुसार अनुवाद एक भाषा से उसी भाषा में भी हो सकता है, परन्तु लोक व्यवहार में अनुवाद शब्द का योगरूढ़ अर्थ ही प्रसिद्ध है, अर्थात् 'एक भाषा को दूसरी भाषा में बदलना'।]

संज्ञा क्रिया

अनुवाद-प्रणाली के वर्णन करने से पूर्व वाक्य में जो सुबन्त, तिङन्त आदि शब्द रहते हैं उनका विवेचन करना तथा कारकों पर प्रकाश डालना यहाँ पर उचित होगा।

कारक (कर्त्ता, कर्म आदि)—"गोपाल पुस्तक पढ़ता है।" इस वाक्य में पढ़नेवाला 'गोपाल' है। "राम ने रावण को मारा।" इस वाक्य में मारनेवाला 'राम' है। 'पढ़ना' और 'मारना' ये दो क्रियाएँ हैं। इन क्रियाओं के करने वाले 'गोपाल' और 'राम' हैं। क्रिया के करनेवाले को कर्त्ता कहते हैं। अतः इन दो वाक्यों में 'गोपाल' और 'राम' कर्त्ता हैं।

प्रथम वाक्य में पढ़ने का विषय 'पुस्तक' है और द्वितीय में मारने का विषय 'रावण' है। पुस्तक और रावण के लिए ही कर्त्ताओं ने क्रियाएँ कीं, अतः मुख्यतः जिस चीज के लिए कर्त्ता क्रिया को करता है, उसको कर्म कहते हैं।

'राजा ने अपने हाथ से ब्राह्मणों को दान दिया।' इस वाक्य म दान क्रिया की पूर्ति हाथ से हुई, अतः हाथ करण हुआ। इसी वाक्य में दान की क्रिया 'ब्राह्मणों' के लिए हुई, अतः 'ब्राह्मण' सम्प्रदान हुआ।

"आम के वृक्षों से भूमि पर फल गिरे।" इस वाक्य में वृक्षों से फल पृथक् हुए, अतः 'वृक्ष' अपादान हुआ। फल भूमि पर गिरे, अतः 'भूमि, अधिकरण हुई। आम का सम्बन्ध वृक्षों से है, अतः 'आम' सम्बन्ध हुआ।

उपरिलिखित चार वाक्यों में 'पढ़ना' 'मारना' 'देना' और 'गिरना' क्रियाओं के सम्पादन में जिन कर्त्ता, कर्म आदि शब्दों का उपयोग हुआ है उन्हें कारक कहते हैं।

कारक वह वस्तु है जिसका उपयोग क्रिया की पूर्ति के लिए किया जाता है। अनेक वैयाकरणों ने सम्बन्ध को भी कारक माना है।†

कारकों को जोड़ने के लिये जो 'ने' 'को' आदि चिह्न काम में आते हैं उन्हें 'विभक्ति' (कारक-चिह्न) कहते हैं।

विभक्तियाँ (Case-signs)	कारक (Cases)	अर्थ (Meanings)
प्रथमा	कर्त्ता (Nominative)	(वह वस्तु), ने
द्वितीया	कर्म (Accusative)	को
तृतीया	करण (Instrumental)	ने, से, द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान (Dative)	को, के, लिए
पञ्चमी	अपादान (Ablative)	से *
षष्ठी	सम्बन्ध (Genitive)	का, के, की
सप्तमी	अधिकरण (Locative)	में, पर
सम्बोधन	सम्बोधन (Vocative)	हे, अये, भोः

इन प्रथमा आदि विभक्तियों से कारकों का ही निर्देश नहीं होता, अपितु ये विभक्तियाँ वाक्य में प्रति, विना, अन्तरेण, अन्तरा, ऋते, सह, साकम् आदि साथ निपातों के योग से भी 'नाम' से परे प्रयुक्त होती हैं। इनके साथ-साथ नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् आदि अव्ययों के योग से भी व्यवहृत होती हैं। ऐसी दशा में इन्हें "उपपद विभक्तियाँ" कहते हैं।

कारकों के समझने के लिए छात्रों को अन्य भाषाओं का सहारा न लेना चाहिए। उन्हें कारकों के ज्ञान अथवा शुद्ध संस्कृत भाषा के बोध के लिए संस्कृत

---

†कर्तृवाच्यप्रयोगे तु प्रथमा कर्तृकारके। द्वितीयान्तं भवेत् कर्म कर्त्रधीनं क्रियापदम। कर्त्ता कर्म च संप्रदानं तथैव च करणं च। अपादानाधिकरणे इत्याहुः कारकाणि षट्॥

*जब पृथक् होने या हटने का ज्ञान हो तब अपादान (पञ्चमी) होता है और जब संज्ञा से क्रिया के साधन (जरिया) का ज्ञान हो तब करण (तृतीया) होता है।

साहित्य का परिशीलन करना चाहिए। कहाँ कौन सा कारक है इसका ज्ञान शिष्टों अथवा प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकारों के व्यवहार से ही हो सकता है, क्योंकि "विवक्षातः कारकाणि भवन्ति। लौकिकी चेह विवक्षा न प्रायोक्त्री।"

संस्कृत के व्याकरण में सुबन्त और तिङन्त के रूपों का प्रतिपादन किया गया है। छात्रों को ये कठिन और शुष्क प्रतीत होते हैं। अतः सुबन्त और तिङन्त के समस्त रूपों का याद कर लेना सुगम नहीं है। अतः हमने आचार्य पाणिनि के नियमों के आधार पर छात्रों के लिए वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित ढङ्ग पर विषय का प्रतिपादन किया है।

नाम या सुबन्त शब्दों के साथ सात विभक्तियों के तीन वचनों में २१ प्रत्यय लगते हैं। उन विभक्तियों के साधारण ज्ञान प्राप्त करने के लिए हम यहाँ पर 'सरित्' शब्द के रूप में दे रहे हैं। इनमें प्रायः सब प्रत्यय (सु को छोड़कर) अपने रूपों में स्पष्ट हैं।

सरित् (नदी)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	सरित्	सरितौ	सरितः
द्वि०	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृ०	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
च०	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पं०	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
ष०	सरितः	सरितोः	सरिताम्
स०	सरिति	सरितोः	सरित्सु
सं०	हे सरित्	हे सरितौ	हे सरितः

सुबन्त के २१ प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	स् (सु)	औ	अस् (जस्)
द्वि०	अम्	औ (औट्)	अस् (शस्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
तृ०	आ (टा)	भ्याम्	भिस्
च०	ए (ङे)	भ्याम्	भ्यस्
पं०	अस् (ङसि)	भ्याम्	भ्यस्
ष०	अस् (ङस्)	ओस्	आम्
स०	इ (ङि)	ओस्	सु (सुप्)

विकारी तथा अविकारी शब्द—ऊपर कहा जा चुका है कि वाक्य में अनेक शब्द रहते हैं; यथा—(१) "छात्रः सदा पुस्तकं पठति (विद्यार्थी हमेशा पुस्तक पढ़ता है।)" इसी वाक्य को इस ढंग से भी कह सकते हैं—

(२) छात्रः सदा पुस्तकानि पठति (विद्यार्थी हमेशा पुस्तकें पढ़ता है।)

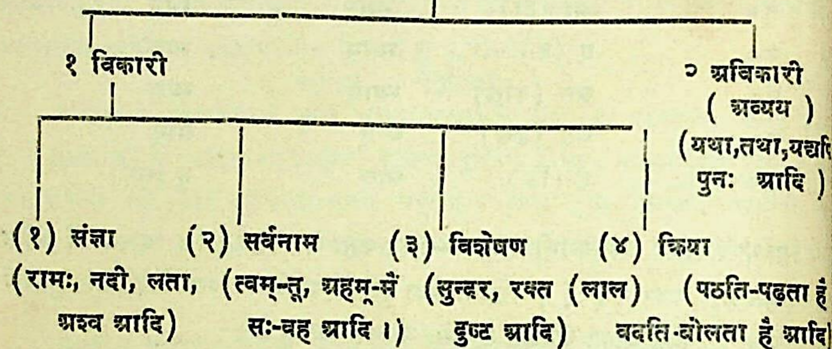
(३) छात्राः सदा पुस्तकानि पठन्ति (विद्यार्थी हमेशा पुस्तकें पढ़ते हैं।)

इन वाक्यों को देखने से ज्ञात होता है कि शब्दों में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनके रूप हमेशा एक से रहते हैं, जैसे इन वाक्यों में 'सदा' शब्द है। कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके रूपों में परिवर्तन हो जाता है, जैसे—छात्रः, पुस्तकम्, पठति के रूपों में परिवर्तन हो गया है; अतः यह निष्कर्ष निकला कि—

जिन शब्दों के रूपों में किसी भी दशा में परिवर्तन या विकार नहीं होता वे अव्यय कहलाते हैं, जैसे ऊपर के वाक्य में 'सदा' शब्द है; और जिन शब्दों के रूपों में परिवर्तन हो जाता है वे विकारी शब्द कहलाते हैं।

विकारी शब्द अनेक प्रकार के होते हैं, उदाहरणार्थ—

"राष्ट्रपतिः तुभ्यं सुन्दरं पारितोषिकम् अददात् (राष्ट्रपतिने तुम्हे सुन्दर इनाम दिया)।" इस वाक्य में 'राष्ट्रपति' शब्द संज्ञा या नाम है; तुभ्यम् (तुझे) संज्ञा के स्थान पर आया है, अतः सर्वनाम है; सुन्दरम् शब्द पारितोषिक (इनाम) की विशेषता बतलाता है, अतः विशेषण है; अददात् (दिया) किसी कार्य का करना है, अतः क्रिया है।



(रामः, नदी, लता, अश्व आदि) (त्वम्-तू, अहम्-मैं सः-वह आदि।) (सुन्दर, रक्त (लाल) दुष्ट आदि) (पठति-पढ़ता है वदति-बोलता है आदि)

वाक्य-रचना—"नलः दमयन्तीम् परिणिनाय (नल ने दमयन्ती से विवाह किया।)" इस वाक्य में पहले कर्त्ता (नलः), फिर कर्म (दमयन्तीम्) और अन्त में क्रिया (परिणिनाय) आया है। अतः संस्कृत के वाक्यों का क्रम भी राष्ट्रभाषा हिन्दी के समान ही है—पहले कर्त्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रिया। परन्तु हम ऊपर लिख आये हैं कि संस्कृत में विकारी शब्द अधिक हैं और अविकारी कम, अतः हम इन्हीं वाक्यों को इस प्रकार भी लिख सकते हैं—

दमयन्तीं नलः परिणिनाय।
परिणिनाय दमयन्तीं नलः, अथवा
परिणिनाय नलः दमयन्तीम्।

इन वाक्यों में शब्दों का क्रम चाहे जैसा भी हो, 'नल' कर्त्ता, 'दमयन्तीम्' कर्म और 'परिणिनाय' क्रिया ही रहता है। कारण, इन शब्दों में सुप् विभक्ति अथवा तिङ् विभक्ति रहती है, अतः इनके स्थान परिवर्तन करने से भी ये विभक्ति-चिह्नों द्वारा झट पहिचाने जाते हैं। यह क्रम अँगरेजी आदि अविकारी भाषाओं में नहीं पाया जाता। हिन्दी में भी अँगरेजी के समान क्रिया का स्थान निश्चित रहता है। हिन्दी में क्रिया वाक्य के अन्त में आती है, किन्तु अँगरेजी में क्रिया कर्ता और कर्म के बीच में। संस्कृत में अधिकांश शब्दों के विकारी होने के कारण कर्त्ता, कर्म, क्रिया आगे-पीछे भी आ सकती हैं, और यह संस्कृत की अपनी विशेषता है।

अब इस वाक्य को देखिए—

धर्मज्ञो नलः सर्वगुणालङ्कृतां दमयन्तीम् विधिना परिणिनाय। (धर्मात्मा नल ने सब गुणों से सम्पन्न दमयन्ती से विधिपूर्वक विवाह किया।)

इस वाक्य में 'धर्मज्ञ' नल संज्ञा का विशेषण है और 'विधिना' 'परिणिनाय' क्रिया का विशेषण, अतः जिन शब्दों को ये विशिष्टता बतलाते हैं, उनके पूर्व ही इनका मुख्यतः प्रयोग होता है अर्थात् संज्ञा शब्द का विशेषण उसके पूर्व और क्रिया-विशेषण क्रिया के पूर्व आता है, किन्तु कभी-कभी आगे पीछे भी इनका प्रयोग हो सकता है, जैसे—

नलः सर्वगुणालङ्कृतां विधिना परिणिनाय दमयन्तीम्।
नलः सर्वगुणालङ्कृतां दमयन्तीं परिणिनाय विधिना।

लिंग और वचन

उक्त वाक्यों में 'नलः' एक ऐसा नाम है जिससे पुरुष जातिका बोध होता है, अतः यह शब्द पुँल्लिङ्ग है।

'दमयन्ती' शब्द से स्त्री जाति का बोध होता है, अतः यह स्त्रीलिङ्ग शब्द है।

छात्रः पुस्तकानि क्रीणाति (विद्यार्थी पुस्तकें खरीदता है।)' इस वाक्य म 'पुस्तकानि' शब्द से न तो पुरुष जाति का बोध होता है और न स्त्री जाति का, इसस यह शब्द नपुंसक लिङ्ग है।

संस्कृत में लिङ्ग - ज्ञान कोष की सहायता अथवा साहित्य के पारायण से ही होता है। व्याकरण के नियमों का लिङ्ग-निर्धारण में अधिक उपयोग नहीं किया जा सकता।

संस्कृत में एक ही व्यक्ति या वस्तु के वाचक शब्द भिन्न-भिन्न लिङ्गों के हैं, यथा-तटः, तटी, तटम्—(तीनों का अर्थ किनारा है।) इसी प्रकार परिग्रहः, भार्या, कलत्रम् (तीनों का अर्थ पत्नी है।) इसी भाँति सङ्गरः, आजिः, युद्धम् (तीनों का अर्थ युद्ध है।)

कभी-कभी एक ही शब्द का कुछ थोड़े से अर्थ भेद के कारण भिन्न भिन्न लिङ्ग में प्रयोग होता है, यथा-सरस्वत् (पुंल्लिङ्ग) का अर्थ है समुद्र, किन्तु सरस्वती (स्त्रीलिङ्ग) का अर्थ है एक नदी। इसी प्रकार सरस् (नपुं०) का अर्थ है तालाब या छोटी झील किन्तु सरसी (स्त्री लिं०) का अर्थ है एक बड़ी झील। कृत् प्रत्यय भी लिङ्ग-ज्ञान में सहायक होते हैं, किन्तु पूर्ण ज्ञान तो पाणीनीय के लिङ्गानुशासन से ही हो सकता है।

इन्हीं वाक्यों में 'नलः' या 'छात्रः' से एक संख्या का बोध होता है, अतः ये शब्द एक वचन हैं और 'पुस्तकानि' (पुस्तकें) से बहुतसी पुस्तकों का ज्ञान होता है अतः यह शब्द बहुवचन है। संस्कृत में द्विवचन भी होता है जैसे---छात्रः पुस्तके अक्रीणात् (छात्र ने दो पुस्तकें खरीदीं)। इस वाक्य में 'पुस्तकें' द्विवचन है।

संस्कृत भाषा में श्रोत्र, चक्षुस्, कर, बाहु, स्तन, चरण आदि शब्द द्विवचन में ही प्रयुक्त होते हैं, यथा---ममाक्षिणी दुःख्यतः (मेरी आँखें दुखती हैं), श्रान्तायास्तस्याश्चरणौ न प्रसरतः (उस थकी हुई के पाँव आगे नहीं बढ़ते)। संस्कृत में अपने लिए बहुवचन का ही प्रयोग होता है, यथा---वयमिह परितुष्टाः वल्कलैस्त्वं दुकूलैः' (भर्तृहरि) (मुझे छाल पहन कर ही सन्तोष है और तुझे महीन वस्त्र से।)

संस्कृत में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका बहुवचन में ही प्रयोग होता है, यथा दार (पत्नी) पुं०, अक्षत (पूजार्ह अटूट चावल) पुं०, लाज (खील) पुं०। इसी प्रकार अप् (जल) सुमनस् (फूल), वर्षा, अप्सरस् (अप्सराएँ), सिकता (रेत) समा (वर्ष), जलौकस् (जोंक) इन स्त्रीलिंग शब्दों का बहुवचन में ही प्रयोग होता है। गृह (पुं०), पांसु (धूलि) पुं०, धाना (भुने जौ) स्त्री०, सक्तु, असु (प्राण), प्रजा, प्रकृति (मन्त्रिगण, या प्रजावर्ग) कश्मीर शब्द बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं। जब क्रिया से कोई वचन सूचित न हो तब एक वचन ही प्रयुक्त होता है, यथा---इदं ते कर्त्तव्यम्

सर्वनाम शब्द---बात चीत करने में एक व्यक्ति वह होता है जो बातचीत करता है ; दूसरा वह होता है जिससे बात चीत की जाती है और तीसरा (चेतन

अथवा अचेतन) वह होता है जिसके विषय में बात चीत की जाती है। बोलनेवाला उत्तम पुरुष, जिससे बातचीत की जाती है मध्यम पुरुष और जिसके विषय में बातचीत की जाती है प्रथम पुरुष या अन्य पुरुष कहलाता है।

	(१) उत्तम पुरुष	(२) मध्यम पुरुष		(३) प्रथम पुरुष
एक वचन	अहम् (मैं)	त्वम् (तू)	पुं०	सः (वह) सा (वह) तत्
द्वि वचन	आवाम् (हमदो)	युवाम् (तुमदो)	स्त्री०	तौ (वेदो) ते (वेदो) ते
बहु वचन	वयम् (हम)	यूयम् (तुम)	नपुं०	ते (वे) ताः (वे) तानि

युष्मद् और अस्मद् को छोड़ कर सर्वनाम तीनों लिङ्गों में विशेष्य के अनुसार होता है।

संख्यावाचक शब्द—एक, द्वि आदि तथा पूरण (प्रथम, द्वितीय आदि) विशेषण होते हैं, किन्तु सामूहिक वाचक द्वय, त्रय आदि संज्ञाएँ हैं, अतः उनका प्रयोग विशेषण के रूप में न होकर संज्ञा के रूप में होता है, यथा—पुस्तकयो द्वंयम्, पुस्तकानां त्रयम् आदि।

एक शब्द केवल एक वचन में होता है, द्वि शब्द केवल द्विवचन में और त्रि से लेकर अष्टादशन् तक शब्दों का केवल बहुवचन में ही प्रयोग होता है। 'एक' से 'चतुर्' तक शब्दों का लिङ्ग विशेष्य के अनुसार होता है; यथा—चत्वारः मानवाः, चतस्रः स्त्रियः चत्वारि फलानि आदि। इनके बाद लिङ्ग का भेद नहीं होता ; यथा—पञ्च मानवाः, पञ्च स्त्रियः, विंशतिः मानवाः, विंशतिः स्त्रियः।

एकोन विंशति से नव विंशति तक समस्त शब्द एकवचनान्त स्त्री लिङ्ग हैं। इनके रूप एक वचन में ही चलते हैं। इकारान्त विंशति, षष्टि, सप्तति, अशीति नवति तथा जिनके अन्त में ये शब्द हों उनके रूप मति शब्द के समान होते हैं। तकारान्त त्रिंशत्, चत्वारिंशत् के रूप सरित् शब्द की भाँति होते हैं। शतम्, सहस्रम्, अयुतम्, लक्षम्, नियुतम् आदि शब्द सदैव एकवचनान्त नपुंसक हैं।

संख्या वाचक शब्दों के सम्बन्ध में एक बात स्मरणीय है कि उनका अन्य सुबन्तों के साथ समास नहीं हो सकता, यथा—विंशतिर्नार्यः शुद्ध है, किन्तु विंशति-

नार्यः अशुद्ध है। इसी प्रकार शतं पुरुषा शुद्ध है किन्तु 'शतपुरुषाः' यह समस्त श अशुद्ध है। इसी भाँति सप्तसप्ततिर्नार्यः के स्थान पर सप्तसप्ततिनार्यः अशुद्ध पञ्चाशतं फलानि क्रीणाति शुद्ध है, किन्तु पञ्चाशत् फलानि अशुद्ध है। हम सकते हैं कि शतस्य पुस्तकानां कियन्मूल्यम्, किन्तु शतपुस्तकानां कियन्मूल्यम् प्रयोग अशुद्ध है। चत्वारिंशता कर्मकरैः परिखां खानयति शुद्ध है, किन्तु चत्वारिं कर्मकरैः परिखां खानयति यह अशुद्ध प्रयोग है। यदि समास से संज्ञा का बोध हो हो तो संख्या शब्द के साथ समास हो सकता है, यथा पञ्चाम्राः, सप्तर्षयः आदि।

तिङन्त पद (क्रिया)—"छात्रः पठति, बालकाः क्रीडन्ति" इन दो वाक्यों देखने से ज्ञात होता है कि संस्कृत में तिङन्त क्रिया का लिङ्ग नहीं होता; चाहे क पुँल्लिङ्ग हो या स्त्रीलिङ्ग, या नपुंसकलिङ्ग किन्तु क्रिया एक सी रहती है, यथा- बालकः क्रीडति, बालिका क्रीडति (बालक या बालिका खेलती है); बा अपठत्, बालिका अपठत् (लड़का पढ़ा, लड़की पढ़ी)। राष्ट्रभाषा हिन्दी में क्रिया के रूप कर्तृवाच्य में कर्त्ता के अनुसार तथा कर्मवाच्य में कर्म के अनुसार पुँल्लि एवं स्त्रीलिङ्ग में बदल जाते हैं। जैसे लड़का पढ़ता है, लड़की पढ़ती है आदि

क्रिया के विना कोई वाक्य नहीं हो सकता और प्रत्येक वाक्य में एक क्रि होती है (एकतिङ् वाक्यम्)। संस्कृत भाषा में लगभग २००० धातुएँ हैं और वे गणों (समूहों)* में बँटी हैं। इनकी जटिलता इस कारण बढ़ गयी है कि इन प्रयोग तभी किया जा सकता है जब दस गणों का ज्ञान हो और फिर प्रत्येक गण में धातुएँ, परस्मैपद, आत्मनेपद और उभयपद में विभक्त हैं। पचति, पचते भ्वादिगणी हैं और हन्ति अदादिगणीय, इनके रूप दोनों पदों में अलग-अलग चलते हैं। इ धातुओं के मूल रूप पठति, अपठत् चलते हैं और इन्हीं के प्रत्ययान्त रूप भी च हैं, जैसे णिजन्त में पाठयति (पढ़ाता है) और सन्नन्त में पिपठिषति (पढ़ने की इ करता है) आदि रूप चलते हैं।

---

*दस गण ये हैं—(१) भ्वादि, (२) अदादि, (३) जुहोत्यादि, (४) दिवा (५) स्वादि, (६) तुदादि, (७) रुधादि, (८) तनादि (९) क्र्यादि (१०) चुरादि।

इन धातुओं के तीन वाच्य होते हैं—कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य तथा भाववाच्य। भाववाच्य तभी होता है जब क्रिया अकर्मक हो। भाववाच्य में कर्त्ता तृतीयान्त होता है और क्रिया केवल प्रथम पुरुष के एकवचन में प्रयुक्त होती है।

उदाहरणार्थ—कर्तृ वाच्य—सेवकः ग्रामं गच्छति (नौकर गाँव जाता है।)

कर्मवाच्य—मया पुस्तकं पठ्यते (मुझसे पुस्तक पढ़ी जाती है।)

भाववाच्य—मनुष्यैर्म्रियते (मनुष्यों से मरा जाता है।)

संस्कृत भाषा में १० लकार क्रियासूचक तथा आज्ञादि सूचक दोनों प्रकार के हैं। इन में से लोट् एवं विधिलिङ् आज्ञा, अनुज्ञा विधान आदि अर्थों में प्रयुक्त होते हैं, यथा-गोपालः पठतु, पठेत् वा (गोपाल पढ़े); आशीर्लिङ् आशीर्वाद के अर्थ में प्रयुक्त होता है, यथा-गोपालः पठ्यात् (गोपाल पढ़े।) लोट् भी आशीर्वाद के अर्थ में आता है। लृङ् लकार हेतुहेतुमद्भाव (जहाँ एक क्रिया के होने पर दूसरी क्रिया हो) के अर्थ में आता है, यथा-यदि त्वमपठिष्यः तदावश्यम् परीक्षायाम् उत्तीर्णोऽभविष्यः (यदि तुम पढ़ते तो अवश्य परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते।) इन चार लकारों के अतिरिक्त शेष लकार काल सूचक हैं। लट् वर्तमान काल में होता है, यथा—देवः पठति (देव पढ़ता है)। तीन लकार* भूतकाल सूचक हैं—लुङ्, (सामान्य भूत), लङ् (अनद्यतन भूत) और लिट् (परोक्ष भूत) में आता है। (लेट् लकार का प्रयोग केवल वैदिक भाषा में ही होता है। अतः लौकिक संस्कृत में उसे छोड़ दिया गया है।)

---

* संस्कृत व्याकरण में इन तीनों लकारों में अन्तर किया गया है। लुङ् सामान्य भूत में आता है अर्थात् सब प्रकार के भूतकाल में। लङ् लकार अनद्यतन भूत में, अर्थात् जो बात आज से पहले की हो प्रयुक्त होता है, अतः शुद्ध व्याकरण की दृष्टि से 'अहमद्य पुस्तकमपठम्' (मैंने आज पुस्तक पढ़ी) अशुद्ध है। ऐसे स्थल पर लुङ् का प्रयोग होना चाहिए (अपाठिषम्)। लिट् का प्रयोग परोक्ष (जो आँख के सामने न हो) ऐतिहासिक बात के लिए होता है, यथा—रामः रावणं जघान (राम ने रावण मारा।)

क्रिया के दस काल इस प्रकार हैं:—

(१)	वर्तमानकाल—	लट्	(Present tense)
(२)	अनद्यतनभूत—	लङ्	(Past imperfet tense)
(३)	सामान्यभूत—	लुङ्	(Aorist)
(४)	परोक्षभूत—	लिट्	(Past perfect tense)
(५)	सामान्यभविष्य—	लृट्	(Simple Future)
(६)	अनद्यतनभविष्य—	लुट्	(Future)
(७)	आज्ञा—	लोट्	(Imperative mood)
(८)	विधि—	विधिलिङ्	(Potential mood)
(९)	आशीः—	आशीर्लिङ्	(Benedictive)
(१०)	क्रियातिपत्ति—	लृङ्	(Conditional)

क्रियाओं की क्लिष्टता के कारण छात्र ही नहीं, अपितु कुछ अध्यापक भी तिङ क्रिया के स्थान पर कृदन्त प्रयोग करते हैं, यथा 'सेवकः ग्रामं गतः (गतवान्)' अर्थ होगा—'सेवक गाँव को गया हुआ या जा चुका है।' सेवक गाँव को गया अनुवाद 'सेवकः ग्रामम् अगच्छत्' ही होगा। इसी प्रकार कुछ क्लिष्टतर क्रियाओं बचने के उद्देश्य से मुख्य क्रिया को कहनेवाली धातु से व्युत्पन्न (कृदन्त) द्वितीया शब्द के साथ तिङन्त कृ का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ—वे 'लज्जते' के स्थान प लज्जां करोति, 'बिभेति' के स्थान पर भयं करोति लिखते हैं। परन्तु ऐसे प्रयो अशुद्ध हैं और त्याज्य हैं। कारण, 'लज्जां करोति' का अर्थ 'लज्जा करता और 'भयं करोति' का अर्थ 'भय पैदा करता है' ही है। इनके शुद्ध प्रयोग हैं- 'लज्जामनुभवति' तथा 'भयमनुभवति'।

विहङ्गम दृष्टि से धातुओं के रूप

(परस्मैपदी) अस्—होना

वर्तमान काल (लट् लकार)

	एकवचन		द्विवचन		बहुवचन	
प्रथम पुरुष	अस्ति	(वह है)	स्तः	(वे दो हैं)	सन्ति	(वे है
मध्यम पुरुष	असि	(तू है)	स्थः	(तुम दो हो)	स्थ	(तुम हो
उत्तम पुरुष	अस्मि	(मैं हूँ)	स्वः	(हम दो हैं)	स्मः	(हम हैं

भूत := कल (जाने वाला) सफा २० प्र० नं. २ सफा ३८ में (लुट्)

श्वः = कल (बीता हुआ) लोङ् = अनद्यतन

प्र० नं. ६ सफा २६ आज का प्रयोग लोङ् में होगा

प्रत्यय

	एकव०		द्विव०		बहुव०	
प्र० पु०	(सः)	ति	(तौ)	तः	(ते)	अन्ति
म० पु०	(त्वम्)	सि	(युवाम्)	थः	(यूयम्)	थ
उ० पु०	(अहम्)	मि	(आवाम्)	वः	(वयम्)	मः

आज से पहिले अनद्यतन भूतकाल (लङ् लकार) कई दिन हो गया है

प्र० पु०	आसीत्	(वह था)	आस्ताम्	(वे दो थे)	आसन्	(वे थे)
म० पु०	आसीः	(तू था)	आस्तम्	(तुम दो थे)	आस्त	(तुम थे)
उ० पु०	आसम्	(मैं था)	आस्व	(हम दो थे)	आस्म	(हम थे)

प्रत्यय

प्र० पु०	(सः)	त्	(तौ)	ताम्	(ते)	अन्
म० पु०	(त्वम्)	:	(युवाम्)	तम्	(यूयम्)	त
उ० पु०	(अहम्)	अम्	(आवाम्)	व	(वयम्)	म

परस्मैपद पठ् (पढ़ना) पढ़ता है प्र.पु.एक व

वर्तमान (लट्) — क्रिया का संक्षिप्तरूप

एक वचन	द्विवचन	बहुवचन		एक वचन	द्विवचन	बहुवचन
पठति	पठतः	पठन्ति	प्र० पु०	अति	अतः	अन्ति
पठसि	पठथः	पठथ	म० पु०	असि	अथः	अथ
पठामि	पठावः	पठामः	उ० पु०	आमि	आवः	आमः

पढ़ा अनद्यतन भूत (लङ्) भूत (पढ़ा) (क्रिया का संक्षिप्त रूप) उसने पढ़ा

अपठत्	अपठताम्	अपठन् ता	प्र० पु०	अत्	अताम्	अन्
अपठः	अपठतम्	अपठत थां	म० पु०	अः	अतम्	अत
अपठम्	अपठाव	अपठाम	उ० पु०	अम्	आव	आम

सामान्य भूत (लुङ्) पढ़ा (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

अपाठीत्	अपाठिष्टाम्	अपाठिषुः	प्र० पु०	आईत्	आइष्टाम्	आइषुः
अपाठीः	अपाठिष्टम्	अपाठिष्ट	म० पु०	आईः	आइष्टम्	आइष्ट
अपाठिषम्	अपाठिष्व	अपाठिष्म	उ० पु०	आइषम्	आइष्व	आइष्म

आज के साथ लुङ का प्रयोग। सफा ३६ में प्रश्न नं. ३

परोक्ष भूत (लिट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

एक वचन	द्वि वचन	बहु वचन		एक वचन	द्वि वचन	बहु वचन
पपाठ	पेठतुः	पेठुः	प्र० पु०	अ	अतुः	उः
पेठिथ	पेठथुः	पेठ	म० पु०	इथ	अथुः	अ
पपाठ / पपठ	पेठिव	पेठिम	उ० पु०	अ	इव	इम

सामान्य भविष्य (लृट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति	प्र० पु०	(इ) स्यति	(इ) स्यतः	(इ) स्यन्ति
पठिष्यसि	पठिष्यथः	पठिष्यथ	म० पु०	(इ) स्यसि	(इ) स्यथः	(इ) स्यथ
पठिष्यामि	पठिष्यावः	पठिष्यामः	उ० पु०	(इ) स्यामि	(इ) स्यावः	(इ) स्यामः

अनद्यतन भविष्य लुट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

पठिता	पठितारौ	पठितारः	प्र० पु०	(इ) ता	(इ) तारौ	(इ) तारः
पठितासि	पठितास्थः	पठितास्थ	म० पु०	(इ) तासि	(इ) तास्थः	(इ) तास्थ
पठितास्मि	पठितास्वः	पठितास्मः	उ० पु०	(इ) तास्मि	(इ) तास्वः	(इ) तास्मः

आज्ञा (लोट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

पठतु	पठताम्	पठन्तु	प्र० पु०	अतु	अताम्	अन्तु
पठ	पठतम्	पठत	म० पु०	अ	अतम्	अत
पठानि	पठाव	पठाम	उ० पु०	आनि	आव	आम

अनुज्ञा, आज्ञा (विधि लिङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

पठेत्	पठेताम्	पठेयुः	प्र० पु०	एत्	एताम्	एयुः
पठेः	पठेतम्	पठेत	म० पु०	एः	एतम्	एत
पठेयम्	पठेव	पठेम	उ० पु०	एयम्	एव	एम

आशीर्वा (आशीर्लिङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

पठ्यात्	पठ्यास्ताम्	पठ्यासुः	प्र० पु०	यात्	यास्ताम्	यासुः
पठ्याः	पठ्यास्तम्	पठ्यास्त	म० पु०	याः	यास्तम्	यास्त
पठ्यासम्	पठ्यास्व	पठ्यास्म	उ० पु०	यासम्	यास्व	यास्म

अनद्यतनभूत की तरह चलता है

हेतु-हेतुमद्भाव (लृङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

अपठिष्यत्	अपठिष्यताम्	अपठिष्यन्	प्र० पु०	(इ) स्यत्	(इ) स्तताम्	(इ) स्यन्
अपठिष्यः	अपठिष्यतम्	अपठिष्यत	म० पु०	(इ) स्यः	(इ) स्यतम्	(इ) स्यत
अपठिष्यम्	अपठिष्याव	अपठिष्याम	उ० पु०	(इ) स्यम्	(इ) स्याव	(इ) स्याम

त्यय

प्रानन्द प्र= आत्मनेपद—मुद (प्रसन्न होना) अकर्मक क्रियायें होता है

वर्तमान (लट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन		एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
मोदते	मोदेते	मोदन्ते	प्र० पु०	अते	एते	अन्ते
मोदसे	मोदेथे	मोदध्वे	म० पु०	असे	एथे	अध्वे
मोदे	मोदावहे	मोदामहे	उ० पु०	ए	आवहे	आमहे

अनद्यतन भूत (लङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

अमोदत	अमोदेताम्	अमोदन्त	प्र० पु०	अत	एताम्	अन्त
अमोदथाः	अमोदेथाम्	अमोदध्वम्	म० पु०	अथाः	एथाम्	अध्वम्
अमोदे	अमोदावहि	अमोदामहि	उ० पु०	ए	आवहि	आमहि

सामान्य भूत (लुङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

अमोदिष्ट	अमोदिषाताम्	अमोदिषत	प्र०पु०	(इ) स्त	(इ) साताम्	(इ) सत
अमोदिष्ठाः	अमोदिषाथाम्	अमोदिध्वम्	म०पु०	(इ) स्थाः	(इ) साथाम्	(इ) ध्वम्
अमोदिषि	अमोदिष्वहि	अमोदिष्महि	उ०पु०	(इ) सि	(इ) स्वहि	(इ) स्महि

परोक्ष भूत (लिट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मुमुदे	मुमुदाते	मुमुदिरे	प्र० पु०	ए	आते	इरे
मुमुदिषे	मुमुदाथे	मुमुदिध्वे	म० पु०	इषे	आथे	इध्वे
मुमुदे	मुमुदिवहे	मुमुदिमहे	उ० पु०	ए	इवहे	इमहे

सामान्य भविष्यत् (लृट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मोदिष्यते	मोदिष्येते	मोदिष्यन्ते	प्र०पु०	(इ) स्यते	(इ) स्येते	(इ) स्यन्ते
मोदिष्यसे	मोदिष्येथे	मोदिष्यध्वे	म०पु०	(इ) स्यसे	(इ) स्येथे	(इ) स्यध्वे
मोदिष्ये	मोदिष्यावहे	मोदिष्यामहे	उ०पु०	(इ) स्ये	(इ) स्यावहे	(इ) स्यामहे

अनद्यतन भविष्यत् (लुट्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मोदिता	मोदितारौ	मोदितारः	प्र०पु०	(इ) ता	(इ) तारौ	(इ) तारः
मोदितासे	मोदितासाथे	मोदिताध्वे	म०पु०	(इ) तासे	(इ) तासाथे	(इ) ताध्वे
मोदिताहे	मोदितास्वहे	मोदितास्महे	उ०पु०	(इ) ताहे	(इ) तास्वहे	(इ) तास

• **आज्ञा (लोट्)** (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मोदताम्	मोदेताम्	मोदन्ताम्	प्र०पु०	अताम्	एताम्	अन्ताम्
मोदस्व	मोदेथाम्	मोदध्वम्	म०पु०	अस्व	एथाम्	अध्वम्
मोदै	मोदावहै	मोदामहै	उ०पु०	ऐ	आवहै	आमहै

• **अनुज्ञा, आज्ञा (विधिलिङ्)** (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मोदेत	मोदेयाताम्	मोदेरन्	प्र०पु०	एत	एयाताम्	एरन्
मोदेथाः	मोदेयाथाम्	मोदेध्वम्	म०पु०	एथाः	एयाथाम्	एध्वम्
मोदेय	मोदेवहि	मोदेमहि	उ०पु०	एय	एवहि	एमहि

आशीर्वाद (आशीर्लिङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

मोदिषीष्ट	मोदिषीयास्ताम्	मोदिषीरन्	प्र०पु०	(इ) इष्ट	(इ) ईयास्ताम्	(इ) ईरन्
मोदिषीष्ठाः	मोदिषीयास्थाम्	मोदिषीध्वम्	म०पु०	(इ) ईष्ठाः	(इ) ईयास्थाम्	(इ) ईध्व
मोदिषीय	मोदिषीवहि	मोदिषीमहि	उ०पु०	(इ) ईय	(इ) ईवहि	(इ) ईमहि

हेतुहेतुमद्भाव (लृङ्) (क्रिया का संक्षिप्त रूप)

अमोदिष्यत	अमोदिष्येताम्	अमोदिष्यन्त	प्र०पु०	(इ) स्यत	(इ) स्यताम्	(इ) स्यन्त
अमोदिष्यथाः	अमोदिष्येथाम्	अमोदिष्यध्वम्	म० पु०	(इ) स्यथाः	(इ) स्यथाम्	(इ) स्यध्व
अमोदिष्ये	अमोदिष्यावहि	अमोदिष्यामहि	उ०पु०	(इ) स्ये	(इ) स्यावहि	(इ) स्याम

कृदन्तों का क्रिया के रूप में प्रयोग

धातुओं से बने हुए कृदन्त* भी क्रिया के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं। क्रिया के १० लकार तीनों कालों को प्रकट करते हैं या आज्ञा, अनुज्ञा आदि को। यही का

*भाववाचक कृदन्त शुद्ध क्रिया के द्योतक हैं, जैसे-हासः, पाकः, रागः आदि कर्तृवाचक कृदन्त क्रिया के कर्त्ता के द्योतक हैं, जैसे—पठकः, पाठकः, पाचकः आदि और कर्मवाचक कृदन्त क्रिया के आधार कर्म को प्रकट हैं। जैसे—सुकरः (आसानी किया जाने वाला कार्य)।

१ - पढ़ना २ - पढ़ाना ३ - पढ़ानेवाला

कृदन्तों से होता है। शतृ तथा शानच् *वर्तमान क्रिया को प्रकट करते हैं, क्त और क्तवत् भूतकालिक क्रिया को प्रकट करते हैं और तव्य एवं अनीयर् आज्ञा तथा भविष्यत् काल की क्रिया को प्रकट करते हैं।

कृत्य, तव्य, अनीयर्, यत्—ये भाववाच्य या कर्मवाच्य में होते हैं। सकर्मक धातु से कर्मवाच्य में तथा अकर्मक धातु से भाववाच्य में होते हैं। ऐसी दशा में कर्त्ता तृतीया विभक्ति में होता है और कर्म में प्रथमा तथा तव्य प्रत्ययान्त शब्द के लिङ्ग और वचन कर्म के अनुसार होते हैं, यथा—

सकर्मक धातु (कर्म में)
- छात्रैः पुस्तकानि पठितव्यानि।
- मया बालिका दृष्टा।
- त्वया ग्रन्थः पठितव्यः।

अकर्मक धातु (भाव में)
- शिशुना शयितव्यम्।
- त्वया न हसितव्यम् (हसनीयं वा)।

अकर्मक धातु से कृदन्त प्रत्यय भाववाच्य में होता है और कृदन्त शब्द सदा नपुंसक लिङ्ग और एक वचन में होता है।

क्त, क्तवत्—क्त प्रत्यय सकर्मक धातु से कर्मवाच्य में होता है और अकर्मक धातु से कर्तृवाच्य में, यथा—अस्माभिः ग्रन्थः पठितः।
छात्रैः पुस्तकानि पठितानि।
दमयन्त्या लता दृष्टा।

परन्तु देवः आगतः, बालिका सुप्ता आदि में अकर्मक धातुओं के प्रयोग के कारण कृदन्त कर्त्ता के अनुसार (कर्तृवाच्य) है।

क्तवतु प्रत्यय अकर्मक एवं सकर्मक धातुओं से कर्तृवाच्य में ही होता है, यथा—सः पुष्पं दृष्टवान्, सा पुष्पं दृष्टवती, स हसितवान्, सा हसितवती।

शतृ और शानच्—शतृ प्रत्यय परस्मैपद में और शानच् प्रत्यय आत्मनेपद में होता

---

* शतृ एवं शानच् का प्रयोग प्रायः विशेषण रूप में ही होता है, मुख्य वर्तमान क्रिया के रूप में नहीं।

है। ये प्रत्यय मुख्य क्रिया के रूप में न होकर विशेषण रूप में होते हैं, यथा—पठ[न्] छात्रः (पढ़ता हुआ विद्यार्थी), शयानः बालः (सोता हुआ लड़का)। यह भविष्य[त्] काल सूचक भी होता है, जैसे—पठिष्यन् छात्रः (वह छात्र, जो पढ़ता हुआ होगा), वर्धिष्यमाणः पुरुषः (वह पुरुष, जो बढ़ता हुआ होगा)।

सुबन्त शब्दों की रूपावली

तिङन्त (पठति, पठतः पठन्ति) शब्दों का वर्णन संक्षिप्त रूप से ऊपर कि[या] गया है। अब सुबन्त (रामः, रामौ:, रामाः आदि) शब्दों के रूप यहाँ दिये जाते हैं। सुबन्त और तिङन्त शब्दों को ही पद कहते हैं (सुप्तिङन्तं पदम्)। सुबन्त शब्दों के सा[त] विभक्तियों के तीन-तीन वचनों में २१ प्रत्ययों को पृथक्-पृथक् याद करने की अपे[क्षा] उनके मूल रूप पर ध्यान देना चाहिए।

विभक्तियों के मूल रूप

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स् (:)	औ	अस् (अः)
द्वितीया	अम्	औ	अः १
तृतीया	एन २	भ्याम्	भिः
चतुर्थी	ए ३	भ्याम्	भ्यः
पञ्चमी	आत् ४	भ्याम्	भ्यः
षष्ठी	स्य	ओस् (ओः)	आम्
सप्तमी	इ ५	ओस् (ओः)	सु (षु)

१—अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त और ऋकारान्त शब्दों को दीर्घ होकर अ[ः] में 'न्' हो जाता है, जैसे—रामान्, हरीन् आदि। २—इकारान्त, उकारान्त [और] ऋकारान्त शब्दों के अन्त में 'ना' होता है। ३—अकारान्त शब्द के अन्त में 'आ[य]' होता है। ४—इकारान्त, उकारान्त और ऋकारान्त शब्दों के पञ्चमी और षष्ठी एक वचन में इ उ ऋ को गुण होकर 'स्' का विसर्ग (:) होता है। ५—इका[रान्त] तथा उकारान्त के अन्त में 'औ' और आकारान्त के 'याम्' हो जाता है।

(१) अकारान्त पुँल्लिङ्ग 'देव'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	देवः (देव)	देवौ (दो देव)	देवाः (बहुत देव)
द्वि०	देवम् (देव को)	देवौ (दो देवों को)	देवान् (देवों को)
तृ०	देवेन (देव से)*	देवाभ्याम् (दो देवों से)	देवैः (देवों से)
च०	देवाय (देव के लिए)	देवाभ्याम् (दो देवों के लिए)	देवेभ्यः (देवों के लिए)
पं०	देवात् (देव से)	देवाभ्याम् (दो देवों से)	देवेभ्यः (देवों से)
ष०	देवस्य (देव का, के, की)	देवयोः (दो देवों का)	देवानाम् (देवों का)
स०	देवे (देव में, पर)	देवयोः (दो देवों में)	देवेषु (देवों में)
सं०	हे देव (हे देव)*	हे देवौ (हे दो देवो)	हे देवाः (हे देवो)

इसी प्रकार

नरः—मनुष्य
बालः—बालक
पुत्रः—पुत्र
जनकः—पिता
नृपः—राजा
प्राज्ञः—विद्वान्
सज्जनः—अच्छा आदमी
दुर्जनः—बुरा आदमी
खलः—दुष्ट

शिष्यः—चेला
सूर्यः—सूरज
चन्द्रः—चाँद
खगः—पक्षी
करः—हाथ
पिकः—कोयल
वंशः—कुल
वानरः—बन्दर
गजः—हाथी

मयूरः—मोर
प्रश्नः—प्रश्न (सवाल)
क्रोशः—कोस
लोकः—संसार या लोग
धर्मः—धर्म
अनलः—आग
अनिलः—हवा
नक्रः—नाका
उपहारः—भेंट

---

*स्वरों (अ, आ, इ, ई आदि), ह, य्, व्, र्, कवर्ग (क, ख आदि), पवर्ग (प, फ आदि) आ और न् के बीच में आने पर भी र् और ष् के बाद 'न्' का 'ण्' हो जाता है (अट् कुप्वाङ् नुम् व्यवायेऽपि)। इससे नपुंसक लिङ्ग शब्द के प्रथमा तथा द्वितीया के बहुवचन में, तृतीया के एकवचन और षष्ठी के बहुवचन में 'न्' का 'ण्' हो जायगा, यथा—गृहाणि, गृहेण, गृहाणाम्; पत्राणि, पत्रेण, पत्राणाम्; नृपाणाम्, हरिणा, हरीणाम्।

सुघ्राति = सूँघता, का सूँघता
कोषन = कोषण = पूछना
पोषण = पुष्ट करना

(२) इकारान्त पुँल्लिङ्ग 'हरि' (विष्णु, बंदर)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	हरिः	हरी	हरयः
द्वि०	हरिम्	हरी	हरीन्
तृ०	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
च०	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पं०	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
ष०	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
स०	हरौ	हर्योः	हरिषु
सं०	हे हरि	हे हरी	हे हरयः

इसी प्रकार—
कविः, मुनिः विधिः (भाग्य) निधिः (खजाना), गिरि (पहाड़), अग्निः, अरि (शत्रु), नृपतिः (राजा) उदधिः (समुद्र), यति (योगी), असिः (तलवार) अतिथिः (मेहमान), कपि (बन्दर), पाणिः (हाथ) सेनापतिः, प्रजापतिः, मरीचि (किरण), व्याधिः (बीमारी) प्रभृतिः आदि ।

पति शब्द के तृतीया के एक वचन में पत्या, चतुर्थी के एक वचन में पत्ये पंचमी एवं षष्ठी के एक वचन में पत्युः और सप्तमी के एक वचन में पत्यौ होता है सखि (मित्र) शब्द के रूप प्रथमा और द्वितीया में—सखा, सखायौ, सखायः सखायम्, सखायौ, सखीन् होते हैं, शेष पति के समान होते हैं ।

(३) उकारान्त पुँल्लिङ्ग 'गुरु'

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र०	गुरुः	गुरू	गुरवः
द्वि०	गुरुम्	गुरू	गुरून्
तृ०	गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः
च०	गुरवे	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
पं०	गुरोः	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
ष०	गुरोः	गुर्वोः	गुरूणाम्
स०	गुरौ	गुर्वोः	गुरुषु
सं०	हे गुरो	हे गुरू	हे गुरवः

इसी प्रकार
भानुः (सूर्य), कृशानुः (आग), विधुः (चन्द्रमा), शम्भुः शिशुः, मृत्युः, मृदुः (कोमल), साधुः, पांशुः (धूल), वायुः, पशुः तरुः (वृक्ष), इषुः (बाण), शत्रुः, प्रभुः बिन्दुः (बूँद), परशुः बाहुः आदि ।

जिन शब्दों में र् या ष् नहीं है उनमें 'न्' को 'ण्' नहीं होगा । अतः 'साधु' शब्द के तृतीया के 'एकवचन' में 'साधुना' और षष्ठी के बहुवचन में 'साधूनाम्' होगा ।

(४) ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग कर्तृ (करनेवाला)

प्र०	कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः
द्वि०	कर्तारम्	कर्तारौ	कर्तॄन्
तृ०	कर्त्रा	कर्तृभ्याम्	कर्तृभिः
च०	कर्त्रे	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
पं०	कर्तुः	कर्तृभ्याम्	कर्तृभ्यः
ष०	कर्तुः	कर्त्रोः	कर्तॄणाम्
स०	कर्तरि	कर्त्रोः	कर्तृषु
सं०	हे कर्तः	हे कर्तारौ	हे कर्तारः

इसी प्रकार—
नेतृ (ले जाने वाला), वक्तृ (बोलने वाला), प्रष्टृ (पूछने वाला), रक्षितृ (रक्षा करने वाला), श्रोतृ (सुनने वाला), नप्तृ (नाती), सवितृ (सूर्य), आदि।

(५) ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग पितृ (पिता)

प्र०	पिता	पितरौ	पितरः
द्वि०	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृ०	पित्रा	पितृभ्याम	पितृभिः
च०	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पं०	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
ष०	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
स०	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सं०	हे पितः	हे पितरौ	हे पितरः

इसी प्रकार—
भ्रातृ—भाई।
देवृ—देवर।
जामातृ—जवांई।
नृ—आदमी।

(६) ओकारान्त पुँल्लिङ्ग 'गो' (गाय या बैल)

प्र०	गौः	गावौ	गावः
द्वि०	गाम्	गावौ	गाः
तृ०	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
च०	गवे	गोभ्याम्	गोभ्यः
पं०	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
ष०	गोः	गवोः	गवाम्
स०	गवि	गवोः	गोषु
सं०	हे गौः	हे गावौ	हे गावः

इसी प्रकार—
द्यो (आकाश) शब्द भी चलेगा।

गो शब्द स्त्री लिङ्ग में भी इसी प्रकार चलेगा।

(१) आकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'लता'

प्र०	लता	लते	लताः
द्वि०	लताम्	लते	लताः
तृ०	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
च०	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
पं०	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
ष०	लतायाः	लतयोः	लतानाम्
स०	लतायाम्	लतयोः	लतासु
सं०	हे लते	हे लते	हे लताः

इसी प्रकार—

पाठशाला, क्रीडा, कथा, कन्या, वसुधा (पृथ्वी), सुधा (अमृत), अज (बकरी), व्यथा, प्रश आदि ।

(२) इकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'मति'

प्र०	मतिः	मती	मतयः
द्वि०	मतिम्	मती	मतीः
तृ०	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
च०	मत्यै-मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पं०	मत्याः-मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
ष०	मत्याः-मतेः	मत्योः	मतीनाम्
स०	मत्याम्-मतौ	मत्योः	मतिषु
सं०	हेमते	हेमती	हेमतयः

इसी प्रकार—

गतिः, श्रुतिः, (वेद), स्मृतिः, भूमिः, ओषधि, पंक्तिः, धूलिः, अंगुलिः, प्रीतिः, श्रेणिः, शान्तिः, प्रकृतिः, शक्तिः, समिति (सभा), नियतिः (भाग्य), व्रततिः (लता) आदि

(३) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'नदी'

प्र०	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वि०	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृ०	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
च०	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पं०	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
ष०	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
स०	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सं०	हे नदि	हे नद्यौ	हे नद्यः

इसी प्रकार—

गौरी, कुमारी, नारी, सखी, पुत्री, रजनी, महिषी, प्राची, प्रतीची, कौमुदी (ज्योत्स्ना), मही, मृगी, सिंही, नगरी, वापी, श्रीमती, दासी आदि ।

लक्ष्मी शब्द के प्रथमा के एक वचन में विसर्ग होता है (लक्ष्मीः) और शे रूप नदी की भाँति होते हैं ।

(४) ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'स्त्री'

प्र०	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
द्वि०	स्त्रियम् (स्त्रीम्)	स्त्रियौ	स्त्रीः (स्त्रियः)
तृ०	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
च०	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पं०	स्त्रियाः	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
ष०	स्त्रियाः	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
स०	स्त्रियाम्	स्त्रियोः	स्त्रीषु
सं०	हे स्त्रि	हे स्त्रियौ	हे स्त्रियः

'स्त्री' शब्द तथा 'नदी' शब्द में अन्तर यह है कि 'नदी' शब्द में स्वरादि विभक्ति आने पर 'ई' के स्थान पर 'य्' होता है और 'स्त्री' शब्द में 'ई' के स्थान पर 'इय्' होता है, यथा—स्त्रियौ, स्त्रियः, नद्यौ, नद्यः।

(५) उकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'धेनु' (गाय)

प्र०	धेनुः	धेनू	धेनवः
द्वि०	धेनुम्	धेनू	धेनूः
तृ०	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
च०	धेन्वै, धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पं०	धेन्वाः, धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
ष०	धेन्वाः, धेनोः	धेन्वोः	धेनूनाम्
स०	धेन्वाम्, धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु
सं०	हे धेनो	हे धेनू	हे धेनवः

इसी भाँति—
रेणुः (धूल), चञ्चुः (चोंच), तनुः, उडुः (तारा), रज्जुः (रस्सी), हनुः (ठोडी) आदि।

(६) ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'वधू'

नदी की भाँति

प्र०	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वि०	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृ०	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
च०	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
पं०	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
ष०	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
स०	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सं०	हे वधु	हे वध्वौ	हे वध्वः

इसी प्रकार—
चमूः (सेना), तनूः, श्वश्रूः (सास), जम्बूः (जामुन) आदि।

'वधू' आदि शब्दों के रूप 'नदी' की भाँति चलते हैं, केवल प्रथमा के एक वचन में अन्तर है, यथा—नदी, वधूः।

(७) ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'मातृ' (माता)

प्र०	माता	मातरौ	मातरः
द्वि०	मातरम्	मातरौ	मातृः
तृ०	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
च०	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
पं०	मातुः	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
ष०	मातुः	मात्रोः	मातृणाम्
स०	मातरि	मात्रोः	मातृषु
सं०	हे मातः	हे मातरौ	हे मातरः

'मातृ' शब्द भी 'पितृ' शब्द की भाँति चलता है, केवल द्वितीया के बहुवचन में अन्तर है। यथा पितॄन्, मातृः।

(८) औकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'नौ' (नौ)

प्र०	नौः	नावौ	नावः
द्वि०	नावम्	नावौ	नावः
तृ०	नावा	नौभ्याम्	नौभिः
च०	नावे	नौभ्याम्	नौभ्यः
पं०	नावः	नौभ्याम्	नौभ्यः
ष०	नावः	नावोः	नावाम्
स०	नावि	नावोः	नौषु
सं०	हे नौः	हे नावौ	हे नावः

ग्लौ (चन्द्रमा) के रूप भी 'नौ' शब्द की भाँति चलेंगे।

(९) अकारान्त नपुंसकलिङ्ग 'फल'

प्र०	फलम्	फले	फलानि
द्वि०	फलम्	फले	फलानि
तृ०	फलेन	फलाभ्याम्	फलैः
च०	फलाय	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
पं०	फलात्	फलाभ्याम्	फलेभ्यः
ष०	फलस्य	फलयोः	फलानाम्
स०	फले	फलयोः	फलेषु
सं०	हे फल	हे फले	हे फलानि

इसी प्रकार—

रत्नम्—मणि	सुवर्णम्—सोना	जलम्—पानी	पुष्पम्—फूल
विषम्—जहर	माँसम्—मांस	नेत्रम्—आँख	उद्यानम्—बाग
वस्त्रम्—कपड़ा	नखम्—नाखून	मित्रम्—दोस्त	नयनम्—आँख
नगरम्—शहर	जलजम्—कमल	हृदयम्—दिल	कुलम्—वंश
तत्त्वम्—सचाई	गृहम्—घर	कुसुमम्—फूल	बलम्—शक्ति

दुःखम्, सुखम्, पापम्, आकाशम्, भोजनम्, वचनम्, मौनम् (चुप) इत्यादि।

(२) इकारान्त नपुंसकलिङ्ग 'वारि' (जल)

प्र०	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वि०	वारि	वारिणी	वारीणि
तृ०	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
च०	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पं०	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
ष०	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
स०	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सं०	हे वारि(वारे)	हे वारिणी	हे वारीणि

इसी प्रकार—
दधि (दही), अक्षि (आँख), अस्थि (हड्डी) सक्थि (जाँघ) आदि।

(३) उकारान्त नपुंसकलिङ्ग 'मधु' (शहद)

प्र०	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वि०	मधु	मधुनी	मधूनि
तृ०	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
च०	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पं०	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
ष०	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
स०	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सं०	हेमधो(हेमधु)	हे मधुनी	हे मधूनि

इसी प्रकार—
वस्तु, अश्रु (आँसू), जानु (घुटना), तालु, दारु (लकड़ी), वसु (धन), अम्बु (पानी), सानु (पर्वत की चोटी), श्मश्रु (दाढ़ी), जतु (लाख) आदि।

अकारान्त सर्वनाम 'सर्व' (सब)

पुंल्लिग

प्र०	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वि०	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृ०	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
च०	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
प०	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
ष०	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
स०	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु
सं०	हे सर्व	हे सर्वौ	हे सर्वे

नपुंसक लिङ्ग प्रथमा, द्वितीया में—

सर्वम् सर्वे सर्वाणि शेष पुँल्लिङ्गवत्

इसी प्रकार-विश्व, अ[illegible] कतर, कतम, अन्यत[illegible] इतर ।

अन्तर पर ध्यान दो-

देव	सर्व
देवाः	सर्वे
देवाय	सर्वस्मै
देवात्	सर्वस्मात्
देवानाम्	सर्वेषाम्
देवे	सर्वस्मिन्

आकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'सर्वा'

प्र०	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वि०	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृ०	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
च०	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पं०	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
ष०	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
स०	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु
सं०	हे सर्वे	हे सर्वे	हे सर्वाः

इसी प्रकार—

विश्वा, अन्या, कत[illegible] कतमा, अन्यतरा, इत[illegible]

अन्तर पर ध्यान दो-

लतायै	सर्वस्यै
लतायाः	सर्वस्याः
लतानाम्	सर्वासा[illegible]
लतायाम्	सर्वस्या[illegible]

उभ (दोनों) नित्य द्विवचनान्त

	पुँल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग
प्र०	उभौ	उभे
द्वि०	उभौ	उभे
तृ०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्

'उभय' शब्द के रूप [illegible] वचन तथा बहुवच[illegible] ही होते हैं, यथा—

च०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	१- उभयः, उभये
पं०	उभाभ्याम्	उभाभ्याम्	२- उभयम्, उभयान्
ष०	उभयोः	उभयोः	३- उभयेन, उभयैः
स०	उभयोः	उभयोः	४- उभयस्मै, उभयेभ्यः
सं०	हे उभौ	हे उभे	५- उभयस्मात् आदि। उभयेभ्यः

विसर्ग की अशुद्धियाँ क्यों होती हैं ?

विभक्तियों में विसर्ग की अशुद्धियाँ इस लिए होती हैं कि छात्र इस बात का ध्यान नहीं रखते कि किसी भी शब्द की तृतीया, चतुर्थी और पञ्चमी के बहुवचन में तथा षष्ठी और सप्तमी के द्विवचन में अवश्य विसर्ग होता है, जैसे—देवैः, देवेभ्यः, देवयोः। परन्तु किसी भी शब्द की द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी और सप्तमी के एक वचन में, तृतीया, चतुर्थी, और पञ्चमी के द्विवचन में और षष्ठी एवं सप्तमी के ~~द्विवचन~~ में कदापि विसर्ग नहीं होता, जैसे—देवम्, देवेन, देवाय, देवेषु। बहुवचन

अविकारी शब्द (अव्यय)

(१) अव्युत्पन्न शब्द

अथ—मंगल, आरम्भ।
इति—समाप्ति, हेतु
अति—अधिक
अपि—भी
अवश्यम्—जरूर
अद्य—आज
अधुना—अब
अलम्—बस
असकृत्—बार-बार
सकृत्—एकबार
आदि—वगैरह
इदानीम्—इस समय, अब
इव—भाँति, तरह
इह—यहाँ
किम्—क्या ? क्यों ?
च—और
चेत्—यदि
तत्—पूर्व कथित, सो
न, नो—नहीं
नमः—प्रणाम, नमस्ते
पश्चात्—पीछे
पृथक्—अलग
प्रायः—बहुधा, अकसर
वरम्—उत्तम, बेहतर
वा—अथवा, या
विना—बगैर
शनैः—धीरे-धीरे

श्वः—कल (आने वाला)
ह्यः—कल (बीता हुआ)
साकम् सह —साथम्,
स्वयम्—अपने आप
हा—दुःख, आश्चर्य

(२) क-व्युत्पन्न (कृदन्त)

गातुम्—गाने के लिए
ज्ञातुम्—जानने के लिए
कर्तुम्—करने के लिए
पठितुम्—पढ़ने के लिए
हसितुम्—हंसने के लिए
कृत्वा—कर के
गत्वा—जाकर
पठित्वा—पढ़ कर
हसित्वा—हंस कर
आरुह्य—चढ़कर
विलप्य—विलाप कर के
परित्यज्य छोड़कर
आगत्य—आकर

(२) ख-व्युत्पन्न (तद्धित)

अतः—इस लिए
इतः—यहाँ से
अग्रतः—आगे से
ततः—वहाँ से, तब से
कुतः—कहाँ से ?
यतः—जहाँ से, क्योंकि
सर्वतः—सब ओर से
तथा—वैसे
यथा—जैसे
इत्थम्—इस प्रकार
कथम्—कैसे ?
एकत्र—एक जगह
अत्र—यहाँ
तत्र—वहाँ
कुत्र—कहाँ
सर्वत्र—सब जगह
यत्र—जहाँ
द्वेधा—दो प्रकार से, दो भागों में
त्रेधा—तीन भागों में, तीन प्रकार से
तावत्—तब तक
यावत्—जब तक
अनेकशः—अनेक बार
पञ्चकृत्वः—पाँच बार

अव्यय (अविकारी शब्द) क्या है ? अव्यय एक ऐसा शब्द है, जिसके तीनों लिङ्गों, सातों विभक्तियों तथा तीनों वचनों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता जैसा कि कहा भी है—"सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु ।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम् ॥"

प्रथमोऽध्यायः

प्रथम अभ्यास

कर्त्ता (प्रथमा) (—, ने)

संज्ञा—शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
पुंल्लिङ्ग	देवः	देवौ	देवाः
स्त्रीलिङ्ग	लता	लते	लताः
नपुंसकलिङ्ग	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि

सर्वनाम शब्द

उत्तम पुरुष

पु० स्त्री नपुंसक०	एकव०	द्विव०	बहुव०
अस्मद् = हम लोग	अहम् (मैं)	आवाम् (हम दो)	वयम् (हम)

मध्यम पुरुष

युष्मद् = तुम लोग	त्वम् (तू)	युवाम् (तुम दो)	यूयम् (तुम)

प्रथम पुरुष

	एकव०		द्विव०		बहुव०	
तत् पुं०	सः	(वह)	तौ	(वे दो)	ते	(वे)
स्त्री०	सा		ते		ताः	
नपुं०	तत्		ते		तानि	
इदम् पुं०	अयम्	(यह)	इमौ	(ये दो)	इमे	(ये)
स्त्री०	इयम्		इमे		इमाः	
नपुं०	इदम्		इमे		इमानि	

तद् = इकारान्त ... प्रथम पुरुष

भकारान्त

मकारान्त

किम् पुं०	कः	(कौन?)	कौ	(कौन दो?)	के	(कौन सब ?)
स्त्री०	का		के		काः	
नपुंस०	किम्		के		कानि	

यत् पुं०	यः	(जो)	यौ	(जोदो)	ये	(जो सब)
स्त्री०	या		ये		याः	
नपुं०	यत्		ये		यानि	

दकारान्त

(१) भ्वादिगणीय पठ्—(पढ़ना) परस्मैपद

वर्तमानकाल (लट्) *

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	पठति (वह पढ़ता है)	पठतः (वे दो पढ़ते हैं)	पठन्ति (वे पढ़ते हैं)
म० पु०	पठसि (तू पढ़ता है)	पठथः (तुम दो पढ़ते हो)	पठथ (तुम पढ़ते हो)
उ० पु०	पठामि (मैं पढ़ता हूँ)	पठावः (हम दो पढ़ते हैं)	पठामः (हम पढ़ते हैं)

संक्षिप्तरूप

प्र० पु०	(सः)	अति	(तौ)	अतः	(ते)	अन्ति
म० पु०	(त्वम्)	असि	(युवाम्)	अथः	(यूयम्)	अथ
उ० पु०	(अहम्)	आमि	(आवाम्)	आवः	(वयम्)	आमः

इसी प्रकार कुछ भ्वादिगणीय धातुएँ

धातु	एकव०	द्विव०	बहुव०
भू (भव्)—होना	भवति	भवतः	भवन्ति
लिख्—लिखना	लिखति	लिखतः	लिखन्ति
वद्—बोलना	वदति	वदतः	वदन्ति

---

* (१) 'ति' 'सि' 'मि' और 'अन्ति' इनमें ह्रस्व 'इ' है, दीर्घ 'ई' कभी न लिखो। इन चारों ह्रस्व इकारों के आगे कभी विसर्ग (:) भी मत रक्खो। (२) तीनों पुरुषों के द्विवचनों में 'तः' 'थः' 'वः' और 'मः' के आगे विसर्ग अवश्य रक्खो, अन्यत्र नहीं। सारांश यह है कि इन नौ वचनों में चार के आगे विसर्ग है और चार ही ह्रस्व इकार विसर्ग के विना हैं।

हस्—हँसना	हसति	हसतः	हसन्ति
धाव्—दौड़ना	धावति	धावतः	धावन्ति
रक्ष्—रक्षा करना	रक्षति	रक्षतः	रक्षन्ति
क्रीड्—खेलना	क्रीडति	क्रीडतः	क्रीडन्ति
गम्—जाना	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
आगम्—आना	आगच्छति	आगच्छतः	आगच्छन्ति
पत्—गिरना	पतति	पततः	पतन्ति
*नृत्—नाचना	नृत्यति	नृत्यतः	नृत्यन्ति

संस्कृत—अनुवाद

इन वाक्यों को ध्यान से देखो—

(१) बालकः हसति (लड़का हँसता है।)

(२) यूयं कुत्र गच्छथ ? (तुम कहाँ जाते हो ?)

(३) आवाम् अत्र क्रीडावः (हम दो यहाँ खेलते हैं।)

(४) भवन्तः कथं न पठन्ति ? (आप क्यों नहीं पढ़ते हैं ?)

प्रथम वाक्य में 'हसति', क्रिया का कार्य 'बालकः' करता है, द्वितीय में 'गच्छथ' क्रिया का कार्य 'यूयम्' करता है, तृतीय में 'क्रीडावः' क्रिया का काम 'आवाम्' करता है और चतुर्थ वाक्य में 'पठन्ति' क्रिया का काम 'भवन्तः' करता है। ये चारों 'बालकः' 'यूयम्' 'आवाम्' और 'भवन्तः' कर्त्ता हैं, क्योंकि क्रिया के करने वाले को कर्त्ता कहते हैं।

प्रथम वाक्य में 'हसति' क्रिया प्रथम पुरुष के एक वचन में है और उसका कर्त्ता 'बालकः' भी एक वचन में, द्वितीय वाक्य में 'गच्छथ' क्रिया मध्यम पुरुष के बहुवचन में है और उसका कर्त्ता 'यूयम्' भी मध्यम पुरुष के बहुवचन में, तृतीय वाक्य में 'क्रीडावः' क्रिया उत्तम पुरुष के द्विवचन में है और उसका कर्त्ता 'आवाम्'

---

* नृत् (नृत्य्) नाचना—दिवादिगणीय धातु है, तथापि क्योंकि इसके रूप भ्वादिगणीय धातुओं की भाँति चलते हैं, अतः इसे भ्वादिगणीय धातुओं के साथ रखा गया है।

गया २० आँख में डाका १२

भी उत्तम पुरुष के द्विवचन में है, तथा चतुर्थ वाक्य में 'पठन्ति' क्रिया प्रथम पुरु[illegible] बहुवचन में है और उसका कर्त्ता 'भवन्तः' भी प्रथम पुरुष के बहुवचन में।

इसका निष्कर्ष यह निकला कि संस्कृत भाषा के अनुवाद करने में यदि [illegible] प्रथम पुरुष का हो तो क्रिया भी प्रथम पुरुष की और यदि कर्त्ता मध्यम पुरुष का [illegible] तो क्रिया भी मध्यम पुरुष की और कर्त्ता उत्तम पुरुष का हो तो क्रिया भी उ[illegible] पुरुष की होती है। इसके अतिरिक्त यदि कर्त्ता एक वचन में होता है तो क्रिया एक वचन में और कर्त्ता द्विवचन में होता है तो क्रिया भी द्विवचन में और [illegible] बहुवचन में होता है तो क्रिया भी बहुवचन में होती है। परन्तु भवान् (आप), भव[illegible] (आप दो), भवन्तः (आप सब) के साथ क्रिया मध्यम पुरुष की नहीं लगती, जैसे त्वम्-युवाम्-यूयम् के साथ लगती है। अतः 'भवान् गच्छसि' अशुद्ध है, 'भवान् गच्छ[illegible] ही शुद्ध वाक्य है। भवान् = आप के साथ क्रिया प्र. पु. की लगती है

"बालकः हसति" इसी वाक्य को हम 'हसति बालकः' भी लिख या बोल स[illegible] हैं। यह प्रणाली संस्कृत भाषा की अपनी विशेषता है, क्योंकि इसमें विकारी श[illegible] का बाहुल्य है। अँगरेजी भाषा के वाक्य में पहले कर्ता फिर क्रिया और अन्त में [illegible] आता है और हिन्दी में पहले कर्त्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रिया आती है, [illegible] संस्कृत में कर्त्ता, कर्म और क्रिया आगे पीछे भी रखे जा सकते हैं, यथा—

भवान् कुत्र गच्छति ? (आप कहाँ जाते हैं), कुत्र गच्छति भवान् ?

इन वाक्यों में क्रिया कर्त्ता का अनुसरण करती है, अर्थात् कर्त्ता के अनु[illegible] है, अतः इन वाक्यों को कर्तृवाच्य कहते हैं।

संस्कृत में अनुवाद करो—

(क) १—गोपाल खेलता है। २—शकुन्तला हँसती है। ३—केशव [illegible] धीरे लिखता है। ४—बन्दर (वानराः) दौड़ते हैं। ५—हाथी (गजाः) यहाँ [illegible] हैं। ६—घोड़े (अश्वाः) कहाँ जाते हैं ? ७—पत्ते (पत्राणि) और फल गिरते [illegible] ८—सुशीला क्या पढ़ती है ? ९—रमेश और सुरेश खेलते हैं। १०—लड़के [illegible] हैं और लड़कियाँ जाती हैं।

(ख) ११—वह ज़ोर से (उच्चैः) हँसता है। १२—वे कहाँ जाते हैं? १३—तू कहाँ जाता है? १४—आप (भवन्तः) क्यों हँसते हैं? १५—तुम कहाँ जाते हो? १६—हम यहाँ नहीं खेल रहे हैं। १७—तुम इस प्रकार क्यों दौड़ते हो? १८—तुम दो क्यों नहीं खेलते हो? १९—वे अब क्यों नहीं पढ़ते हैं? २०—मैं इस समय नहीं खेलता हूँ। २१—वे अवश्य पढ़ते हैं। २२—हम सब अलग-अलग (पृथक्) पढ़ते हैं। २३—वह वैसे ही नाचती है। २४—आप यहाँ क्यों नहीं आते हैं? २५—तुम सब पढ़कर (पठित्वा) खेलते हो।

द्वितीय अभ्यास

अनद्यतन भूतकाल (लङ्) *

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	अपठत् (उसने पढ़ा)	अपठताम् (उन दोने पढ़ा)	अपठन् (उन्होंने पढ़ा)
म० पु०	अपठः (तूने पढ़ा)	अपठतम् (तुम दोने पढ़ा)	अपठत (तुमने पढ़ा)
उ० पु०	अपठम् (मैंने पढ़ा)	अपठाव (हम दोने पढ़ा)	अपठाम (हमने पढ़ा)

संक्षिप्त रूप

	एकवचन		द्विवचन		बहुवचन	
प्र०पु०	(सः)	अत्	(तौ)	अताम्	(ते)	अन्
म०पु०	(त्वम्)	अः	(युवाम्)	अतम्	(यूयम्)	अत
उ०पु०	(अहम्)	अम्	(आवाम्)	आव	(वयम्)	आम

इसी प्रकार

धातु	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
लिख्—लिखना	अलिखत्	अलिखताम्	अलिखन्
वद्—कहना	अवदत्	अवदताम्	अवदन्
हस्—हँसना	अहसत्	अहसताम्	असहन्
धाव्—दौड़ना	अधावत्	अधावताम्	अधानव
रक्ष्—रक्षा करना	अरक्षत्	अरक्षताम्	अरक्षन्

* अनद्यतन भूत (लङ्) में केवल मध्यम पुरुष के एक वचन में विसर्ग (:) होता है, और कहीं नहीं। हल् अक्षरों का पाँच स्थानों में ध्यान रखो, जैसे—'अपठत्' में त् हलन्त अक्षर है।

धातु	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
क्रीड्—खेलना	अक्रीडत्	अक्रीडताम्	अक्रीडन्
गम्—जाना	अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्
आगम्—आना	आगच्छत्	आगच्छताम्	आगच्छन्
पत्—गिरना	अपतत्	अपतताम्	अपतन्
नृत्—नाचना	अनृत्यत्	अनृत्यताम्	अनृत्यन्
भू (भव्)-होना	अभवत्	अभवताम्	अभवन्

भूतकाल— संस्कृत भाषा में भूतकाल सूचक तीन लकार हैं—लि (परोक्षभूत), लङ् (अनद्यतन भूत) और लुङ् (सामान्य भूत)। संस्कृ व्याकरण में इन तीनों में अन्तर माना गया है। परोक्ष भूत अर्थात् वह बात आंख के सामने की न हो, एक प्रकार से ऐतिहासिक हो उसमें लिट् होता जैसे—रामो राजा बभूव' (राम राजा हुए।) अनद्यतन भूत जो बात आज न हो, पिछले दिन की हो, उसमें लङ् होता है, जैसे 'देवदत्त ह्यः काशीमगच्छ (देवदत्त कल काशी गया।) इस प्रकार व्याकरण की दृष्टि से 'रमा अद्य प्रा पुस्तकमपठत्' (रमा ने आज सुबह पुस्तक पढ़ी) अशुद्ध वाक्य होता और इस वा के स्थान में शुद्ध वाक्य 'रमा अद्य प्रातः पुस्तकमपाठीत्' होना चाहिए था, किन्तु व्यवह में यह भेद नहीं रह गया है, और लङ् एवं लुङ् का किसी भेद के विना प्रयोग कि है, बल्कि लङ् का भूतकाल में प्रायः प्रयोग होता है।

भूतकाल के लिए 'लङ्' का प्रयोग करते समय छात्र प्रायः भूल करते हैं। 'उसने पढ़ा' का अनुवाद 'तेन अपठत्' कर देते हैं। यहाँ पर 'उसने' का अनुवाद होगा, क्योंकि प्रथमा विभक्ति का अर्थ भी 'ने' है, अतः इस वाक्य का अनुवाद अपठत्' होगा। उदाहरणार्थ—

१. शीला अपठत् (शीला ने पढ़ा)। २. तौ अवदताम् (वे दो बोले)। ते अहसन् (वे हँसे)। ४. अहम् अधावम् (मैं दौड़ा)। ५. युवाम् अक्रीडतम् (दो खेले)।

संस्कृत में अनुवाद करो—

(क) १. बन्दर आया। २. लड़के दौड़े। ३. रमेश ने आज नहीं पढ़ा। ४. सोहन और श्याम वहाँ खेले। ५. गोपाल यहाँ क्यों नहीं आया ? ६. देवेन्द्र कहाँ खेला ? ७. पिता जी कल आये। ८. तुम नहीं हँसे। ९. इस समय सोहन कहाँ गया ? १०. कमला ने कल सायंकाल नहीं पढ़ा। ११. हाथी और घोड़े दौड़े। १२. छात्रों ने क्यों नहीं पढ़ा ? १३. ईश्वर ने रक्षा की। १४. गुरु जी क्यों हँसे ? १५. साधु ने क्या कहा ?

(ख) १६. वे क्यों नहीं खेले ? १७. तुम क्यों हँसे ? १८. तूने क्या कहा ? १९. हमने कुछ नहीं (किमपि न) पढ़ा। २०. तूने ऐसा क्यों लिखा ? २१. शीला नहीं नाची। २२. वे दो कहाँ गये ? २३. वे क्यों हँसे ? २४. तुमने क्या पढ़ा ? २५. क्या वह हँसी थी ?

तृतीय अभ्यास

सामान्य भविष्यत् (लृट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	पठिष्यति (वह पढ़ेगा)	पठिष्यतः (वे दो पढ़ेंगे)	पठिष्यन्ति (वे पढ़ेंगे)
म० पु०	पठिष्यसि (तू पढ़ेगा)	पठिष्यथः (तुम दो पढ़ोगे)	पठिष्यथ (तुम पढ़ोगे)
उ० पु०	पठिष्यामि (मैं पढ़ूंगा)	पठिष्यावः (हम दो पढ़ेंगे)	पठिष्यामः (हम पढ़ेंगे)

संक्षिप्त रूप

प्र० पु०	(सः) इष्यति	(तौ) इष्यतः	(ते) इष्यन्ति
म० पु०	(त्वम्) इष्यसि	(युवाम्) इष्यथः	(यूयम्) इष्यथ
उ० पु०	(अहम्) इष्यामि	(आवाम्) इष्यावः	(वयम्) इष्यामः

इसी प्रकार—

धातु	एकव०	द्विव०	बहुव०
लिख्—लिखना	लेखिष्यति	लेखिष्यतः	लेखिष्यन्ति
वद्—कहना	वदिष्यति	वदिष्यतः	वदिष्यन्ति
हस्—हँसना	हसिष्यति	हसिष्यतः	हसिष्यन्ति

धाव्—दौड़ना	धाविष्यति	धाविष्यतः	धाविष्यन्ति
रक्ष्—रक्षा करना	रक्षिष्यति	रक्षिष्यतः	रक्षिष्यन्ति
क्रीड्—खेलना	क्रीडिष्यति	क्रीडिष्यतः	क्रीडिष्यन्ति
गम्—जाना	गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति
आगम्—आना	आगमिष्यति	आगमिष्यतः	आगमिष्यन्ति
पत्—गिरना	पतिष्यति	पतिष्यतः	पतिष्यन्ति
नृत्—नाचना	नर्तिष्यति	नर्तिष्यतः	नर्तिष्यन्ति
भू (भव्)—होना	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति

भविष्यत् काल—भविष्य काल के सूचक दो लकार हैं—लृट् (सामान्य भविष्य) और लुट् (अनद्यतन भविष्य)। परन्तु यह अन्तर भी व्यवहार में काम नहीं आता। लुट् का प्रयोग बहुत कम देखने में आता है, केवल लृट् का ही प्रयोग होता है।

लृट् बनाने का सरल ढंग यह है कि शुद्ध धातु पर 'इ' *लगाकर आगे 'ष्य' रखो और फिर वर्तमान काल की भाँति 'ति' 'तः' 'न्ति' आदि प्रत्यय जोड़ दो।

उदाहरणार्थ—

१. देवः पठिष्यति (देव पढ़ेगा)। २. वानरा धाविष्यन्ति (वानर दौड़ेंगे)। ३. पत्राणि पतिष्यन्ति (पत्ते गिरेंगे)। ४. त्वं कदा गमिष्यसि ? (तू कब जायगा ?) ५. वयं क्रीडिष्यामः (हम खेलेंगे।) ६. के लेखिष्यन्ति (कौन लिखेंगे) ?

संस्कृत में अनुवाद करो

(४) १—गोविन्द कल आवेगा। २—श्यामा यहाँ नाचेगी। ३—हरि कल वहाँ दौड़ेगा। ४—घोड़े नहीं दौड़ेंगे। ५—लड़कियां जरूर नाचेंगी। ६—रमेश सुबह पढ़ेगा। ७—ईश्वर रक्षा करेगा। ८—पके हुए (पक्वानि) फल गिरेंगे। ९—कमला नहीं हँसेगी। १०—छात्र शाम को खेलेंगे। ११—हाथी यहाँ आवेंगे। १२—दो छात्र यहाँ पढ़ेंगे। १३—रजनी कब नाचेगी ? १४—दो ब्राह्मण यहाँ आवेंगे। १५—मेहमान (अतिथयः) कल जावेंगे।

---

*कुछ ऐसी भी धातुएं हैं जिनमें 'इ' नहीं लगता, ऐसी दशा में शुद्ध धातु के आगे 'स्यति' 'स्यतः' 'स्यन्ति' लगेंगे, यथा—पास्यति (पीवेगा), वत्स्यति (वास करेगा), दास्यति (देगा) आदि।

(ख) १६—तुम कब जाओगे ? १७—मैं नहीं दौड़ूंगा । १८—तुम दो कब आओगे ? १९—वे क्यों हँसेंगे ? २०—मैं यहीं पढ़ूंगा । २१—हम कब जावेंगे। २२—वे कब नाचेंगी ? २३—तुम सब वहाँ खेलोगे। २४—क्या आप यहाँ नहीं आवेंगे ? २५—राजा (नृपः) रक्षा करेगा।

चतुर्थ अभ्यास

आज्ञार्थक लोट् आशी. लोट

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्र० पु०	पठतु (वह पढ़े)	पठताम् (वे दो पढ़ें)	पठन्तु (वे पढ़ें)
म० पु०	पठ (तू पढ़)	पठतम् (तुम दो पढ़ो)	पठत (तुम पढ़ो)
उ० पु०	पठानि (मैं पढ़ूं)	पठाव (हम दो पढ़ें)	पठाम (हम पढ़ें)

संक्षिप्त रूप

प्र० पु०	(सः) अतु	(तौ) अताम्	(ते) अन्तु
म० पु०	(त्वम्) अ	(युवाम्) अतम्	(यूयम्) अत
उ० पु०	(अहम्) आनि	(आवाम्) आव	(वयम्) आम

इसी प्रकार

लिख—लिखना	लिखतु	लिखताम्	लिखन्तु
वद्—कहना	वदतु	वदताम्	वदन्तु
हस्—हसना	हसतु	हसताम्	हसन्तु
धाव्—दौड़ना	धावतु	धावताम्	धावन्तु
रक्ष्—रक्षा करना	रक्षतु	रक्षताम्	रक्षन्तु
क्रीड्—खेलना	क्रीडतु	क्रीडताम्	क्रीडन्तु
गम्—जाना	गच्छतु	गच्छताम्	गच्छन्तु
आगम्—आना	आगच्छतु	आगच्छताम्	आगच्छन्तु
पत्—गिरना	पततु	पतताम्	पतन्तु
नृत्—नाचना	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु
भू (भव्)—होना	भवतु	भवताम्	भवन्तु

आज्ञार्थक लोट्—विधि लिङ् और लोट् लकार आज्ञा, अनुज्ञा तथा प्रा[rest of word cut off]
आदि के अर्थों के सूचक हैं। आशीर्वाद के अर्थ में भी लोट् का प्रयोग होता है।

उदाहरणार्थ

१—सुशीला गच्छतु (सुशीला जावे) २—छात्राः क्रीडन्तु (विद्यार्थी खे[rest of word cut off]
३—परमात्मा रक्षतु (ईश्वर रक्षा करे।) ४—यूयं गच्छत (तुम जाओ।) ५[rest of line cut off]
बालिकाः नृत्यन्तु (लड़कियाँ नाचें।) ६—गच्छाम किम् (क्या हम जावें ?) ७[rest of line cut off]
इदानीं छात्राः पठन्तु (इस समय छात्र पढ़ें।)

संस्कृत में अनुवाद करो

१—गोपाल और कृष्ण पढ़ें। २—नौकर (सेवकः) जावे। ३—लड़के दौ[rest of word cut off]
४—भगवान् रक्षा करे। ५—मैं जाऊँ ? ६—हम खेलें ? ७—वे न हँसें। ८[rest of line cut off]
अब आप खेलें। ९—तुम लोग पढ़ो। १०—हम दो पढ़ें ? ११—तुम दो मत हँ[rest of word cut off]
१२—तुम सब दौड़ो। १३—नर्तकियाँ (नर्तक्यः) नाचें। १४—क्यों हँसते हो[rest of line cut off]
१५—यहाँ आओ। १६—वहाँ न जाओ। १७—दौड़ो मत। १८—हँसो म[rest of word cut off]
१९—पढ़ो। २०—आओ, नाच करो। २१—अब खेलो मत, पढ़ो। २२—[rest of line cut off]
छात्र पढ़ें। २३—हम क्या पढ़ें ? २४—तुम वहाँ जाओ। २५—दो छात्र दौड़ें।

पञ्चम अभ्यास

कर्म कारक (द्वितीया) 'को'

संज्ञा-शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
पुं०	देवम्	देवौ	देवान्
स्त्री०	लताम्	लते	लताः
नपुं०	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि

सर्वनाम-शब्द

शब्द	एकव०	द्विव०	बहुव०	एकव०	द्विव०	बहुव०
अस्मद्	माम्	आवाम्	अस्मान्	माम्	आवाम्	अस्मान्
युष्मद्	त्वाम्	युवाम्	युष्मान्	त्वाम्	युवाम्	युष्मान्
तद्	तम्	तौ	तान्	ताम्	ते	ताः
इदम्	इमम्	इमौ	इमान्	इमाम्	इमे	इमाः
किम्	कम्	कौ	कान्	काम्	के	काः
यद्	यम्	यौ	यान्	याम्	ये	याः
भवत्	भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः	भवतीम्	भवत्यौ	भवतीः

आज्ञार्थक विधि लिङ्ग

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः
म० पु०	पठेः	पठेतम्	पठेत
उ० पु०	पठेयम्	पठेव	पठेम

संक्षिप्त रूप

प्र० पु०	(सः)	एत्	(तौ)	एताम्	(ते)	एयुः
म० पु०	(त्वम्)	एः	(युवाम्)	एतम्	(यूयम्)	एत
उ० पु०	(अहम्)	एयम्	(आवाम्)	एव	(वयम्)	एम

इसी प्रकार

भू (भव्)—होना	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
लिख्—लिखना	लिखेत्	लिखेताम्	लिखेयुः
वद्—कहना	वदेत्	वदेताम्	वदेयुः
हस्—हँसना	हसेत्	हसेताम्	हसेयुः
धाव्—दौड़ना	धावेत्	धावेताम्	धावेयुः
रक्ष्—रक्षा करना	रक्षेत्	रक्षेताम्	रक्षेयुः
क्रीड्—खेलना	क्रीडेत्	क्रीडेताम्	क्रीडेयुः
गम्—जाना	गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः

आगम्—आना	आगच्छेत्	आगच्छेताम्	आगच्छेयुः
पत्—गिरना	पतेत्	पतेताम्	पतेयुः
नृत्—नाचना	नृत्येत्	नृत्येताम्	नृत्येयुः

इन वाक्यों को ध्यान से देखो—

(१) छात्राः गुरुं नमेयुः (छात्र गुरु को प्रणाम करें।)

(२) शिशुः दुग्धं पिबेत् (बच्चा दूध पीवे।)

(३) सुधाकरः सुधां वर्षेत् (चन्द्रमा अमृत की वर्षा करे।)

(४) नृपः शत्रून् जयेत् (राजा शत्रु को जीते।)

(५) गुरुः शिष्यं प्रश्नं पृच्छेत् (गुरु शिष्य से प्रश्न पूछे।)

कर्म

जिसके ऊपर क्रिया का फल (प्रभाव) पड़ता है उसे कर्म कारक कहते हैं। और कर्म कारक में द्वितीया विभक्ति होती है (कर्मणि द्वितीया।)

"नृपः शत्रुं जयेत् (राजा शत्रु को जीते।)" इस वाक्य में "जीतना' क्रिया का फल 'नृपः (राजा)' कर्त्ता पर न पड़ कर शत्रु' पर पड़ा, क्योंकि शत्रु ही जीता जायगा। अतः 'शत्रु' कर्म कारक, हुआ और उसमें द्वितीया विभक्ति (शत्रुम्) लगी। जब क्रिया का व्यापार कर्त्ता पर ही रह जाता है, तब क्रिया अकर्मक होती है, जैसे 'बालकः हसति' इस वाक्य में 'हँसने' का व्यापार कर्त्ता तक ही रह जाता है, अतः 'हसति' यह रूप अकर्मक 'हस्' धातु का है।

उपपद विभक्तियाँ

कारकों से सदैव विभक्तियों का ही निर्देश नहीं होता, अपितु ये विभक्तियाँ वाक्य में प्रति, विना, अनु, अन्तरा, सह आदि निपातों तथा नमः, स्वाहा, अलम् आदि अव्ययों के योग से भी व्यवहृत होती हैं। ऐसी दशा में ये "उपपद विभक्तियाँ" कहलाती हैं। उपपद विभक्तियों के उदाहरण—

१. अन्तरा, अन्तरेण और विना के साथ द्वितीया होती है (अन्तरान्तरेण युक्ते)। यथा—

(अन्तरा) गङ्गां यमुनां चान्तरा प्रयागराजः अस्ति (गंगा और यमुना के बीच में प्रयागराज है।)

(अन्तरेण) ज्ञानमन्तरेण (ज्ञानं विना वा) नैव सुखम् (ज्ञान के विना
[illegible]ख नहीं है ।)

२. अभितः, परितः, समया, निकषा, हा, प्रति, अनु और यावत् के साथ
[illegible]तीया विभक्ति होती है । यथा—

(अभितः) प्रयागम् अभितः नद्यौ वहतः (प्रयाग के दोनों ओर नदियाँ
[illegible]ती हैं ।)

(निकषा, समया) वनं निकषा (समया वा) सरसी वर्तते (वन के
[illegible]मीप एक तालाब है ।)

(प्रति) दीनं प्रति दयां कुरु (दीन पर दया करो) ।

(हा) हा नास्तिकं य ईश्वरं न मन्यते (नास्तिक पर अफसोस है कि वह
[illegible]वर को नहीं मानता ।)

(अनु) स्वामिनमनु सेवकः गच्छति (स्वामी के पीछे सेवक जाता है ।)

(यावत्) स वनं यावत् गच्छति (वह वन तक जाता है ।)

(३) गत्यर्थक (जाना, चलना, हिलना आदि) धातुओं के साथ द्वितीया
[illegible]ती है । यथा—

कृषकः ग्रामं गच्छति (किसान गाँव जाता है ।) सिंहः वनं विचरति (सिंह
[illegible] में घूमता है ।)

(४) अधिशीङ्, अधिस्था, अध्यास् धातुओं के साथ द्वितीया होती है
(अधिशीङ् स्थासां कर्म) यथा—

शिष्यः आसनम् अधितिष्ठति, अध्यास्ते, अधिशेते वा (शिष्य आसन पर
[illegible]ता है या सोता है ।)

(५) उभयतः, सर्वतः, धिक्, उपर्युपरि, अधोऽधः, अध्यधि के साथ द्वितीया
[illegible]ती है । यथा—

नगरमुभयतः, सर्वतः वा वनम् । (नगर के दोनों ओर या चारों ओर जङ्गल
[illegible]) धिक् नास्तिकं यः ईश्वरलीलां न पश्यति (नास्तिक को धिक्कार है जो ईश्वर
लीला को नहीं देखता ।)

(६) समय और स्थानवाची शब्दों में द्वितीया होती है यदि अन्त तक
काल या मार्ग का ज्ञान हो (कालाध्वनोरत्यन्त संयोगे) । यथा—रमेशः पञ्च

वर्षाणि अधीते (रमेश पूरे पाँच वर्षों तक पढ़ता है ।) क्रोशं गोमती नदी (गो नदी पूरे एक कोस की दूरी पर है ।)

द्विकर्मक धातुएँ—"गोपः गां पयः दोग्धि" (ग्वाला गौ से दूध दोहता है। 'गौ से' का अनुवाद पञ्चमी विभक्ति (गोः) से होना चाहिए था, किन्तु दुह धा प्रयोग होने से पञ्चमी न होकर द्वितीया (गाम्) हो जाती है । इसी प्रकार निम्न धातुएँ तथा इनके अर्थ वाली धातुएँ द्विकर्मक हैं—

१—दुह् (दोहना) गोपः गां पयः दोग्धि (ग्वाला गाय से दूध दोहता है)

२—याच् (माँगना) दरिद्रः राजानं वस्त्रं याचते (दरिद्र राजा से वस्त्र माँगता है) ।

३—पच् (पकाना) सः तण्डुलान् ओदनं पचति (वह चावलों से भात पकाता है) ।

४—दण्ड् (सजा देना) राजा चोरं शतं दण्डयति (राजा चोर को सौ रुपये जुर्माना करता है) ।

५—रुध् (घेरना) व्रजमवरुणद्धि गाम् (गाय को व्रज में घेरता है)

६—प्रच्छ् (पूछना) मुनिं मार्गं पृच्छति (मुनि से रास्ता पूछता है।

७—चि (बटोरना) लताम् चिनोति पुष्पाणि (बेल से फूल चुनता है

८—ब्रू (बोलना) शिष्यं धर्मं ब्रूते (शिष्य से धर्म की बात कहता है

९—शास् (शासन करना) गुरुः शिष्यं धर्मं शास्ति (गुरु शिष्य को धर्म की बात बताता है ।)

१०—जि (जीतना) शत्रुं शतं जयति (दुश्मन से सौ जीतता है) ।

११—मन्थ् (मथना) क्षीरसागरममृतं मथ्नन्ति (क्षीरसागर से अमृत मथते

१२—मुष् (चोरना) चौरः राजानं सहस्रं मुष्णाति (चोर राजा के हजार रुपये चुराता है) ।

१३-१४—नी, वह् (ले जाना) सः ग्राममजां नयति वहति वा (वह गाँव को बकरी ले जाता है) ।

१५—हृ (चुराना) चौरः कृपणं धनमहरत् (चोर कंजूस का धन ले गया

१६—कृष् (खोदना) नराः वसुधां रत्नानि कर्षन्ति (लोग जमीन से रत्न निकालते हैं) ।

आर्दा १०० लक्का में

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—अलकनन्दा तथा भागीरथी के बीच में देवप्रयाग है। २—मैं पत्र लिखता है। ३-ग्राम के दोनों ओर वन है। ४—ज्ञान के बिना सुख नहीं होता है। ५—शकुन्तला ने पत्र लिखा। ६—सदा सच बोलना चाहिए। ७—छात्र दस वर्षों तक अध्ययन करता है (करोति।) ८—सीता कोस भर चलती है। ९—नगर के नीचे-नीचे जल है। १०—विद्यालय के चारों ओर फूल हैं (सन्ति) ११—नगर और विद्यालय के बीच में (अन्तरा) तालाब है। १२—सोहन घर को कब जायगा? १३—गुरु के पास शिष्य बैठा है। १४—राजा चोर को दण्ड देता है। १५—दुर्जन सज्जन को दुःख देता है। १६—विद्या धर्म की ओर जाती है। १७—परिश्रम के बिना विद्या नहीं होती है। १८—सिपाही (राजपुरुष) वन तक (यावत्) चोर का पीछा करता है। १९—मेरा गाँव काशी के समीप है। २०—हम ईश्वर को नमस्कार करते हैं (नमस्कुर्मः)।

कोष्ठ में दिये हुए शब्दों के उपयुक्त रूपों से रिक्त स्थान की पूर्ति करो----

१—साहस विना धनं न भवति (साहस)। होता है
२—रमेशः ग्रामं यावत् धावति (ग्राम)। तक
३—अहं वृक्षं फलानि अवचिनोमि (वृक्ष)।
४—शिष्यः पञ्च वर्षाणि अधीते (वर्ष)। पढ़ता है
५—कदा भवान् प्रयागं गमिष्यति (प्रयाग)। कब
६—सत्समागमः चेतांसि प्रसादयति (चेतस्)।
७—धर्मं अन्तरेण नैव मुक्तिः (धर्म)।
८—नृपः चोरं शतं दण्डयति (चोर)।
९—देवदत्तः ग्रामं अजां नयति (ग्राम)। ले जाता है
१०—चोरः नृपं धनम् अहरत् (नृप)।

षष्ठ अभ्यास

करण कारक (तृतीया) ने, से, द्वारा

संज्ञा-शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
पुं०	देवेन	देवाभ्याम्	देवैः
स्त्री०	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
नपुं०	ज्ञानेन	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानैः

सर्वनाम शब्द

पुंल्लिग			स्त्रीलिङ्ग		
एकव०	द्विव०	बहुव०	एकव०	द्विव०	बहुव०
मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
तेन	ताभ्याम्	तैः	तया	ताभ्याम्	ताभिः
अनेन	आभ्याम्	एभिः	अनया	आभ्याम्	आभिः
केन	काभ्याम्	कैः	कया	काभ्याम्	काभिः
येन	याभ्याम्	यैः	यया	याभ्याम्	याभिः
भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः	भवत्या	भवतीभ्याम्	भवतीभिः

(२) अदादिगणीय अस् (होना), परस्मैपद

वर्तमान काल (लट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	अस्ति (वह है)	स्तः (वे दो हैं)	सन्ति (वे हैं)
म० पु०	असि (तू है)	स्थः (तुम दो हो)	स्थ (तुम हो)
उ० पु०	अस्मि (मैं हूँ)	स्वः (हम दो हैं)	स्मः (हम हैं)

अनद्यतन भूत (लङ्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	आसीत् (वह था)	आस्ताम् (वे दो थे)	आसन् (वे थे)
म० पु०	आसीः (तू था)	आस्तम् (तुम दो थे)	आस्त (तुम थे)
उ० पु०	आसम् (मैं था)	आस्व (हम दो थे)	आस्म (हम थे)

आज्ञार्थक लोट्

प्र० पु०	अस्तु	स्ताम्	सन्तु
म० पु०	धि	स्तम्	स्त
उ० पु०	असानि	असाव	असाम

भविष्यत् काल (लृट्) भविष्यति भविष्यतः भविष्यन्ति आदि ।

विधि-लिङ्

प्र० पु०	स्यात्	स्याताम्	स्युः
म० पु०	स्याः	स्यातम्	स्यात
उ० पु०	स्याम्	स्याव	स्याम

हन् (मारना) लट्

प्र० पु०	हन्ति	हतः	घ्नन्ति
म० पु०	हन्सि	हथः	हथ
उ० पु०	हन्मि	हन्वः	हन्मः

अनद्यतन भूत (लङ्)

प्र० पु०	अहन्	अहताम्	अघ्नन्
म० पु०	अहन्	अहतम्	अहत
उ० पु०	अहनम्	अहन्व	अहन्म

अज्ञार्थक लोट्				विधिलिङ्		
हन्तु	हताम्	घ्नन्तु	प्र० पु०	हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः
जहि	हतम्	हत	प्र० पु०	हन्याः	हन्यातम्	हन्यात
हनानि	हनाव	हनाम	उ० पु०	हन्याम्	हन्याव	हन्याम

भविष्यत् काल (लृट्) हनिष्यति हनिष्यतः हनिष्यन्ति आदि ।

अदादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधिलिङ्
अद्—खाना	अत्ति	आदत्	अत्स्यति	अत्तु	अद्यात्
या—जाना	याति	अयात्	यास्यति	यातु	यायात्
स्ना—नहाना	स्नाति	अस्नात्	स्नास्यति	स्नातु	स्नायात्
भा—चमकना	भाति	अभात्	भास्यति	भातु	भायात्
रुद्—रोना	रोदिति	अरोदीत्	रोदिष्यति	रोदितु	रुद्यात्
दुह्—दोहना	दोग्धि	अधोक्	धोक्ष्यति	दोग्धु	दुह्यात

उपपद विभक्तियाँ (द्वितीया) ५२ सङ्का

इन वाक्यों को ध्यान से देखो—

(१) सः रथेन आगच्छति (वह रथ में आता है ।)
(२) सेवकः स्कन्धेन भारं वहति (नौकर कंधे पर भार उठाता है ।)
(३) शशिना सह याति कौमुदी (चाँदनी चाँद के साथ चली जाती है ।)
(४) कुम्भकारः दण्डेन चक्रं चालयति (कुम्हार डंडे से चक्र चलाता है ।)
(५) स्वर्णकारः स्वर्णेन अलङ्कारान् निर्माति (सुनार सोने से जेवर बनाता है)
(६) गोपालः अध्ययनेन अत्र वसति (गोपाल अध्ययन के लिए यहाँ रहता है)

करण-कारक (तृतीया)—क्रिया की सिद्धि में जो अत्यन्त सहायक हो है उसे करण कहते हैं (साधकतमं करणम्) । करण में तृतीया विभक्ति होती और कर्मवाच्य या भाववाच्य के कर्त्ता में भी तृतीया होती है (कर्तृकरणयोस्तृतीया) ऊपर के उदाहरण में (रथेन आगच्छति) आने में 'रथ' अत्यन्त सहायक है, उसमें 'तृतीया' विभक्ति हुई है। कर्मवाच्य—मया गृहं गम्यते । भाववाच्य— हस्यते, इनका विस्तृत वर्णन आगे दिया गया है ।

जैसा कि 'कर्म कारक' में बताया गया है 'सह, साकम्' आदि निपातों अव्ययों के योग से भी ये विभक्तियाँ व्यवहृत होती हैं । अतः ये उपपद विभक्ति कहलाती हैं । इनके उदाहरण भी यहाँ दिये जाते हैं—

१—जिस लक्षण (चिह्न) से किसी व्यक्ति या वस्तु का ज्ञान होता है, लक्षण बोधक शब्द में तृतीया विभक्ति होती है (इत्थं भूतलक्षणे); यथा—

जटाभिस्तापसः (जटा से तपस्वी ज्ञात होता है ।)

२—यदि शरीर के किसी विकृत अङ्ग में विकृति दिखाई पड़े तो विकृत के वाचक शब्द में तृतीया विभक्ति हो जाती है (येनाङ्गविकारः) । यथा— काणः (आँख से काना), कर्णेन बधिरः (कानों से बहरा) ।

३—कारण (हेतु) बोधक शब्दों में तृतीया होती है, यथा—सः अध्ययनेन वसति (वह पढ़ने के लिए रहता है)। विद्यया यशः भवति (विद्या से यश होता है) वास का हेतु 'अध्ययन' और यश का हेतु 'विद्या' है । गुणैः आत्मसदृशीं कन्याम् (गुणों में अपने समान कन्या से विवाह करें ।) सीता वीणावादनेन शीलाम् (सीता वीणा बजाने में शीला से बढ़ गयी है ।) सा श्रियमपि रूपेणातिशेते (वह सुन्दरता में लक्ष्मी से बढ़ चढ़ कर है ।)

४—प्रकृति (स्वभाव) आदि क्रिया विशेषण शब्दों में तृतीया विभक्ति होती है (प्रकृत्यादिभ्य: उपसंख्यानम्), यथा—मोहन: सुखेन. जीवति (मोहन सुख से रहता है।) प्रकृत्या गवां पय: मधुरम् (स्वभावत: गौओं का दूध मीठा होता है।) स स्वभावेन कोमल: (वह स्वभाव से प्रिय है।)

५—किम्, कार्यम्, अर्थ:, प्रयोजनम् और अलम् के साथ तृतीया होती है, यथा—धनेन किम् (धन से क्या ?), तृणेन अपि कार्यं भवति (तिनके से भी कार्य होता है), कोऽर्थ: पुत्रेण जातेन यो न विद्वान् न धार्मिक: (उस पुत्र के पैदा होने से क्या, जो न विद्वान् हो और न धार्मिक हो ?) मूर्खाणां किं पुस्तकै: प्रयोजनम् (मूर्खों का पुस्तकों से क्या मतलब), अलं हसितेन (हँसो मत)।

६—सह, साकम्, सार्धम्, समम् के साथ वाले शब्दों में तृतीया विभक्ति होती है (सह युक्तेऽप्रधाने), यथा—शिष्य: गुरुणा सह विद्यालयं गच्छति।

७—फलप्राप्ति (अपवर्ग) में भी तृतीया विभक्ति होती है, यथा—दशभि: वर्षै: अध्ययनं समाप्तम् (दस वर्षों में अध्ययन समाप्त हो गया।) अर्थात् दस वर्षों में अध्ययन का फल मिल गया।

८—तुल्य अर्थ में भी तृतीया विभक्ति होती है, यथा— स देवेन समान: (वह देव के समान है।) धर्मेण सदृश: (धर्म के समान)।

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—वह कलम (लेखनी) से लिखता है। २—श्यामा जल से मुख धो रही है (प्रक्षालयति।) ३—श्रीराम सीता और लक्ष्मण के साथ वन को गये ४—किस कारण यहाँ रहते हो (वससि) ? ५—इन्स्पेक्टर (निरीक्षक) मोटर से (मोटरयानेन) मुरादाबाद जायगा। ६—नाई (नापित:) उस्तरे से (क्षुरेण) हजामत बनाता है (मस्तकं मुण्डयति)। ७—धन से हीन मनुष्य दु:खी रहता है (दुख्यति)। ८—मनोरथों से कार्य सिद्ध नहीं होते हैं (सिध्यन्ति)। ९—पुत्र के बिना माता दु:ख से समय बिताती है (यापयति)। १०—बुरे लड़कों के साथ मत खेलो। ११—रमेश स्वभाव से नेक (साधु:) है। १२—वह साबुन से (फेनिलेन) मुख धोता है। १३—विद्यार्थी दोस्तों के साथ गेंद (कन्दुक) खेलते हैं। १४—वीरेन्द्र ने तलवार (खड्ग) से चीते को (द्विपिनम्) मारा। १५—जटा से वह तपस्वी प्रतीत होता है (प्रतीयते)। १६—बालक बन्दरों के साथ खेलते हैं। १७—राष्ट्रपति के साथ सेनापति

यहाँ आया। १८—यात्रियों ने (यात्रिकाः) साधुओं के साथ स्नान किया। १९—सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। २०—सिपाहियों ने लट्ठी से (यष्टिक चोरों को पीटा (अताडयन्)।

कोष्ठ में दिये हुए शब्दों के उपयुक्त रूपों से रिक्त स्थानों को भरो-

१—सः ——— रामभद्रम् अनुहरति (स्वर)।
२—कश्यपोऽस्मि ——— (गोत्र)।
३— ——— सह तडित् प्रलीयते (मेघ)।
४—तन्तुवायः ——— सुन्दरं वस्त्रं वयति (सूत्र)।
५—बालकाः ——— क्रीडन्ति (कन्दुक)।
६— ——— अपि मूर्खाणाम् एकं क्रीणीत पण्डितम् (सहस्र)।

सप्तम अभ्यास

सम्प्रदान कारक (चतुर्थी) (को, के लिए)

संज्ञा शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	देवाय	देवाभ्याम्	देवेभ्यः
म० पु०	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
उ० पु०	ज्ञानाय	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानेभ्यः

सर्वनाम शब्द

पुं०			स्त्री०		
एकव०	द्विव०	बहुव०	एकव०	द्विव०	बहुव०
मह्यम्	आवाभ्याम्	अस्मभ्यम्	मह्यम्	आवाभ्याम्	अस्म
तुभ्यम्	युवाभ्याम्	युष्मभ्यम्	तुभ्यम्	युवाभ्याम्	युष्म
तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्
अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः	अस्यै	आभ्याम्	आभ्
कस्मै	काभ्याम	केभ्यः	कस्यै	काभ्याम्	काभ्
यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः	यस्यै	याभ्याम्	याभ्
भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः	भवत्यै	भवतीभ्याम्	भवत

(३) जुहोत्यादिगणीय दा (देना) परस्मैपद

वर्तमान काल (लट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	ददाति	दत्तः	ददति
म० पु०	ददासि	दत्थः	दत्थ
उ० पु०	ददामि	दद्वः	दद्मः

(अनद्यतन) भूतकाल (लङ्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
म० पु०	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उ० पु०	अददाम्	अदद्व	अदद्म

भविष्यत् काल (लृट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
म० पु०	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उ० पु०	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

आज्ञार्थक (लोट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	ददातु	दत्ताम्	ददतु
म० पु०	देहि	दत्तम्	दत्त
उ० पु०	ददानि	ददाव	ददाम

विधि लिङ्

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
म० पु०	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उ० पु०	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

जुहोत्यादिगणीय कुछ अन्य धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधि लिङ्
धा–धारण करना	दधाति	अदधात्	धास्यति	दधातु	दध्यात्
अभि+धा–कहना	अभिदधाति	अभ्यदधात्	अभिधास्यति	अभिदधातु	अभिदध्यात्
वि+धा–करना	विदधाति	व्यदधात्	विधास्यति	विदधातु	विदध्यात्
भी–डरना	बिभेति	अबिभेत्	भेष्यति	बिभेतु	बिभीयात्
हा–छोड़ना	जहाति	अजहात्	हास्यति	जहातु	जह्यात्

इन वाक्यों को ध्यान से पढ़ो—

(१) उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये (मूर्खों को उपदेश देना उनका क्रोध बढ़ाना है, वह उनकी शान्ति के लिए नहीं होता)।

(२) कृषकेभ्यः कर्मकरेभ्यश्च कुशलं भूयात् (किसानों तथा मजदूरों का हो।)

(३) अलमिदं उत्साहभ्रंशाय भविष्यति (यह उत्साह भंग करने के लिए है।)

(४) गामानामा प्रख्यातमल्लः जविस्कोवाख्ने मल्लायालम् (गामा नामक प्र पहलवान जविस्को पहलवान के जोड़ के लिए काफी है।)

(५) आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि (तुम्हारा हथियार पीड़ितों की के लिए है, न कि निर्दोषों को मारने के लिए।)

(६) परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् (परोपकार पुण्य के लिए दूसरे के सताने से पाप होता है।)

(७) इन्द्राय वज्रं प्राहरत् (इन्द्र पर वज्र फेंका।) [जिस पर शस्त्र फेंका है (प्र+हृ) उसमें चतुर्थी होती है।]

सम्प्रदान कारक (चतुर्थी)—जिसको सर्वथा (सम्यक् प्रकार से) किया जाता है, उसे सम्प्रदान कहते हैं (कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्)। सम में चतुर्थी होती है। यथा—नृपः ब्राह्मणेभ्यः गाः ददाति (राजा ब्राह्मणों को देता है)। सम्प्रदान का अर्थ है, अच्छा दान, अर्थात् जिसमें दी हुई वस्तु सर्वथा दी है, दान कर्त्ता के पास वापस नहीं आती। "स रजकस्य वस्त्रं ददाति" (वह धोबी कपड़े देता है।) इसमें वह कपड़े धोबी को सर्वथा नहीं देता है, अपितु वापस है, इस कारण "रजकस्य" में चतुर्थी* नहीं हुई।

---

*छात्रों को 'के लिए' देख कर झट से चतुर्थी का प्रयोग नहीं करना चा 'तादर्थ्य' (एक वस्तु दूसरी वस्तु के लिए) में ही चतुर्थी होती है। इन उदाहर देखो (१) "नैष भारो मम" (यह मेरे लिए भार नहीं है।) (२) अप्युपहासस्य समयोऽ (क्या यह समय हँसी करने के लिए है?) (३) प्राणेभ्योऽपि प्रिया सीता राम सीन्महात्मनः (महात्मा राम के लिए सीता प्राणों से भी प्यारी थी।) उदाहरणों में 'के लिए' है, किन्तु 'तादर्थ्य' न होने से चतुर्थी नहीं हुई।

सम्प्रदान में ही चतुर्थी नहीं होती, बल्कि निम्न उपपद विभक्तियों के साथ भी चतुर्थी होती है—

१—जिसके निमित्त कोई क्रिया की जाती है उसमें चतुर्थी होती है, यथा—भक्तः मुक्तये हरिं भजति (भक्त मुक्ति के लिए हरि का भजन करता है।) बालः दुग्धाय क्रन्दति (बालक दूध के लिए रोता है।)

२—रुच् (अच्छा लगना) अर्थवाली धातुओं के साथ चतुर्थी होती है (रुच्यर्थानां प्रीयमाणः) यथा—शिशवे क्रीडनकं रोचते (बच्चे को खिलौना अच्छा लगता है।) रमायै रामायणपठनं रोचते (रमा को रामायण का पाठ अच्छा लगता है।)

३—क्रुध्, द्रुह्, ईर्ष्य्, असूय् अर्थवाली धातुओं के साथ जिस पर क्रोध किया जाता है, उसमें चतुर्थी होती है (क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः), यथा—गुरुः शिष्याय क्रुध्यति (गुरु चेला पर क्रोध करता है।), मूर्खः पण्डिताय द्रुह्यति (मूर्ख पण्डित से द्रोह करता है।), शिक्षकः छात्राय कुप्यति (अध्यापक छात्र पर क्रोध करता है।)

४—नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट् के योग में चतुर्थी होती है (नमः स्वस्ति स्वाहास्वधालंवषड् योगाच्च), यथा—ईश्वराय नमः (ईश्वर के लिए नमस्कार), नृपाय स्वस्ति (राजा का कल्याण हो), अग्नये स्वाहा, पितृभ्यः स्वधा, इन्द्राय वषट्। दुर्गा मधुकैटभाय अलम्।

५—हित और सुख शब्दों के योग में चतुर्थी होती है, यथा ब्राह्मणाय हितं सुखं वा भवेत् (ब्राह्मण का हित हो।)

६—कथ् (कथय्), निवेदय्, उपदिश्, धारय्, (ऋणी होना), स्पृह्, कल्पते, संपद्यते (होना) के साथ चतुर्थी होती है, यथा—विद्या ज्ञानाय कल्पते सम्पद्यते वा (विद्या ज्ञान के लिए होती है।), गुरुः शिष्याय कथयति, उपदिशति वा (गुरु शिष्य को उपदेश करता है।), स मह्यं शतं धारयति (उसको मेरे सौ रुपये देने हैं।)

७—निमित्त अर्थ में चतुर्थी होती है, यथा—विद्या ज्ञानाय भवति, धनं च सुखाय (विद्या ज्ञान के लिए और धन सुख के लिए होता है।)

८—समर्थ अर्थवाली धातुओं के साथ चतुर्थी होती है, यथा—प्रभवति मल्लो मल्लाय (एक पहलवान दूसरे पहलवान के साथ लड़ने को समर्थ है।)

९—तुम् के अर्थ में भी चतुर्थी होती है, यथा—सः यज्ञाय याति अर्थात् य... याति (वह हवन करने के लिए जाता है।)

१०—चतुर्थी के अर्थ में 'कृते' और 'अर्थम्' का भी प्रयोग होता है, यथा... पठनार्थम्, पठनस्य कृते (पढ़ने के लिए।)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—मैं धन की इच्छा नहीं करता हूं (स्पृहयामि) ।* २—सज्जन स... परोपकार की चेष्टा करता है (चेष्ट्) । ३—गुरु शिष्यों को उपदेश करता... ४—बालक को लड्डू (मोदकः) अच्छा लगता है । ५—वह मूर्ख तुम से ई... करता है । ६—वह दुर्जन उस सज्जन से द्रोह करता है । ७—पिता पुत्र पर क्रो... करता है । ८—सोहन मेरा सौ रुपये का ऋणी है । ९—मुनि मोक्ष के लिए ई... को भजता है १०—राजा ने ब्राह्मणों को धन दिया । ११—इन्स्पेक्टर ने मो... को इनाम (पारितोषिक) दिया । १२—विद्या ज्ञान के लिए होती है । १३—... पढ़ने के लिए विद्यालय जाओ । १४—तुम मुझसे क्यों ईर्ष्या करते हो ? १५-... यह दवाई (अगदम्) रोगी (रुग्ण) को दे दो । १६—वह धन की इच्छा कर... हूं । १७—घोड़े के लिए घास लाओ । १८—उन प्राचीन मुनियों के लिए नमस्... हो । १९—ब्राह्मणों और गौओं का कल्याण हो । २०—उस रोगी को पतली... खिचड़ी (तरलं कृशरम्) दे दो । २१—उसे दस्त आते हैं (स अतिसारकी... उसके लिए लंघन ही अच्छा (लङ्घनं हितम् है ।) २२—बालकों को भ्रमण अच्... लगता है ।

कोष्ठ में दिये हुए शब्दों के रूपों से रिक्तस्थानों की पूर्ति करो—

१. ...... क्रीडनकं रोचते (शिशु) ।
२. साधुः सदैव ...... चेष्टते (परोपकार) ।
३. भगवत्यै ...... नमः (महामाया) ।

---

*इनके रूप "पठति पठतः पठन्ति" आदि की भाँति चलेंगे—क्रुध्यति, कुप्य... द्रुह्यति, ईर्ष्यति, असूयति, कथयति, उपदिशति, धारयति, क्रन्दति । 'रोचते' के ... आठवें अभ्यास में जायते की भाँति चलेंगे ।

४. आचार्यः ... उपदिशति (शिष्य) ।
५. परोपकारः ... भवति (पुण्य) ।
६. त्वम् ... जातमुद्रा धारयसि (अस्मद्) ।
७ गुरुः ... विद्यां वितरति (शिष्य) ।

अष्टम अभ्यास

अपादान कारक (पञ्चमी) से

संज्ञा शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
पु०	देवात्	देवाभ्याम्	देवेभ्यः
पु०	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
पु०	ज्ञानात्	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानेभ्यः

सर्वनाम शब्द

पुं० एकव०	द्विव०	बहुव०	स्त्री० एकव०	द्विव०	बहुव०
मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः	भवत्याः	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः

(४) दिवादिगणीय जन् (पैदा होना) आत्मनेपद

वर्तमानकाल (लट्)

प्र० पु०	जायते	जायेते	जायन्ते
म० पु०	जायसे	जायेथे	जायध्वे
उ० पु०	जाये	जायावहे	जायामहे

भूतकाल (लङ्)

प्र० पु०	अजायत	अजायेताम्	अजायन्त
म० पु०	अजायथाः	अजायेथाम्	अजायध्वम्
उ० पु०	अजाये	अजायावहि	अजायामहि

भविष्यत्काल (लृट्)

प्र० पु०	जनिष्यते	जनिष्येते	जनिष्यन्ते

आज्ञार्थक लोट्				विधिलिङ्		
जायताम्	जायेताम्	जायन्ताम्	प्र० पु०	जायेत	जायेयाताम्	जायेर[illegible]
जायस्व	जायेथाम्	जायध्वम्	म० पु०	जायेथाः	जायेयाथाम्	जायेध[illegible]
जायै	जायावहै	जायामहै	उ० पु०	जायेय	जायेवहि	जायेम[illegible]

दिवादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधि[illegible]
विद्—होना	विद्यते	अविद्यत	वेत्स्यते	विद्यताम्	विद्ये[illegible]
युध्—लड़ना	युध्यते	अयुध्यत	योत्स्यते	युध्यताम्	युध्ये[illegible]
सिव्—सीना	सीव्यति	असीव्यत्	सेविष्यति	सीव्यतु	सीव्ये[illegible]
नश्—नाश होना	नश्यति	अनश्यत्	नशिष्यति	नश्यतु	नश्ये[illegible]
नृत्—नाचना	नृत्यति	अनृत्यत्	नर्तिष्यति	नृत्यतु	नृत्ये[illegible]

इन वाक्यों को ध्यान से देखो—

(१) धीरा मनस्विनः न धनात्प्रतियच्छन्ति मानम् (धीर मनस्वी लो[illegible] के बदले मान को नहीं छोड़ते)

(२) स्वार्थात् सतां गुरुतरा प्रणयिक्रियैव (सत्पुरुषों के लिए अपने प्र[illegible] से मित्रों का प्रयोजन ही बड़ा है ।)

(३) नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात् पातकं महत् (सत्य से बढ़कर धर्म नहीं और झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं ।)

(४) असज्जनात् कस्य भयं न जायते (दुष्ट से किसको डर नहीं लगता

(५) आमूलात् रहस्यमिदं श्रोतुमिच्छामि (आरम्भ से लेकर इस रहस्य सुनना चाहता हूं।)

(६) हिमालयात् गङ्गा प्रभवति (गङ्गा हिमालय से निकलती है ।)

अपादान कारक (पञ्चमी)—जिससे कोई वस्तु पृथक् (अलग) हो, उसे अपादान कहते हैं (ध्रुवमपायेऽपादानम्)। अपादान में पञ्चमी होती है, यथा—वृक्षात् पत्राणि पतन्ति (पेड़ से पत्ते गिरते हैं ।) यदि अपादान में (पृथक् करण) का भाव न हो तो पञ्चमी नहीं होती, जैसे—"कां बेलां त्वामन्वेष्यामि" (कितने समय से मैं तुम्हें ढूंढ रहा हूँ ।) यहाँ पर 'बेला' अवधि नहीं है, अन्वेषण क्रिया से व्याप्तकाल है, अतः 'अत्यन्त संयोग' में द्वितीया हुई है । इसी प्रकार "वृक्षशाखासु अवलम्बन्ते मुनीनां वासांसि" (मुनियों के वस्त्र वृक्ष की शाखाओं से लटक रहे हैं ।) यहाँ पर वृक्षशाखा अपादान कारक नहीं, अपितु 'अधिकरण कारक' (वस्त्रों की अवलम्बन क्रिया का आधार होने से) है ।

१—भय और रक्षा के अर्थवाली धातुओं के साथ भय के कारण में पञ्चमी होती है, (भीत्रार्थानां भयहेतुः), यथा—असज्जनात् कस्य भयं न जायते, बालकः सिंहात् बिभेति । = डरता है ✓ चुराना

२—जुगुप्सते, विरमति, प्रमाद्यति के साथ पञ्चमी होती है (जुगुप्साविराम-प्रमादार्थानामुपसंख्यानम्) पापात् जुगुप्सते, विरमति । धर्मात् प्रमाद्यति ।

३—जिस वस्तु से किसी को हटाया जाय, उसमें पञ्चमी होती है (वारणार्थानामीप्सितः) यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे (खेत में जौ से गौ को हटाता है ।) गुरुः शिष्यं पापात् वारयति ।

४—जिससे नियमपूर्वक विद्या सीखी जाय, उसमें पञ्चमी होती है (आख्यातोपयोगे), यथा—उपाध्यायात् अधीते (गुरु से पढ़ता है ।) आचार्यात् पठति ।

५—जायते, प्रभवति, उद्गच्छति, उद्भवति, निलीयते, प्रतियच्छति के साथ पञ्चमी होती है, यथा—प्रजापतेः लोकः प्रजायते (प्रजापति से संसार पैदा होता है ।) हिमालयात् गङ्गा प्रभवति, उद्गच्छति वा (हिमालय से गङ्गा निकलती है ।) राजपुरुषात् चोरः निलीयते (सिपाही से चोर छिपता है ।) तिलेभ्यः माषान् प्रतियच्छति (तिलों से उड़द बदलता है ।)

६—अन्य, आरात्, इतर (अन्य अर्थ वाले और भी शब्द) ऋते, पूर्व आदि दिशावाची शब्द (इनका देश काल अर्थ हो तो भी), प्रभृति, बहिः शब्दों के साथ पञ्चमी होती है (अन्यारादितरर्तेदिक्०) यथा—ज्ञानात् ऋते न सुखम् (ज्ञान के

विना सुख नहीं है।) नगराद् पूर्वः, पश्चिमः, उत्तरः, दक्षिणः प्राक् आदि (अधि से पूर्व आदि की ओर), शैशवात् प्रभृति सोऽतीव चतुरः (बाल्यकाल से लेकर ज्ञान बहुत चतुर है), नगराद् बहिः (नगर से बाहर)।

७—जिससे तुलना की जाती है उसमें पञ्चमी होती है, यथा—धनात् ज्ञ गुरुतरम् (धन से ज्ञान अच्छा है), देवात् रमेशः पटुतरः (देव से होशियार है।)

८—पृथक् और विना के साथ पञ्चमी, द्वितीया और तृतीया तीनों विभक्ति होती हैं (पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम्), यथा—स भ्रातुः (भ्रातरम्, भ्रा वा) पृथक् तिष्ठति, श्रमाद् (श्रमं, श्रमेण वा) विना विद्या न भवति (परिश्रम विना विद्या नहीं आती।)

९—दूर और निकटवाची शब्दों में पञ्चमी, द्वितीया और तृतीया होती (दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च), यथा—नगरात्, दूरात्, दूरं, दूरेण वा।

१०—जब ल्यप् का लोप हो और कर्म और अधिकरण का भाव हो पञ्चमी होती है, प्रासादात् प्रेक्षते (महल से देखता है) अर्थात् प्रासादमारुह्य प्रे आसनात् प्रेक्षते अर्थात् आसने उपविश्य प्रेक्षते (आसन में बैठकर देखता है। श्वशुराद् जिह्रेति अर्थात् श्वशुरं वीक्ष्य जिह्रेति (श्वशुर को देखकर लजाता है।)

संस्कृत में अनुवाद करो---

१—बालक ऊँचे महल से गिर पड़ा। २—धर्म से सुख और अधर्म से होता है। ३—पेड़ से पके हुए (पक्वानि) फल गिर रहे हैं। ४—मैं सिंह से डरता हूं, दुर्जन से डरता हूँ। ५—गङ्गा और यमुना हिमालय से निकलती ६—गाँव से पश्चिम की ओर हरिजन रहते हैं। ७—तिलकजी बचपन से ही चतुर ८—परीक्षा के पाँचवें दिन रमेश आ गया। ९—बनिया (वणिक्) चावलों (तण्डु से उड़द नहीं बदलता है। १०—गुरु शिष्य को पाप से हटाता है। ११—विद्या नगर से दूर नहीं है। १२—ब्रह्मा से (ब्रह्मणः) लोक पैदा होते हैं। १३—सज्ज पाप से घृणा करता है। १४—बालक माता से छिपता है। १५—उस नाटककार यह कवि बहुत चतुर है। १६—घुड़सवार (सादी) घोड़े से गिर पड़ा। १७— से विद्या पढ़ो। १८—वह बाल्यकाल से यहीं रहता है। १९—गोविन्द श्याम

अधिक बुद्धिमान् (बुद्धिमत्तरः) है। २०—श्वशुर से वहू लज्जा करती है। २१—ज्ञान के विना सुख नहीं है। २२—चोर सेंध लगा कर (सन्धि छित्वा) चौकीदारों से (प्रहरिभ्यः) छिप गये (तिरोऽभवन्)। २३—हे मूढ़ मृत्यु से क्यों डरता है?

*निम्न वाक्यों को शुद्ध करो---

१—पिता पुत्रं पापेन निवारयति।
२—सा बालिका वानरेण बिभेति।
३—शिष्यः गुरुणा अधीते।
४—धनेन ज्ञानं गुरुतरः।
५—अस्मिन् नगरे आगच्छम्।
६—राजपुरुषेण चोरः निलीयते।

नवम अभ्यास

सम्बन्ध (षष्ठी) का, के, की, रा, रे, री

संज्ञा शब्द

	एकव०	द्विव०	वहुव०
पुं०	देवस्य	देवयोः	देवानाम्
स्त्री०	लतायाः	लतयोः	लतानाम्
नपुं०	ज्ञानस्य	ज्ञानयोः	ज्ञानानाम्

सर्वनाम शब्द

पुं० एकव०	पुं० द्विव०	पुं० वहुव०	स्त्री० एकव०	स्त्री० द्विव०	स्त्री० वहुव०
मम	आवयोः	अस्माकम्	मम	आवयोः	अस्माकम्
तव	युवयोः	युष्माकम्	तव	युवयोः	युष्माकम्
तस्य	तयोः	तेषाम्	तस्याः	तयोः	तासाम्
अस्य	अनयोः	एषाम्	अस्याः	अनयोः	आसाम्
कस्य	कयोः	केषाम्	कस्याः	कयोः	कासाम्
यस्य	ययोः	येषाम्	यस्याः	ययोः	यासाम्
भवतः	भवतोः	भवताम्	भवत्याः	भवत्योः	भवतीनाम्

*शुद्धियाँ १—पापात्। २—वानरात्। ३—गुरोः। ४—धनात् ज्ञानं गुरुतरम्। ५—इदं नगरम् आगच्छम्। ६—राजपुरुषात्।

(५) स्वादिगणीय श्रु (सुनना) परस्मैपद

वर्तमानकाल (लट्)

प्र० पु०	शृणोति	शृणुतः	शृण्वन्ति
म० पु०	शृणोषि	शृणुथः	शृणुथ
उ० पु०	शृणोमि	शृणुवः, शृण्वः	शृणुमः, शृ

अनद्यतन भूतकाल (लङ्)

प्र० पु०	अशृणोत्	अशृणुताम्	अशृण्वन्
म० पु०	अशृणोः	अशृणुतम्	अशृणुत
उ० पु०	अशृण्वम्	अशृणुव, अशृण्व	अशृणुम,अशृ

भविष्यत्काल (लृट्)

प्र० पु०	श्रोष्यति	श्रोष्यतः	श्रोष्यन्ति श्र

आज्ञार्थक लोट्				विधि लिङ्		
शृणोतु	शृणुताम्	शृण्वन्तु	प्र० पु०	शृणुयात्	शृणुयाताम्	शृणुयुः
शृणु	शृणुतम्	शृणुत	म० पु०	शृणुयाः	शृणुयातम्	शृणुया
शृणवानि	शृणवाव	शृणवाम	उ० पु०	शृणुयाम्	शृणुयाव	शृणुया

स्वादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधि
शक्—सकना	शक्नोति	अशक्नोत्	शक्ष्यति	शक्नोतु	शक्नु
चिञ्—चुनना	चिनोति	अचिनोत्	चेष्यति	चिनोतु	चिनु
आप—पाना	आप्नोति	आप्नोत्	आप्स्यति	आप्नोतु	आप्नु
धुञ्—काँपना	धुनोति	अधुनोत्	धविष्यति	धुनोतु	धुनु
क्षि—कम होना	क्षिणोति	अक्षिणोत्	क्षेष्यति	क्षिणोतु	क्षिणु

इन वाक्यों को ध्यान से देखो—

(१) न हि परगुणानां विज्ञातारो बहवो भवन्ति (दूसरे के गुणों जाननेवाले बहुत नहीं होते ।)

(२) पुत्र, लोकव्यवहाराणाम् अनभिज्ञोऽसि (बेटा, तुम लोक व्यवहा अनभिज्ञ हो ।)

(३) गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणाम् (तुम्हें यक्षेश्वरों की नगरी अलका को जाना है।)

(४) विचित्रा हि सूत्राणां कृतिः पाणिनेः (पाणिनि के सूत्रों की कृति विचित्र है।)

(५) अलसस्य कुतो विद्या, अविद्यस्य कुतो धनम्। अधनस्य कुतो मित्रम्, अमित्रस्य कुतः सुखम् (आलसी को विद्या कहाँ और विद्या के विना धन कहाँ, धन के विना मित्र कहाँ और मित्र के विना सुख कहाँ।)

सम्बन्ध (षष्ठी)

दो या दो से अधिक संज्ञा शब्दों को मिलाने के लिए जो सम्बन्ध होता है उसमें षष्ठी विभक्ति काम में लायी जाती है। उसका क्रिया से साक्षात् सम्बन्ध नहीं होता।

जैसे—मम पुस्तकम् (मेरी पुस्तक), गङ्गाया जलम् (गंगा का जल)।

१. हेतु शब्द के साथ षष्ठी होती है, यथा—अन्नस्य हेतो वंसति (अन्न के कारण रहता है,।)

२. स्मरण अर्थवाली धातुओं के साथ षष्ठी होती है, (अधीगर्थदयेशां कर्मणि) यथा—मातुः स्मरति (दुःखपूर्वक माता का स्मरण करता है।), स दरिद्रस्य दयते।

३. उपरि, उपरिष्ठात्, अधः, अधस्तात्, पुरः, पुरस्तात्, पश्चात्, अग्रे, उत्तरतः, दक्षिणतः के साथ षष्ठी होती है, यथा नगरस्य उत्तरतः दक्षिणतः आदि।

४. निमित्त अर्थवाले शब्दों (निमित्त, कारण, प्रयोजन, हेतु) के साथ प्रायः सभी विभक्तियाँ होती हैं (निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम्), यथा—किं निमित्तं वसति, केन निमित्तेन, कस्मै निमित्ताय। कस्य हेतोः, कस्मात् प्रयोजनात्, केन कारणेन वा।

५. बहुतों में से एक छाँटने के अर्थ में, जिससे छाँटा जाय उसमें षष्ठी होती है (यतश्च निर्धारणम्), यथा—छात्राणां छात्रेषु वा गोविन्दः श्रेष्ठः पटुतमो वा।

६. कृते (लिए), मध्ये, समक्षम्, अन्तरे, अन्तः के साथ षष्ठी होती है, यथा—पठनस्य कृते, गुरोः समक्षम्, बालानां मध्ये, गृहस्य अन्तः अन्तरे वा।

७. आशीर्वाद सूचक शब्दों के साथ षष्ठी और चतुर्थी दोनों ही होती हैं, यथा—नृपस्य नृपाय वा भद्रम्, कुशलं भूयात्।

संस्कृत में अनुवाद करो

१. हमारा गाँव नगर के निकट स्थित है । २. अनेक कवियों ने हिमालय प्रशंसा की है । ३. गंगा का जल पवित्र और मधुर है । ४. वह पढ़ने के हेतु काशी रहता है । ५. हिमालय भारतवर्ष के उत्तर दिशा में स्थित है । ६. गोपाल पिता स्मरण करता है । ७. पुस्तकों म गीता श्रेष्ठ है और वेद सबसे प्राचीन हैं । ८. धन के निमित्त ही जीते हैं । ९. वह घर के आगे पृथ्वी खोदता है (खनति) । १०. मनु में ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं । ११. पक्षियों में कौवा (वायस) चतुर है और पशुओं में शृगाल १२. परिश्रम का फल अवश्य मिलता है । १३. गुरु की निन्दा पाप है । १४. बकरी का (अजायाः) दूध चाहता है । १५. इस नगर के उत्तर की ओर गोमती १६. देवताओं ने भी भारत की प्रशंसा की । १७. बालक पिता का अनुकरण करता (अनुकरोति ।) १८. यह छात्रा सब में चतुर है । १९. बनारस के आम मीठे हैं । २०. बाग की शोभा देखो ।

धातु का जो कोष्ठोंवाला रूप ठीक बैठे उसे रेखांकित करो--

१—तस्मै मिष्टान्नं न (रोचे, रोचते, रोचसे) ।

२—भवान् मां तृणाय (मन्ये, मन्यसे, मन्यते) ।

३—आवां परोपकाराय (यते, यतामहे, यतावहे) ।

४—सर्वे शान्ति (लभेत्, लभेयाताम्, लभेरन्) ।

५—मोहनः धनं (लप्स्यसे, लप्स्यते, लप्स्ये) ।

६—तौ गुरुम् (असेवत्, असेवेताम्) ।

७—द्रोहः कष्टाय (कल्पसे, कल्पते) ।

दशम अभ्यास

अधिकरण कारक (सप्तमी) में, पर

संज्ञा-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
पुं०	देवे	देवयोः	देवेषु
स्त्री०	लतायाम्	लतयोः	लतासु
नपुं०	ज्ञाने	ज्ञानयोः	ज्ञानेषु

सर्वनाम शब्द

पुँ०			स्त्री०		
एकव०	द्विव०	बहुव०	एकव०	द्विव०	बहुव०
मयि	आवयोः	अस्मासु	मयि	आवयोः	अस्मासु
त्वयि	युवयोः	युष्मासु	त्वयि	युवयोः	युष्मासु
तस्मिन्	तयोः	तेषु	तस्याम्	तयोः	तासु
अस्मिन्	अनयोः	एषु	अस्याम्	अनयोः	आसु
कस्मिन्	कयोः	केषु	कस्याम्	कयोः	कासु
यस्मिन्	ययोः	येषु	यस्याम्	ययोः	यासु
भवति	भवतोः	भवत्सु	भवत्याम्	भवत्योः	भवतीषु

(६) तुदादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधिलिङ्
तुद्—दुःखदेना	तुदति	अतुदत्	तोत्स्यति	तुदतु	तुदेत्
मिल् मिलना	मिलति	अमिलत्	मेलिष्यति	मिलतु	मिलेत्
मुञ्च्—छोड़ना	मुञ्चति	अमुञ्चत्	मोक्ष्यति	मुञ्चतु	मुञ्चेत्
सिञ्च्—सींचना	सिञ्चति	असिञ्चत्	सेक्ष्यति	सिञ्चतु	सिञ्चेत्
तृप्—तृप्त होना	तृपति	अतृपत्	तर्पिष्यति	तृपतु	तृपेत्
विश्—प्रवेशकरना	विशति	अविशत्	वेक्ष्यति	विशतु	विशेत्
प्रच्छ्—पूछना	पृच्छति	अपृच्छत्	प्रक्ष्यति	पृच्छतु	पृच्छेत्

विशेष तुदादिगण की धातुएँ भ्वादिगण की धातुओं के समान हैं। अन्तर इतना ही है कि भ्वादिगण में गुण होता है, तुदादि में नहीं। तुदादिगणीय धातुओं के रूप परस्मैपद में पठति की भाँति और आत्मनेपद में सेवते या जायते की भाँति चलेंगे।

(७) रुधादिगणीय भुज् (भोजन करना) आत्मनेपद

वर्तमान काल (लट्)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र० पु०	भुङ्क्ते	भुञ्जाते	भुञ्जते
म० पु०	भुङ्क्षे	भुञ्जाथे	भुङ्ग्ध्वे
उ० पु०	भुञ्जे	भुञ्ज्वहे	भुञ्ज्महे

अनद्यतन भूतकाल (लङ्)

प्र० पु०	अभुङ्क्त	अभुञ्जाताम्	अभुञ्जत
म० पु०	अभुङ्थाः	अभुञ्जाथाम्	अभुङ्ध्वम्
उ० पु०	अभुञ्जि	अभुञ्ज्वहि	अभुञ्ज्महि

भविष्यत्काल (लृट्)

प्र० पु०	भोक्ष्यते	भोक्ष्येते	भोक्ष्यन्ते
म० पु०	भोक्ष्यसे	भोक्ष्येथे	भोक्ष्यध्वे
उ० पु०	भोक्ष्ये	भोक्ष्यावहे	भोक्ष्यामहे

आज्ञार्थक लोट्				विधि लिङ्		
भुङ्क्ताम्	भुञ्जाताम्	भुञ्जताम्	प्र०पु०	भुञ्जीत	भुञ्जीयाताम्	भुञ्जी[illegible]
भुङ्क्ष्व	भुञ्जाथाम्	भुञ्जध्वम्	म०पु०	भुञ्जीथाः	भुञ्जीयाथाम्	भुञ्जी[illegible]
भुनजै	भुनजावहै	भुनजामहै	उ०पु०	भुञ्जीय	भुञ्जीवहि	भुञ्जी[illegible]

रुधादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्	विधिलि[ङ्]
रुध्—रोकना	रुणद्धि	अरुणत्	रोत्स्यति	रुणद्धु	रुन्ध्यात्
भिद्—फाड़ना	भिनत्ति	अभिनत्	भेत्स्यति	भिनत्तु	भिन्द्यात्
छिद्—काटना	छिनत्ति	अच्छिनत्	छेत्स्यति	छिनत्तु	छिन्द्यात्

इन वाक्यों को ध्यान से पढ़ो—

(१) कस्मिंश्चित् पूजार्हेऽपराद्धा शकुन्तला (शकुन्तला ने किसी पूजा के यो[ग्य] व्यक्ति के प्रति अपराध किया है।)

(२) नेदं स्म सम्भाव्यते त्वयि (ऐसे आचरण की तुझसे सम्भावना न थी।)

(३) दशसु सुवर्णेषु पराजितोऽस्मि दस सुवर्ण हार गया हूँ।)

(४) पुरोचनो जतुगृहे अग्निमदात् पाण्डवास्तु ततः प्रागेव ततो निरक्रा[मन्] (पुरोचन ने लाख के घर को आग लगा दी, किन्तु पाण्डव पहले ही वहां से नि[कल] चुके थे।)

(५) यतीनां वल्कलानि वृक्षशाखास्ववलम्बन्ते, अतस्तपोवनेनानेन भवित[व्यम्] (मुनियों के वल्कल वृक्षों की शाखाओं से लटक रहे हैं, अतः यह तपोवन ही होगा।)

वर्तमान कालिक क्रिया को स्म का संयोग भू-
त कालिक क्रिया बना देता है

अधिकरण कारक (सप्तमी)—किसी क्रिया के आधार को अधिकरण कहते हैं, जहाँ पर या जिसमें वह कार्य किया जाता है (आधारोऽधिकरणम्), अधिकरण में सप्तमी विभक्ति होती है, यथा—आसने शोभते गुरुः (गुरु आसन पर शोभा देता है।) गुहायां वसति मुनिः (मुनि गुफा में रहता है।)

१—एक क्रिया के पश्चात् दूसरी क्रिया होने पर—सूर्ये उदिते कमलं प्रकाशते (सूर्य के उदित होने पर कमल खिलता है।)

२—अनादर में सप्तमी होती है, रुदति शिशौ माताऽगच्छत् (रुदतः शिशोः भी होता है।)

३—'विषय में, बारे में' अर्थ में तथा समय-बोधक शब्दों में सप्तमी होती है, यथा—मोक्षे इच्छास्ति (मोक्ष के विषय में इच्छा है), दिने, प्रातःकाले, मध्याह्ने, सायङ्काले, कार्यं करोति, शैशवे, यौवने, वार्धके (समय में)।

४—निर्धारण में भी सप्तमी होती है, जीवेषु मानवाः श्रेष्ठाः, मानवेषु च पण्डिताः, पशुषु शृगालो धूर्तः आदि।

५—संलग्नार्थक शब्दों तथा (युक्तः, तत्परः, व्यापृतः आदि) चतुरार्थक शब्दों (कुशलः, निपुणः, पटुः आदि) के साथ सप्तमी हो जाती है, यथा—कार्ये लग्नः, तत्परः। शास्त्रे निपुणः, दक्षः, प्रवीणः।

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—विद्यालय में बालक और बालिकाएँ हैं। २—राम ने बाल्यकाल में विद्याएँ सीखीं। ३—गेंद के खेल (कन्दुक-प्रतियोगिता) में हमारा विद्यालय प्रथम आया। ४—हेडमास्टर ने सब छात्रों को (सर्वेषु छात्रेषु) मिठाई बाँटी (वितीर्णम्)। ५—सड़क (राजमार्ग) पर घोड़े दौड़ रहे हैं। ६—शरद् काल में (शरदि) वन में मयूर नाचते हैं। ७—तुझ पर मेरा विश्वास है। ८—उसके गले (कण्ठ) में माला है। ९—क्या वह तुम्हें मार्ग में नहीं मिला? १०—तुम्हारी कक्षा में कौन लड़का प्रथम रहा? ११—विधान-भवन में विधान-सभा की बैठकें (उपनिवेशन) होती हैं।

१२—मनुष्यों में ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं और पशुओं मे सिंह। १३—पशुओं में शृ बहुत चतुर है। १४—इस तालाब में कमल के फूल खिले (फुल्लित) हैं। १५ साधु की मोक्ष की कामना है। १६—जिसने जवानी (यौवन) में नहीं पढ़ा बुढ़ापे (वार्द्धक) में क्या पढ़ेगा? १७—यौवन के मद में सभी अन्धे हो जाते १८—फलों में आम (आम्र) उत्तम है। १९—जिस देश में तुम उत्पन्न हुए उसमें हाथी नहीं मारे जाते (न हन्यन्ते)। २०—मजदूर सायङ्काल कार्य करेगा।

कोष्ठ में दिये हुए शब्दों के उपयुक्त रूप रिक्त स्थानों में रखो—

(१) यस्मिन्कुले त्वमुत्पन्नः तत्र ...... न हन्यन्ते (गज)।

(२) ...... धावन्तं तमहमपश्यम् (राजमार्ग)।

(३) ...... विकसितानि पुष्पाणि व्यलोकयम् (वाटिका)।

(४) रुदति ...... माताऽगच्छत् (शिशु)।

(५) तपस्विनां वस्त्राणि ...... अवलम्बन्ते (वृक्षशाखा)।

एकादश अभ्यास

सम्बोधन (प्रथमा) हे, भोः

	एकव०	द्विव०	बहुव०
पुं०	हे देव	हे देवौ	हे देवाः
स्त्री०	हे लते	हे लते	हे लताः
नपुं०	हे ज्ञान	हे ज्ञाने	हे ज्ञानानि

विशेष—सर्वनाम शब्दों का सम्बोधन नहीं होता।

(८) तनादिगणीय कृ (करना) परस्मैपद

लट्				लङ्		
करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति	प्र० पु०	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्व
करोषि	कुरुथः	कुरुथ	म० पु०	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरु
करोमि	कुर्वः	कुर्मः	उ० पु०	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

(लृट्) करिष्यति करिष्यतः करिष्यन्ति आदि।

	लोट्			विधिलिङ्		
करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु	प्र० पु०	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
कुरु	कुरुतम्	कुरुत	म० पु०	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
करवाणि	करवाव	करवाम	उ० पु०	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

(९) क्र्यादिगणीय ग्रह् (पकड़ना) परस्मैपद

	लट्			लङ्		
गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति	प्र० पु०	अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	अगृह्णन्
गृह्णासि	गृह्णीथः	गृह्णीथ	म० पु०	अगृह्णाः	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत
गृह्णामि	गृह्णीवः	गृह्णीमः	उ० पु०	अगृह्णाम्	अगृह्णीव	अगृह्णीम

लृट् में ग्रहीष्यति ग्रहीष्यतः ग्रहीष्यन्ति आदि ।

	लोट्			विधिलिङ्		
गृह्णातु	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु	प्र० पु०	गृह्णीयात्	गृह्णीयाताम्	गृह्णीयुः
गृहाण	गृह्णीतम्	गृह्णीत	म० पु०	गृह्णीयाः	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात
गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाम	उ० पु०	गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम

क्र्यादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृङ्	लोट
क्री—खरीदना	क्रीणाति	अक्रीणात्	क्रेष्यति	क्रीणातु
प्री—खुशकरना	प्रीणाति	अप्रीणात्	प्रेष्यति	प्रीणातु
पू—पवित्र करना	पुनाति	अपुनात्	पविष्यति	पुनातु
वृ—वर छांटना	वृणाति	अवृणात्	वरिष्यति	वृणातु
धू—कांपना	धुनाति	अधुनात्	धविष्यति	धुनातु
अश्—खाना	अश्नाति	आश्नात्	अशिष्यति	अश्नातु
मुष्—चुराना	मुष्णाति	अमुष्णात्	मोषिष्यति	मुष्णातु
बध्—बांधना	बध्नाति	अबध्नात्	भत्स्यति	बध्नातु
ज्ञा—जानना	जानाति	अजानात्	ज्ञास्यति	जानातु

विधिलिङ् में—(क्री) क्रीणीयात्, (प्री) प्रीणीयात् (पू) पुनीयात् (वृ) वृणीयात् इत्यादि ।

चुरादिगणीय कुछ धातुएँ

	लट्	लङ्	लृट्	लोट्
चुर्—चुराना	चोरयति-ते	अचोरयत्-त	चोरयिष्यति-ते	चोरयतु
गण्—गिनना	गणयति	अगणयत्	गणयिष्यति	गणयतु
कथ्—कहना	कथयति	अकथयत्	कथयिष्यति	कथयतु
भक्ष्—खाना	भक्षयति	अभक्षयत्	भक्षयिष्यति	भक्षयतु
तड्—पीटना	ताडयति	अताडयत्	ताडयिष्यति	ताडयतु
रच्—बनाना	रचयति	अरचयत्	रचयिष्यति	रचयतु
तुल्—तौलना	तोलयति	अतोलयत्	तोलयिष्यति	तोलयतु
पूज्—पूजा करना	पूजयति	अपूजयत्	पूजयिष्यति	पूजयतु
अर्च—पूजा करना	अर्चयति	आर्चयत्	अर्चयिष्यति	अर्चयतु
आह्लाद्—खुश करना	आह्लादयति	आह्लादयत्	आह्लादयिष्यति	आह्लाद[illegible]
चिन्त्—सोचना	चिन्तयति	अचिन्तयत्	चिन्तयिष्यति	चिन्तयतु
क्षल्—धोना	क्षालयति	अक्षालयत्	क्षालयिष्यति	क्षालयतु
वण्ट्—बाँटनाँ	वण्टयति	अवण्टयत्	वण्टयिष्यति	वण्टयतु
घुष्—ढिढोरा पीटना	घोषयति	अघोषयत्	घोषयिष्यति	घोषयतु
प्री—खुश करना	प्रीणयति	अप्रीणयत्	प्रीणयिष्यति	प्रीणयतु
स्पृह्—इच्छा करना	स्पृहयति	अस्पृहयत्	स्पृहयिष्यति	स्पृहयतु
मृग्—ढूँढ़ना	मार्गयति	अमार्गयत्	मार्गयिष्यति	मार्गयतु
भूष्—सजाना	भूषयति	अभूषयत्	भूषयिष्यति	भूषयतु
वर्ण्—वर्णन करना	वर्णयति	अवर्णयत्	वर्णयिष्यति	वर्णयतु
लोक्—देखना	लोकयति	अलोकयत्	लोकयिष्यति	लोकयतु
सान्त्व्—शान्त करना	सान्त्वयति	असान्त्वयत्	सान्त्वयिष्यति	सान्त्वयतु
बुक्क—कुत्ते का भौंकनो	बुक्कयति	अबुक्कयत्	बुक्कयिष्यति	बुक्कयतु

विधि लिङ् में—(चुर्) चोरयेत्, (गण्) गणयेत्, (कथ्) कथयेत् आदि।

इन वाक्यों को ध्यान से पढ़ो—

(१) हे ईश्वर ! देहि मे मुक्तिम् (हे ईश्वर, मुझे मुक्ति दो।)
(२) भो मित्र, क्षमस्व अजानता मया एवं भाषितम् (हे मित्र, क्षमा करो अज्ञानवश मैंने ऐसा कहा।)

(३) हे बाले, क्व गन्तुमिच्छसि ? (हे बाला, कहाँ जाना चाहती हो ?)
(४) भो महात्मन्, किं भवता भोजनं कृतम् (हे महात्मन्, क्या आपने भोजन कर लिया ?)
(५) हे पुत्र, सदा सत्यं वद धर्मंचर (हे पुत्र सदा सच बोल और धर्म कर।)

सम्बोधन (प्रथमा)

किसी को पुकार कर अपनी ओर आकृष्ट करने को सम्बोधन कहते हैं। सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है और सम्बोधन वाचक शब्द के पूर्व भोः, अये, रे आदि चिह्न लगते हैं। सर्वनाम शब्दों का सम्बोधन नहीं होता और अकारान्त शब्दों के एक वचन में विसर्ग नहीं होता। आकारान्त और इकारान्त शब्द के प्रथमा के एक वचन में ए (हे लते, हे हरे) और ईकारान्त शब्द के प्रथमा के एक वचन में 'इ' (हे नदि) और उकारान्त शब्द के 'ओ' (हे साधो) हो जाता है।

संस्कृत में अनुवाद करो

१. महाराज, आपके राज्य में प्रजा को सुख है। २. मित्र, कल तुम हमारे घर आओगे ? ३. छात्रो, अपना पाठ ध्यान से पढ़ो। ४. बालको, गुरुकी सेवा करो, फल मिलेगा। ५. लड़को, परिश्रम करो अवश्य परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाओगे। ६. प्रातः उठो, हाथ-पैर धोओ और पढ़ो। ७. विद्यार्थियो, अध्यापकों का उपदेश ग्रहण करो और उस पर चलो। ८. मित्र, आपके पिता कुशल से तो हैं ? (अपि कुशली........?) ९. पुत्र, कभी झूठ न बोल, सत्य पर चल। १०. लड़कियो ! तुम आज स्कूल क्यों नहीं गयीं ? ११. महाशय, क्या आप कल मुझे दर्शन देंगे ? १२. बच्चो, समय पर उठो और व्यायाम करो। १३. पिता जी, मैं मेहनत करूँगा और परीक्षा में सफल होऊंगा। १४, भरत, तुम्हारे जैसा (त्वादृशः) भाई संसार में अन्य नहीं है। १५. हे सीता, जंगल में अनेक कष्ट हैं, तुम घर ही पर रहो।

उपपद विभक्तियों की पुनरावृत्ति

कारण बताओ कि रेखाङ्कित शब्दों में ये विभक्तियाँ क्यों हुई हैं—

(क) द्वितीया

१. दिवं च पृथ्वीं चान्तराऽन्तरिक्षम् (आकाश और पृथ्वी के बीच में अन्तरिक्ष है।) २. मामन्तरेण किं नु चिन्तयत्याचार्य इति चिन्ता मां बाधते (आचार्य मेरे

विषय में क्या विचार करेंगे यह चिन्ता मुझे दुःख दे रही है।) ३. धिक् त्वां कार्यानुबन्धविचारमन्तरेण कार्यं करोषि (तुम्हें धिक्कार है जो कार्य के फल विचार किये विना कार्य करते हो।) ४. परितः नगरं विद्यत एका परिखा सदैव जलपूर्णा (नगर के चारों ओर एक खाई है जो सदैव पानी से भरी रहती है)। ५. माँ प्रति तु नासि वीरः, त्वं हि कातरान्नातिभिद्यसे (मेरे विचार तुम वीर नहीं हो, तुम तो एक कायर से अधिक भिन्न नहीं हो।)

६—विनाः वातं विना वर्षं विद्युत्पतनं विना ।
विना हस्तिकृतान्दोषान्केनेमौ पातितौ द्रुमौ ॥

(आँधी, वर्षा और बिजली के गिरने के विना तथा हाथियों के उत्पात विना किसने इन दो वृक्षों को गिराया है ?)

(ख) तृतीया

७. शशिना सह याति कौमुदी सह मेघेन तडित् प्रलीयते (चाँदनी चन्द्रमा साथ जाती है और मेघ के साथ बिजली)। ८. कष्टं व्याकरणम्, इदं हि द्वादशभिर्व श्रूयते (व्याकरण कठिन है, यह बारह वर्षों में पढ़ा जाता है।) ९. सहस्त्रै मूर्खाणामेकं क्रीणीत पण्डितम् (हजारों मूर्खों के वदले में एक पण्डित खरीद अच्छा है।) १०. स स्वरेण रामभद्रमनुहरति (वह स्वर में प्यारे राम से मिलता जुलता है।) ११. हिरण्येनार्थिनो भवन्ति राजानः, न च ते प्रत्येकं दण्डयन्ति (राजाओं को सुवर्ण की आवश्यकता रहती है, किन्तु वे सभी से तो जुर्माना नहीं लेते।)

(ग) चतुर्थी

१२. गामानामकः प्रख्यातमल्लः जविस्कोनाम्ने प्रसिद्ध-मल्लायालम् (गामा नामक विख्यात पहलवान जविस्को नामक पहलवान के लिए काफी है।) १३. उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये (मूर्खों को उपदेश देना केवल उनके क्रोध को वढ़ाना है, न कि उनकी शान्ति के लिए।) १४—नमस्तेभ्यः पुराणमुनिभ्यो ये मानवमात्रस्यकृते आचार पद्धतिं प्राणयन् (उन प्राचीन मुनियों को प्रणाम है, जिन्होंने मनुष्य मात्र के सदाचार के लिए नियम वनाये।) १५—गोभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च स्वस्ति (गौओं और ब्राह्मणों

का कल्याण हो।) १६—अलमिदम् उत्साहभ्रंशाय भविष्यति (यह उत्साह को गिराने के लिए काफी है।) १७—कृषकेभ्यः कर्मकरेभ्यश्च कुशलम्भूयात् (किसानों और मजदूरों का भला हो।) १८—प्रभवति स एकेनैव हायनेन साहित्यमध्यम-परीक्षोत्तरणाय (वह एक ही वर्ष में साहित्य मध्यम परीक्षा में उत्तीर्ण होने के योग्य है।)

(घ) पञ्चमी

१९—धीरा मनस्विनो न धनात्प्रतियच्छन्ति मानम् (धीर मनस्वी लोग धन के बदले मान को नहीं छोड़ते।) २०—स्वार्थात् सतां गुरुतरा प्रणयिक्रियैव (सत्पुरुषों के लिए अपने प्रयोजन से मित्रों का प्रयोजन ही बड़ा है।) २१—नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात् पातकं महत् (सत्य से बढ़ कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बढ़ कर कोई पाप नहीं।) २२—ग्रामादारादारामः यत्र व्यवसायान्निवृता ग्रामीणा आरमन्ति (गाँव के पास एक बाग है, जहाँ काम धंधे से छुट्टी पाकर ग्रामवासी आनन्द मनाते हैं।) २३—ऋते वसन्तान्नापरः ऋतुराजः (वसन्त को छोड़ अन्य ऋतु को ऋतुराज नहीं कहते।) २४—मूर्खो हि चापलेन भिद्यते पण्डितात् (मूर्ख का चपलता के कारण पण्डित से भेद समझा जाता है।)

(ङ) षष्ठी

२५—तस्मै कोपिष्यामि यदि तं प्रेक्ष्यमाणाऽऽत्मनः प्रभविष्यामि (उससे मैं क्रोध करूँगी, यदि मैं उसे देखती हुई अपने आपको वश में रख सकी।) २६—मया तस्य किमपराद्धम् यः मां परुषमवादीत् (मैंने उसका क्या अपराध किया जो वह मुझे खोटी खरी सुनाने लगा।) २७—तस्य दर्शनस्योत्कण्ठे, चिरं दृष्टस्य तस्य (मुझे उसके दर्शनों की उत्कण्ठा है, उसे मिले हुए चिर हो गया है।) २८—कोऽति भारः समर्थानां किं दूरं व्यवसायिनाम् को विदेशः सविद्यानां कः परः प्रियवादिनाम्। (कार्य में समर्थ लोगों के लिए क्या कठिन है? व्यवसायवाले लोगों के लिये कौन पराया है? विद्वानों के लिए कौनसा विदेश है?) २९—कच्चिद्भर्तुः स्मरसि सुभग त्वं हि तस्य प्रियेति (हे सुन्दरि, क्या तुम अपने स्वामी को याद रखती हो, क्योंकि तुम उसकी प्यारी हो।) ३०—त्वं लोकस्य वाल्मीकिः, मम पुनस्तात एव (तुम संसार के लिए वाल्मीकि हो, किन्तु मेरे तो तुम पिता हो।)

(च) सप्तमी

३१—पुरुषेषूत्तमो रामो भुवि कस्य न वन्द्यः (मानवों में श्रेष्ठ राम संसार किसके नमस्कार के योग्य नहीं ?) ३२—अहं पुनर्युष्माकं प्रेक्षमाणानामेनं स्मर्तव्यः नयामि [मैं तो तुम्हारे देखते-देखते इस (कुमार वृषभसेन) को मार डालता हूँ ३३—पौरवे वसुमतीं शासति कोऽविनयमाचरति प्रजासु (पौरव के पृथ्वी पर रा करते हुए कौन प्रजाओं के प्रति अनाचार करेगा ?) लतायां पूर्वलूनायां प्रसूनस्याः कुतः (बेल के पहले ही कट चुकने पर फूल कहाँ से आ सकते हैं ?) ३५- अभिव्यक्तायां चन्द्रिकायां किं दीपिका पौनरुक्त्येन (शुभ्रज्योत्स्ना में व्यर्थ दी जलाने से क्या लाभ ?) ३६—विपदि हन्त सुधापि विषायते (जब विपत्ति आतं तब मित्र भी शत्रु हो जाते हैं।) ३७—जीवत्सु तातपादेषु नवे दारपरिग्रहे। मा भिश्चिन्त्यमानानां तेहि नो दिवसा गताः (पिता जी के जीते जी नया-नया वि होने पर निश्चयपूर्वक हमारे वे दिन बीत गये जब हमारी माताएँ हमारी देख करती थीं।) ३८—इदमवस्थान्तरं गते तादृशेऽनुरागे किंवा स्मारितेन (उस प्र के प्रेम के इस अवस्था पर पहुँच जाने पर याद करने से क्या ?) ३९—चर्म द्वीपिनं हन्ति व्याधः (शिकारी चीते को चाम के लिए मारता है।) हते भीष्मे द्रोणे कर्णे च विनिपातिते। आशा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान् (भी के मारे जाने पर, द्रोण के मारे जाने और कर्ण के मार गिराये जाने पर, हे रा आशा ही बलवती है कि शल्य पाण्डवों को जीतेगा।)

द्वादश अभ्यास

संस्कृत में अनुवाद करो और रेखाङ्कित शब्दों की विभक्तियों पर ध्यान दो-

पठतो नास्ति मूर्खत्वं जपतो नास्ति पातकम्।
मौनिनः कलहो नास्ति न भयं चास्ति जाग्रतः ॥ १ ॥

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।

चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पंसाम् ॥ २ ॥

गावः पश्यन्ति गन्धेन शास्त्रैः पश्यन्ति पण्डिताः ।
चारैः पश्यन्ति राजानः चक्षुर्भ्यामितरे जनाः ॥ ३ ॥

किं मधुना किं विधुना किं सुधया किं वसुधयाऽखिलया ।
यदि हृदयहारिचरितः पुरुषः पुनरेति नयनयोरयनम् ॥ ४ ॥

शशिना सह याति कौमुदी सह मेघेन तडित् प्रलीयते ।
प्रमदाः पतिमार्गगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि ॥ ५ ॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ ६ ॥

विद्या विवादाय धनं मदाय शक्तिःपरेषां परिपीडनाय ।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतद्ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥ ७ ॥

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ।
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरम् ॥ ८ ॥

विद्या ददाति विनयं विनियाद् याति पात्रताम् ।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मस्ततः सुखम् ॥ ९ ॥

लोभात् क्रोधः प्रभवति लोभात्कामः प्रजायते ।
लोभान्मोहश्च नाशश्च लोभः पापस्य कारणम् ॥ १० ॥

पापान्निवारयति योजयते हिताय,
गुह्यं च गूहति गुणान् प्रकटीकरोति ।
आपद् गतं च न जहाति ददाति काले,
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥ ११ ॥

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥ १२ ॥

कृतस्य करणं नास्ति मृतस्य मरणं यथा ।
गतस्य शोचनं नास्ति ह्येतद् वेदविदां मतम् ॥ १३ ॥

अलसस्य कुतो विद्या अविद्यस्य कुतो धनम् ।
अधनस्य कुतो मित्रम् अमित्रस्य कुतः सुखम् ॥ १४ ॥

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा,
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ,
प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥ १५ ॥

स्वभावो नोपदेशेन शक्यते कर्तुमन्यथा ।
सुतप्तमपि पानीयं पुनर्गच्छति शीतताम् ॥ १६ ॥

खलः करोति दुर्वृत्तं साधुः प्राप्नोति तत्फलम् ।
दशाननोऽहरत् सीतां बन्धनं च महोदधेः ॥ १७ ॥

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चापि रमयत्यपनीय खेदम् ।
लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥ १८ ॥

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः ।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति ॥ १९ ॥

गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति
ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः ।
आस्वाद्यतोयाः प्रभवन्ति नद्यः
समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः ॥ २० ॥

३—चारैः–गुप्तचरों से । ४—विधुना–चन्द्रमा से, अयनम्–मार्ग । ५—कौमुदी– चाँदनी । प्रमदा–स्त्री । प्रतिपद्–जानना । विचेतन–अज्ञान । ५—दुष्कृताम्–दुष्टों के । ११—योजयते–लगाता है । गुह्यम्–गुप्त बात, जहाति–छोड़ता है । १२—वसूनाम्– वसु नामक देवताओं में, पावकः–अग्नि । १५—सदसि–सभा में, श्रुतौ–वेद में । १७—दुर्वृत्तम्–बुरा व्यवहार, महोदधेः–सागर का । १८—नियुङ्क्ते–काम में लगाती है । अपनीय–दूर करके । १९—विरमन्ति–रुक जाते हैं । २०—आसाद्य–पहुँच कर, अपेयाः–पीने के अयोग्य ।

(एक दृष्टि में)

कारक एवं विभक्तियाँ

प्रथमा—१—कर्त्ता में—शिशुः रोदिति, अहं पुष्पं पश्यामि ।

२—कर्म वाच्य के कर्म में—वटुभिः पठ्यते वेदः, पशुभिः पीयते जलम् ।

३—संबोधन में—भो गुरो क्षमस्व ।

४—अव्यय के साथ—अशोक इति विख्यातः राजा सर्वजनप्रियः ।

५—नाम मात्र में—आसीद् राजा विक्रमादित्यो नाम ।

द्वितीया—१—कर्म में— प्रजां संरक्षति नृपः सा वर्द्धयति पार्थिवम् ।

२—ऋते, अन्तरेण, विना के साथ—धनमन्तरेण, विना, ऋते वा नैव सुखम् ।

३—एनप् के साथ—तत्रागारं धनपतिगृहानुत्तरेणास्मदीयम् ।

४—अभितः ,, ,,—अभितो भुवनं वाटिका ।

५—परितः, सर्वतः के साथ—सन्ति परितः (सर्वतः) ग्रामं वृक्षाः ।

६—उभयतः के साथ—गोमतीमुभयतस्तरवः सन्ति ।

७—अन्तरा (बीच में) रामं कृष्णं चान्तरा गोपालः ।

८—समया, निकषा (समीप) के साथ—ग्रामं समया निकषा वा नदी ।

९—कालवाची अर्थ में —स चत्वारि वर्षाणि न्यायमध्यैष्ट ।

१०—अध्ववाची शब्दों के साथ—क्रोशं कुटिला नदी ।

११—अनु के साथ—गुरुमनु शिष्यो गच्छेत् ।

१२—प्रति ,, —दीनं प्रति दयां कुरु ।

१३—धिक् ,, धिक् त्वां पापिनम् (पिशुनं वा) ।

१४—अधिशीङ् के साथ—चन्द्रापीडः मुक्ताशिलापट्टमधिशिश्ये ।

१५—अधिस्था ,,—रमेशः गृहमधितिष्ठति (अथवा रमेशः गृहे तिष्ठति) ।

१६—अधि आस् के साथ—नृपः सिंहासनमध्यास्ते (नृपः सिंहासने आस्ते) ।

१७—अनु, उप पूर्वक वस् के साथ—हरिः वैकुण्ठमुपवसति, अनुवसति, वा ।

१८—आवस्, अधिवस् के साथ—अधिवसतु काशीं विश्वनाथः । भक्तः देवमन्दिरम् आवसति ।

१९—अभि निपूर्वक विश् के साथ— मनो धर्मम् अभिनिविशते ।

२०—क्रिया विशेषण में—सत्वरं धावति मृगः।

तृतीया— १—करण में—सः जलेन मुखं प्रक्षालयति।

२—कर्मवाच्य कर्त्ता में—रामेण रावणो हतः।

३—स्वभाव आदि अर्थों में–रामः प्रकृत्या साधुः। नाम्ना गोपालो

४—सह के साथ—शशिना सह याति कौमुदी।

५—सदृश के अर्थ में—धर्मेण सदृशो नास्ति वन्धुरन्यो महीतले।

६ – ,, —केन हेतुना अत्र वससि ?

७—हीन ,, —विद्यया हि विहीनस्य किं वृथा जीवितेन ते

८—विना ,, —श्रमेण हि विना विद्या लभ्यते न कथंचन।

९—अलं ,, —अलं महीपाल तव श्रमेण।

१०—प्रयोजन के अर्थ में—धनेन किं यो न ददाति नाश्नुते।

११—लक्षण बोध में—जटाभिस्तापसोऽयं प्रतीयते।

१२—फल प्राप्ति में—पञ्चभिर्वर्षैर्न्यायमधीतम्, पञ्चभिर्दिनैः स नी
जातः।

१३—विकृत अङ्ग में—मानवश्चक्षुषा काणः, कर्णेन वधिरश्च सः।
पादेन खञ्जः वृद्धोऽसौ, कुब्जा पृष्ठेन मन्थर

चतुर्थी— १—संप्रदान में—राजा ब्राह्मणाय धनं ददाति।

२—निमित्त के अर्थ में—धनं सुखाय, विद्या ज्ञानाय भवति।

३—रुचि के अर्थ में—शिशवे क्रीडनकं रोचते।

४—धारय् (ऋणी होना) के अर्थ में—स मह्यं शतं धारयति।

५—स्पृह् के साथ—अहं यशसे स्पृहयामि।

६—नमः, स्वस्ति के योग में— गुरवे नमः, नृपाय स्वस्ति भवतु।

७—समर्थ अर्थवाली धातुओं के साथ—प्रभवति मल्लो मल्लाय।

८—कल्प् (होना) के साथ—ज्ञानं सुखाय कल्पते।

९—तुम् के अर्थ में—ब्राह्मणः स्नानाय (स्नातुं) याति।

१०—क्रुध् अर्थवाले धातुओं के साथ—गुरुः शिष्याय क्रुध्यति।

११—द्रुह् ,, ,, ,,—मूर्खः पण्डिताय द्रुह्यति।

१२—असूय् (निन्दा) ,, ,,—दुर्जनः सज्जनाय असूयति।

पञ्चमी—१—पृथक् अर्थ में—वृक्षात् फलानि पतन्ति, स ग्रामाद् आगच्छति ।
२—भय „ —असज्जनात् कस्य भयं न जायते ।
३—ग्रहण अर्थ में—कूपात् जलं गृह्णाति ।
४—पूर्वादि केयोग में—स्नानात् पूर्व न खादेत्, न धावेत् भोजनात् परम् ।
५—अन्यार्थ के योग में—ईश्वरादन्यः कः रक्षितुं समर्थः ?
६—उत्कर्ष में—जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।
७—विना, ऋते के योग में—परिश्रमाद् विना (ऋते) विद्या न भवति।
८—आरात् (दूर या समीप) के योग में—ग्रामाद्आरात् सुन्दरमुपवनम् ।
९—प्रभृति के योग में—शैशवात्प्रभृति सोऽतीव चतुरः ।
१०—आङ् के „—आमूलात् रहस्यमिदं श्रोतुमिच्छामि ।
११—विरामार्थक शब्दों के साथ—न नवः प्रभुराफलोदयात् स्थिरकर्मा विरराम कर्मणः ।
१२—काल की अवधि में—विवाहात् नवमे दिने ।
१३—मार्ग की „ —वाराणस्याः पञ्चाशत् क्रोशाः ।
१४—जायते आदि के अर्थ में—बीजेभ्यः अङ्कुरा जायन्ते ।
१५—उद्भवति, प्रभवति, निलीयते, प्रतियच्छति के साथ—हिमालयात् गङ्गा प्रभवति, उद्गच्छति वा । नृपात् चोरः निलीयते । तिलेभ्यः माषान् प्रतियच्छति ।
१६—जुगुप्सते, प्रमाद्यति के साथ—स पापात् जुगुप्सते, स धर्मात् प्रमाद्यति ।
१७—निवारण अर्थ में—मित्रं पापात् निवारयति ।
१८—जिससे कोई विद्या सीखी जाय—छात्रोऽध्यापकात् अधीते ।

षष्ठी— १—संबन्ध में—मूर्खस्य बहवो दोषाः, सतां च बहवो गुणाः ।
२—कृदन्त कर्ता में—शिशोः शयनम्, फलस्य पतनम् ।
३—कृदन्त कर्म में—अन्नस्य पाकः, धनस्य दानम् ।
४—स्मरणार्थक धातुओं के साथ—स मातुः स्मरति ।
५—दूर एवं समीप वाची शब्दों के साथ—नगरस्य दूरं, (नगराद् वा दूरम्) समीपम् सकाशम् वा ।
६—कृते, मध्ये, समक्षम्, अन्तरे, अन्तः के साथ—पठनस्य कृते, आचार्यस्य समक्षम्, बालानां मध्ये, गृहस्य अन्तरे अन्तः वा ।

७—अतस् प्रत्यय में—नगरस्य दक्षिणतः, उत्तरतः आदि ।

८—अनादर में—रुदतः शिशोः सा ययौ ।

९—हेतु शब्द के प्रयोग में अन्नस्य हेतोर्वसति ।

१०—निर्धारण में—कवीनां (कविषु वा) कालिदासः श्रेष्ठः ।

सप्तमी—१—अधिकरण में—गृहे तिष्ठति बालः, आसने शोभते गुरुः ।

२—भाव में—यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ।

३—अनादर में—रुदति शिशौ (रुदतः शिशोः वा) गता माता

४—निर्धारण में—जीवेषु मानवाः श्रेष्ठाः, मानवेषु च पण्डिताः ।

५—एक क्रिया के पश्चात् दूसरी क्रिया होने पर—सूर्ये उदिते प्रकाशते ।

६—विषय के (बारे में). अर्थ में तथा समय बोधक शब्दों में—इच्छाऽस्ति, दिने, प्रातः काले, मध्याह्ने, सायंकाले वा कार्यं कां

७—संलग्नार्थक शब्दों और चतुरार्थक शब्दों के साथ—कार्ये तत्परः । शास्त्रे निपुणः, प्रवीणः, दक्षः आदि ।

बताओ तो जानें ?

इन वाक्यों में कौन-कौन सी अशुद्धियाँ हैं ?

१. ब्राह्मणः नृपात् धनं याचते । २. त्वम् गुरोः निन्दसि । ३. अहम् अस्मिन् आगच्छम् । ४ भवान् कथं चोरेण बिभेति ? ५ इमां बालिकां पठनं रोचते । ६ पुत्रं क्रुध्यति । ७. आचार्यः मामुपदिशति । ८ रामस्य विना अयोध्या शून्या ९. मम भ्राता रजकाय वस्त्रमददात् । १०. सिंहः मृगस्य प्रति धावति । ११ साकं नाहं क्रीडिष्यामि । १२. पर्वतेभ्यः हिमालयः अत्युच्चः अस्ति । १३. बहिः विद्यालयोऽस्ति । १४. इमं प्रश्नं तस्मात् शिष्यात् पृच्छ । १५. बालक हसितस्य । १६. गुरुनन्दनः नेत्रस्य काणः । १७. विद्याया हीनस्य नरस्य किं प्र

(शुद्धियाँ) १. नृपम् । २. गुरुम् । ३. इदं नगरम् । ४. चोरात । ५. बालिकायै । ६. पुत्राय । ७. मह्यम् । ८. रामं बिना । ९. रजकस्य । १०. मृगं प्रति त्वया साकम् । १२. पर्वतेषु । १३. नगराद् बहिः । १४. तं शिष्यम् । १५. हसि १६. नेत्रेण । १७. विद्यया हीनस्य नरस्य किं प्रयोजनं जीवनेन । १८. मह

जीवनस्य । १८. त्वं कथं मां कुप्यसि ? १९ गोपः गोः पयो दोग्धि । २०. देवेन्द्रः लेखन्याः लिखति । २१. स स्वरात् स्वपितरम् अनुहरति । २२. उभयतः नगरात् नद्यौ वहतः । २३. स्वार्थलिप्ता जना धनेन मानं प्रतियच्छन्ति । २४. लतायाः पूर्वलूनायाः पुष्पस्यागमः कुतः ? २५. सत्येन परो धर्मो नास्ति, असत्येन च महत्पापं नान्यत् । २६. इदं तव कथनं ममोत्साहभ्रंशम् अलम् । २७. केशवः मार्गे गोविन्दमभिलत् । २८. प्रातः प्रभृति वर्षा भगति, न चैषा विरमति ।

सर्वनाम शब्द

	एकव०	द्विव०	बहुव०
(प्र०)	अहम् (मैं)	आवाम् (हम दो)	वयम् (हम)
(द्वि०)	माम् (मुझको)	आवाम् (हम दो को)	अस्मान् (हमको)
(तृ०)	मया (मैंने)	आवाभ्याम् (हम दोनों ने)	अस्माभिः (हमने)
(च०)	मह्यम् (मेरे लिए)	आवाभ्याम् (हम दो के लिए)	अस्मभ्यम् (हमारे लिए)
(पं०)	मत् (मुझसे)	आवाभ्याम् (हम दो से)	अस्मत् (हम से)
(ष०)	मम (मेरा)	आवयोः (हम दो का)	अस्माकम् (हमारा)
(स०)	मयि (मुझ पर)	आवयोः (हम दो पर)	अस्मासु (हम पर)

युष्मद्

(प्र०)	त्वम्	(तू)	युवाम्	(तुम दो)	यूयम्	(तुम सब)
(द्वि०)	त्वाम्	(तुझको)	युवाम्	(तु दो को)	युष्मान्	(तुम को)
(तृ०)	त्वया	(तू ने)	युवाभ्याम्	(तुम दो ने)	युष्माभिः	(तुम ने)
(च०)	तुभ्यम्	(तेरे लिए)	युवाभ्माम्	(तुम दो के लिए)	युष्मभ्यम्	(तुम्हारेलिए)
(पं०)	त्वत्	(तुझसे)	युवाभ्याम्	(तुम दो से)	युष्मत्	(तुम से)
(ष०)	तव	(तेरा)	युवयोः	(तुम दो का)	युष्माकम्	(तुम्हारा)
)स०)	त्वयि	(तुझ पर)	युवयोः	(तुम दो पर)	युष्मासु	(तुम पर)

---

१९. गाम् । २०. लेखन्या । २१. स्वरेण । २२. नगरम् । २३ धनात् । २४. लतायां पूर्वलूनायाम् । २५ सत्यात्-असत्याद् । २६. उत्साहभ्रंशाय । २७ गोविन्देन (मिल् धातु अकर्मक है) । २८. प्रातः प्रभृति वर्षति देवः, न चैष विरमति । 'वर्षा भवति' प्रयोग व्याकरण-सम्मत होते हुए भी व्यवहार के प्रतिकूल है । संस्कृत-व्यवहार में 'वर्षा' नित्य बहुवचनान्त शब्द है और उसका अर्थ 'बरसात' ...

*भवत् (आप)

पुँल्लिङ्ग एकव०	द्विव०	बहुव०		स्त्रीलिङ्ग एकव०	द्विव०	बहुव०
भवान्	भवन्तौ	भवन्तः	प्र०	भवती	भवत्यौ	भवत्यः
भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः	द्वि०	भवतीम्	भवत्यौ	भवतीः
भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः	तृ०	भवत्या	भवतीभ्याम्	भवतीभिः
भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः	च०	भवत्यै	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः	पं०	भवत्याः	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
भवतः	भवतोः	भवताम्	ष०	भवत्याः	भवत्योः	भवतीनाम्
भवति	भवतोः	भवत्सु	स०	भवत्याम्	भवत्योः	भवतीषु
हेभवन्	हेभवन्तौ	हेभवन्तः	सं०	हे भवति	हे भवत्यौ	हेभवत्यः

तद् (वह) पुंल्लिङ्ग

(प्र०)	सः	(वह)	तौ	(वे दो)	ते	(वे)
(द्वि०)	तम्	(उसको)	तौ	(उन दो को)	तान्	(उनको)
(तृ०)	तेन	(उसने)	ताभ्याम्	(उन दो ने)	तैः	(उन्होंने)
(च२)	तस्मै	(उसके लिए)	ताभ्याम्	(उन दो के लिए)	तेभ्यः	(उनके लिए)
(पं०)	तस्मात्	(उससे)	ताभ्याम्	(उन दो से)	तेभ्यः	(उनसे)
(ष०)	तस्य	(उसका)	तयोः	(उन दो का)	तेषाम्	(उनका)
(स०)	तस्मिन्	(उसपर)	तयोः	(उन दो पर)	तेषु	(उन पर)

तत् (वह)

	नपुंसक लिङ्ग			स्त्रीलिङ्ग		
(प्र०)	तत्	ते	तानि	सा	ते	ताः
(द्वि०)	तत्	ते	तानि	ताम्	ते	ताः
(तृ०)	तेन	ताभ्याम्	तैः	तया	ताभ्याम्	ताभिः
(च०)	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
(पं०)	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
(ष०)	तस्य	तयोः	तेषाम्	तस्याः	तयोः	तासाम्
(स०)	तस्मिन्	तयोः	तेषु	तस्याम्	तयोः	तासु

* नपुंसक लिङ्ग में (प्र० द्वि०) भवत् भवती भवन्ति और तृतीया से पुंल्लिङ्ग के समान रूप चलेंगे। भवत् शब्द मध्यम पुरुष के स्थान में प्रयुक्त होता है, इसके साथ प्रथम पुरुष की ही क्रिया लगती है, यथा—भवान् गच्छतु (

१६. नेत्रेण।

का प्रयोग संख्या ३५ में

[1]इदम् (यह)

पुं०			स्त्री०		
एकव०	द्विव०	बहुव०	एकव०	द्विव०	बहुव०
अयम्	इमौ	इमे	इयम्	इमे	इमाः
इमम्	इमौ	इमान्	इमाम्	इमे	इमाः
अनेन	आभ्याम्	एभिः	अनया	आभ्याम्	आभिः
अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
अस्य	अनयोः	एषाम्	अस्याः	अनयोः	आसाम्
अस्मिन्	अनयोः	एषु	अस्याम्	अनयोः	आसु

[2]एतत् (यह)

पुँल्लिङ्ग			स्त्रीलिङ्ग		
एषः	एतौ	एते	एषा	एते	एताः
एतम्	एतौ	एतान्	एताम्	एते	एताः
एतेन	एताभ्याम्	एतैः	एतया	एताभ्याम्	एताभिः
एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्यः
एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्यः	एतस्याः	एताभ्याम्	एताभ्यः
एतस्य	एतयोः	एतेषाम्	एतस्याः	एतयोः	एतासाम्
एतस्मिन्	एतयोः	एतेषु	एतस्याम्	एतयोः	एतासु

[3]अदस् (वह)

असौ	अमू	अमी	असौ	अमू	अमूः
अमुम्	अमू	अमून्	अमुम्	अमू	अमूः
अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः	अमुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

१ नपुंसकलिङ्ग में प्र०, द्वि०—इदम्, इमे, इमानि और शेष विभक्तियाँ पुंल्लिङ्ग की भाँति होती हैं।

२ नपुंसकलिङ्ग में एतत् शब्द की प्रथमा और द्वितीया विभक्तियों में एतत्, एते, एतानि और शेष विभक्तियाँ पुंल्लिङ्ग की भाँति होती हैं।

३ नपुंसकलिङ्ग में अदस् शब्द की प्रथमा और द्वितीया विभक्तियों में अदः, अमू, अमूनि और शेष विभक्तियाँ पुंल्लिङ्ग की भाँति होती हैं।

[1]यत् (जो)

पुंल्लिङ्ग			स्त्रीलिङ्ग		
यः	यौ	ये	या	ये	याः
यम्	यौ	यान्	याम्	ये	याः
येन	याभ्याम्	यैः	यया	याभ्याम्	यां
यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः	यस्यै	याभ्याम्	याः
यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः	यस्याः	याभ्याम्	याः
यस्य	ययोः	येषाम्	यस्याः	ययोः	याः
यस्मिन्	ययोः	येषु	यस्याम्	ययोः	याः

[2]किम् (कौन) ?

पुंल्लिङ्ग			स्त्रीलिङ्ग		
कः	कौ	के	का	के	काः
कम्	कौ	कान्	काम्	के	काः
केन	काभ्याम्	कैः	कया	काभ्याम्	कां
कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः	कस्यै	काभ्याम्	काः
कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः	कस्याः	काभ्याम्	काः
कस्य	कयोः	केषाम्	कस्याः	कयोः	काः
कस्मिन्	कयोः	केषु	कस्याम्	कयोः	काः

सर्वनाम शब्द और उनका प्रयोग

सर्वनाम का प्रयोग सामान्यतया नाम के स्थान पर किया जाता है जब नाम को एक से अधिक बार प्रयोग करने की आवश्यकता होती है । एक ही शब्द आवृत्ति सुन्दर प्रतीत नहीं होती । इस प्रकार प्रयुक्त सर्वनाम शब्द के नाम ही विभक्ति, और वचन को ले लेते हैं (यो यत्स्थानापन्नः स तद्धर्मांल्लभते) ।

---

१ नपुंसकलिङ्ग में यत् शब्द की प्र० द्वि० विभक्तियों में यत्, ये, यानि शेष विभक्तियाँ पुंल्लिङ्ग की भाँति होती हैं ।

२ नपुंसकलिङ्ग में प्र०, द्वि०—किम् के, कानि और शेष विभक्तियाँ पुंल्लिङ्ग ... होती हैं ।

१६. नेत्रेण ।

इदमादि सर्वनाम शब्दों में इदम् (यह) अदस् (वह) युष्मद् (तू, तुम) अस्मद् (मैं, हम) और भवान् (आप) इन सभी के रूप निम्नलिखित अर्थों में प्रयुक्त होते हैं—

१—समीप की वस्तु या व्यक्ति के लिए इदम् शब्द, अधिक समीप की वस्तु या व्यक्ति के लिए एतद् शब्द, सामने के दूरवर्ती पदार्थ या व्यक्ति के लिए अदस् और परोक्ष (जो वक्ता के सामने न हो) पदार्थ या व्यक्ति को बताने के लिए तद् शब्द को प्रयोग में लाया जाता है।

"इदमस्तु सन्निकृष्टे समीपतरवर्ति चैतदो रूपम्।
अदसस्तु विप्रकृष्टे तदिति परोक्षे विजानीयात्॥"

२—जिस व्यक्ति या वस्तु के सम्बन्ध में एकबार कुछ कह कर फिर उसके विषय में कुछ कहना हो तो (पुनरुक्तिबोध होने से) द्वितीया विभक्ति में, तृतीया विभक्ति के एकवचन में, और षष्ठी तथा सप्तमी विभक्तियों के द्विवचन में इदम् शब्द के स्थान में 'एन' आदेश होता है, यथा—अनेन व्याकरणमधीतम् एनं छन्दोऽध्यापय (इसने व्याकरण पढ़ लिया है, अब इसे छन्द पढ़ाइये)। अनयोः पवित्रं कुलम् एनयोः प्रभूतं स्वम् (इनका पवित्र कुल है, इनके पास बहुत धन है)।

३—युष्मद् और अस्मद् शब्दों की द्वितीया, चतुर्थी और षष्ठी के एकवचन में क्रमशः 'त्वा, ते, ते, मा, मे, मे,' द्विवचन में क्रमशः 'वाम्, नौ' और बहुवचन में क्रमशः 'वः, नः' आदेश होते हैं। इनको प्रयोग में लाने के नियम ये हैं—

ये सब आदेश (त्वा, ते, मे आदि) वाक्य या श्लोक के चरण के आरम्भ में 'च, वा, हा, अह, एव' इन पाँच अव्ययों के योग में और सम्बोधन के परे नहीं होते, यथा—वाक्यारम्भ में—मम गृहं गच्छ (मेरे घर जाओ)। इसमें 'मम' का 'मे' नहीं हुआ। पाँच अव्ययों के योग में—स त्वां मां च जानाति (वह तुझे और मुझे जानता है)। इदं पुस्तकं तवैवास्ति (यह पुस्तक तेरी ही है)। हा मम मन्दभाग्यम् (हाय मेरा दुर्भाग्य)। इनमें क्रमशः त्वा, मा, ते, मे आदेश नहीं हुए। सम्बोधन के ठीक परे—बन्धो, मम ग्राममागच्छ (भाई मेरे गाँव चलो)। यहाँ 'मम' के स्थान पर 'मे' नहीं हुआ।

४—जब 'च' आदि अव्ययों का युष्मद्, अस्मद् के 'त्वा, ते, मा, मे' आदि संक्षिप्त रूपों से कोई सम्बन्ध नहीं होता तब ये आदेश हो सकते हैं, यथा—केशवः शिव...

इष्ट देवौ (केशव और शिव मेरे इष्टदेव हैं)। यहाँ 'मे' का सम्बन्ध इष्टदेव और 'च' के शिव और शिव को एक वाक्य के साथ मिलाता है।

५—जब सम्बोधन के साथ कोई विशेषण हो तब युष्मद् और अस्मद् को आदेश हो सकते हैं, यथा—हरे दयालो नः पाहि (हे दयालु हरि, हमारी रक्षा क

६—सम्मान के अर्थ में युष्मद् के स्थान पर भवत्† शब्द का प्रयोग हो यथा—"रक्तमुखेन स प्रोक्तः—भो भवान् अभ्यागतः अतिथिः तद् भक्षयतु (भ मया दत्तानि जम्बूफलानि" (रक्तमुख ने उससे कहा—सुनिए, आप अभ्यागत अतिथि, हैं, अतः आप मेरे दिये हुए जामुन के फल खाइये)।

७—सम्मान बोध के अभाव में भी युष्मद् के स्थान में भवत् शब्द प्रयोग होता है, यथा—अहमपि भवन्तं किमपि पृच्छामि (मैं भी आपसे पूछता हूँ)।

८—सम्मान बोध होने से कभी-कभी 'भवत्' शब्द के पहले 'अत्र' और का प्रयोग किया जाता है। सम्मान का पात्र यदि उपस्थित हो तो 'अत्रभवत्' उपस्थित न हो तो 'तत्रभवत्' का प्रयोग किया जाता है; यथा—अत्रभवन्तः वि कुर्वन्तु, अस्ति तत्रभवान् भवभूतिः नाम काश्यपः (आप लोग यह जानें कि श्री पाद काश्यप गोत्र में भवभुति हैं)। अत्रभवान् वसिष्ठ आज्ञापयति (पूज्यपाद व जी आज्ञा देते हैं)। अपि कुशली तत्रभवान् कण्वः ? (पूजनीय कण्व जी कुश तो हैं ?) अत्रभवान् प्रयागीयविश्वविद्यालयकुलपतिः (आप इलाहाबाद यूनिवर्सि चांसलर हैं)।

९—भवत् शब्द के पूर्व 'एषः' और 'सः' का भी प्रयोग होता है, यथा— भवान् अत्र वर्तते (आप यहीं हैं)। स भवान् मामेतदुक्तवान् (श्रीमान् ने ऐसा कहा है)।

इन सर्वनामों के अतिरिक्त त्वत्, त्व, त्यद् आदि और भी सर्वनाम हैं, कि बहुत कम प्रयोग होता है।

---

†भवत् शब्द यद्यपि मध्यम पुरुष के स्थान में प्रयुक्त होता है, तथापि वह प्रथम पुरुष ही रहता है।

*'एषः' और 'सः' के आगे अकार को छोड़कर कोई भी अक्षर रहे तो जाता है।

१०—युष्मद्, अस्मद् और भवत् शब्दों को छोड़कर सब सर्वनाम विशेष्य और विशेषण दोनों हो सकते हैं, यथा—सर्वस्य हि परीक्ष्यन्ते स्वभावा नेतरे गुणाः (सब के स्वभाव की ही परीक्षा होती है अन्य गुणों की नहीं)। अतीत्य ही गुणान् सर्वान् स्वभावो मूर्ध्नि वर्तते (क्योंकि सब गुणों के ऊपर स्वभाव ही रहता है)। इन उदाहरणों में 'सर्वस्य' विशेष्य और 'सर्वान्' विशेषण हैं।

११—सर्वनाम शब्दों के आगे सम्बन्धार्थ में 'ईय' आदि प्रत्यय होते हैं, जैसे—मदीय, मामक, मामकीन (मेरे); आस्माकीन, अस्मदीय (हमारा); त्वदीय, तावक, तावकीन (तेरा); यौष्मक, यौष्माकीण, भवदीय (तुम्हारा); स्वीय, स्वकीय (अपना); परकीय (दूसरे का); तदीय (उसका)।

कुछ और सादृश्यवाचक विशेषण—मादृशः, मत्समः (मुझ सा); अस्मादृशः, अस्मत्समः (हम सा); त्वादृशः, त्वत्समः (तुझ सा); युष्मादृशः, युष्मत्समः (तुम सा); भवादृशः, भवत्समः (आप सा); ईदृशः (ऐसा); कीदृशः (कैसा)?

१२—प्रश्नार्थक और आश्चर्यार्थिक 'क्या' का अनुवाद 'किम्', 'अपि' और 'ननु' से किया जाता है, यथा—

किमिदमापतितम् (ओ! यह क्या आ पड़ा ?)

किं गतः प्राध्यापकः (क्या प्रोफेसर साहब चले गये ?)

ननु जलयानं गतम् (क्या जहाज चला गया ?)

१३—'यत्' शब्द के साथ 'तत्' शब्द का सम्बन्ध होता है (यत्तदोर्नित्य-सम्बन्धः)। किन्तु जहाँ 'यत्' शब्द उत्तर के वाक्य में आता है वहाँ पूर्व के वाक्य में 'तत्' शब्द का रखना जरूरी नहीं, यथा—

यत् वदामि तत् शृणु (जो कहता हूँ वह सुनो)।

किन्तु-शृणोमि यत् वदसि (सुनता हूँ जो कहते हो)।

१४—संस्कृत भाषा में 'यह' या 'ऐसा' का अनुवाद 'यत्' शब्द से होता है, किन्तु कभी-कभी 'इति' शब्द से भी होता है, यथा—

ममेति निश्चयो यदहं पठिष्यामि (मेरा यह निश्चय है कि मैं पढ़ूँगा)।

जर्मन-शासकस्य हिटलरस्यैषा दशा भविष्यति इति को जानाति स्म (यह ... जानता था कि जर्मनी के शासक हिटलर की यह दशा होगी !)

हिन्दी में अनुवाद करो—

१—ग्रामोपकण्ठे विमलापं सरोऽस्ति । तस्मिन्सुखं स्नान्ति ग्रामीणाः । २— रामो राज्ञां सत्तमोऽभूत् । स पितुर्वचनं पालयित्वा वनं प्राव्रजत् । ३—वृत्तेन वर्ण्य... रमेशसुता कमला नाम । तां परोक्षमपि प्रशंसति लोकः । ४—अमुं पुरः पश्य... देवदारुं पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन । ५—स सम्बन्धी श्लाघ्यः प्रियसुहृदसौ त... हृदयम् । ६—सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्वपि यन्नियोज्याः संभावनागुणमवेहि तमी... राणाम् । ७—यदेते गृहागतेषु शत्रुष्वप्यातिथेया भवन्ति स एषां कुलधर्मः ।

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—पिता ने कहा—वह मेरा योग्य शिष्य है, प्रिय पुत्र है । २—भारतवा... जो घर आये हुए शत्रु का भी आतिथ्य करते हैं, यह उनका कुलधर्म है । ३—... प्राणों के लिए मनुष्य क्या पाप नहीं करता ? ४—कोई जन्म से देवता होते हैं ... कोई कर्म से । दोनों का (उभयेषामपि, द्वयानामपि वा) दुबारा जन्म नहीं होता... ५—गुरु जी मेरा अपराध क्षमा कीजिए । ६—महाराज क्या तुझे बुला रहे हैं ... ७—जो जिसको प्यारा है, वह उसके लिए कोई अपूर्व वस्तु है (किमपि द्रव्यम्) ८—गोपाल, तुम किस जगह से आ रहे हो ? ९—मैं अच्छी तरह जानता हूँ ... आप हमारे रिश्तेदार (सम्बन्धी) हैं । १०—आप दोनों की मित्रता कब से (क... प्रभृति) है ? ११—देवता तथा असुर दोनों ही (उभये) प्रजापति की सन्तान हैं ... इनका आपस में (मिथः) लड़ाई झगड़ा होता आया है । १२—कहिए क्या ... आप का कसूर नहीं है ? १३—तुम स्वयं यहाँ चले आना । १४—हे परमेश्वर, आ... हमारी रक्षा करें । १५—क्या गाड़ी (वाष्पयानम्) चली गई ? १६—लड़को, तु... क्या पूछना चाहते हो ? १७—वे तुम्हारे कौन होते हैं ? १८—यह हाथी किस... है ? १९—लीजिए, यह आपकी चिट्ठी है । २०—जो ठण्डक है वह पानी ... स्वभाव है । (शैत्यं हि यत् सा ··)

संधियाँ

ध्यान से देखो ये शब्द कैसे मिलते हैं —

देव+अरिः=देवारिः।	वाक्+ईश=वागीशः।	देवः+तिष्ठति=देवस्तिष्ठति।
देव+इन्द्रः=देवेन्द्रः।	तत्+श्रुत्वा=तच्छ्रुत्वा।	हरः+अवदत्=हरोऽवदत्।
यदि+अपि=यद्यपि।	हरिम्+वन्दे=हरिंवन्दे।	सः+गच्छति=सो गच्छति।

ऊपर के उदाहरणों को देखने से ज्ञात हुआ कि संस्कृत के प्रत्येक शब्द के अन्त में कोई स्वर, व्यञ्जन, अनुस्वार अथवा विसर्ग अवश्य रहता है, और उस शब्द के आगे जब किसी दूसरे शब्द के होने से उनका मेल होता है तब पूर्व शब्द के अन्तवाले स्वर, व्यञ्जन आदि में कुछ परिवर्तन हो जाता है। उस प्रकार के मेल हो जाने से जो परिवर्तन होता है, उसे सन्धि कहते हैं। इस परिवर्तन से कहीं पर (१) दो अक्षरों के स्थान पर एक नया अक्षर हो जाता है, जैसे—रमा+ईशः=रमेशः। (२) कहीं पर एक अक्षर का लोप हो जाता है, जैसे छात्राः+गच्छन्ति=छात्रा गच्छन्ति। और (३) कहीं पर दो के बीच में एक नया अक्षर आ जाता है, जैसे-धावन्+अश्वः=धावन्नश्वः।

†सन्धियां तीन प्रकार की हैं—स्वर सन्धि, व्यञ्जन सन्धि और विसर्गसन्धि।

†कुछ अध्यापक छात्रों में भ्रमात्मक प्रचार करते हैं कि वाक्य में सन्धि वैकल्पिक है और वे इस कारिका का उद्धरण देते हैं—"संहितैक पदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः। नित्या समासे, वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते॥" निःसन्देह यह कारिका वाक्य के अन्तर्गत पदोंके बीच सन्धि को वैकल्पिक कहती है, किन्तु इसका विकल्प से होना सीमाबद्ध है। संहिता का भाव यह है कि—स्वरों एवं व्यञ्जनों का एक दूसरे के अनन्तर आना और संधि के नियम तभी लागू होते हैं जब वाक्य गत शब्दों में संहिता हो अथवा विराम न हो। विराम होने पर ही सन्धि नहीं होती, यथा—"मित्र, एहि, अनुगृहाणेमं जनम्।" यहां मित्र और एहि के बीच में विराम उपेक्षित है, परन्तु 'अनुगृहाण और इमम्' के बीच में अवश्य सन्धि होती है। श्लोक के प्रथम और तृतीय चरणों के पीछे शिष्टों ने विराम नहीं माना, अतः वहां अवश्य सन्धि होती है। वाणभट्ट एवं सुबन्धु आदि के गद्योंमें वाक्य के अन्तर्गत पदों में सदैव सन्धि मिलती है।

स्वरसन्धि

एक स्वर के साथ दूसरे स्वर के मेल होने से जो परिवर्तन होता है, उसे सन्धि कहते हैं। स्वरसन्धि में निम्नलिखित सन्धियां मुख्य हैं—

१—दीर्घ सन्धि

जब ह्रस्व अथवा दीर्घ स्वर के बाद ह्रस्व अथवा दीर्घ स्वर आवे तो दोनों स्थान में दीर्घ स्वर हो जाता है; (अकः सवर्णे दीर्घः) जैसे--रत्न+आकर: रत्नाकरः।

यहां पर 'रत्न' में जो ह्रस्व अकार है उसके बाद 'आकरः' का दीर्घ 'आ' है, इसलिए ऊपर के नियम के अनुसार दोनों के (ह्रस्व 'अ' और दीर्घ 'आ' स्थान में दीर्घ 'आ' हो गया; इसी प्रकार—

सुर+अरिः=सुरारिः।
हिम+आलयः=हिमालयः।
दया+अर्णवः—दयार्णवः।
विद्या+आलयः—विद्यालयः।
गुरु+उपदेशः—गुरूपदेशः।
लघु+ऊर्मिः—लघूर्मिः।

गिरि+इन्द्रः—गिरीन्द्रः।
क्षिति+ईशः—क्षितीशः।
सुधी+इन्द्रः=सुधीन्द्रः।
श्री+ईशः=श्रीशः।
वधू+उत्सवः=वधूत्सवः।
पितृ+ऋणम्=पितॄणम् इत्यादि

२—गुणसन्धि

यदि अ अथवा आ के बाद ह्रस्व 'इ' या दीर्घ 'ई' आवे तो दोनोंके स्थान में, हो जाता है और यदि ह्रस्व 'उ' या दीर्घ 'ऊ' आवे तो दोनों के स्थान में 'ओ' हो जा है और यदि ह्रस्व 'ऋ' या दीर्घ 'ॠ' आवे तो दोनों के स्थान में 'अर्' हो जाता और यदि ऌ आवे तो दोनों के स्थान में 'अल्' गुण हो जाता है; (अदेङ्गुणः आद्गुणः) यथा—

देव+इन्द्रः=देवेन्द्रः।

यहां पर देव के 'व' में जो 'अ' है उसके बाद इन्द्र की 'इ' आती है, इसलिए ऊपर के नियम के अनुसार दोनों (देव के 'अ' और इन्द्र की 'इ') के स्थान 'ए' हो गया। इसी प्रकार—

सुर+ईशः=सुरेशः।	गंगा+उदकम्=गंगोदकम्।
तथा+इति=तथेति।	पीन+ऊरुः=पीनोरुः।
रमा+ईशः=रमेशः।	देव+ऋषिः=देवर्षिः।
हित+उपदेशः=हितोपदेशः।	महा+ऋषिः=महर्षिः इत्यादि।

३—वृद्धिसन्धि

जब 'अ' या 'आ' के बाद 'ए' या 'ऐ' आवे तो दोनों के स्थान में 'ऐ' और जब 'ओ' या 'औ' आवे तो दोनों के स्थान में 'औ' वृद्धि हो जाती है; (वृद्धिरादैच्, वृद्धिरेचि) जैसे—

अद्य=एव=अद्यैव।	महा+ओषधिः=महौषधिः।
तथा+एव=तथैव।	महा+औषधम्=महौषधम्
तण्डुल+ओदनम्=तण्डुलौदनम्।	इत्यादि।

४—यण्सन्धि

(१)—जब ह्रस्व इ या दीर्घ ई के बाद इ ई को छोड़कर कोई दूसरा स्वर आवे तो 'इ,ई' के स्थान में 'य्' हो जाता है।

(२)—जब उ या ऊ के बाद उ ऊ को छोड़कर कोई दूसरा स्वर आवे तो 'उ-ऊ' के स्थान में 'व्' हो जाता है।

(३)—जब ऋ या ॠ के बाद ऋ ॠ को छोड़कर कोई दूसरा स्वर आवे तो 'ऋ-ॠ' के स्थान में 'र्' हो जाता है (इको यणचि); जैसे—

(क)—यदि=अपि=यद्यपि।	(ख)—अनु+अयः=अन्वयः।
नदी+उदकम्=नद्युदकम्।	गुरु+आदेशः=गुर्वादेशः।
इति+आह=इत्याह।	वधू+आदेशः=वध्वादेशः।
प्रति+एकम्=प्रत्येकम्।	(ग)—पितृ+उपदेशः=पित्रुपदेशः।
प्रति+उपकारः=प्रत्युपकारः।	मातृ+अनुमतिः=मात्रनुमतिः।

५—अयादि चतुष्टय

ए, ऐ, ओ, औ, के बाद जब कोई स्वर आता हैं तो 'ए' के स्थान में 'अय्' 'ओ' के 'अव्' 'ऐ' के 'आय्' और 'औ' के स्थान में 'आव्' हो जाता है (एचोऽयवायावः), जैसे—

शे + अनम् = शयनम् ।
ने + अनम् = नयनम् ।
नै + अक: = नायक: ।
भो + अति = भवति ।
वटो + ऋक्ष: = वटवृक्ष: ।
पौ + अक: = पावक: इत्यादि ।

६—पूर्वरूप

जब किसी पद (सुबन्त या तिङन्त) के अन्त में 'ए' आवे और उसके बाद 'अ' आवे तो 'अ' का पूर्व रूप (ए या ओ जैसा रूप) हो जाता है, और केवल पूर्व सूचक चिह्न (ऽ) लगाया जाता है, (एङः पदान्तादति) जैसे—

वृक्षे + अस्मिन् = वृक्षेऽस्मिन् ।
बालो + अवदत् = बालोऽवदत् ।
गुरो + अव = गुरोऽव ।
वने + अत्र = वनेऽत्र इत्यादि ।

७—प्रकृतिभाव

ई, ऊ, ए से अन्त होनेवाले द्विवचन के बाद जब कोई स्वर (द्विवचन शब्द के आदि में) आता है तो ई, ऊ, ए ज्यों के त्यों रहते हैं (ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्)

मुनी + इमौ = मुनी इमौ ।
साधू + एतौ = साधू एतौ ।
गंगे + अमू = गंगे अमू ।
(गंगेऽमू नहीं होता)।

हल्सन्धि

(१) जब कोई स्वर, या वर्ग के तीसरे चौथे अक्षर अथवा य् र् ल् व् आवें तो पद के अन्तवाले क् च् ट् त् प् के स्थान में क्रमशः ग् ज् ड् द् ब् हो जाते हैं (झलां जशोऽन्ते), जैसे—

वाक् + दानम् = वाग्दानम् ।
दिक् + अम्बर: = दिगम्बर: ।
अच् + अन्त: = अजन्त: ।
षट् + दर्शनम् = षड्दर्शनम् ।
अप् + जम् = अब्जम् ।
जगत् + ईश: = जगदीश: ।
सत् + आचार: = सदाचार: ।
तत् + धनम् = तद्धनम् ।
जगत् + बन्धु: = जगद्बन्धु: ।

(२) झलों (वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ) को जश् (अपने वर्ग के तृतीय अक्षर) होता है यदि बाद में झश् (वर्गों के तृतीय या चतुर्थ अक्षर) हों (झलां जश् झशि), यथा—

ऋध् + धि: = ऋद्धि: । सिध् + धि: = सिद्धि:,
क्षुभ् + ध: = क्षुब्ध: । (यह नियम पद के बीच में लगता है ।)

(३) यदि अनुनासिक अक्षरों को छोड़कर वर्ग के किसी अक्षर के आगे ह् आवे तो उस अक्षर के स्थान में उसी वर्ग का तीसरा अक्षर (ग् ज् ड् द् ब्) और ह् के स्थान में क्रमशः उसी वर्ग का चौथा अक्षर (घ् झ् ढ् ध् भ्) हो जाते हैं। (झयो होऽन्यतरस्याम्), जैसे—

वाक् + हरिः = वाग्घरिः ।	तत् + हितः = तद्धितः ।
अच् + ह्रस्वः = अज्झ्रस्वः ।	अप् + हरणम् = अब्भरणम्
षट् + हलानि षड्ढलानि ।	इत्यादि

(४) जब स् या तवर्ग (त् थ् द् ध् न्) के आगे या पीछे श् या चवर्ग (च् छ् ज् झ् ञ्) आते हैं तब स् के स्थान में श् और तवर्ग के स्थान में क्रमशः चवर्ग हो जाता है (स्तोः श्चुना श्चुः) जैसे—

शिशुस् + शेते = शिशुश्शेते ।	तत् + छविः = तच्छविः ।
कस् + चित् = कश्चित् ।	एतत् + जलम् = एतज्जलम् ।
सत् + चरितम् = सच्चरितम् ।	बृहत् + झरः = बृहज्झरः ।
शत्रून् + जयति = शत्रूञ्जयति ।	याच् + ना = याच्ञा इत्यादि ।

(५) जब स् या तवर्ग के आगे या पीछे ष् या टवर्ग आते हैं तब स् के स्थान में ष् और तवर्ग के स्थान में टवर्ग हो जाता है (ष्टुना ष्टुः), यथा—

रामस् + षष्ठः = रामष्षष्ठः ।	इष् + तः = इष्टः ।
तत् + टीका = तट्टीका ।	राष् + त्रम् = राष्ट्रम्
उत् + डयनम् = उड्डयनम् ।	इत्यादि ।

(६) जब त् द् और न् के बाद 'ल्' आवे तो उनके स्थान में ल् हो जाता है और न् के स्थान में अनुनासिक (ँ) भी हो जाता है (तोर्लिः), जैसे—

उत् + लेखः = उल्लेखः ।	महान् + लाभः = महाँल्लाभः
कश्चित् + लभते कश्चिल्लभते ।	इत्यादि ।

(७) यदि पद के अन्त में वर्गों के प्रथम वर्ण (क् च् ट् त् प) के आगे न् या म् आवें तो वर्ग के पहले अक्षर के स्थान में उसी वर्ग का तीसरा या पाँचवाँ अक्षर हो जाता है. यदि प्रत्यय आगे हो तो पाँचवाँ ही अक्षर होता है (यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा जैसे—

✓ – यदि पदान्त न् के बाद छव् प्रत्याहार टवक (छ ठ थ च ट त व) का अक्षर हो तो उसी के स्थानीय श ष स् होगा और पहले स्वर को अनुनासिक कर दिया जाता है। राजन्+चिनोमि = राजँश्चिनोमि

दिक् + नागः = दिग्नागः दिङ्नागः। | जगत् + नाथः = जगद्नाथः, जगन्नाथः

वेगात् + नयति = वेगाद् नयति, वेगान्नयति | (प्रत्यय) वाक् + मयम् = वाङ्मयम्

(८) यदि पद के अन्त में 'म्' रहे और उसके बाद व्यञ्जन आवे तो म् के स्थान में अनुस्वार करना या न करना अपनी इच्छा पर निर्भर है (मोऽनुस्वारः)

गृहम् + चलति = गृहं चलति, गृहञ्चलति। | हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे।

मृत्युम् + जयति = मृत्युं जयति, मृत्युञ्जयति | मधुरम् + हसति = मधुरं हसति।

सम् + गमः = संगमः, सङ्गमः।

स्वर परे रहने पर म् स्वर के साथ मिल जाता है। जैसे—

सम् + आचारः = समाचारः।

✓ (९) जब पद के अन्त में 'न्' आवे और उसके बाद च् छ् ट् ठ् त् थ् आवें तो 'न्' के स्थान में अनुस्वार और च् छ् ट् ठ् त् थ् के स्थान में क्रमशः श्छ् ष्ट् ष्ठ् स्त् हो जाते हैं (नश्छव्यप्रशान्), जैसे—

कस्मिन् + चित् = कस्मिंश्चित्। | महान् + ठक्कुरः = महांष्ठक्कुरः।

महान् + छेदः = महांश्छेदः। | पतन् + तरुः = पतंस्तरुः।

चलन् + टिट्टिभः = चलंष्टिट्टिभः। | क्षिपन् + थूत्कारः = क्षिपंस्थूत्कारः।

(१०) जब पद के अन्तवाले 'त्' 'न्' के बाद 'श्' आवे तो 'त्' के स्थान में 'च्' 'न्' के स्थान में 'ञ्' और 'श्' के स्थान में 'छ्' होजाता है (शश्छोऽटि), जैसे-

तत्+श्रुत्वा = तच्छ्रुत्वा, तच् श्रुत्वा।

धावन्+शशः = धावञ्छशः, धावञ् शशः इत्यादि।

✓ (११) यदि ह्रस्व स्वर के बाद ङ् ण् न् आवें और उनके बाद कोई स्वर हो तो एक-एक ङ् ण् न् के स्थान में दो-दो ङ् ण् न् हो जाते हैं (ङमो ह्रस्वादचि ङमुण् नित्यम्), यथा—

प्रत्यङ्+आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा। | धावन्+अश्वः = धावन्नश्वः

सुगण्+ईशः = सुगण्णीशः। | इत्यादि।

✓ (१२) यदि ह्रस्व स्वर के बाद छ् आवे तो छ् के साथ एक च् अधिक हो जाता है और दीर्घ स्वर के बाद च् मिलता भी है और नहीं भी मिलता (छे च, पदान्ताद्वा)

वृक्ष + छाया = वृक्षच्छाया। लक्ष्मी + छाया = लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया।

२- अः + अ या हश् = उ और आ हश्- बाद गुण सन्धि से ओ और अ का लोप ऽ

३- अः + अन्य = लोप (अ छोड़कर) कोई भी स्वर हो

४- आः + अश् = लोप

विसर्गसन्धि

(१) जब विसर्ग के बाद च् छ् आवें तब विसर्ग के स्थान में श्, यदि उसके बाद त् थ् और स् आवें तब विसर्ग के स्थान में स्, और यदि विसर्ग के बाद ट् ठ् आवें तब विसर्ग के स्थान में ष् हो जाता है (विसर्जनीयस्य सः) और विसर्ग के बाद श् ष् स् आवें तो विकल्प से विसर्ग को श् ष् स् हो जाता है (वा शरि) जैसे—

बालः+चलति=बालश्चलति ।
निः+छलः=निश्छलः ।
देवः+तिष्ठति=देवस्तिष्ठति ।
धनुः+टंकारः=धनुष्टंकारः ।
निः+सारः=निस्सारः, निः सारः ।
हरिः+शेते=हरिश्शेते, हरिः शेते ।

(२) विसर्ग के पूर्व जब ह्रस्व अ आवे और बाद को ह्रस्व अ या वर्ग का तीसरा, चौथा, पाँचवाँ अक्षर अथवा य् र् ल् व् ह् आवें तग विसर्ग का 'उ' हो जाता है (अतो रोरप्लुतादप्लुते, हशि च) ओ के बाद अ का लोपसूचक चिह्न (ऽ) लगा दिया जाता है, यथा—

यशः+अभिलाषी=यशोऽभिलाषी ।
देवः+अपि=देवोऽपि ।
कः+अवदत्=कोऽवदत् ।
मनः+गतः=मनोगतः ।
यशः+दा=यशोदा ।
मनः+भावः=मनोभावः ।
बालः+वदति=बालो वदति ।
मनः+हरम्=मनोहरम् ।

(३) अ के बाद विसर्ग का लोप हो जाता है, यदि विसर्ग के बाद अ के अलावा कोई और स्वर आवे और उसके साथ कोई दूसरी सन्धि नहीं होती (अतोऽनत्यचि विसर्गस्य लोपः), यथा— अः + अान्य् = लोप (अ को छोड़कर) कोई भी स्वर हो

बालः+आगच्छति=बाल आगच्छति ।
यशः+इच्छा=यश इच्छा ।
अतः+एव=अत एव ।
पुष्पेभ्यः+उद्यानम्=पुष्पेभ्य उद्यानम् ।

(४) यदि आ के बाद विसर्ग आवे और उसके बाद कोई स्वर अथवा वर्ग के प्रथम द्वितीय अक्षरों को छोड़कर कोई अन्य अक्षर या य् र् ल व् ह् आवें तो विसर्ग का लोप हो जाता है (आतोऽशि विसर्गस्य लोपः) यथा—

छात्राः+अपि=छात्रा अपि ।
नराः+इच्छन्ति=नरा इच्छन्ति ।
गुणाः+एव=गुणा एव ।
अश्वाः+गच्छन्ति=अश्वा गच्छन्ति ।
नराः+हसन्ति=नरा हसन्ति
इत्यादि ।

५- आः + अश = लोप

४- इच+:+ व्रश = र्

(५) यदि विसर्ग के पहले अ आ को छोड़कर कोई दूसरा स्वर हो और विसर्ग के बाद स्वर अक्षर, या वर्ग के तीसरे, चौथे, पाँचवें अक्षर अथवा य् र् ल् व् ह् हो तो विसर्ग के स्थान में र् हो जाता है (इचोऽशि विसर्गस्य रः), यथा—

निः+धनः=निर्धनः। | निः+आधारः=निराधारः।
बहिः+देशः=बहिर्देशः। | भानुः+उदेति=भानुरुदेति
भानोः+मयूखाः=भानोर्मयूखाः। | इत्यादि।

अ के बाद विसर्ग यदि र् से बना हो तो र् हो जाता है, जैसे—

पुनः+अपि=पुनरपि। | भ्रातः+आगच्छ=भ्रातरागच्छ।
प्रातः+एव=प्रातरेव। | मातः+देहि=मातर्देहि,
स्वः+गतः=स्वर्गतः। | इत्यादि।

(६) यदि र् के बाद र् आवे तो एक र् का लोप हो जाता है और उसके पहले के स्वर को दीर्घ हो जाता है (रो रि, ढ्लोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः), यथा—

पुनर्+रचना=पुनारचना। | भानुर्+राजते=भानू राजते।
निर्+रोगः=नीरोगः। | साधोर्+रुचिः=साधो रुचिः
निर्+रसः=नीरसः। | इत्यादि।

(७) 'सः' और 'एषः' के विसर्ग का लोप हो जाता है यदि उसके बाद अ के अलावा कोई अक्षर आवे (एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ् समासे हलि), यथा—

सः+पठति=स पठति। | एषः+आगच्छत्=एष आगच्छत्।
सः+उवाच=स उवाच। | एषः+वदति=एष वदति।

('स उवाच' के बीच में विसर्ग के लोप होने से कोई सन्धि नहीं हो सकती)

न् का ण् में परिवर्तन

ऋ ॠ र् और ष् इन चार वर्णों से परे न् का ण् होता है; जैसे नृणाम्, चतसृणाम्, भ्रातृणाम्, चतुर्णाम्, विस्तीर्णम्, दोष्णाम्, पुष्णाति आदि।

यदि[1] स्वर वर्ण, कवर्ग, पवर्ग, य्, व्, ह्, र् और आ और न् से व्यवधान अर्थात् ये सब बीच में भी पड़ जायें तो भी न् का ण् होता है। जैसे—कराणाम्, करिणा, गुरुणा, मृगेण, मूर्खेण, दर्पण, रयेण, गर्वेण, ग्रहाणाम् इत्यादि।

१—इनके अतिरिक्त अक्षरों के मध्यस्थित होने पर ण् नहीं होता, जैसे अर्चना, किरीटेन, अर्थेन, स्पर्शेन, रसेन, दृढानाम्, अर्जनम् इत्यादि।

पद के अन्त वाले न् का ण् नहीं होता, जैसे—रामान्, हरीन्, गुरून्, वृक्षान्, भ्रातॄन् इत्यादि ।

स् का ष् में परिवर्तन

अ, आ भिन्न स्वर से अथवा र् से परे आदेश और प्रत्यय के स् का ष् होता है, जैसे—मुनिषु, वधूषु, भ्रातृषु, देवेषु, अनैषीत्, दिक्षु, चतुर्षु, हलॄषु इत्यादि[२] ।

अनुस्वार, विसर्ग, श् , ष् , स् , का व्यवधान होने पर अर्थात् इनके बीच में रहने पर भी स् का ष् होता है, यथा—हवींषि, धनूंषि, आशीःषु, आयुःषु, चक्षुःषु, आदि किन्तु पुंसु में नहीं होता ।

हिन्दी में अनुवाद करो और सन्धि विच्छेद करके सन्धि नियम बताओ ।

१—विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया । २—पिबन्त्येवोदकं गावो मण्डूकेषु रुवत्स्वपि । ३—नाग्निस्तृप्यति काष्ठानां नापगानां महोदधिः । ४—प्राणव्ययाय शूराणां जायते हि रणोत्सवः । ५—अहं स ते परं मित्रमुपकारवशीकृतः । ६—यद्भवान्मधुरं वक्ति तन्मह्यं नाद्य रोचते । ७—शरदभ्रचलाश्चलेन्द्रियैरसुरक्षा हि बहुच्छलाः श्रियः । ८—सुखाच्च यो याति नरो दरिद्रतां धृतः शरीरेण मृतः स जीवति । ९—को नाम लोके स्वयमात्मदोषमुद्घाटयेन्नष्टघृणः सभासु । १०—विवक्षता दोषमपि च्युतात्मना त्वयैकमीशं प्रति साधु भाषितम् । ११—यास्यत्यद्य शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम् । १२—नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले । नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥

संस्कृत में अनुवाद करो

१मेरा भतीजा (भ्रातृव्यः) इस वर्ष लखनऊ विश्वविद्यालय में संस्कृत की एम० ए० की परीक्षा में प्रथम रहा (प्रथम इति निर्दिष्टो ऽभूत्) । २—*बुद्धिमान्

२—सात् प्रत्यय के स् का ष नहीं होता । जैसे—नदीसात्, वायुसात्, भ्रातृसात् , वह्निसात्, इत्यादि ।

*मेधावी क्षिप्रं स्मरति चिरं च धारयति । यथा यथाहं संस्कृतं वाङ्मयमध्यैयि तथा तथास्मत्संस्कृतेर्गौरवं प्रति प्रत्यायितोऽजाये ।

जल्दी ही कण्ठस्थ कर लेता है और देर तक याद रखता है। ३—कोसे ज(कदुष्णेन जलेन) स्नान करो, इस से आपको सुख अनुभव होगा। ४— यदि पाप को धोना चाहता है (प्रमार्ष्टुमिच्छति) तो उसे ब्राह्मण को दस गाय और बैल (वृषभैकादश गाः) देने चाहिएँ। ५—अमित तेजवाले और पापों से (अमिततेजसः पूतपापाः) ऋषि भारत में रहते थे। ६—जितना अधिक साहित्य का मैंने अध्ययन किया उतना ही अधिक मुझे अपनी संस्कृति पर होता गया। ७—वह इतना चञ्चल (तथा चपलः) है कि एक क्षण भी (निश्चलम्) नहीं बैठ सकता। ८—*वह भले ही प्राणों को छोड़ दे पर आगे न झुकेगा। ९—अनुवाद करना विशेषज्ञों के लिए भी कठिन है (दुष्करोऽनुवादो विशेषज्ञैः) साधारण छात्रों का तो कहना ही क्या है (किं पुनः) १०—सूर्य पूर्व में उदय होता है (उदेति) और पश्चिम में अस्त होता है (अस्तं यह कथन मिथ्या है।

---

*कामं प्राणान् त्यजेत् न पुनरसौ शत्रोः पुरतो वैतसीं वृत्तिमाश्रयेत्।

द्वितीयोऽध्यायः

शब्दोच्चारण (हलन्त) पुंलिङ्ग

राजन् (राजा)

	एकव०	द्विव०	बहुव०
प्र०	राजा	राजानौ	राजानः
द्वि०	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृ०	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
च०	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पं०	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
ष०	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
स०	राज्ञि, राजनि	राज्ञोः	राजसु
सं०	हे राजन्	हे राजानौ	हे राजानः

महत् (बड़ा)

प्र०	महान्	महान्तौ	महान्तः
द्वि०	महान्तम्	महान्तौ	महतः
तृ०	महता	महद्भ्याम्	महद्भिः
च०	महते	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
पं०	महतः	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
ष०	महतः	महतोः	महताम्
स०	महति	महतोः	महत्सु
सं०	हे महन्	हे महान्तौ	(हे महान्तः)

स्त्रीलिङ्ग में महती, महत्यौ, महत्यः इत्यादि रूप नदी शब्द की भाँति होते नपुंसक लिङ्ग की प्रथमा और द्वितीया में महत्, महती, महान्ति रूप होते हैं। शेष विभक्तियों के रूप पुँल्लिङ्ग की भाँति होते हैं।

भगवत् (देवता-विष्णु)

प्र०	भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः
द्वि०	भगवन्तम्	भगवन्तौ	भगवतः
तृ०	भगवता	भगवद्भ्याम्	भगवद्भिः
च०	भगवते	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
प०	भगवतः	भगवद्भ्याम्	भगवद्भ्यः
ष०	भगवतः	भगवतोः	भगवताम्
स०	भगवति	भगवतोः	भगवत्सु
सं०	हे भगवन्	हे भगवन्तौ	हे भगवन्तः

इसी प्रकार धीमत् (बुद्धिमान्) श्रीमत्, बुद्धिमत्, वलवत्, विद्यावत्, धनु सानुमत् (पहाड़), भास्वत् (सूर्य), मघवत् (इन्द्र), सरस्वत् (समु ज्ञानवत्, गतवत् आदि ।

पुं० पठत् (पढ़ता हुआ)

प्र०	पठन्	पठन्तौ	पठन्तः
द्वि०	पठन्तम्	पठन्तौ	पठतः
तृ०	पठता	पठद्भ्याम्	पठद्भिः
च०	पठते	पठद्भ्याम्	पठद्भ्यः
पं०	पठतः	पठद्भ्याम्	पठद्भ्यः
ष०	पठतः	पठतोः	पठताम्
स०	पठति	पठतोः	पठत्सु
सं०	हे पठन्	हे पठन्तौ	हे पठन्तः

स्त्रीलिङ्ग में पठन्ती, पठन्त्यौ, पठन्त्यः इत्यादि रूप नदी की तरह और न लिङ्ग की प्र० द्वि० में पठत् पठन्ती, पठन्ति और शेष विभक्तियों के रूप पुँल्लिङ्ग भाँति होते हैं। इसी तरह—पश्यत् (देखता हुआ), गच्छत् (जाता हुआ वसत् (वास करता हुआ) पिबत् (पीता हुआ), पृच्छत् (पूछता हुआ) खा (खाता हुआ) चोरयत् (चोरी करता हुआ) आदि शतृप्रत्ययान्त शब्द ।

पुं० आत्मन् (आत्मा)

प्र०	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
द्वि०	आत्मानम्	आत्मानौ	आत्मनः
तृ०	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः
च०	आत्मने	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
पं०	आत्मनः	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
ष०	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
स०	आत्मनि	आत्मनोः	आत्मसु
सं०	हे आत्मन्	हे आत्मानौ	हे आत्मानः

पुं० युवन् (जवान आदमी)

प्र०	युवा	युवानौ	युवानः
द्वि०	युवानम्	युवानौ	यूनः
तृ०	यूना	युवभ्याम	युवभिः
च०	यूने	युवभ्याम्	युवभ्यः
पं०	यूनः	युवभ्याम्	युवभ्यः
ष०	यूनः	यूनोः	यूनाम्
स०	यूनि	यूनोः	युवसु
सं०	हे युवन्	हे युवानौ	हे युवानः

मघवन् (इन्द्र) की विभक्तियाँ युवन् की तरह होती हैं।

प्र०	श्वा	श्वानौ	श्वानः
द्वि०	श्वानम्	श्वानौ	शुनः
तृ०	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
च०	शुने	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
पं०	शुनः	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
ष०	शुनः	शुनोः	शुनाम्
स०	शुनि	शुनोः	श्वसु
सं०	हे श्वन्	हे श्वानौ	हे श्वानः

पुं० पथिन् (रास्ता)

प्र०	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
द्वि०	पन्थानम्	पन्थानौ	पथः
तृ०	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
च०	पथे	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
पं०	पथः	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
ष०	पथः	पथोः	पथाम्
स०	पथि	पथोः	पथिषु
सं०	हे पन्थाः	हे पन्थानौ	हे पन्थानः

पुं० विद्वस् (विद्वान्)

प्र०	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
द्वि०	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृ०	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
च०	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पं०	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
ष०	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
स०	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु
सं०	हे विद्वन्	हे विद्वांसौ	हे विद्वांसः

इसी भाँति—श्रेयस् (अच्छा), कनीयस् (छोटा), ज्यायस् ([illegible] प्रेयस् (प्रेम)।

पुं० चन्द्रमस् (चन्द्रमा)

प्र०	चन्द्रमाः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
द्वि०	चन्द्रमसम्	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
तृ०	चन्द्रमसा	चण्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभिः
च०	चन्द्रमसे	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
पं०	चन्द्रमसः	चन्द्रमोभ्याम्	चन्द्रमोभ्यः
ष०	चन्द्रमसः	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्

स०	चन्द्रमसि	चन्द्रमसोः	चन्द्रमस्सु-मःसु
सं०	हे चन्द्रमः	हे चन्द्रमसौ	हे चन्द्रमसः

इसी तरह—वनौकस्—वनवासी। वेधस्—ब्रह्मा। दिवौकस्–देवता। दुर्वासस्–दुर्वासा नामक ऋषि।

पुँ० करिन् (हाथी)

प्र०	करी	करिणौ	करिणः
द्वि०	करिणम्	करिणौ	करिणः
तृ०	करिणा	करिभ्याम्	करिभिः
च०	करिणे	करिभ्याम्	करिभ्यः
पं०	करिणः	करिभ्याम्	करिभ्यः
ष०	करिणः	करिणोः	करिणाम्
स०	करिणि	करिणोः	करिषु
सं०	हे करिन्	हे करिणौ	हे करिणः

इसी प्रकार—गुणिन् (गुणवाला), शशिन् (चन्द्रमा), दण्डिन् (दण्डधारी), कुशलिन् (सुखी), पक्षिन् (पक्षी), स्वामिन (मालिक), शिखरिन् (पर्वत), करिन् (हाथी), मन्त्रिन्—मन्त्री (वजीर)

पुं० तादृश् (उसके जैसा)

प्र०	तादृक्	तादृशौ	तादृशः
द्वि०	तादृशम्	तादृशौ	तादृशः
तृ०	तादृशा	तादृग्भ्याम्	तादृग्भिः
च०	तादृशे	तादृग्भ्याम्	तादृग्भ्यः
पं०	तादृशः	तादृग्भ्याम्	तादृग्भ्यः
ष०	तादृशः	तादृशोः	तादृशाम्
स०	तादृशि	तादृशोः	तादृक्षु
सं०	हे तादृक्	हे तादृशौ	हे तादृशः

इसी प्रकार—ईदृश् (ऐसा), कीदृश् (कैसा), यादृश् (जैसा), त्वादृश् (तुम जैसा), भवादृश् (आप जैसा), मादृश् (मुझ जैसा) इत्यादि।

पुं० पुंस् (पुरुष)

प्र०	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः
द्वि०	पुमांसम्	पुमांसौ	पुंसः
तृ०	पुंसा	पुम्भ्याम्	पुम्भिः
च०	पुंसे	पुम्भ्याम्	पुम्भ्यः
पं०	पुंसः	पुम्भ्याम्	पुम्भ्यः
ष०	पुंसः	पुंसोः	पुंसाम्
स०	पुंसि	पुंसोः	पुंसु
सं०	हे पुमन्	हे पुमांसौ	हे पुमांसः

स्त्रीलिंग शब्द

वाक् (वाणी)

प्र०	वाक्	वाचौ	वाचः
द्वि०	वाचम्	वाचौ	वाचः
तृ०	वाचा	वाग्भ्याम्	वाग्भिः
च०	वाचे	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
पं०	वाचः	वाग्भ्याम्	वाग्भ्यः
ष०	वाचः	वाचोः	वाचाम्
स०	वाचि	वाचोः	वाक्षु
सं०	हे वाक्	हे वाचौ	हे वाचः

इसी प्रकार शुच् (शोक), त्वच् (छाल), रुच् (कान्ति) इत्यादि।

(स्त्रीलिङ्ग) सरित् (नदी)

प्र०	सरित्	सरितौ	सरितः
द्वि०	सरितम्	सरितौ	सरितः
तृ०	सरिता	सरिद्भ्याम्	सरिद्भिः
च०	सरिते	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
पं०	सरितः	सरिद्भ्याम्	सरिद्भ्यः
ष०	सरितः	सरितोः	सरिताम्

स०	सरिति	सरितोः	सरित्सु
सं०	हे सरित्	हे सरितौ	हे सरितः

इसी प्रकार—हरित् (दिशा) योषित् (स्त्री) तडित् (बिजली)।

(स्त्रीलिङ्ग) विपद् (विपत्ति)

प्र०	विपत्	विपदौ	विपदः
द्वि०	विपदम्	विपदौ	विपदः
तृ०	विपदा	विपद्भ्याम्	विपद्भिः
च०	विपदे	विपद्भ्याम्	विपद्भ्यः
पं०	विपदः	विपद्भ्याम्	विपद्भ्यः
ष०	विपदः	विपदोः	विपदाम्
स०	विपदि	विपदोः	विपत्सु
सं०	हे विपत्	हे विपदौ	हे विपदः

इसी प्रकार—संपत्, शरद् (शरद् ऋतु) परिषत् (सभा) इत्यादि।

(स्त्रीलिङ्ग) गिर् (वाणी)

प्र०	गीः	गिरौ	गिरः
द्वि०	गिरम्	गिरौ	गिरः
तृ०	गिरा	गीर्भ्याम्	गीर्भिः
च०	गिरे	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
पं०	गिरः	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
ष०	गिरः	गिरोः	गिराम
स०	गिरि	गिरोः	गीर्षु
सं०	हे गीः	हे गिरौ	हे गिरः

इसी प्रकार—पुर (नगर), धुर् (धुरा), द्वार् (द्वार)।

(स्त्रीलिङ्ग) दिश्—(दिशा)

प्र०	दिक्	दिशौ	दिशः
द्वि०	दिशम्	दिशौ	दिशः
तृ०	दिशा	दिग्भ्याम्	दिग्भिः
च०	दिशे	दिग्भ्याम्	दग्भ्य :

पं०	दिशः	दिग्भ्याम्	दिग्भ्यः
ष०	दिशः	दिशोः	दिशाम्
स०	दिशि	दिशोः	दिक्षु
सं०	हे दिक्	हे दिशौ	हे दिशः

(स्त्रीलिङ्ग) पुर् (नगर)

प्र०	पूः	पुरौ	पुरः
द्वि०	पुरम्	पुरौ	पुरः
तृ०	पुरा	पूर्भ्याम्	पूर्भिः
च०	पुरे	पूर्भ्याम्	पूर्भ्यः
पं०	पुरः	पूर्भ्याम्	पूर्भ्यः
ष०	पुरः	पुरोः	पुराम
स०	पुरि	पुरोः	पूर्षु
सं०	हे पूः	हे पुरौ	हे पुरः

(स्त्रीलिङ्ग) अप् (जल) केवल बहुवचन में

प्र०	आपः	पं०	अद्भ्यः
द्वि०	अपः	ष०	अपाम्
तृ०	अद्भिः	स०	अप्सु
च०	अद्भ्यः	सं०	हे आपः

नपुंसकलिङ्ग

नपुं० जगत् (संसार)

प्र०	जगत्	जगती	जगन्ति
द्वि०	जगत्	जगती	जगन्ति
तृ०	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः
च०	जगते	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
पं०	जगतः	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
ष०	जगतः	जगतोः	जगताम्
स०	जगति	जगतोः	जगत्सु
सं०	हेजगत्	हेजगती	हेजगन्ति

शर्मन् (कल्याण)

शर्म	शर्मणी	शर्माणि
शर्म	शर्मणी	शर्माणि
शर्मणा	शर्मभ्याम्	शर्मभिः
शर्मणे	शर्मभ्याम्	शर्मभ्यः
शर्मणः	शर्मभ्याम्	शर्मभ्यः
शर्मणः	शर्मणोः	शर्मणाम्
शर्मणि	शर्मणोः	शर्मसु
हे शर्मन्, हे शर्म	हे शर्मणी	हे शर्माणि

इसी प्रकार—कर्मन् (काम) वर्मन् (कवच) भर्मन् (पालन)।

(नपुंसकलिङ्ग) नामन् (नाम)

नाम	नामनी-नाम्नी	नामानि
नाम	नामनी-नाम्नी	नामानि
नाम्ना	मामभ्याम्	नामभिः
नाम्ने	नामभ्याम्	नामभ्यः
नाम्नः	नामभ्याम्	नामभ्यः
नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
नामनि, नाम्नि	नाम्नोः	नामसु
हे नाम	हे नामनी, नाम्नी	हे नामानि

इसी प्रकार—हेमन्—सुवर्ण (सोना)। दामन्—रस्सी। प्रेमन्—प्यार। रोमन्—रोम। धामन्—घर, तेज इत्यादि।

नपुं० ब्रह्मन् (परमात्मा)

ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि
ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणी
ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
ब्रह्मणे	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
ब्रह्मणः	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः

ष०	ब्रह्मणः	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
स०	ब्रह्मणि	ब्रह्मणोः	ब्रह्मसु
सं०	हेब्रह्मन्	हेब्रह्मणी	हेब्रह्माणि

नपुंसकलिङ्ग—मनस् (मन)

प्र०	मनः	मनसी	मनांसि
द्वि०	मनः	मनसी	मनांसि
तृ०	मनसा	मनोभ्याम्	मनोभिः
च०	मनसे	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
पं०	मनसः	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
ष०	मनसः	मनसोः	मनसाम्
स०	मनसि	मनसोः	मनस्सु-मनःसु
सं०	हे मनः	हेमनसी	हे मनांसि

इसी प्रकार—पयस्—पानी या दूध। धनुष्—धनुष्। तमस्—अन्धकार। तेजस्—दीप्ति। चक्षुष्—नेत्र। तपस्—तप। रजस्—धूलि। वचस्—वचन। वयस्—उम्र। शिरस्—सिर। वासस्—कपड़ा। सरस्—तालाब। नभस्—आकाश। यशस्—कीर्ति। रक्षस्—राक्षस इत्यादि।

नपुं. धनुष् (धनुष)

प्र०	धनुः	धनुषी	धनूंषि
द्वि०	धनुः	धनुषी	धनूंषि
तृ०	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
च०	धनुषे	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः
पं०	धनुषः	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः
ष०	धनुषः	धनुषोः	धनुषाम्
स०	धनुषि	धनुषोः	धनुष्षु
सं०	हेधनुः	हेधनुषी	हेधनूंषि

इसी प्रकार—वयस्, आयुस्, यजुस्, हविस्, सर्पिस् (घी) आदि।

तादृश्—(उसके जैसा)

प्र०	तादृक्	तादृशी	तादृंशि
द्वि०	तादृक्	तादृशी	तादृंशि, शेष पुंल्लिङ्ग की तरह

महत् (बड़ा)

प्र०	महत्	महती	महान्ति
द्वि०	महत्	महती	महान्ति, शेष पुंल्लिङ्ग की तरह ।

मनोहारिन् (सुन्दर)

प्र०	मनोहारि	मनोहारिणी	मनोहारीणि
द्वि०	मनोहारि	मनोहारिणी	मनोहारीणि, शेष पुंल्लिङ्ग की तरह ।

प्रथम अभ्यास

१---विशेषण (निश्चित संख्यावाचक)

	एक (केवल एकवचन)			द्वि (केवल द्विवचन)		
	पुं०	स्त्री०	नपुं०	पुं०	स्त्री०	नपुं०
प्र०	एकः	एका	एकम्	द्वौ	द्वे	द्वे
द्वि०	एकम्	एकाम्	एकम्	द्वौ	द्वे	द्वे
तृ०	एकेन	एकया	एकेन	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
च०	एकस्मै	एकस्यै	एकस्मै	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
पं०	एकस्मात्	एकस्याः	एकस्मात्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
ष०	एकस्य	एकस्याः	एकस्य	द्वयोः	द्वयोः	द्वयोः
स०	एकस्मिन्	एकस्याम्	एकस्मिन्	द्वयोः	द्वयोः	द्वयोः

	त्रि (तीन)			चतुर् (चार)		
	पुं०	स्त्री०	नपुं०	पुं०	स्त्री०	नपुं०
प्र०	त्रयः	तिस्रः	त्रीणि	चत्वारः	चतस्रः	चत्वारि
द्वि०	त्रीन्	तिस्रः	त्रीणि	चतुरः	चतस्रः	चत्वारि
तृ०	त्रिभिः	तिसृभिः	त्रिभिः	चतुर्भिः	चतसृभिः	चतुर्भिः
च०	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
पं०	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
ष०	त्रयाणाम्	तिसृणाम्	त्रयाणाम्	चतुर्णाम्	चतसृणाम्	चतुर्णाम्
स०	त्रिषु	तिसृषु	त्रिषु	चतुर्षु	चतसृषु	चतुर्षु

सूचना त्रि और चतुर् शब्दों का उच्चारण केवल बहुवचन में होता है ।

पञ्चन् (पाँच) षष् (छः) सप्तन् (सात) अष्टन् (आठ) नवन् (नौ) दशन् (दस)

	पुं०	स्त्री०	नपुं०	पुं०	स्त्री०	नपुं०
प्र०	पञ्च	षट्-ड्	सप्त	अष्टौ-अष्ट	नव	दश
द्वि०	पञ्च	षट्-ड्	सप्त	अष्टौ-अष्ट	नव	दश
तृ०	पञ्चभिः	षड्भिः	सप्तभिः	अष्टाभिः-अष्टभिः	नवभिः	दशभिः
च०	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः	अष्टाभ्यः-अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
पं०	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः	अष्टाभ्यः-अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
ष०	पञ्चानाम्	षण्णाम्	सप्तानाम्	अष्टानाम्	नवानाम्	दशानाम्
स०	पञ्चसु	षट्सु	सप्तसु	अष्टासु-अष्टसु	नवसु	दशसु

११ एकादश
१२ द्वादश
१३ त्रयोदश
१४ चतुर्दश
१५ पञ्चदश
१६ षोडश
१७ सप्तदश
१८ अष्टादश
१९ नवदश
एकोनविंशतिः
२० विंशतिः
२१ एकविंशतिः
२२ द्वाविंशतिः
२३ त्रयोविंशतिः
२४ चतुर्विंशतिः
२५ पञ्चविंशतिः
२६ षड्विंशतिः
२७ सप्तविंशतिः
२८ अष्टाविंशतिः
२९ नवविंशतिः
एकोनत्रिंशत्
३० त्रिंशत्
३१ एकत्रिंशत्
३२ द्वात्रिंशत्
३३ त्रयस्त्रिंशत्

३४ चतुस्त्रिंशत्
३५ पञ्चत्रिंशत्
३६ षट्त्रिंशत्
३७ सप्तत्रिंशत्
३८ अष्टात्रिंशत्
३९ नवत्रिंशत्
एकोनचत्वारिंशत्
४० चत्वारिंशत्
४१ एकचत्वारिंशत्
४२ द्विचत्वारिंशत्
द्वाचत्वारिंशत्
४३ त्रिचत्वारिंशत्
त्रयश्चत्वारिंशत्
४४ चतुश्चत्वारिंशत्
४५ पञ्चचत्वारिंशत्
४६ षट्चत्वारिंशत्
४७ सप्तचत्वारिंशत्
४८ अष्टचत्वारिंशत्
अष्टाचत्वारिंशत्
४९ नवचत्वारिंशत्
एकोनपञ्चाशत्
५० पञ्चाशत्
५१ एकपञ्चाशत्
५२ द्विपञ्चाशत्
द्वापञ्चाशत्

५३ त्रिपञ्चाशत्
त्रयःपञ्चाशत्
५४ चतुःपञ्चाशत्
५५ पञ्चपञ्चाशत्
५६ षट्पञ्चाशत्
५७ सप्तपञ्चाशत्
५८ अष्टापञ्चाशत्
अष्टपञ्चाशत्
५९ नवपञ्चाशत्
एकोनषष्टिः
६० षष्टिः
६१ एकषष्टिः
६२ द्विषष्टिः; द्वाषष्टिः
६३ त्रिषष्टिः
त्रयःषष्टिः
६४ चतुःषष्टिः
६५ पञ्चषष्टिः
६६ षट्षष्टिः
६७ सप्तषष्टिः
६८ अष्टषष्टिः
अष्टाषष्टिः
६९ नवषष्टिः
एकोनसप्ततिः
७० सप्ततिः
७१ एकसप्ततिः

७२ द्विसप्तति:
द्वासप्तति:
७३ त्रिसप्तति:
त्रयःसप्तति:
७४ चतु:सप्तति:
७५ पञ्चसप्तति:
७६ षट्सप्तति:
७७ सप्तसप्तति:
७८ अष्टसप्तति:
अष्टासप्तति:
७९ नवसप्तति:
एकोनाशीति:
८० अशीति:
८१ एकाशीति:
८२ द्व्यशीति:
८३ त्र्यशीति:
८४ चतुरशीति:
८५ पञ्चाशीति:
८६ षडशीति:
८७ सप्ताशीति:
८८ अष्टाशीति:
८९ नवाशीति:
एकोननवति:
९० नवति:
९१ एकनवति:
९२ द्विनवति:, द्वानवति:
९३ त्रिनवति:
त्रयोनवति:
९४ चतुर्नवति:
९५ पञ्चनवति:
९६ षण्णवति:
९७ सप्तनवति:
९८ अष्टनवति:
अष्टानवति:
९९ नवनवति:
एकोनशतम्
१०० शतम् (एकं शत)
१०१ एकशतम्
१०२ द्विशतम्
११२ द्वादशशतम्
१४० चत्वारिंशच्छतम्
१९९ नवनवतिशतम्

२००=शते (द्विशती, शतद्वयम्, शतद्वयी)। ३००=त्रिशती (शतत्रयम्, शतत्रयी)। ४००=चतु:शती (शतचतुष्टयम्, शतचतुष्टयी) ५००=पञ्चशती (शतपञ्चकम्)। ६००=षट्शती (शतषट्कम्)। ७००=सप्तशती (शतसप्तकम्)। ८००=अष्टशती (शताष्टकम्)=९०० नवशती (शतनवकम्)। १०००=सहस्रम्। १००००=अयुतम्। १०००००=लक्षम् (अरब) अर्बुदम्,(खरब) खर्वम्।

एकोविंनशति से लेकर नवनवति तक समस्त शब्द एकवचनान्त स्त्रीलिंग हैं। शतम् (सौ), सहस्रम् (हजार), अयुतम् (दस हजार), लक्षम् (लाख), नियुतम् (दस लाख), अर्बुदम् (अरब), खर्वम् (खरब), नीलम्, पद्मम्, शंखम् महाशंखम् आदि शब्द नित्य एकवचनान्त नपुंसक हैं।

कुछ उदाहरण

१. अस्यां श्रेण्यां द्वाषष्टिश् छात्राः (इस कक्षा में बासठ छात्र हैं।)

२. अष्टाचत्वारिंशता संकलिता द्वात्रिंशदशीतिर्भवति (अड़तालीस में बत्तीस जोड़ने से अस्सी होते हैं।)

३. दशशताद् व्यवकलितायां पञ्चाशति षष्टिरवशिष्यते (एक सौ दस म से पचास निकालने से शेष साठ रहते हैं।)

४. मम चत्वारि सहस्राणि पञ्चदश च स्वर्णमुद्राः सन्ति (मम पञ्चदशाधिकानि चत्वारि स्वर्णमुद्रासहस्राणि सन्ति)। मेरे पास चार हजार पंद्रह स्वर्णमुद्राएँ हैं।

५. विभक्तेरूर्ध्वमत्र देशे पञ्चत्रिंशत् कोट्यो जनाः । एकोनपञ्चाशदुत्तरन... त्तरसहस्रतमे खिस्ताब्दे भूयो जनसंख्यानं भविता (विभाजन के बाद ... की आबादी पैंतीस करोड़ के लगभग है । सन् १९४९ में नयी जन-गणना होगी ...

२—विशेषण (क्रमवाचक)

संस्कृत	हिन्दी	संस्कृत	हिन्दी
पुं० स्त्री० न०	पुं० न० स्त्री	पुं० स्त्री० न०	पुं० न...
प्रथमः—मा—मम् (आद्यः, आदिमः)	पहला—ली	सप्तदशः—शी—शम्	सत्रह...
द्वितीयः—या—यम्	दूसरा—री	अष्टादशः—शी—शम्	अठारह...
तृतीयः—या—यम्	तीसरा—री	एकोनविंशतितमः—मी-मम्	उन्नीस...
चतुर्थः-र्थी-र्थम्—(तुर्यः, तुरीयः)	चौथा—थी	विंशतितमः-मी—मम् (विंशः)	बीसवाँ...
पञ्चमः—मी—मम्	पांचवाँ—वीं	एकविंशतितमः—मी—मम् (एकविंशः)	इक्कीसवाँ...
षष्ठः—षष्ठी—ष्ठम्	छठा—ठी	द्वाविंशतितमः—मी—मम्	बाइसवाँ...
सप्तमः —मी—मम्	सातवाँ—वीं	त्रयोविंशतितमः—मी —मम्	तेईसवाँ...
अष्टमः—मी —मम्	आठवाँ—वीं	चतुर्विंशतितमः—मी-मम्	चौबीसवाँ...
नवमः—मी —मम्	नौवाँ—वीं	पञ्चविंशतितमः—मी-मम्	पच्चीसवाँ...
दशमः—मी—मम्	दसवाँ—वीं	षड्विंशतितमः—मी—मम्	छब्बीसवाँ...
एकादशः—शी —शम्	ग्यारहवाँ—वीं	सप्तविंशतितमः—मी—मम्	सताईसवाँ...
द्वादशः—शी—शम्	बारहवाँ—वीं	अष्टाविंशतितमः-मी-मम्	अठाईसवाँ...
त्रयोदशः —शी—शम्	तेरहवाँ-वीं	नवविंशतितमः—मी—मम्	उनतीस...
चतुर्दशः—शी—शम्	चौदहवाँ—वीं	एकोनत्रिंशत्तमः-मी-मम्	,,
पञ्चदशः—मी—शम्	पन्द्रहवाँ—वीं		
षोडशः—शी—शम्	सोलहवाँ—वीं	त्रिंशत्तमः—मी—मम्	तीसवाँ...

चत्वारिंशः, चत्वारिंशत्तमः (४० वाँ) पञ्चाशत्तमः (५० वाँ) ष... (६० वाँ) सप्ततितमः (७० वाँ) अशीतितमः (८० वाँ) नवतितमः (९०... शततमः (१०० वाँ) सहस्रतमः (१००० वाँ) ।

हिन्दी में अनुवाद करो----

१. विक्रमवत्सराणां चतुरुत्तरे सहस्रद्वये (गते) शताब्दीविलुप्तं भारतवर्षं स्वातन्त्र्यं लब्धवान् । २—दशसहस्राणि पञ्चशतानि द्विषष्टिं चाष्टाभिः शतैश्चतुष्पञ्चाशता गुणय । ३—अस्माकं श्रेण्यां दशाधिकं शतं छात्राः (११०) सन्ति, दयानन्दविद्यालये तु दशमश्रेण्यां दशशती (दश शतानि वा) (१०१५) छात्रा आसन् । ५—प्रयागविश्वविद्यालये पञ्चसप्ततय (७५) छात्रेभ्यः पारितोषिकानि वितीर्णानि ।

संस्कृत में अनुवाद करो----

१ हजारों कुलनारियाँ (सहस्राणि कुलाङ्गनाः) भारत की स्वतन्त्रता के लिए हँसती—हँसती जेल में गयीं । २—दो कोड़ी वर्तन कलई कराये गये (द्वे विंशती पात्राणां त्रपुलेपं लभ्यते) । ३—आठवीं कक्षा का बीसवां (विंशतितमः) दसवीं कक्षा का तीसवां (त्रिंशत्तमः) छात्र यहां आवे । ४—नवीं कक्षा के पेंतीसवें छात्र को गुरुजी बुला रहे हैं । ५—उस पंक्ति का पांचवां छात्र दौड़ में (धावनप्रतियोगितायाम्) प्रथम आया । ६—शायद वह यहाँ पाँचवें दिन आयगा ७—प्यारेलाल अपनी जमातमें दूसरा रहा है । ८—मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मण का आठवें, क्षत्रिय का ग्यारहवें, और वैश्य का बारहवें वर्ष यज्ञोपवीत संस्कार होना चाहिए ।

द्वितीय अभ्यास

३—विशेषण (आवृत्तिवाचक)

'दुगुना' 'तिगुना' आदि आवृत्तिसूचक शब्दों के अनुवाद के लिए संस्कृत में संख्या शब्दों के आगे 'गुण' या 'गुणित' शब्दों को जोड़ना चाहिए । परन्तु आवृत्ति वाचक शब्दों पर 'आवृत्त' या 'आवर्तित' भी जोड़ दिया जाता है, जैसे—

(१) सोहनो व्यापार द्विगुणं धन लेभे (सोहन को व्यापार में दूना धन मिला ।)

(२) अस्य भवनस्य उच्चता तस्मात् त्रिगुणा (इस मकान की ऊँचाई उससे तिगुनी है) ।

(३) चत्वारिंशद्गुणा अधिकाः छात्राः जाताः (चालीसगुने ज्यादा गये)।

(४) अस्य मार्गस्य दीर्घता शतगुणा (इस रास्ते की लम्बाई सौगुनी)।

(५) स धनं तावत् त्वत् सहस्रगुणं, लक्षगुणं, कोटिगुणं वा अधिकम् अ न कीर्तिम् (वह तुझ से हजारगुना या लाखगुना या करोड़गुना धन का यश नहीं कमा सकता)।

(६) ब्रह्मचारिणः त्रिगुणां मौञ्जीं मेखलां धारयन्ति (ब्रह्मचारी ति की तड़ागी बाँधते हैं)।

(७) इयम् अजा द्विगुणया (द्विरावृत्तया) रज्ज्वा बद्धा (वह बकरी दुहरी से बंधी है)।

(८) सा बाला त्रिरावृत्तं (त्रिरावर्तितं, त्रिगुणं, त्रिगुणितं वा) दाम (वह लड़की तिहरी माला पहने हुई है)।

४---विशेषण (समुदायबोधक)

जहाँ पर 'दोनों, चारों, तीसों, पचासों' आदि समुदायवाचक शब्द हों अनुवाद संस्कृत में संख्यावाचक शब्द के आगे 'अपि' जड़नेसे किया यथा—

(१) किं द्वावपि छात्रौ गतौ (क्या दोनों छात्र गये ?)

२५ (२) अस्मिन् प्रकोष्ठे पञ्चविंशदपि पठकाः पठनाय शक्नुवन्ति (इस पैंतीस विद्यार्थी पढ़ सकते हैं)।

(३) पञ्चाशदपि सैनिका युद्धे हताः (पचासों सिपाही युद्धमें मारे गये)

(४) किं त्वया षोडशापि आणका व्ययिताः (क्या तूने सोलहों आने दिये ?)।

(५) अष्टावपि चौराः पलायिताः (आठों चोर भाग गये)।

५---विशेषण (विभागबोधक)

'हर एक' 'सब' आदि शब्दों का अनुवाद संस्कृत में 'सर्व' या 'सकल' शब्दों द्वारा किया जाता है, जैसे—

(१) अस्याः कक्षायाः सर्वे छात्राः पटवः सन्ति (इस दर्जे के सब छात्र चतु

(२) अस्या वाटिकाया: सर्वाणि आम्राणि मिष्टानि सन्ति (इस बाग के सब आम मीठे हैं)।

(३) सर्वे ब्राह्मणा आहूयन्ताम् (सब ब्राह्मणों को बुलाओ)।

(४) प्रतिबालकं (सर्वेभ्य: बालेभ्य:) पारितोषिकं देहि (हर लड़के को इनाम दो)।

(५) प्रतिदिनं (दिने दिने) पठितुं पाठशालामागच्छ (हर रोज पढ़ने के लिए स्कूल आया करो)।

(६) प्रतिब्राह्मणं पञ्च रूप्यकाणि देहि) (हर एक ब्राह्मण को पांच रुपये
सर्वेभ्य: ब्राह्मणेभ्य: पञ्च रूप्यकाणि देहि) दो)।

६—विशेषण (अनिश्चित संख्यावाचक)

एक शब्द द्वारा—एक: संन्यासी न्यवसत्। एका नदी आसीत्।

एकस्मिन् वने एक: सिंहो न्यवसत्।

किम् चित् शब्दों द्वारा—कश्चित् संन्यासी न्यवसत्। काचित् नदी आसीत्।

कस्मिंश्चिद् वने एक: सिंहो न्यवसत्।

एक और अपर शब्दों द्वारा—एक: उत्तीर्ण: अपरोऽनुत्तीर्ण:।

एके मृता अपरे पलायिता:।

एक और अन्य शब्दों द्वारा—एक: हसति अन्यो रोदिति।

परस्पर, अन्योन्य शब्दों द्वारा—दुष्टा बाला: परस्परं (अन्योऽन्यम्) कहलायन्ते।

असज्जना: परस्परं (अन्योऽन्यम्, इतरेतरम्) गाली: ददति।

सर्व, समस्त आदि शब्दों द्वारा—सर्वे बाला अस्यां श्रेण्यामुत्तीर्णा:।

सर्वाणि पुष्पाणि व्यकसन्। सर्व: स्वार्थं समीहते।

बहु, प्रभूत आदि शब्दों द्वारा—

बहव: (बह्वच:) बालिका: सीवनं शिक्षन्ते।

एतत् कार्यसाधनाय बहव उपाया: सन्ति।

देशे अनेकश: रोगा: विद्यन्ते।

कतिपय या किम् चित् (चन) शब्दों द्वारा—

कतिपया: (कतिचित्) छात्रा उत्तीर्णा:।

कतिपयानि (कानिचित्) पुष्पाणि विकसितानि ।

कतिपया: (काश्चन) स्त्रियः विदुष्यः ।

७—विशेषण (परिमाणवाचक)

तौल (तुलामान) के शब्द

रक्तिका, गुञ्जा—रत्ती

माषकः—माशा

तोलकः—तोला

षट्टङ्कः—छटांक

पादः—पाव

मूल्यवाचक शब्द

वराटकः, वराटिका—कौडी

पादिका—पाई

पणः (पणकः)—पैसा

आणः (आणकः)—आना

द्व्याणी (द्व्याणकी)—दुअन्नी

चतुराणी (चतुराणकी)—चवन्नी

अष्टाणी (अष्टाणकी)—अठन्नी

रूप्यकम् (रूपकम्) रुपया

निष्कः (दीनारः)—सोने की मोहर

माप—

अङ्गुलम्—अंगुल

वितस्तिः—बालिश्त

पादः—फुट

हस्तः—हाथ

समयबोधक—

पलम्—पल

क्षणः—छिन

प्रहरः—(यामः)—पहर

विकला—सेकण्ड

कला—मिनट

घण्टा (होरा)—घंटा

अहोरात्रः—दिन रात

सप्ताहः—हफ्ता

पक्षः—पाख

मासः—महीना

वर्षम् (वत्सरः, शब्दः, शरत्) बरस

सेर, मन (मण), गज, मील आदि के लिए संस्कृत में शब्द नहीं मिलते, इसलिए अनुवाद में इन्हीं का प्रयोग किया जाता है, जैसे—

१—चतुर्मणपरिमिता व्रीहयः ।

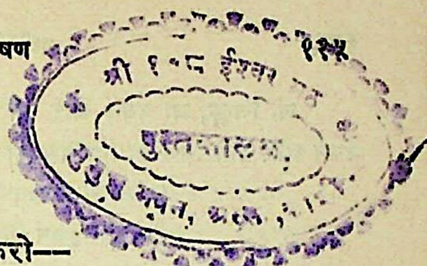
२—वार्जरस्य त्रीन् सेरान् आनय ।

३—सप्तगजपरिमितं वस्त्रं दीनाय देहि ।

४—शतमीलपरिमितोऽयं पन्थाः ।

५—सुवर्णस्य चत्वारः तोलका अलं भूषणाय ।

६—सेरः तण्डुलः (तण्डुलाः) ।



७—चत्वारः माषकाः सुवर्णम् ।

८—रूप्यकस्य चत्वारः पट्टङ्काः घृतम् ।

९—त्रीणि औंसानि टिंचर-आयोडीनम् ।

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—विधान भवन की ऊँचाई उस मकान से चौगुनी है। २—यह मार्ग उस मार्ग से दुगुना है। ३—दोहरी रस्सी से पुलिस के सिपाहियों (राजपुरुषों) ने चोर को बाँधा। ४—दसवें दर्जे में इस वर्ष कौन छात्र पहला रहा? ५—मैंने गणित के पर्चे में सौ में साठ नम्बर पाये। ६—हजारों मन गेहूँ विदेश से भारत को आता है। ७—ताजमहल के बनाने में शाहजहाँ बादशाह ने करोड़ों रुपये खर्च किये। ८—यह तो उसका सौवाँ हिस्सा भी नहीं है। ९—कुछ लोग स्वभाव से आलसी होते हैं। १०—दयानन्द विद्यालय यहां से पाँच मील है। ११—बीमार के लिए तीन औंस दवाई तोल लो। १२—मैं रात को दस बजे सोऊँगा। १४—इस बर्तन में दस सेर घी आ सकता है। १४—निरीक्षक ने हुक्म दिया कि छोटी कक्षाओंके एक-एक दर्जे में ४० से ज्यादा लड़के न बैठें। १५—आजकल रुपए के कितने सेर चावल मिलते हैं? १६—पहले रुपये में १५ सेर गेहूँ मिलते थे, अब तीन सेर।

तृतीय अभ्यास

८—विशेषण—गुणवाचक

"विशेष्यं स्यादनिर्ज्ञातं निर्ज्ञातोऽर्थो विशेषणम्।" जो ज्ञाप्य है वह प्रधान है, वह विशेष्य है और जो ज्ञापक है वह अप्रधान है, विशेषण है। कोई विशेष्य (द्रव्य) अपने सामान्य रूप में ही हमें ज्ञात होता है, वह अपने अन्तर्गत विशेष के रूप में अज्ञात होता है। अतः विशेषण ही निश्चित-रूप-गुण के ज्ञापक हैं। "नीलम् उत्पलम्" यहां नील विशेषण है और उत्पल विशेष्य, नीलपद उत्पल को अनील (जो नीला न हो) से जुदा करता है, अतः विशेषण है।

इस प्रकार गुणवाचक शब्द को विशेषण कहते हैं। गुण शब्द से अच्छे और बुरे दोनों ही प्रकार के गुणों का ग्रहण है। हिन्दी में कहीं विशेषण का लिङ्ग बदलता है और कहीं नहीं बदलता है, जैसे रमा बुद्धिमती है। यह सरला बालिका है। उस बालक की प्रकृति चंचल है, उसकी बुद्धि प्रखर है। पर संस्कृत में यह नियम है—

जो लिङ्ग, जो वचन और जो विभक्ति विशेष्य की होती है, वही लिङ्ग, वचन और वही विभक्ति विशेषण की भी होती है। जैसे कि कहा भी है—

"यल्लिङ्गं यद्वचनं या च विभक्ति विशेष्यस्य।
तल्लिङ्गं तद्वचनं सैव विभक्ति विशेषणस्यापि॥"

शब्द	अर्थ	पुं०	स्त्री०	नपुं०
श्वेत	(सफेद)	श्वेतः	श्वेता	श्वेतम्
कृष्ण	(काला)	कृष्णः	कृष्णा	कृष्णम्
रक्त	(लाल)	रक्तः	रक्ता	रक्तम्
पीत	(पीला)	पीतः	पीता	पीतम्
हरित	(हरा)	हरितः	हरिता	हरितम्
मधुर	(मीठा)	मधुरः	मधुरा	मधुरम्
कटु	(कडुआ)	कटुः	कट्वी	कटु
अम्ल	(खट्टा)	अम्लः	अम्ला	अम्लम्
शीतल	(ठंडा)	शीतलः	शीतला	शीतलम्
उष्ण	(गर्म)	उष्णः	उष्णा	उष्णम्
लघु	(छोटा)	लघुः	लघ्वी	लघु
विशाल	(चौड़ा)	विशालः	विशाला	विशालम्
शोभन	(सुन्दर)	शोभनः	शोभना	शोभनम्
स्थूल	(मोटा)	स्थूलः	स्थूला	स्थूलम्
कृश	(दुबला)	कृशः	कृशा	कृशम्
कोमल	(कोमल)	कोमलः	कोमला	कोमलम्
मनोहर	(सुन्दर)	मनोहरः	मनोहरा	मनोहरम्
बुद्धिमत्	(होशियार)	बुद्धिमान्	बुद्धिमती	बुद्धिमत्
साधु	(अच्छा)	साधुः	साध्वी	साधु

(गुण में) प्रथमा

पुं० अयं शोभनः नरः। इमौ शोभनौ नरौ। इमे शोभनाः नराः।
स्त्री० इयं शोभना स्त्री। इमे शोभने स्त्रियौ। इमाः शोभनाः स्त्रियः।
नपुं० इदं शोभनं पुष्पम्। इमे शोभने पुष्पे। इमानि शोभनानि पुष्पाणि।

(शेष में) प्रथमा

पुं० कश्चिद् दुष्टः नरः। कौचिद् दुष्टौ नरौ। केचिद् दुष्टाः नराः।
स्त्री० काचित् दुष्टा स्त्री। केचिद् दुष्टे स्त्रियौ। काश्चिद् दुष्टाः स्त्रियः।
नपुं० किंचिद् दुष्टं जलम्। केचिद् दुष्टे जले। कानिचिद् दुष्टानि जलानि।

द्वितीया

पुं० इमं शोभनं नरम्। इमौ शोभनौ नरौ। इमान् शोभनान् नरान्।
स्त्री० इमां शोभनां स्त्रियम्। इमे शोभने स्त्रियौ। इमाः शोभनाः स्त्रीः।
नपुं० इदं शोभनं पुष्पम्। इमे शोभने पुष्पे। इमानि शोभनानि पुष्पाणि।

तृतीया

पुं० अनेन शोभनेन नरेण। आभ्यां शोभनाभ्यां नराभ्याम्। एभिः शोभनैः नरैः।
स्त्री० अनया शोभनया स्त्रिया। आभ्यां शोभनाभ्याम् स्त्रीभ्याम्। आभिः शोभनाभिः स्त्रीभिः।

नपुं०अनेन शोभनेन पुष्पेण। आभ्यां शोभनाभ्याम् पुष्पाभ्याम्। एभिः शोभनैः पुष्पैः।
इसी प्रकार शेष विभक्तियाँ समझनी चाहिएँ।

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—विधाता (विधि) की सुन्दर सृष्टि उसकी महत्ता को प्रकट करती है। २—क्या तुम गर्म दूध पीना चाहते हो ? ३—ईश्वर की माया क्या ही विचित्र है ? ४—किसी निर्धन को वस्त्र दो। ५—खट्टी छाँछ (तक्रम्) छोड़कर गर्म दूध पीओ। ६—गोपाल की सायकिल (द्विचक्रिका) अच्छी है। ७—सूर्य सुन्दर कमलों को खिलाता है (उन्मीलयति)। ८—लाल घोड़े दौड़ रहे हैं। ९—यह चञ्चल नयन बालिका है। १०—तेरा हृदय कोमल नहीं है। ११—यह तालाब (तडाग) अति-सुन्दर है। १२—तपस्वी ब्राह्मणों के लिये ऐसा न कहो। १३—किसी पेड़ पर एक बानर और एक कबूतर (कपोत) रहते थे। १४—उस गहन जङ्गल की एक कन्दरा में एक भासुरक नामक सिंह रहता था। १५—नीले जलवाली यमुना के किनारे श्रीकृष्ण ने विहार किया।

चतुर्थ अभ्यास

९—विशेषण—तुलनात्मक

वाक्य में विशेषणों का प्रयोग तीन प्रकार से होता है—या तो विशेषण सा[illegible] होता है, या तुलनात्मक या अतिशय बोधक। जब विशेषण साधारण रीति से उत्[illegible] अपकर्ष का बोधक हो तब वह सामान्य विशेषण कहलाता है।

१—सामान्य विशेषण; जैसे—१—अयं बालकः पटुः (उत्कर्ष)। २—नरः दुष्टः (अपकर्ष)।

२—तुलनात्मक विशेषण—जब दो की तुलना करके उनमें से एक को उन अधिकता या न्यूनता दिखाई जाती है तब विशेषण 'तुलनात्मक' कहला[illegible] और विशेषण के आगे 'तर' या 'ईयस्' प्रत्यय लगाया जाता है, यथा—

(१) गोपालः श्यामात् पटुतरः (उत्कर्ष)।
(२) नरः देवात् निकृष्टतरः (अपकर्ष)।
(३) आचार्यः पितुः महीयान् (महत्तरः) (उत्कर्ष)।

३—अतिशयबोधक विशेषण—जब दो से अधिक पदार्थों की तुलना [illegible] एक को उन सबसे अधिक या न्यून बताया जाता है तब विशेषण 'अतिशय बो[illegible]' कहलाता है और विशेषण के आगे 'तम' या 'इष्ठ' प्रत्यय लगाया जाता है, यथा—

(१) हिमालयः सर्वेषां पर्वतानां (सर्वेषु पर्वतेषु) उन्नततमः (उत्कर्ष)।
(२) बदरीफलं सर्वेषां फलानां (सर्वेषु फलेषु) निकृष्टतमम् (अपकर्ष)।
(३) महेशः सर्वेषां भ्रातॄणां (सर्वेषु भ्रातृषु) कनिष्ठः (अपकर्ष)।

सामान्य	तुलनात्मक	अतिशय बोधक
साधुः	साधुतरः	साधुतमः
धीरः	धीरतरः	धीरतमः
महान्	महत्तरः	महत्तमः
शुक्लः	शुक्लतरः	शुक्लतमः
पटुः	पटुतरः, पटीयान्	पटुतमः, पटिष्ठः
प्रियः	प्रियतरः, प्रेयान्	प्रियतमः, प्रेष्ठः

गुरुः	गुरुतरः, गरीयान्	गुरुतमः, गरिष्ठः
लघुः	लघुतरः, लघीयान्	लघुतमः, लघिष्ठः
दीर्घः	दीर्घतरः, द्राघीयान्	दीर्घतमः, द्राघिष्ठः
दृढ़ः	दृढतरः, द्रढीयान्	दृढतमः, द्रढिष्ठः
मृदुः	मृदुतरः, म्रदीयान्	मृदुतमः, म्रदिष्ठः
कृशः	कृशतरः, क्रशीयान्	कृशतमः, क्रशिष्ठः
वृद्धः	वर्षीयान्, ज्यायान्	वर्षिष्ठः, ज्येष्ठः
अल्पः	अल्पीयान्, कनीयान्	अल्पिष्ठः, कनिष्ठः
बहुः	बहुतरः, भूयान्	बहुतमः, भूयिष्ठः
प्रशस्यः	श्रेयान्, ज्यायान्	श्रेष्ठः, ज्येष्ठः
युवा (कन्)	कनीयान्, यवीयान्	कनिष्ठः, यविष्ठः
उरुः	उरुतरः, वरीयान्	उरुतमः, वरिष्ठः
स्थूलः	स्थूलतरः, स्थवीयान्	स्थूलतमः, स्थविष्ठः
दूरः	दूरतरः, दवीयान्	दूरतमः, दविष्ठः
क्षुद्रः	क्षुद्रतरः, क्षोदीयान्	क्षुद्रतमः, क्षोदिष्ठः
ह्रस्वः	ह्रसीयान्	ह्रसिष्ठः
बाढः (साध)	साधीयान्	साधिष्ठः
बलवान्	बलीयान्	बलिष्ठः
अन्तिकः (नेद्)	नेदीयान्	नेदिष्ठः
क्षिप्रः	क्षेपीयान्	क्षेपिष्ठः
बहुलः	बंहीयान्	बंहिष्ठः
स्थिरः	स्थेयान्	स्थेष्ठः
पृथुः	प्रथीयान्	प्रथिष्ठः
पापी	पापीयान्	पापिष्ठः

अतिशय के अर्थ में क्रियाओं और अव्ययों के आगे भी 'तर' और 'तम' आम् के साथ (तराम् तमाम्) लगाये जाते हैं। यथा—

क्रिया से—सीता हसतितराम् (सीता जोर से हँसती है)।

महेशः हसतितमाम् (महेश अत्यन्त हँसता है)।

अव्यय से—शीला उच्चैस्तरां हसति (शीला अधिक हँसती है)।
गोपालः उच्चैस्तमां हसति (गोपाल बहुत ऊँचे हँसता है)।
केशवः उच्चैस्तमाम् आक्रोशति परं न कोऽपि शृणोति (केशव ऊँचे चिल्ला रहा है पर कोई नहीं सुनता)।

संस्कृत में अनुवाद करो---

१—गोविन्द सब भाइयों में बड़ा है। २—कालिदास भारत में अन्य … से श्रेष्ठ और शेक्सपीयर इङ्गलिश साहित्य में सर्वोत्तम नाटककार और कवि … ३—तुम दोनों में कौन बड़ा है? ४—विमला और सीता में कौन अधिक चतुर … ५—मोहन और गोपाल में कौन अधिक बुद्धिमान् है? ६—दिल्ली से आगरा … अपेक्षा लखनऊ अधिक दूर है। ७—हिमालय विन्ध्याचल से ऊँचा है। ८—संसार में कौन पहाड़ सब पहाड़ों में ऊँचा है? ९—दौड़ (धावनप्रतियोगिता) में देवेन्द्र … से तेज दौड़ा। १०—वह छोटा शिशु सभी बालकों में प्रिय है। ११—श्रेष्ठ मुनि … कन्द और फलों द्वारा अपने सरल जीवन का निर्वाह करते हैं (वृत्तिं कल्पयन्ति …)। १२—दिलीप ने जवान पुत्र रघु को राज्य सौंपा (अर्पयाम्बभूव) और स्वयं … को चला गया (प्रतस्थे)। १३—उसने अपनी शारीरिक दुर्बलता का विचार … करते हुए परिश्रम किया। १४—अब तुम्हें समान गुणवाली (गुणैरात्मसदृशीम् …) सोलह वर्ष की (षोडशहायनीम्) सुन्दर कन्या से विवाह करना चाहिए। १५—… तुम नित्य मृदु व्यायाम करोगे तो हृष्ट पुष्ट हो जाओगे।

पंचम अभ्यास

१०---अजहल्लिङ्ग (विशेषण)

पूर्व अभ्यास में इस विषय का प्रतिपादन किया गया है कि विशेषण वि… के अधीन होता है। जो विभक्ति, लिङ्ग अथवा वचन विशेष्य के होते हैं वे … प्रायः विशेषण के होते हैं, परन्तु कुछ ऐसे भी विशेषण शब्द हैं जो विशेष्य … अनुसरण नहीं करते, अर्थात् विशेष्य चाहे किसी लिङ्ग का हो, किन्तु वे … लिङ्ग का परित्याग नहीं करते। ऐसे शब्दों को <u>अजहल्लिङ्ग विशेषण</u> कहते हैं। यथा …

(१) आपः पवित्रं परमं पृथिव्याम् (पृथ्वी में जल बहुत पवित्र हैं।) यहां पर 'पवित्र' शब्द 'आपः' का विशेषण है किन्तु नपुंसकलिङ्ग के एक वचनमें प्रयुक्त हुआ है। 'आपः' स्त्री लिङ्ग शब्द है और बहुवचनान्त है। अतः विशेषण विशेष्य से भिन्न लिङ्ग ही नहीं है, अपितु भिन्न वचन भी है।

(२) दुहिताश्च कृपणं परम् (मनुस्मृति) (लड़कियां अत्यन्त दया की पात्र हैं) इस उदाहरण में विशेष्य 'दुहिता' स्त्रीलिङ्ग है और विशेषण 'कृपणम्' नपुंसकलिङ्ग है।

(३) अग्निः पवित्रं स मां पुनातु (अग्नि पवित्र है वह मुझे शुद्ध करे।) यहाँ पर विशेष्य 'अग्निः' पुँल्लिङ्ग है और विशेषण 'पवित्रम्' नपुँसक लिङ्ग।

(४) वेदाः प्रमाणम् (वेद साक्षी हैं।) यहाँ पर 'प्रमाण' शब्द विशेषण है और नपुँसक लिङ्ग है, यद्यपि विशेष्य 'वेदाः' पुँल्लिङ्ग।

इसी प्रकार

१—पाकिस्तानवासिन आरम्भ एव भारतवासिनां शङ्कास्थानम अभवन् (पाकिस्तानी आरम्भ से ही भारतवासियों के लिए शंका का स्थान बन गये।)

२—सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तः करणप्रवृत्तयः (सज्जनों के लिए अपने अन्तः करण की प्रवृत्तियाँ प्रमाण होती हैं।)

३—मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः (विद्वान् लोग कहते हैं कि मृत्यु शरीर धारी जीवों का स्वभाव है और जीवन विकार है।)

४—अभिमन्युः श्रेण्यारत्नं कुलस्यावनंसदचासीत् (अभिमन्यु अपनी श्रेणी का रत्न और अपने कुल का भूषण था।)

५—अविवेकः परमापदां पदम्* (अज्ञान विपत्तियों का सब से बड़ा कारण है।)

६—रामः शासकानामादर्श आसीत् (राम आदर्श शासक थे।)

७—गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः (गुणियों के गुण ही पूजा के स्थान हैं, न लिङ्ग और न अवस्था।)

---

*पात्र, भाजन पद, स्थान आदि शब्द कभी-कभी बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं, यथा—भवादृशा एव भवन्ति भाजनान्युपदेशानाम् (कादम्बर्याम्) (आप के सदृश व्यक्ति ही उपदेश के पात्र होते हैं।)

८—उर्वशी सुकुमारं प्रहरणं महेन्द्रस्य, प्रत्यादेशो रूपगर्वितायाः श्रियः। (उर्वशी इन्द्र का कोमल शस्त्र और रूप पर इतरानेवाली लक्ष्मी को लज्जित करने वाली थी।)

९—यत्र समाजे मूर्खाःप्रधानमुपसर्जनं च पण्डिताः स चिरं नावं (जिस समाज में मूर्ख प्रधान होते हैं और पण्डित गौण, वह अधिक समय तक नहीं ठहर सकता।)

१०—वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतान्यपि।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारासहस्रकम्॥

(एक गुणी पुत्र अच्छा है, सैकड़ों मूर्ख नहीं, अकेला चाँद अँधेरे को दूर कर देता है, हजारों तारे नहीं।)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—दूसरे की निन्दा मत करो, निन्दा पाप है। २—अच्छा शासक प्रजा के अनुराग का पात्र हो जाता है। ३—कोरी नीति कायरता है और कोरी बहादुरी जंगली जानवरों की चेष्टा से बढ़कर नहीं। ४—वह अँगूठी शकुन्तला को की ओर से भेंट थी। ५—परमात्मा की महिमा अनन्त है, वह वाणी और मन का विषय नहीं। ६—हम देवताओं की शरण में जाते हैं और नित्य उनका ध्यान करते हैं। ७—पुत्र मेरा शरीर धारी चलता फिरता जीवन है और सर्वस्व है। ८—आप का तो कहना ही क्या, आप तो विद्या के निधि और गुणों की खान हैं। ९—विपत्ति मित्रता की कसौटी है, सम्पत्ति में तो बनावटी मित्र बहुत मिलते हैं। १०—वेद पढ़ी हुई वह तपस्विकन्या अपने आप को बड़भागिन् समझती है, उसका अपने प्रति आदर उचित ही है।

३—कातर्यं केवला नीतिः शौर्यं श्वापदचेष्टितम्। ४ अंगूठी—अंगुलीयकम्, भेंट—प्रतिग्रहः। ५—परमात्मनो महिमा परिच्छेदातीतः, अतो वाङ्मनसयोरगोचरः (वाक् च मनश्चेति वाङ्मनसे—द्वन्द्वसमासः)। ६—दैवतानि शरणं यामो नित्यं च तानि ध्यायामः (रक्षितार्थ में 'शरण' नपुं० एकवचन में प्रयुक्त होता है)। ७—पुत्रो मूर्तिसञ्चाराः प्राणाः सर्वस्वं च (जीवनार्थक 'प्राण' शब्द नित्य बहुवचनान्त है)। ८—निधि—निधानम्, खान—आकरः। ९—कसौटी—निकषः, बनावटी—कृत्रिमाणि। १०—अधीतवेदा सा तपस्विकन्या आत्मनं कृतिनीं मन्यते। युक्ता खल्वस्या आत्मनि सम्भावना। यहाँ पर 'आत्मन्' शब्द के नित्य पुँल्लिङ्ग होने पर भी 'कृतिनी' विधेय स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त हुआ है।



षष्ठ अभ्यास

क्रिया-विशेषण

भिन्नता करनेवाला या भेदक विशेषण होता है। क्रिया में भिन्नता लानेवाले को ही क्रिया विशेषण कहते हैं। क्रिया विशेषण नपुंसकलिङ्ग की द्वितीया विभक्ति के एक वचन में प्रयुक्त होते हैं, यथा—

(१) तदा नेहरूमहोदयः सभायां देशभक्तिविषयं सविस्तरं *विशदं च व्याख्यात् (उस दिन सभा में पण्डित नेहरू ने देशभक्ति के विषय पर विस्तार और स्पष्टता से भाषण किया)।

(२) सुखमास्ताम्, तपोवनं ह्यतिथिजनस्य स्वं गेहम् (आप आराम से बैठिए, तपोवन तो अतिथियों का अपना घर होता है)।

(३) साधु †पुत्र साधु रक्षितं त्वया कालुष्यात्कुलयशः (शाबाश, पुत्र शाबाश तूने अपने कुल को बट्टा नहीं लगने दिया)।

(४) इतो हस्तदक्षिणोऽवक्रं गच्छ क्षिप्रं विधानभवनमासादयिष्यसि (आप यहाँ से सीधे दाहिने हाथ जायँ, आप थोड़ी देर में काउन्सिल हाउस में पहुँच जायँगे)।

(५) साग्रहं, सप्रश्रयं चात्र भवन्तं प्रार्थयेऽत्रभवानत्ययेऽस्मिन्ममाभ्युपपत्तिं सम्पादयतु (मैं आप से आग्रह पूर्वक और नम्रता से प्रार्थना करता हूं कि आप इस संकट में मेरी सहायता करें।)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—पहले हम दोनों एक दूसरे से समान रूप से मिलते थे, अब आप अफसर हैं और मैं आपके अधीन कर्मचारी। २—शिशु बहुत ही डर गया है, अभीतक होश में नहीं आया है। ३—हे मित्र यह बात हंसी में कही गयी है, इसे सच करके न जानिए।

---

* 'सविस्तारम्' अशुद्ध है। विस्तार (पुं०) वस्तुओं की चौड़ाई को कहते हैं।

† साधुकृतम् से वाक्य की पूर्ति होती है।

१—अब आप अफसर..........ईश्वरो भवान्, अहं चाधिष्ठितो नियोज्यः। २—बहुत ही—बलवत्। ३—परिहासविजल्पितं सखे परमार्थेन न गृह्यतां वचः।

४—दूर तक देखो, निकट में ही दृष्टि मत रखो, परलोक को देखो, इस लोक नहीं। ५—उसने यह पाप इच्छा से किया था, अतः आचार्य ने उसे त्याग ६—उसने मुझे जबरदस्ती खैंचा और पीछे धकेल दिया। ७—मैं बड़ी चाह भाई के घर लौटने की प्रतीक्षा कर रहा हूं। ८—नारद अपनी इच्छा से त्रि घूमता था और सभी वृत्तान्त जानता था। ९—वह अटक अटक कर बो उसकी वाणी में यह स्वाभाविक दोष है। १०—तपोवन में स्थान विशेष के विश्वास में आये हुए हिरन निर्भय होकर घूमते फिरते हैं।

क्रिया-प्रकरण

सप्तम-अभ्यास

वर्तमान काल-लट्

गम् (जाना) परस्मैपद				वृत् (होना)	
गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति	प्र०पु०	वर्तते	वर्तेते
गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ	म०पु०	वर्तसे	वर्तेथे
गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः	उ०पु०	वर्ते	वर्तावहे

इसी प्रकार—

परस्मैपद—पच् (पकाना) पचति, नम् (नमस्कार करना) नमति, पश्य् (देखना) पश्यति, सद् (बैठना) सीदति, स्था (रुकना) तिष्ठति, श्रु (सु श्रृणोति, पा-पिब (पीना) पिबति, पा (रक्षा करना) पाति, घ्रा जिघ्र् (सूं स्मृ (याद करना) स्मरति, स्पृश् (छूना) स्पृशति, धा (धारण करना) द ब्रू (बोलना) ब्रवीति, स्वप् (सोना) स्वपिति, भ्रम् (घूमना) भ्रमति-भ्राम्यति (डरना) बिभेति, शक् (सकना) शक्नोति, हृ (लेजाना) हरति आदि।

४—दीर्घं पश्यत मा ह्रस्वं परं पश्यत माऽपरम्। ५—इच्छा से—कामेन। जबरदस्ती—हठात्, पीछे धकेल दिया—पृष्ठतः प्राणुदत्। ७—बड़ी चाह सोत्कण्ठम्, प्रतीक्षा कर रहा हूं—गृहं प्रति भ्रातुः प्रत्यावृत्तिं सोत्कण्ठं प्रतीक्षे। अपनी इच्छा से—स्वैरम्। अटक—अटक कर—स्खलिताक्षरम् (सगद्गद १०—विलब्धं हरिणाश्चरन्त्यचेकिता देशागतप्रत्ययाः।

आत्मनेपद—सेव् (सेवा करना) सेवते, वृध् (बढ़ना) वर्धते, मुद् (प्रसन्न होना) मोदते, सह् (सहना) सहते, आस् (बैठना) आस्ते, शीङ् (सोना) शेते, युध् (लड़ना) युध्यते, जन् (पैदा होना) जायते, मृ (मरना) म्रियते आदि।

उभयपदी—याच् (माँगना) याचति-याचते, नी (लेजाना) नयति-नयते, हृ (लेजाना) हरति-हरते, भुज् (पालन करना) भुनक्ति, भुङ्क्ते, कृ (करना) करोति-कुरुते, चुर् (चुराना) चोरयति-चोरयते, कथ् (कहना) कथयति-कथयते, चिन्त् (चिन्ता करना) चिन्तयति-चिन्तयते आदि।

वर्तमान काल—"प्रारब्धोऽपरिसमाप्तश्च कालो वर्तमानः कालः" वर्तमानकाल की निरन्तर होती हुई क्रिया लट् लकार द्वारा कही जाती है। 'बोला रहा है,' 'खेल रहा है,' 'सुन रहा है' खा रहा है,' 'पी रहा है' इन सब के अनुवाद में 'लट्' का ही प्रयोग होता है (प्रभाषते, क्रीडति, शृणोति, खादति, पिबति)। आज कल कुछ लोग (छात्र एवं अध्यापक भी) ऐसे स्थानों पर 'शतृ, शानच्' प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं और साथ में अस् धातु का लट् लकारान्त रूप। 'वह बोल रहा है' का अनुवाद वे करते हैं 'प्रभाषमाणोऽस्ति 'खेल रहा है' का अनुवाद करते हैं 'क्रीडन्नस्ति' तथा 'सुन रहा है' का अनुवाद करते हैं 'शृण्वन्नस्ति'। ऐसा करना व्याकरण के सर्वथा विरुद्ध है। इनवाक्यों को ध्यान से पढ़ो—

(१) शिशुः सोत्कण्ठं स्मरति मातुः (अथवा मातृदर्शनस्योत्कण्ठते शिशुः) (बच्चा माता के दर्शन के लिए उत्कण्ठित है।)

(२) दिष्ट्या पुत्रलाभेन वर्धते भवान् (आपको पुत्र-जन्म पर बधाई हो।)

(३) यो दीव्यति स परिदेवयते। अतो द्यूतं गर्हन्ते शिष्टाः (जो जुआ खेलता है, वह पछताता है। इसी कारण सज्जन जुए को निन्दा की दृष्टि से देखते हैं।)

(४) गोपालः रमेशस्य षोडशीमपि कलां न स्पृशति। क्व भोजराजः क्व च कुब्जस्तैली (गोपाल का रमेश से क्या मुकाबला? कहाँ राजा भोज कहाँ कुबड़ा तेली?)

(५) इमां बेलां त्वामन्विष्यामि, क्व निलीयसे (मैं तुम्हें कितने समय से ढूंढ रहा हूं, तुम कहाँ छिप जाते हो?)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—आश्चर्य है कि सुशिक्षितमति भी ऐसा व्यवहार करते २—मनुष्य अपने भाई बन्धुओं के प्रति पाप करने का कैसा साहस है। ३—रात को चमकता हुआ (रोचमानः) चाँद किसे प्यारा नहीं, सिवाय और चोर के। ४—मैं दो बजे दो पहर से पाठ याद कर रहा हूं। अभी त होने में नहीं आया। ५—व्यायाम से मनुष्य में स्फूर्ति और बल आता है और स्वस्थ रहता है। ६—विदेश जाते हुए पुत्र के सिर को माता चूमती है। ७ किसी का भी विश्वास नहीं करता, सदा शङ्कित रहता है। ८—यदि तू खाता है (अश्नासि), तुझे इससे कुछ लाभ नहीं (नेदं तवोपकरोति।) ९ बीमार नहीं है, बीमार होने का बहाना करता है (आतुरतां व्यपदिशति १०—आजकल लोग मनुष्य की योग्यता का अनुमान उसके पहरावे (वेषः) से हैं (अनुमान्ति)। ११—तेरा पड़ोसी (प्रतिवेशिन्) गरीब है तू उसकी सहायता नहीं करता? १२—जो लक्ष्मी के पीछे भागता है, लक्ष्मी उससे परे भागती १३—अधिक वर्षा के कारण हमारे मकान की छत (छदिः) टपकती रह (प्रश्च्योतति) जिससे हम बहुत तङ्ग आगये (आतङ्कास्मः)। १४—वह अँधेरी गली में (सङ्कटायां प्रतोलिकायाम्) रहता है। १५—उसे बहुत सवेरे उठने आदत है (महति प्रत्यूषे जागर्ति) तदन्तर दातून कर (दन्तान् धावित्वा) सैर के निकल जाता है (स्वैरविहारं निर्याति)।

अष्टम अभ्यास

भूतकाल----लुङ्, लङ्, लिट्

गम् (लुङ्) परस्मैपद				वृत् (लुङ्) आत्मनेपद		
अगमत्	अगमताम्	अगमन्	प्र०पु०	अवर्तिष्ट	अवर्तिषाताम्	अवर्तिष
अगमः	अगमतम्	अगमत	म०पु०	अवर्तिष्ठाः	अवर्तिषाथाम्	अवर्तिध्व
अगमम्	अगमाव	अगमाम	उ०पु०	अवर्तिषि	अवर्तिष्वहि	अवर्तिष्म

२—...चैनः समाचरितुं कथं क्रमते। ३—...अन्यत्र कामुकात् कुम्भीलका ४—...द्विवादनात् प्रभृति—नाद्यापि पारयामि कण्ठे कर्तुम्। ६—...शिरस्युपजि स्यम्बा। ७—न कमपि प्रत्येति शश्वच्च शङ्कते।

गम् (लङ्) परस्मैपद				वृत् (लङ्) आत्मनेपद		
अगच्छत्	अगच्छताम्	अगच्छन्	प्र०पु०	अवर्तत	अवर्तेताम्	अवर्तन्त
अगच्छः	अगच्छतम्	अगच्छत	म०पु०	अवर्तथाः	अवर्तेथाम्	अवर्तध्वम्
अगच्छम्	अगच्छाव	अगच्छाम	उ०पु०	अवर्ते	अवर्तावहि	अवर्तामहि

गम् (लिट्) परस्मैपद				वृत् (लिट्) आत्मनेपद		
जगाम	जग्मतुः	जग्मुः	प्र०पु०	ववृते	ववृताते	ववृतिरे
जगमिथ / जगन्थ	जग्मथुः	जग्म	म०पु०	ववृतिषे	ववृताथे	ववृतिध्वे
जगाम / जगम	जग्मिव	जग्मिम	उ०पु०	ववृते	ववृतिवहे	ववृतिमहे

	लट्	लुङ्	लङ्	लिट्
पच् (पकाना)	पचति	अपाक्षीत्	अपचत्	पपाच
पत् (गिरना)	पतति	अपातीत्	अपतत्	पपात
त्यज् (छोड़ना)	त्यजति	अत्याक्षीत्	अत्यजत्	तत्याज
हस् (हँसना)	हसति	अहासीत्	अहसत्	जहास
ग्रह् (पकड़ना)	गृह्णाति	अग्रहीत्	अगृह्णात्	जग्राह
दृश् (पश्य्) (देखना)	पश्यति	अद्राक्षीत्	अपश्यत्	ददर्श
नी (ले जाना)	नयति	अनैषीत्	अनयत्	निनाय
स्था (ठहरना)	तिष्ठति	अस्थात्	अतिष्ठत्	तस्थौ
वस् (रहना)	वसति	अवात्सीत्	अवसत्	उवास
हन् (मारना)	हन्ति	अवधीत्	अहन्	जघान
श्रु (सुनना)	शृणोति	अश्रौषीत्	अशृणोत्	शुश्राव
शीङ् (सोना)	शेते	अशयिष्ट	अशेत	शिश्ये
सह् (सहना)	सहते	असहिष्ट	असहत	सेहे
सेव् (सेवा करना)	सेवते	असेविष्ट	असेवत	सिषेवे
रुच् (अच्छा लगना)	रोचते	अरोचिष्ट	अरोचत	रुरुचे
वन्द् (नमस्कार करना)	वन्दते	अवन्दिष्ट	अवन्दत	ववन्दे
यत् (यत्न करना)	यतते	अयतिष्ट	अयतत	येते
कम्प् (काँपना)	कम्पते	अकम्पिष्ट	अकम्पत	चकम्पे
मृ (मरना)	म्रियते	अमृत	अम्रियत	ममार
शुभ् (शोभित होना)	शोभते	अशोभिष्ट	अशोभत	शुशुभे

भूतकाल (लुङ्, लङ्, लिट्)—'वह गया' 'वह जा रहा था', 'उसने

खाया', 'वह खा रहा था' इत्यादि का अनुवाद करने के लिए संस्कृत में लुङ्, लङ्, लिट् का प्रयोग होता है।

लिट् का प्रयोग परोक्ष अर्थ में होता है अर्थात् जिस क्रिया को वक्ता ने न देखा हो, यथा—"जघान कंसं किल वासुदेवः" (भगवान् कृष्ण ने कंस को मारा) सम्राट् समुद्रगुप्तोऽश्वमेधेनेजे (ईजे) (सम्राट् समुद्रगुप्त ने अश्वमेध यज्ञ किया।)

इस नियम के अनुसार उत्तम पुरुष में 'लिट्' का प्रयोग नहीं होता, क्योंकि 'अपनी' क्रिया में लिट् नहीं होता। परन्तु इस का अपवाद है। यदि कहने वाले को नींद में या उन्माद में अपने किये का ध्यान न रहे तो लिट् का प्रयोग उत्तम पुरुष में हो सकता है।

उदाहरण—"* कलिङ्गेष्ववात्सीः किम्? नाहं कलिङ्गाञ्जगाम।" (क्या तुम कलिङ्ग देश में रहे थे? मैं वहाँ गया तक नहीं।) इसी प्रकार—"बहु पुरस्तात्तस्य मत्ता किलाहम्" (मुझ पगली ने उसके सामने बहुत कुछ बक किया।)

सामान्य भूत में लुङ् लकार होता है और लङ् भी हो सकता है, किन्तु 'आसन्नपूर्ण भूत' में केवल लुङ् ही हो सकता है, यथा—"अद्यैवाहं रोचकस्यास्य पुस्तकस्य पाठं समापम्" (मैंने इस अच्छी पुस्तक का पढ़ना अभी समाप्त किया है।) इस वाक्य में लुङ् के अतिरिक्त किसी अन्य लकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार—"कृष्णो बाल्य एवेदृशानि कौतुकान्यकार्षीत् यानि महान्तोऽपि कर्तुं नाशकन्" (कृष्ण ने बचपन में ऐसे-ऐसे कौतुक किये, जिन्हें बड़े-बड़े लोग नहीं कर पाये।) "अपां सोममममृता अभूम" (हमने सोमरस पिया है और हम अमर हो गये हैं। (ऋक्)

निषेधार्थ सूचक निपात माङ् (मा) के योग में केवल लुङ् का प्रयोग होता है। यदि 'माङ्' के साथ 'स्म' भी लगा हो तो 'लुङ्' के अतिरिक्त 'लङ्' के प्रयोग का भी विधान है। माङ् के योग में आगम (अ अथवा आ) का लोप हो जाता है, यथा "शब्दं मा कार्षीः" (आवाज मत करो) यहाँ पर 'अकार्षीः' के 'अ' का लोप हो गया है। यह नियम लुङ् और लङ् में एक समान है। "मैवं स्म मनसि करोः"

* 'कलिङ्ग' देश विशेष का नाम होने से बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है।

'मा' और 'स्म' के योग में लङ् का प्रयोग हुआ है । "मा ते विमार्गं गमन्निति समर्पयैतान् सुतान् प्रशस्याय शिक्षकाय" (इन लड़कों को पढ़ाने के लिए किसी सुयोग्य अध्यापक को सौंप दो, ताकि वे कहीं उलटे मार्ग पर न जायँ ।)

अनद्यतन (आज से पहले) भूत काल के अर्थ में लङ् का प्रयोग होता है। यथा—"इह भारते वर्षेऽशोको नाम सम्राडासीत्" (भारत में अशोक नाम का सम्राट् हो चुका है ।) आज कल साधारण भूत के अर्थ में भी लङ् का प्रयोग हो रहा है। "दुष्यन्तः सुष्टु सारङ्गमन्वसरत् परं नासादयत्" (दुष्यन्त ने हरिन का बहुत पीछा किया, पर वह उसे पकड़ न सका ।) यदि धातु के पूर्व कोई उपसर्ग लगा हो तो पहले उस धातु का लङ् लकार का प्रयोग बनाकर बाद में उस प्रयोग के पूर्व उपसर्ग लगाया जाता है । जैसे ऊपर के वाक्य में "अन्वसरत्" है, यहाँ पर पहले 'सृ' का लङ् में 'असरत्' बना और फिर उसके पूर्व 'अनु' उपसर्ग लगा कर (अनु+असरत्) अन्वसरत बना ।

संस्कृत में अनुवाद करो—

(लुङ् में) १—वह जो पौर्णमासी व्यतीत हुई उसमें उसने अग्न्याधान किया (अग्मीनाधित) । २—कण्व ऋषि आश्रम में नहीं, वह शकुन्तला के दुर्भाग्य को टालने के लिए (दुर्दैवं शमयितुम्) गये हैं (अगात्) । ३—ज्योतियों का स्वामी सूर्य निकल आया है (उदगात्) दिशाएँ चमक उठी हैं (दिशश्चाराजिषुः) । ४—हे बालक डरो मत (मा भैषीः) तुम्हारी माता आ गयी हैं । ५—हे पार्थ कायर मत बनो (क्लैब्यं मास्म गमः) यह तुम्हें शोभा नहीं देता (नैतत्त्वय्युपपद्यते) । ६—भोजन के समय को कभी मत टालो (मातिक्रमीः) । ७—राजा की मृत्यु का समाचार पाकर सारे नगर में न किसी ने कुछ पकाया (अपचि), न किसी ने स्नान किया (अस्नायि) नहीं कुछ खाया (अभोजि), सब जगह सब रोते ही रहे (सर्वैररोदि) । ८—इस विश्वव्यापी युद्ध में न जाने कितनी जानें गयीं (योद्धारो निरधानिषत) । ९—मैं स्नान कर चुका हूँ अब भोजन करूंगा (अहमस्नासिषम्, इदानीं भोक्ष्ये) । १०—उस पर चोरी का अभियोग लगाया गया है, पर वह अभियोग निराधार है (ते तं मिथ्यैव चौर्येणाभ्ययुक्षत) ।

(लिट् में) १—जब राम इस पृथ्वी पर राज्य करता था (शशास) प्रजा बहुत प्रसन्न थी (ननन्द) । २—कण्व दुष्यन्त के आश्रम में पहुंचा (प्राप) कि

उसकी दाहिनी आँख फड़क उठी (पस्पन्द) । ३—दिलीप ने रघु को राज्य (न्यास) और स्वयं वन को चला गया (प्रतस्थे ।) ४—जब मैं पागल कहते हैं कि मैंने उसके सामने बहुत प्रलाप किया । ५—क्या तुम कामरूप रहे थे ? नहीं, मैं वहां गया तक नहीं । (ऊपर के उदाहरणों को देखो ।)

(लङ् में) १—मेरी अंगुली में सुई चुभ गयी, जिससे अभी तक पीड़ रही है (सूच्या ममाङ्गुलिरविध्यत) । २—इस स्कूल में प्रविष्ट होने से (प्रवेशात् प्राक्) मोहन तीन वर्ष तक (वर्षत्रयम्) गवर्नमेंट स्कूल में पढ़ता (अपठत्) । ३—यदि तुम आसानी से परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकते थे (प सुप्रतरा), तो तुमने शिक्षक क्यों रखा (किमर्थं शिक्षकमयुङ्क्थाः) ? ४— मुझे यह स्थान छोड़ने को विवश किया (अत्याजयन्) । ५—कुमार को इन्द्र सेना का नायक नियुक्त किया गया । ६—उन्होंने यश का लोभ किया (तेऽलुभ्यन्) पर वे इसे प्राप्त न कर सके (नाप्नुवन्) । ७—जब माता दृ ओझल हुई तब बच्चा बिलख-बिलख कर (प्रमुक्तकण्ठम्) रोने लगा । ८— प्रधानाध्यायकजी के पहुँचने से पहले इन्स्पेक्टर महोदय (निरीक्षकः) सातवीं का निरीक्षण कर चुके थे ? *९—पुराने क्षत्रिय पीडितों की रक्षा के लिए (त्राणाय) सदा सशस्त्र तैयार रहे थे (शश्वदुदायुधा आसन्) । १०—साधुओं सङ्गति से उनके सब पाप धोये गये (सर्वे पाप्मानोऽपूयन्त) ।

नवम अभ्यास

भविष्यत् काल—लुट्, लृट्

गम् (लुट्) परस्मैपद				वृत् (लुट्) आत्मनेपद		
गन्ता	गन्तारौ	गन्तारः	प्र० पु०	वर्तिता	वर्तितारौ	वर्तितार
गन्तासि	गन्तास्थः	गन्तास्थ	म० पु०	वर्तितासे	वर्तितासाथे	वर्तिता
गन्तास्मि	गन्तास्वः	गन्तास्मः	उ० पु०	वर्तिताहे	वर्तितास्वहे	वर्तिता

*अपि प्रधानाध्यापकात् पूर्वं निरीक्षकमहाभागः सप्तमीं श्रेणीं परीक्षितवानासीत् ऐसे स्थलों पर सम्पूर्ण भूत का क्रियासिद्धि को प्रकट करने के लिए धातु से क्त-क्तवतु का प्रयोग करना चाहिए और साथ में अस् या भू के लङ् का उपयोग ।

गम् (लृट्) परस्मैपद				वृत् (लृट्) आत्मनेपद		
गमिष्यति	गमिष्यतः	गमिष्यन्ति	प्र०पु०	वर्तिष्यते	वर्तिष्येते	वर्तिष्यन्ते
गमिष्यसि	गमिष्यथः	गमिष्यथ	म०पु०	वर्तिष्यसे	वर्तिष्येथे	वर्तिष्यध्वे
गमिष्यामि	गमिष्यावः	गमिष्यामः	उ०पु०	वर्तिष्ये	वर्तिष्यावहे	वर्तिष्यामहे

परस्मैपद	लुट्	लृट्	आत्मनेपद	लुट्	लृट्
पच्	पक्ता	पक्ष्यति	शीङ्	शयिता	शयिष्यते
पत्	पतिता	पतिष्यति	सह्	सोढा	सहिष्यते
त्यज्	त्यक्ता	त्यक्ष्यति	सेव्	सेविता	सेविष्यते
हस्	हसिता	हसिष्यति	रुच्	रोचिता	रोचिष्यते
ग्रह्	ग्रहीता	ग्रहीष्यति	वन्द्	वन्दिता	वन्दिष्यते
दृश् (पश्य्)	द्रष्टा	द्रक्ष्यति	यत्	यतिता	यतिष्यते
नी (नय्)	नेता	नेष्यति	कृप्	कल्पिता	कल्पिष्यते
वस् (रहना)	उषिता	वत्स्यति	नृ	मर्ता	मरिष्यति
हन्	हन्ता	हनिष्यति	शुभ्	शोभिता	शोभिष्यते
श्रु (शृ)	श्रोता	श्रोष्यति	मुद्	मोदिता	मोदिष्यते
पा (पिब्)	पाता	पास्यति	वृध्(बढ़ना)	वर्धिता	वर्धिष्यते
नम्	नन्ता	नंस्यति	युध्	योद्धा	योत्स्यते

भविष्यत्काल—(लुट्, लृट्)—अनद्यतन भविष्यत्काल में लुट् लकार होता है, अर्थात् लुट् उस भविष्यत् काल की क्रिया को बतलाता है जो आज न होनेवाली हो, यथा—श्वोऽहमितः प्रस्थाताहे, परश्वश्च गृहमासादयिताहे ततश्च सप्ताहात्परेण काश्मीरान्प्रति प्रस्थाताहे (मैं कल यहाँ से चल कर परसों घर पहुँचूँगा और वहां से एक सप्ताह के बाद कश्मीर को चला जाउंगा।) "सर्वावस्थागतस्त्वं सत्यं वक्तासीति दृढो मे प्रत्ययः" (प्रत्येक अवस्था में तुम सत्य बोलोगे ऐसा मेरा पक्का निश्चय है।)

लृट् लकार साधारणतः भविष्यत् मात्र की क्रियाओं को सूचित करता है विशेषतः उन क्रियाओं को जिनका आज से सम्बन्ध हो, यथा—"यास्यामि विचेष्यामि च बालम्" (मैं जाता हूं और बालक को ढूँढता हूं।) इस वाक्य में आज की घटना का निर्देश है, यहां भविष्यत् का समीपवर्ती वर्तमान काल है। यहाँ लट् का

प्रयोग भी हो सकता है। "अप्यस्मत् प्रदेशात् प्रतिनिधिः सन् विधानसभा उत्तरप्रदेशस्य सदस्य इति निर्वाचितमात्मानमेषिष्यसि ?" (क्या आप उ प्रदेश विधान सभा के सदस्य निर्वाचित होने के लिए हमारे इलाके से खड़े होंगे ?

संस्कृत में अनुवाद करो—

(लुट् में) १—जब भी मुझे अवसर मिलेगा मैं वेदान्त सीखने का प्र करूंगा। २—स्वतन्त्र भारत अपनी निर्धनता और निरक्षरता को शीघ्र मिटा देगा ३—हा यह कब पढ़ेगा जो इस प्रकार पढ़ने में ध्यान नहीं देता। ४—हम एक बाद यज्ञ करेंगे (वर्षात्परेण यष्टास्महे) इस बीच में सब सामग्री जुटा लेंगे (अन्तरा सर्वान्सम्भारान्कर्तास्महे।) ५—ज्योतिषी कहते हैं कि तुम्हारे घर पुत्र पैदा हो जो शत्रुओं के ऐश्वर्य को हर लेगा (शत्रुश्रियं हर्तेति)

(लृट् में) १—यदि तुम अपने लड़कों का ध्यान न करोगे (अवेक्षिष्य तनूजान्) तो वे अवश्य बिगड़ जावेंगे (सत्पथात् भ्रंशिष्यन्ते)। २—यदि तुम ओर जाओगे तो गढ़े में गिर जाओगे (पत्स्यसे)। ३—आगामी पूर्णिमा को ए बड़ा त्यौहार मनाया जायगा (अभिनन्दिष्यते)। ४—पाँच छः दिन में (पञ्च रहोभिः) हम स्वयं वहाँ जायंगे और सारी बात की पड़ताल करेंगे (अनुसन्धास्यामः) ५—आज या कल हम कलकत्ता जायंगे पर निश्चित नहीं। ६—यदि तुम इस ग तालाब में उतरोगे (अवगाहिष्यसे) तो डूब जाओगे (निमङ्क्ष्यसि)। ७— मुझे इस स्कूल में काम करते उन्नीस वर्ष सवा सात मास तथा पाँच दिन हो जा (एकोनविंशतिः समाः सपादसप्तमासाः पञ्च दिनानि च)। ८—जितना गुड़ डालें उतना ही मीठा होगा (अधिकस्याधिकं फलम्।) ९—धर्म तुम्हारी रक्षा करे और कुछ भी साथ न देगा। १०—वह उससे उपकृत है अन्यथा उसकी सहाय न करता।

दशम अभ्यास

सम्भाव्यभविष्यत् और प्रवर्तना (लिङ्, लोट्)

गम् (लोट्) परस्मैपद — वृत् (लोट्) आत्मनेपद

गच्छतु	गच्छताम्	गच्छन्तु	प्र०पु०	वर्तताम्	वर्तेताम्	वर्तन्ताम्
गच्छ	गच्छतम्	गच्छत	म०पु०	वर्तस्व	वर्तेथाम्	वर्तध्वम्
गच्छानि	गच्छाव	गच्छाम	उ०पु०	वर्तै	वर्तावहै	वर्तामहै

गम् (विधिलिङ्) परस्मैपद				वृत् (विधिलिङ्) आत्मनेपद		
गच्छेत्	गच्छेताम्	गच्छेयुः	प्र०पु०	वर्तेत	वर्तेयाताम्	वर्तेरन्
गच्छेः	गच्छेतम्	गच्छेत	म०पु०	वर्तेथाः	वर्तेयाथाम्	वर्तेध्वम्
गच्छेयम्	गच्छेव	गच्छेम	उ०पु०	वर्तेय	वर्तेवहि	वर्तेमहि

गम् (आशीर्लिङ्) परस्मैपद				वृत् (आशीर्लिङ्) आत्मनेपद		
गम्यात्	गम्यास्ताम्	गम्यासुः	प्र०पु०	वर्तिषीष्ट	वर्तिषीयास्ताम्	वर्तिषीरन्
गम्याः	गम्यास्तम्	गम्यास्त	म०पु०	वर्तिषीष्ठाः	वर्तिषीयास्थाम्	वर्तिषीध्वम्
गम्यासम्	गम्यास्व	गम्यास्म	उ०पु०	वर्तिषीय	वर्तिषीवहि	वर्तिषीमहि

परस्मैपद				आत्मनेपद			
	लोट्	वि० लिङ्	आ० लिङ्		लोट्	वि० लिङ्	आ० लिङ्
पच्	पचतु	पचेत्	पच्यात्	शीङ्	शेताम्	शयीत	शयिषीष्ट
पत्	पततु	पतेत्	पत्यात	सह	सहताम्	सहेत	सहिषीष्ट
त्यज्	त्यजतु	त्यजेत्	त्यज्यात्	सेव्	सेवताम्	सेवेत	सेविषीष्ट
हस्	हसतु	हसेत्	हस्यात्	रुच्	रोचताम्	रोचेत	रोचिषीष्ट
ग्रह्	गृह्णातु	गृह्णीयात्	गृह्यात्	वन्द्	वन्दताम्	वन्देत	वन्दिषीष्ट
दृश्	पश्यतु	पश्येत्	दृश्यात्	यत्	यतताम्	यतेत	यतिषीष्ट
नी	नयतु	नयेत्	नीयात्	कम्प्	कम्पताम्	कम्पेत	कम्पिषीष्ट
वस्	वसतु	वसेत्	उष्यात	मृ	म्रियताम्	म्रियेत	मृषीष्ट
हन्	हन्तु	हन्यात्	वध्यात्	शुभ्	शोभताम्	शोभेत	शोभिषीष्ट
श्रु	शृणोतु	शृणुयात्	श्रूयात्	मुद्	मोदताम्	मोदेत	मोदिषीष्ट
पा	पिबतु	पिबेत्	पेयात्	वृध्	वर्धताम्	वर्धेत	वर्धिषीष्ट
नम्	नमतु	नमेत्	नम्यात्	युध्	योधताम्	योधेत	योधिषीष्ट

सम्भाव्यभविष्यत् एवं प्रवर्तना (लोट्, लिङ्)—सम्भाव्यभविष्यत् अर्थात् सम्भावना, प्रश्न, औचित्य, शपथ तथा इच्छा आदि अर्थों में लोट् एवं विधिलिङ् का प्रयोग होता है। प्रवर्तना अर्थात् प्रत्यक्ष विधि, प्रार्थना, उपदेश, अनुमति, अनुरोध एवं आज्ञा आदि अर्थों में विधिलिङ् तथा लोट् का प्रयोग होता है। यथा—

सम्भावना—सम्भाव्यतेऽद्य पिता आगच्छेत् (शायद आज पिता जी आजायें।)

कदाचिदाचार्यः श्वः प्रयागं गच्छेत् (स्यात् गुरुजी कल इलहाबाद चले जायें।)

प्रश्न—किमहं वेदान्तमधीयीय उत न्यायम् (मैं वेदान्त पढ़ूँ या न्याय ?)

औचित्य—त्वं साधूनां सेवां कुर्याः (तुम सधुओं की सेवा करो ।) तत्कुरु यथा निन्दा न भवेत् (ऐसा न करो कि जिसमें निन्दा हो ।)

शपथ—यो मां पिशाच इति कथयति तस्य पुत्रा म्रियेरन् (म्रियन्ताम्) (जो मुझे पिशाच कहता है उसके पुत्र मर जायँ ।)

प्रार्थना—छिन्धि नः पाशान् (कृपा करके आप मेरे फन्दे काट डालें) अप्यन्तराऽऽगच्छानि आर्य (श्रीमन्, क्या मैं भीतर आसकता हूँ ?) दीने मयि दयां कुरु (मुझ गरीब पर दया किजिए ।)

आज्ञा—तीर्थोदकं च समिधः कुसुमानि दर्भान् । स्वैरं वनादुपनयन्तु तपोधनानि (वे स्वेच्छा सें तपस्या का धन, तीर्थों का जल समिधाएँ, फूल तथा कुश घास लायें ।) रमेश स्वं पुस्तकं दशमे पार्श्वे समुद्घाटय पठनं चारभस्व (रमेश अपनी पुस्तक के दशवें पृष्ठ को खोलो और पढ़ना शुरू करो ।)

आशीर्वाद—आत्मसदृशं भर्त्तारं लभस्व, वीरसूश्च भव (परमात्मा करे तुम अपने योग्य पति को प्राप्त करो और वीर जननी हो ।) पुत्रोऽस्य जनिषीष्ट च शत्रुश्रियं हृषीष्ट (ह्रियात्) (ईश्वर करे उसके घर इस वार पुत्र पैदा हो और शत्रुओं की लक्ष्मी का हरण करे ।)

उपदेश—सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् (सच बोले, मीठा बोले) सहसा । विदधीत न क्रियाम् (विना विचारे कार्य न करे ।) सावधानो भव, शत्रुर्निभृतमवसरं प्रतीक्षते (सावधान रहो शत्रु तुम्हारी घात में हे ।)

अनुरोध—इहासीत (आस्ताम्) तावद् भवान् (आप यहाँ बैठिए ।)

अनुमति—उपदिशतु भवान् कथं तं प्रसादयेयम् (आप ही बतावें कैसे उसे प्रसन्न करूं ?) अपि छात्रा गृहं गच्छेयुः (गच्छन्तु) क्या विद्यार्थी घर जावें ?)

विधि—नान्यस्यापराधेनान्यस्य दण्डमाचरेत् (दूसरे के अपराध के लिए दूसरे को दण्ड न दे ।) प्रत्यक्शिरा न स्वप्यात् (पश्चिम की ओर सिर करके न सोवे ।) ब्रह्मचारी मधु मांसं च वर्जयेत् (ब्रह्मचारियों के लिए मांस और शहद वर्जित है ।)

इच्छा—भवान् शीघ्रं नीरोगो भवेत् (भवतु) (मैं चाहता हूँ कि आप शीघ्र आराम हो जायं ।)

सामर्थ्य—जङ्घाकरिको होरया सप्त क्रोशान् गच्छेत् (यह हरकारा प्रतिदिन सात कोस दौड़ सकता है ।) अनेन रथवेगेन पूर्वप्रस्थितं वैनतेयमप्यासादयेयम् (रथ की इस चाल से मैं पहले चले हुए गरुड़ को भी पकड़ सकता हूं ।)

प्राप्तकाल—प्रसाधयतु भवान् स्वां योग्यताम् (आपके लिए यह अच्छा अवसर है कि आप अपनी योग्यता दिखायें ।)

कामचारानुज्ञा—अपि याहि अपि तिष्ठ (तुम चाहो तो जा सकते हो और चाहो तो ठहर सकते हो ।)

संस्कृत में अनुवाद करो—

(लोट्) १—हे शकुन्तले, आचार का अनुसरण करो। २. बेटी धीरज धरो, अब डरने का कोई काम नहीं। ३. नाव में सब से पहले चढ़ो और सबसे पीछे उतरो। ४. अपनी आय को बढ़ाओ और खर्च कम करो। ५. यदि तुम चाहो तो यह काम समाप्त कर सकते हो। ६. पांव धुलाकर ब्राह्मणों को अन्न परोस दो। ७. राजाने आदेश किया कि ब्राह्मणों को भोजन के लिए (भोजनेन) यहां निमन्त्रित किया जाय। ८ नौकर से कह दो कि मेरा बिछौना बिछादे, मुझे नींद आ रही है। ९. तुम्हारा मन धर्म में लगे और सत्य में निष्ठित हो। १०. आज का काम कल पर मत छोड़ो। ११. जो मान योग्य है उनका मान करो, शत्रुओं को भी अनुकूल बनाओ। १२. आओ, हम इस मकान का सौदा करें। १३. या तो मुझे किराया (भाटकम्) दो या मकान खाली कर दो (परित्यज)। १४ इस अत्याचारी को गर्दन से पकड़ो और बाहर निकाल दो। १५. तुम मानो या न मानो पर सच बात तो यही है।

---

१. शकुन्तले आचारं तावत्प्रतिपद्यस्व। ३. सर्वप्रथमं नावमारोहत सर्वपश्चाच्च ततोऽवरोहत। ४. आयं वर्धय व्ययं च ह्रसय। ५. व्यवस्यतु भवान् इदं कृत्यम्। ६. पादनिर्णेजनं कृत्वा विप्रा अन्नेन परिविष्यन्ताम्। ७. शयनीयम् रचयताम्। ८ धर्मे ते धीयतां धीः, सत्ये च निस्तिष्ठतु। १०. अद्यतनं कार्यं श्वः करिष्यामीति मा द : परिहर। ११. मान्यान्मानय शत्रूनप्यनुनय। १२ क्रयविक्रयसंविदं करवावहै १४. अर्धचन्द्रं दत्त्वा निस्सारयामुं जाल्मम्। १५. प्रतीहि वा न वा, परं तथ्यं त्विदमेव।

(लिङ्) १६ आश्चर्य है कि अन्धा भी पढ़ लिख सके। १७. उसे घर गिरवी नहीं रखना चाहिए था, कदाचित् कोई बन्धु उसकी सहायता क १८. अगर गुरु आजायें तो आशा है कि मैं दत्तचित्त होकर पढ़ूंगा। १९ तुम्हें समान गुण वाली सोलह वर्ष की सुन्दर कन्या से विवाह करना चा २०. सोने से पहले तुम्हें अपना पाठ याद कर लेना चाहिए।

(आशीर्लिङ्) २१. ईश्वर करे तुम अपने देश की सेवा करो। २ आपका शिष्य हूं, आपके पास आये हुए मुझे उपदेश करें। २३. कृपया द्वा बन्द कर दो (पिधेहि च द्वाराणि) बहुत तेज आन्धी (वात्या) चल रही २४ हे गोपाल तुम जुग जुग जीओ तुमने मेरे बच्चे की जान बचायी। २५. प्रसन्नता के लिए दो चार कौर खा लीजिए।

एकादश अभ्यास

हेतु-हेतुमद्भाव (क्रियातिपत्ति) लृङ्

गम् (लृङ्) परस्मैपद				वृत् (लृङ्) आत्मनेपद		
अगमिष्यत्	अगमिष्यताम्	अगमिष्यन्	प्र०पु०	अवर्तिष्यत	अवर्तिष्येताम्	अवर्तिष्[य]
अगमिष्यः	अगमिष्यतम्	अगमिष्यत	म०पु०	अवर्तिष्यथाः	अवर्तिष्येथाम्	अवर्तिष्[य]
अगमिष्यम्	अगमिष्याव	अगमिष्याम	उ०पु०	अवर्तिष्ये	अवर्तिष्यावहि	अवर्तिष्[य]

इसी प्रकार—

परस्मैपद—(पच्) अपक्ष्यत्, (पत्) अपतिष्यत् (त्यज्) अत्यक्ष्यत्, (ह अहसिष्यत्, (ग्रह्) अग्रहीष्यत् (दृश्) अद्रक्ष्यत् (नी) अनेष्यत्, (वस्) अव (हन्) अहनिष्यत् (श्रु) अश्रोष्यत्, (पा—पिव्) अपास्यत्, (नम्) अनंस्यत्।

आत्मनेपद—(शीङ्) अशयिष्यत, (सह्) असहिष्यत, (सेव्) असेवि (रुच्) अरोचिष्यत, (वन्द्) अवन्दिष्यत, (यत्) अयतिष्यत, (कम्प्) अकम्पि (मृ) अमरिष्यत, (शुभ्) अशोभिष्यत, (मुद्) अमोदिष्यत, (वृध्) अवर्धि (युध्) अयोत्स्यत।

---

१७. तेन स्वं गृहं नाऽऽधिकरणीयमासीत्। १८. गुरुश्चेदागच्छेत् युक्तोऽधीयीय। १९. हृद्यां कन्यामुद्वहेत्। २१. सेविष्ठाः। २२. शिष्यस्तेऽहं मां त्वां प्रपन्नम्। २४. गोपाल, पुरुषायुधं जीवतात्।

हेतु-हेतुमद्भाव (लृङ्)—जहाँ क्रियातिपत्ति (क्रिया की अनिष्पत्ति या असिद्धि) अर्थ से प्रतीत हो अथवा हेतु वाक्यार्थ का झूठापन (न होना) झलकता हो, वहां लृङ् लकार का प्रयोग होता है। लृङ् लकार भूत तथा भविष्यत् के अर्थ में व्यवहृत होता है। चन्द्र व्याकरणानुसारी विद्वान् भविष्यत् काल में लृङ् का प्रयोग नहीं मानते। वे भविष्यत् काल में लृङ् के विषय में लृट् का ही प्रयोग करते हैं—(भविष्यति क्रियातिपतने भविष्यन्त्येवेति चान्द्राः)। उदाहरण—

(१) वृष्टिश्चेदभविष्यत्, दुर्भिक्षं नाभविष्यत् (यदि समय पर वर्षा हो जाती तो अकाल न पड़ता।)

(२) यदि रक्षापुरुषा मध्ये नापतिष्यन् मित्रभावेन विवादो निरणेष्यत (यदि पुलिसवाले हस्तक्षेप न करते तो झगड़ा भलीभाँति निपट जाता।)

(३) निशाश्चेत्तमस्विन्यो नाभविष्यन्, को नाम चन्द्रमसो गुणं व्यज्ञास्यत् (यदि रातें अँधेरी न होतीं तो चन्द्रमा का गुण कौन जानता?)

(४) यदि राजा दुष्टेषु दण्डं नाधारयिष्यत् तदाऽवश्यं ते प्रजा उपापीडयिष्यन् (यदि राजा दुष्टों को दण्ड न देता तो वे लोगों को अवश्य पीड़ित करते।)

(५) यदि दक्षिणाफ्रीकास्था गौराङ्गा आजन्मसिद्धानाधिकारान् भारतीयेभ्योऽदास्यन् तदा द्वयोर्जात्योः शोभनो मिथः सम्बन्धोऽभविष्यत् (यदि दक्षिणअफ्रीका के गोरे शासक भारतीयों के जन्मसिद्ध अधिकारों को दे दें तो दोनों जातियों के आपस का सम्बन्ध बहुत अच्छा हो जाता।)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—यदि सूर्य न होता तो संसार में कौन जीवित रह सकता? २—यदि दुर्योधन हठ न करता तो महाभारत का युद्ध न होता। ३—यदि वह अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखता तो रोगी न होता। ४—यदि मैंने गुरु की आज्ञा मानी होती तो परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया होता। ५—यदि पत्थर का बाँध न बनाया गया होता तो नदी नगर को बहा ले जाती। ६—यदि तुम मेरे घर आते तो मैं तुम्हें मधुर और स्निग्ध भोजन खिलाता। ७—यदि रावण सीता का अपहरण न करता तो राम के हाथों उसकी मृत्यु न होती। ८—यदि तू दुष्टों की संगति में न पड़ता तो सदाचार से न गिरता। ९—यदि छकड़ा दायीं ओर गया होता तो न उलटता। १०—यदि श्रीकृष्ण की सहायता न होती तो पाण्डव कौरवों को न जीत सकते। ११—यदि

पहरेदार (यामिकाः) सावधान होते तो चोरी न होती। १२—यदि आज चाँदनी रात न होती तो हम मार्ग भूल जाते। १३—यदि मैं धनी होता तो अनाथों और विधवाओं की सहायता करता। १४—यदि हवा चलती तो गर्मी कम हो जाती। १५—यदि रोगी का उचित उपचार होता तो वह नहीं मरता।

द्वादश अभ्यास

प्रेरणार्थक (णिजन्त) क्रियाएँ

जब कोई अन्य व्यक्ति कर्त्ता को अपने काम में प्रेरणा करता है तब धातु से णिच् प्रत्यय होता है, यथा—"देवदत्त ओदनं पचति" (देवदत्त चावल पकाता है।) "यज्ञदत्तः पचन्तं देवदत्तं प्रेरयति—यज्ञदत्तः देवदत्तेन ओदनं पाचयति" (यज्ञदत्त देवदत्त से चावल पकवाता है।) णिच् में प्रेरणा अति आवश्यक है। यदि प्रेरणा का विधान न हो तो लोट् या लिङ् का प्रयोग होता है।

हमें कभी-कभी अकर्मक धातुओं से सकर्मक बनाने के लिए णिजन्त का प्रयोग करना पड़ता है। यथा—पार्वती अहर्निशं तपोभिर्ग्लपयति गात्रम्। (पार्वती रात दिन तप द्वारा अपने शरीर को क्षीण कर रही है।) यहाँ पर 'ग्लपयति' अकर्मक क्रिया 'ग्लायति' का णिजन्त प्रयोग है।

प्रेरणार्थक धातुओं के साथ मूल धातु के कर्त्ता में तृतीया होती है और कर्म में पूर्ववत् द्वितीया ही रहती है, क्रिया कर्त्ता के अनुसार होती है, यथा—(मूल) भृत्यः कार्यं करोति। (णिजन्त) देवदत्तः भृत्येन कार्यं कारयति।

प्रेरणार्थक धातु में शुद्ध धातु के अन्त में णिच् (अय) लग जाता है। धातु के अन्त में अय लगाकर परस्मैपद में "पठति" के समान रूप तथा आत्मनेपद में जायते के समान चलते हैं। णिजन्त धातुओं के रूप चुरादिगणीय धातुओं के समान होते हैं। धातु और तिङ् प्रत्ययों के बीच में 'अय' जोड़ दिया जाता है। णिजन्त धातुएँ प्रायः

२—हठ करना—आ+ग्रह्। ३—शरीरे चेदबाधास्यन्नासौ रुग्णोऽभविष्यत्। ४—गुरोश्चेदाज्ञामकरिष्ये······अभविष्यम्। ६—त्वञ्चेन्मम सदनमुपैष्यः मधुरं स्निग्धं चान्नं त्वामभोजयिष्यम्। ७—नासौ रामेण प्राणैर्व्ययोक्ष्यत। ८—दुश्चरितैश्चेन्न समगंस्यथाः सदाचाराान्नाभ्रंशिष्यत। ९—दक्षिणेन चेदयास्यन्न शकटं पर्यावर्तिष्यत्। १०—न चेत्कृष्णः साहाय्यं व्यतरिष्यत्।

उभयपदी होती हैं। यथा—लट्—पाठयति, पाठयते, लङ्—अपाठयत्—त, लृट्—पाठयिष्यति-ते, लोट्—पाठयतु-ताम्।

अणिजन्त क्रिया का कर्त्ता णिजन्त क्रिया के साथ प्रायः तृतीया विभक्ति में होता है, यथा—

१—रमेशः दोषं त्यजति, गुरुः रमेशेन दोषं त्याजयति।

२—रामः मारीचं हन्ति, सीता रामेण मारीचं घातयति।

३—नृपः धनं ददाति, मन्त्री नृपेण धनं दापयति।

४—पिता क्रीडनकं क्रीणाति, बालः पित्रा क्रीडनकं क्रापयति।

५—सुमन्त्रः रामं वनं नयति, राजा सुमन्त्रेण रामं वनं नाययति।

निम्नलिखित १२ धातुओं के प्रयोग में अणिजन्त क्रिया के कर्त्ता में द्वितीया विभक्ति ही होती है और हृ तथा कृ के साथ तृतीया अथवा द्वितीया विभक्ति होती है, यथा—

(१) गमन—पाण्डवाः वनं गच्छन्ति—कौरवाः पाण्डवान् वनं गमयन्ति।

(२) दर्शन—बालः चन्द्रं पश्यति—माता बालं चन्द्रं दर्शयति।

(३) श्रवण—नृपः गानं शृणोति—सा नृपं गानं श्रावयति।

(४) प्रवेश—ब्रह्मचारी गृहं प्रविशति—आचार्यः ब्रह्मचारिणं गृहं प्रवेशयति।

(५) आरोहण—सः वृक्षम् आरोहति—कृष्णः तं वृक्षम् आरोहयति।

(६) तरण—नाविकः गङ्गामुत्तरति—सः नाविकं गङ्गामुत्तारयति।

(७) ग्रहण—निर्धनः भोजनं गृह्णाति—भक्तः निर्धनं भोजनं ग्राहयति।

(८) प्राप्ति—बालः नगरं प्राप्नोति—पिता बालं नगरं प्रापयति।

(९) ज्ञान—सः शास्त्रं जानाति—गुरुः तं शास्त्रं ज्ञापयति।

(१०) [1]पठ् आदि अर्थों वाली—छात्रः शास्त्रम् अधीते—गुरुः छात्रं शास्त्रमध्यापयति।

(११) पान—शिशुः दुग्धं पिबति—माता शिशुं दुग्धं पाययति।

(१२) भोजन—[2](अद्, खाद्, भक्ष् को छोड़कर) कृष्णः अन्नं भुङ्क्ते—यशोदा कृष्णमन्नं भोजयति।

---

१ जल्प्, भाष्, विलप् आलप् और दृश् के प्रयोज्य कर्त्ता में द्वितीया होती है। यथा—'देवो रामं सत्यं जल्पयति।'

२ 'अद्' और 'खाद्' के प्रयोज्य कर्त्ता में भी तृतीया ही होती है यथा—'माता शिशुना मिष्टान्नं खादयति, आदयति, वा'।

(क) *हृ—भृत्यः भारं ग्रामं हरति—सः भृत्यं (भृत्येन) भारं ग्रामं हा[रयति]

(ख) कृ—सेवकः कार्यं करोति—स्वामी सेवकेन (सेवकं) कार्यं कारयति

विभिन्न अर्थों में—

सिंहः शिशुं भीषयते (शेर बच्चे को डराता है)।
यदुः दण्डेन शिशुं भाययति (यदु दण्ड से बच्चे को डराता है)।
विष्णुः बाणेन मधुं विस्माययति (विष्णु तीर से मधु को विस्मित करता है)।
सीता जनान् विस्मापयते स्म (सीता लोगों को विस्मित करती थी)।

व्याधः मृगान् रजयति (शिकारी मृगों को मारता है)।
तपस्वी तृणेन मृगान् रञ्जयति (तपस्वी तृण से मृगों को तृप्त करता है)।
यदुः खगान् रञ्जयति (यदु चिड़ियों को तृप्त करता है)।

स्था—स्थापयति	पच्—पाचयति	भी—भापयते	ह्री—ह्रेप[यति]
स्मृ—स्मारयति	पाल्—पालयति	रम्—रमयति	ह्वे—ह्वाय[यति]
घ्रा—घ्रापयति	बुध्—बोधयति	रुह्—रोहयति	हा—हापय[ति]
जन्—जनयति	ब्रू—वाचयति	स्ना—स्नापयति	भू—भावय[ति]
सीव्—सेवयति	नी—नाययति	आरभ्—आरम्भयति	बुध्—बोध[यति]

संस्कृत में अनुवाद करो—

१. सूर्य कमलों को विकसित करता है और कमलनियों को बन्द कर देता [है]। २. पम्पा का दर्शन मुझ दुःखी को भी सुख का अनुभव कराता है। ३. विश्वा[मित्र] ने राम का जनक की पुत्री सीता से विवाह कराया। ४. मैं दर्जी से एक [कुरता] सिलाऊंगा। ५. आप अपने भाषण को समाप्त कीजिए, श्रोतृगण ऊब गये। [..] नौकर धूप से पीड़ित स्वामी को ठंडे जल से स्नान कराता है (स्नपयति)। [..] भक्त ग्रामवासियों को कथा सुनाता है। ८. गुरु शिष्यों को वेद पढ़ाता है। [..] मन्त्री राजा से प्रजा का शासन करवाता है। १०. राष्ट्रपतिने राष्ट्र केनव-युव[कों]

*नी और वह् धातु के प्रयोज्य कर्त्ता में द्वितीया न होकर तृतीया ही होती [है]। यथा—भृत्यो भारं नयति वहति वा, (स भृत्येन भारं नाययति वाहयति वा)।

१. पङ्कजान्युन्मीलयति—कुमुदानि निमीलयति। २. सुखयति। ३. कौ[शिकः] रामेण सीता पर्यणाययत् ४. चोलकं सेवयिष्यामि। ५. अवसायय सपदि स्वा[मिन्] उद्विजते श्रोतारः १०. राष्ट्रपतिः राष्ट्रयुवजनमेष्यन्तीर्भियः प्राबोधयत्। १२. [..] पाययति। १४. अग्निं साक्षिणं कृत्वा। १५. संगीताचार्यो दारिकाभिर्गानमारम्भ[यति]

[ज]ानेवाले संकटों से सचेत किया। ११. मुनिजन कन्द और फलों द्वारा जीवन का [नि]र्वाह करते हैं। १२. मां बच्चे को दूध पिलाती है और चाँद दिखाती है। १३. [च]परासी मेरी डाक मेरे मकान पर प्रतिदिन सायंकाल पहुँचाता रहेगा (हारयिष्यति।) १४. पुरोहित अग्नि को साक्षी करके वर से वधू का मेल कराता है। १५. गायना-[चा]र्य ने लड़कियों का गान शुरू कराया।

त्रयोदश अभ्यास

सन्नन्त धातुएँ

"पढ़ना चाहता हैं" "सुनना चाहता हैं" इत्यादि संयुक्त क्रियाओं के बोध के लिए सन्नन्त क्रिया का प्रयोग होता है यदि "पढ़नेवाला" और "चाहनेवाला" वही व्यक्ति हो। अतः 'गोपालः रामस्य पठनमिच्छति' में 'पिपठिषति' नहीं होता क्यों कि 'पढ़नेवाला' और 'चाहनेवाला' एक ही व्यक्ति नहीं है। भिन्न-भिन्न व्यक्ति हैं।

'सन्' प्रत्यय लगने पर धातु को द्वित्व हो जाता है और धातु के स्वरूप में कुछ अन्तर भी हो जाता हैं। सन् प्रत्यय लगने पर परस्मैपदी धातु के रूप 'पठति' के समान और आत्मनेपदी के 'जायते' के समान चलते हैं। सन्नन्त धातु के आगे 'आ' प्रत्यय लगाने से संज्ञा शब्द बन जाता है, जैसे—'शास्त्रस्य जिज्ञासा' 'जलस्य पिपासा' और 'उ' प्रत्यय लगाने से विशेषण बन जाता है; जैसे—शास्त्रं जिज्ञासुः, जलं पिपासुः।

(भू) बुभूषति–होने की इच्छा करता है
(श्रु) शुश्रूषते–सुनने की इच्छा करता है
(श्रु) शुश्रूषति—सुनने की ,,
(ज्ञा) जिज्ञासते—जानने की ,,
(ग्रह्) जिघृक्षति – ग्रहण करने की ,,
(लभ्) लिप्सते—पाने की,, ,,
(ब्रू, वच्) विवक्षति—बोलने की ,,
(हन्) जिघांसति—मारने की इच्छा ,,
(धा) धित्सति–धारण करने की।
(दृश्) दिदृक्षते—देखने की ,,
(क्री) चिक्रीषति—खरीदने की,,
(बुध्) बुभुत्सते–जानने की इच्छा करता है
(लिख्) लिलेखिषति—लिखने की ,,
(पठ्) पिपठिषति–पढ़ने की।
(अधि+इ) अधिजिगांसते–अध्ययन की
(पा) पिपासति–पीने की इच्छा करता है
(वि+जि) विजिगीषते—जीतने की इच्छा करता है
(रुद्) रुरुदिषति—रोने की ,,
(प्रच्छ) पिपृच्छिषति—पूछने की ,,
(पच्) पिपक्षति – पकाने की ,,
(कृ) चिकीर्षति—करने की ,,

(वि+धा) विधित्सति—करने की इच्छा करता है
(हृ) जिहीर्षति—हरने की इच्छा करता है
(दह्) दिधक्षति—जलने की ,,
(स्था) तिष्ठासति—ठहरने की ,,
(भुज्) बुभुक्षते—खाने की इच्छा करता
(जीव) जिजीविषति—जीने की ,,
(शी) शिशयिषते—सोने की ,,
(स्वप्) सुषुप्सति—सोने की ,,
(मृ) मुमूर्षति—मरने की ,,

संस्कृत में अनुवाद करो—

१. तुम्हारा अधर फड़क रहा है (स्फुरति), तुम कुछ पूछना चाहते (पिपृच्छिषसि) २. यदि तुम बोलना चाहते हो (विवक्षसि) तो मैं तु समय दूंगा। ३. यदि तू राजाओं की कृपादृष्टि चाहता है (अनुग्रहं लिप्ससे तो उनकी इच्छा के अनुकूल काम कर (तच्छन्दमनुवर्तस्व) । ४. उन्होंने को टालना चाहा (पर्यजिहीर्षन्) तो भी शान्ति प्राप्त न कर सके (शर्म नाशक्नुवन्) । ५ तुझ दुष्टात्मा ने शिवजी के दोष बताने की इच्छा करते भी एक बात अच्छी कह दी। ६ विधाताने मानो सौन्दर्य को एक स्थान पर देख की इच्छा रखते हुए उसका निर्माण किया। ७ मनुष्य कर्म करता हुआ भी सौ जीने की इच्छा करे। ८. दूसरे दिन अपने अनुचर के भाव को जानना चाह हुई मुनि (वसिष्ठ) की धेनु ने हिमालय की गुफा में प्रवेश किया। ९. सभी प्रा जीने की इच्छा करते हैं ? मरने की इच्छा कौन रखता है? १० जो दुर्जन को व में करने की इच्छा करता है वह निश्चय पूर्वक कौतुक के साथ विष का पान कर चाहता है, कालानल को इच्छा पूर्वक चूमना चाहता है और साँपों के राजा आलिङ्गन करने का यत्न करता है।

५—विवक्षता दोषमपि च्युतात्मना त्वयैकमीशं प्रति साधु भाषितम्। ६ सा निर्मिता विश्वसृजा प्रयत्नादेकस्थसौन्दर्यदिदृक्षयैव। ७—कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः (यजुर्वेदे) ८—अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना मुनिहोमधेनुः...गौरीगुरो र्गह्वरमाविवेश (रघुवंशे) १०—हालाहलं खलु पिपासति कौतुकेन, कालानलं परिचुचुम्बिषति प्रकामम्। व्यालाधिपं च यतते परिरब्धुमद्धा यो दुर्जनं वशयितुं कुरुते मनीषाम्॥

चतुर्दश अभ्यास

यङन्त धातुएँ

फिर-फिर या अतिशय अर्थ को दिखाने के लिए धातु के आगे 'यङ्' प्रत्यय लगाया जाता है। यङ् प्रत्यय लगने से धातु को द्वित्व हो जाता है और धातु के रूप में भी कुछ परिवर्तन हो जाता है। यथा—पुनः-पुनः पिबति पेपीयते। यङन्त धातुओं के लट्, लोट् आदि लकारों में 'जायते' की भांति रूप होते हैं।

(तप्) तातप्यते—अत्यन्त तपता है
(घ्रा) जेघ्रीयते-बार-बार सूंघता है
(दह्) दन्दह्यते—अत्यन्त जलता है
(पच्) पापच्यते—बार-बार पकाता है
(नी) नेनीयते—बार-बार ले जाता है
(कृ) चेक्रीयते—बार-बार करता है
(रुद्) रोरुद्यते—बार-बार रोता है
(नृत) नरीनृत्यते–बार-बार नाचता है
(दृश्) दरीदृश्यते–बार-बार देखता है
(दा) देदीयते—बार-बार देता है
(सिच्) सेसिच्यते–बार-बार सींचता है
(जि) जेजीयते—बार-बार जीतता है
(दश्) दन्दश्यते–अत्यन्त डसता है
(गै) जेगीयते—बार-बार गाता है
(स्मृ) सास्मर्यते— ,, याद करता है
(शी) शाशय्यते— ,, सोता है
(चल्) चञ्चल्यते-इधर-उधर चलता है
(कृष्) चरीकृष्यते-बार-बार खेती करता है
(वृध्) वरीवृध्यते—बार-बार बढ़ता है
(हन्) जङ्घन्यते—फिर-फिर मारता है
(जप्) जञ्जप्यते—बार-बार जपता है
(गम्) जङ्गम्यते–टेढ़ा-मेढ़ा चलता है

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—वह बार-बार खेती करता है किन्तु दुर्भाग्यवश उसे लाभ कम होता है। २—वन जाते समय सीता बार-बार रोती थी। ३—मोहन अपने खेतों को बार-बार सींचता है, और खूब अन्न पैदा करता है। ४–वह सुन्दरी बार-बार नाचती है और लोग बार-बार उसे देखते हैं। ५ शोकाग्नि उसे बार-बार जलाती है। ८—मन्दिर में भक्त बार-बार ईश्वर का गान गाता है और मौनी पुनः पुनः माला जपता है। ९—श्यामा फूल को बार-बार सूँघती है। १०—पृथ्वीराज ने शत्रु को बार-बार जीता और क्षमा कर दिया।

पञ्चदश अभ्यास

कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य एवं भाववाच्य

संस्कृत में वाच्य तीन हैं—कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य सकर्मक धातुओं के रूप दो वाच्यों में होते हैं—कर्तृवाच्य में और कर्मवाच्य में और अकर्मक धातुओं के रूप भी दो वाच्यों में होते हैं—कर्तृवाच्य में और भाव वाच्य में।

१. कर्तृवाच्य में कर्त्ता मुख्य होता है और क्रिया कर्त्ता के अनुसार चलती है। कर्त्ता में प्रथमा और कर्म में द्वितीया होती है, जैसा कि पिछले अभ्यासों में बताया गया है।

२. कर्मवाच्य में कर्म मुख्य होता है और कर्म के अनुसार ही क्रिया का पुरुष, वचन और लिंग होता है। कर्म वाच्य में कर्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा और क्रिया कर्म के अनुसार होती है।

३. भाववाच्य में कर्त्ता में तृतीया (कर्म नहीं होता) और क्रिया में प्रथम पुरुष का एक वचन ही होता है।

कर्मवाच्य और भाववाच्य में सार्वधातुक लकारों (लट्, लोट्, लङ् और विधि लिङ्) धातु और प्रत्यय के बीच में 'य' लगजाता है (सार्वधातुके यक्) धातु का रूप सदा आत्मनेपद ही में चलता है। लृट् में 'य' नही लगता। धातु में 'य' लगा कर उसके रूप 'जायते' की भाँति होंगे। लृट् में 'स्यते' या 'इष्यते' लगेगा। उदाहरण— सफा ५५

(पठ्) पठ्यते, पठ्यताम्, अपठ्यत, पठ्येत, पठिष्यते।
(गम्) गम्यते, गम्यताम्, अगम्यत, गम्येत, गमिष्यते।

कर्मवाच्य 'गम्'

लट्				लोट्		
गम्यते	गम्येते	गम्यन्ते	प्र० पु०	गम्यताम्	गम्येताम्	गम्यन्ताम्
गम्यसे	गम्येथे	गम्यध्वे	म० पु०	गम्यस्व	गम्येथाम्	गम्यध्वम्
गम्ये	गम्यावहे	गम्यामहे	उ० पु०	गम्यै	गम्यावहै	गम्यामहै

लृट्				लङ्		
गमिष्यते	गमिष्येते	गमिष्यन्ते	प्र०पु०	अगम्यत	अगम्येताम्	अगम्यन्त
गमिष्यसे	गमिष्येथे	गमिष्यध्वे	म०पु०	अगम्यथाः	अगम्येथाम्	अगम्यध्वम्
गमिष्ये	गमिष्यावहे	गमिष्यामहे	उ०पु०	अगम्ये	अगम्यावहि	अगम्यावहि

क्रिया दो प्रकार की होती है, एक सकर्मक और दूसरी अकर्मक। जिन क्रियाओं के कर्म हों उन्हें सकर्मक और जिन के कर्म न हों उन्हें अकर्मक कहते है। जिन क्रियाओं में व्यापार और फल अलग-अलग रहें उन्हें सकर्मक और जिन में व्यापार और फल एक ही में रहें उन्हें अकर्मक कहते हैं, यथा—सकर्मक, 'बालः चन्द्रं पश्यति' इस वाक्य में 'पश्यति' क्रिया का व्यापार 'बाल' में है और 'पश्यति', क्रिया का फल 'चन्द्र' में। अकर्मक—'शिशुः शेते'। इस वाक्य में सोने का काम और सोना दोनों ही काम शिशु में हैं।

कर्मवाच्य की कुछ क्रियाएँ	भाववाच्य की कुछ क्रियाएँ
ग्रह्—(लेना)—गृह्यते	अस्—होना—भूयते
प्रच्छ्—(पूछना)—पृच्छ्यते	जागृ—(उठना)—जागर्य्यते
वच्—(कहना) उच्यते	शी—(सोना)—शय्यते
पृ—(भरना)—पूर्यते	वस्—(रहना)—उष्यते
पठ्—(पढ़ना)—पठ्यते	मस्ज्—(डूबना)—मज्ज्यते
श्रु—(सुनना)—श्रूयते	स्मृ—(याद करना)—स्मर्य्यते
कथ्—(कहना)—कथ्यते	हस्—(हँसना)—हस्यते
पा—(पीना)—पीयते	स्था—(ठहरना)—स्थीयते
नी—(ले जाना)—नीयते	भी—(डरना)—भीयते

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—मैंने उसको देखा—मुझसे वह देखा गया। २—रमेश क्यों नहीं पढ़ता है ? रमेश से क्यों नहीं पढ़ा जाता ? ३—तुम गुरु की आज्ञा क्यों नहीं मानते ? ४—क्या तुम से यह पुस्तक नहीं पढ़ी जाती ? ५—बिल्ली चूहे का पीछा करती है। ६—सज्जन सबसे आदर पाते हैं। ७—काम किस से किया जाता है ? ८—मुझ से नहीं ठहरा जाता। ९—तुम क्यों रोते हो ? १०—वह क्या जानता है ? ११—ऐसा सुना जाता है। १२—लोभ से क्रोध पैदा होता है। १३—उससे पुस्तकें क्यों नहीं पढ़ी जातीं ? १४—क्या शिशु सो गया ? १५—साधु अपने से बड़ों की सेवा करते हैं।

षोडश अभ्यास

वाच्यपरिवर्तन

कर्तृवाच्य की क्रिया यदि सकर्मक हो तो कर्मवाच्य में और यदि अकर्मक हो तो भाववाच्य में बदल दी जाती हैं तथा कर्म अथवा भाववाच्य की क्रियाएँ कर्तृवाच्य में बदली जा सकती हैं, यथा—स ग्रामं गच्छति (कर्तृ०) तेन ग्रामः गम्यते (कर्म०) स रोदिति (कर्तृ०) तेन रुद्यते (भाव०)। इसी प्रकार कर्म वाच्य या भाववाच्य उलटने से कर्तृवाच्य में हो जायँगे।

वाच्यपरिवर्तन करते समय क्रिया, उसका कर्त्ता, कर्त्ता के विशेषण कर्म और कर्म के विशेषण, इन सभी में परिवर्तन होता है, यथा—सुशीलः बालः स्वकीयं पाठं पठति (कर्तृ०) सुशीलेन बालेन स्वकीयः पाठः पठ्यते (कर्म०) (सुशील बालक अपना पाठ पढ़ता है)। इस वाक्य में कर्ता, कर्म, उनके विशेषण और क्रिया में परिवर्तन हुआ है।

वाच्यपरिवर्तन करते समय इन बातों पर विचार करो—

१ पहले कर्ता, कर्म और क्रिया ढूंढ़ो।

२—फिर कर्ता और कर्म के विशेषणों को देखो।

३ फिर देखो कि क्रिया किस वाच्य का है।

४—क्रिया देख कर वाच्य स्थिर करो। [कृत्य प्रत्ययान्त (तव्य, अनीय, यत्) की क्रिया कर्तृवाच्य में कभी नहीं होती।]

जब कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में क्रिया का एक ही प्रकार का रूप हो [जैसे 'स ग्रामः गतः' (कर्तृ०) तेन ग्रामः गतः' (कर्म) तब कर्ता और कर्म को देख कर वाच्य स्थिर करो।

५—कर्ता में तृतीया और कर्म में प्रथमा हो तो वाक्य कर्मवाच्य या भाववाच्य में है और यदि कर्ता में प्रथमा और कर्म में द्वितीया हो तो वाक्य कर्तृवाच्य में है।

६—क्रिया जिस काल या जिस लकार की होगी वाच्यान्तर में भी वह उसी काल और उसी लकार की होगी। जैसे—स उक्तवान् (कर्तृ०) तेन उक्तम् (कर्म०)। सा गच्छति (कर्तृ०) तया गम्यते (कर्म०)।

७—कर्ता या कर्म का जो विशेषण होगा उसमें वही विभक्ति और वचन होंगे जो कर्ता और कर्म के होंगे, यथा—शयाना: भुञ्जते मूर्खाः (कर्तृ०) शयानैः मूर्खैः भुज्यते (मूर्ख सोये-सोये खाते हैं)।

वाच्यान्तररचना

कर्मवाच्य बनाने में प्रथमान्त कर्त्ता को तृतीयान्त और द्वितीयान्त कर्म को प्रथमान्त कर देना पड़ता है। और कर्तृवाच्य में जो क्रिया कर्त्ता के अनुसार होती है वह कर्म के अनुसार बना देनी पड़ती है, यथा—अहं शिशुं पश्यामि (कर्तृ०) मया शिशुः दृश्यते (कर्म०)—मैं बच्चे को देखता हूँ।

कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य क्त प्रत्यय द्वारा भी बनाये जाते हैं, यथा—अहं सिंहम् अपश्यम्। (कर्तृ०) मया सिंहो दृष्टः (कर्म०)।

कृत् प्रत्ययान्त क्रियापद विशेषण के समान व्यवहृत होते हैं। उनसे कर्त्ता और कर्म में जो लिङ्ग, वचन और कारक होते हैं वे ही उन में भी होते हैं। जैसे—सा कथितवती। त्वया ग्रन्थः पठितः। तेन ग्रामो गन्तव्यः इत्यादि।

कर्तृवाच्य क्तवतु प्रत्ययान्त क्रिया को कर्मवाच्य या भाववाच्य में क्त प्रत्ययान्त कर देते हैं। यथा—पाण्डवा वनं गतवन्तः (कर्तृ०) पाण्डवैः वनं गतम् (कर्म०) (पाण्डव वन में गये।) अहं प्रस्थितवान् (कर्तृ०) मया प्रस्थितम् (भाव०) (मैंने यात्रा की।)

कर्तृवाच्य क्त प्रत्ययान्त क्रिया को कर्मवाच्य, या भाववाच्य बनाने में केवल विभक्ति बदलनी पड़ती है अर्थात् कर्त्ता में प्रथमा के स्थान पर तृतीया और कर्म में द्वितीया के स्थान पर कर्म के अनुसार प्रथमा और क्रिया कर्म के अनुसार होती है, यथा—स काशी-गतः (कर्तृ०)। तेन काशी गता (कर्म०)।

द्विकर्मक धातु का वाच्यान्तर

(गौणे कर्मणि दुह्यादेः) द्विकर्मक धातु से कर्मवाच्य बनाने में दुह्, याच्, पच्, दण्ड्, प्रच्छ्, चि, ब्रू, शास्, जि, मन्थ्, मुष्, धातुओं के गौण कर्म (Indirect object) में प्रथमा विभक्ति होती है और क्रिया उसी कर्म के अनुसार होती है; मुख्य कर्म में कोई परिवर्तन नहीं होता, यथा—गोपः गां दुग्धं दोग्धि (कर्तृ०) गोपेन गौः दुग्धं दुह्यते (कर्म०)। छात्रः गुरुं धर्मं पृच्छति (कर्तृ०) छात्रेण गुरुः धर्मं पृच्छ्यते (कर्म०)। यहाँ पर 'गाम्' तथा 'गुरुम्' गौण कर्म हैं।

गोविन्द = प्रेरक कर्ता, प्रयोजक भृत्यः = प्रयोज्य

(प्रधाने नीहृकृष्वहाम्) द्विकर्मक नी, हृ, कृष् और वह् धातुओं के मुख्य कर्म (Direct object) में प्रथमा विभक्ति होती है, गौण कर्म ज्यों का त्यों रहता है, यथा, कर्मकरः भारान् गृहं वक्ष्यति। (कर्त०) कर्मकरेण भाराः गृहं वक्ष्यन्ते (कर्म०) (मजदूर बोझ घर ले जायगा।)

णिजन्त द्विकर्मक धातु का वाच्यान्तर

(बुद्धिभक्षार्थयोः शब्दकर्मकाणां निजेच्छया) बुद्धयर्थक, भक्षार्थक और शब्दकर्मक धातुओं के दोनों कर्मों में से जिसमें इच्छा हो उसमें प्रथमा विभक्ति होती है, यथा—गुरुः छात्रं धर्मं बोधयति (कर्तृ०) गुरुणा छात्रः धर्मं बोध्यते, (अथवा) गुरुणा छात्रं धर्मः बोध्यते।

अन्य णिजन्त द्विकर्मक धातुओं के कर्मवाच्य बनाने में प्रयोज्य कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, यथा—गोविन्दो भृत्यं ग्रामं गमयति (कर्तृ०) गोविन्देन भृत्यः ग्रामं गम्यते (कर्म०) (गोविन्द नौकर को गाँव भेज रहा है)।

कर्तृवाच्य में जिन धातुओं के प्रयोज्य कर्त्ता में तृतीया विभक्ति होती है कर्मवाच्य में उनके अणिजन्त अवस्था के कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, यथा—श्रीकृष्णः पार्थेन जयद्रथं घातयति (श्रीकृष्ण अर्जुन से जयद्रथ को मरवाता है) (श्री कृष्णेन पार्थेन जयद्रथः घात्यते (कर्म०) श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन से जयद्रथ मरवाया जाता है।

हिन्दी में अनुवाद और वाच्य परिवर्तन भी करो—

१—सहैव दशभिः पुत्रैर्भारं वहति गर्दभी। २—जलानि सा तीरनिखातयूपा वहत्ययोध्यामनुराजधानीम्। ३—अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुषारा। ४—मृत्योर्बिभेषि किं मूढ न स भीतं विमुञ्चति। ५—न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः। ६—तौ दम्पती स्वां प्रति राजधानीं प्रस्थापयामास वशी वसिष्ठः। ७—किं तया क्रियते धेन्वा या न सूते न दुग्धदा। ८—न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्छति मारुतस्य। ९—भूषणाद्युपचारेण प्रभुर्भवति न प्रभुः। १०—स बाल आसीद्वपुषा चतुर्भुजः। ११—प्रजां संरक्षति नृपः सा वर्द्धयति पार्थिवम्। १२—पूर्वस्मादन्यवद्भाति भावाद्दाशरथिं स्तुवन्। १३—परायत्तः प्रीतेः कथमिव रसं वेत्तु पुरुषः। १४—सा सीतामङ्कमारोप्य भर्तृप्रणिहितेक्षणाम्।

मामेति व्याहरत्येव तस्मिन् पातालमभ्यगात् । १५—नोलूको प्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम् ।

सप्तदश अभ्यास

सोपसर्गक धातुएँ

क्रिया के साथ भिन्न-भिन्न उपसर्गों के लगने से भिन्न-भिन्न अर्थों का ज्ञान होता है। उपसर्गों के साथ धातु के योग से वाक्य में सौष्ठव और चमत्कृति आजाती है और साधारण धातुओं के प्रयोग की अपेक्षा भाषा मँझी हुई और परिष्कृत लगती है। साथ ही साथ छात्र धातुओं के अर्थ और रूपावली को कण्ठस्थ करने के परिश्रम से बच जाते हैं। उदाहरणार्थ—हृ धातु को लीजिए जिसका अर्थ "हरण करना" है। उस पर "प्र" उपसर्ग लगने से उसका अर्थ 'प्रहार कराना' हो जाता है "आ" उपसर्ग लगने से उसका अर्थ 'भोजन करना' हो जाता है। अतः कहा गया है—

"उपसर्गेण धात्वर्थो वलादन्यत्र नेयते ।
प्रहाराहार-संहार-विहार-परिहारवत् ॥"

उपसर्गों के लगाने से धातुओं के अर्थों में एक और विलक्षणता यह आ जाती है कि कहीं कहीं अकर्मक धातुएँ भी सकर्मक हो जाती हैं, यथा—अकर्मक 'भू' का अर्थ (होना) है, मगर 'अनु' उपसर्ग लगाने से इसका अर्थ 'अनुभव करना' सकर्मक हो जाता है। जैसे—पापी दुःखमनुभवति (पापी दुःख भोगता है)।

अय् (जाना) परा+अय् (भागना) अश्वारोहः पलायते।

अर्थ (मांगना) प्र+अर्थ (प्रार्थना करना) स्वर्गीतिं प्रार्थयन्ते (भ० गीतायाम्)

अभि+अर्थ (इच्छा करना) यदि सा तापसकन्यका अभ्यर्थनीया (शाकुन्तले)।

अभि+अर्थ (प्रार्थना करना) माम् अनभ्यर्थनीयमभ्यर्थयते (मालविकाग्निमित्रे)।

अस् (फेंकना)—अभि+अस् (रटना) छात्रः पाठमभ्यस्यति।

निर्+अस् (हटाना) सः धूर्तं निरस्यति।

आप् (पाना)—

वि+आप् (फैलना) रजः आकाशं व्याप्नोति।

सम्+आप् (पूरा होना) यावत्तेषां समाप्येरन् यज्ञाः पर्याप्तदक्षिणाः (रघुवंशे)।

आस् (बैठना)—

अधि+आस् (बैठना) स राजसिंहासनमध्यास्ते।

उप+आस् (पूजा करना) भक्ताः शिवमुपासते।

अनु+आस् (सेवा करना) सखीभ्यामन्वास्यते। (शाकुन्तले)।

इ (जाना)—

अव+इ (जानता) अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः (रघुवंशे)।

प्रति+इ (विश्वास करना) सः मयि न प्रत्येति।

उत्+इ (उगना) उदेति सविता ताम्रस्ताम्र एवास्तमेति च।

उप+इ (प्राप्त करना) उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः (पञ्चतन्त्रे)।

अभि+इ (सामने आना) सः स्वामिनमभ्येति।

अनु+इ (पीछे जाना) स शब्दार्थ इव तमन्वेति।

अप+इ (दूर होना) सूर्योदये अन्धकारः अपैति।

अभि+उप+इ (प्राप्त होना) व्यतीतकालस्त्वहमभ्युपेतस्त्वामर्थिभावादिति मे विषादः (रघुवंशे)।

ईक्ष् (देखना)—

अप+ईक्ष् (प्रतिज्ञा करना) किमपेक्ष्य फलं पयोधरान्ध्वनतः प्रार्थयते मृगाधिपः?

उप+ईक्ष् (खयाल न करना) अलसः कर्तव्यमुपेक्षते।

परि+ईक्ष् (परीक्षा लेना) अग्नौ परीक्ष्यते स्वर्णं काव्यं सदसि तद्विदाम्।

प्रति+ईक्ष् (इन्तजार करना) क्षणं प्रतीक्षस्व।

निः+ईक्ष् (देखना) स साग्रहं त्वां निरैक्षत।

अव+ईक्ष् (रक्षा करना) श्लाघ्यां दुहितरमवेक्षस्व जानकीम् (उत्तररामच०)।

अव+ईक्ष् (आदर करना) त्रिदिवोत्सुकयाप्यवेक्ष्य माम् (रघुवंशे)।

अव+ईक्ष् (जांच करना) स कदाचिदवेक्षितप्रजः (रघुवंशे)।

कृ (करना)—

अनु+कृ (नकल करना) भारतवर्षीया दासवदन्वकुर्वन्नाङ्गलानां भाषां, चर्यां, परिकर्म च।

अधि+कृ (अधिकार करना) ते नाम जयिनो ये शरीरस्थान् रिपूनधिकुर्वते।

अप+कृ (बुराई करना) अथवा सैनिकाः केचिदपकुर्युर्युधिष्ठिरम् (महाभारते)।

तिरस्+कृ (अनादर करना) किमर्थं तिरस्करोषि माम् ?
नमस्+कृ (नमस्कार करना) देवदेवं नमस्कुरु ।
प्रति+कृ (इलाज करना) आगतं तु भयं वीक्ष्य प्रतिकुर्याद् यथोचितम् ।
उप+कृ (उपकार करना) किं ते भूयः प्रियमुपकरोतु पाकशासनः ? (विक्रमो०)
वि+कृ (विकार पैदा करना) चित्तं विकरोति कामः ।
परि+ष्कृ (सजाना) रथो हेमपरिष्कृतः (महाभारते) ।
अलम्+कृ (शोभा बढ़ाना) रामचन्द्रः वनमिदं पुनरलङ्करिष्यति ?
आविः+कृ (ढूँढना) वायुयानमिदं केन धीमताऽऽविष्कृतं भुवि ।
निर्+आ+कृ (हटाना) स निराकरोति दोषान् ।

च्विप्रत्ययान्त कृ—

१—अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ।
२—वीरवरः देव्यै स्वपुत्रमुपहारीकरोति ।
३—सफलीकृतं भवता मम जीवनं शुभागमनेन ।
४—स्थिरीकरोमि ते वासस्थानम् ।
५—कदा रामभद्रो वनमिदं सनाथीकरिष्यति ?
६—विरहकथा आकुलीकरोति मे हृदयम् ।

गम् (जाना)—काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् (हितोपदेशे) ।
अनु+गम् (पीछा करना) वत्स मामनुगच्छ ।
अव+गम् (जानना) नावगच्छामि ते मतिम् ।
अधि+गम् (प्राप्त करना) अधिगच्छति महिमानं चन्द्रोऽपि निशापरिगृहीतः ॥
(मालविकाग्निमित्रे)

अभि+उप+गम् (स्वीकार होना) अपीमं प्रस्तावमभ्युपगच्छसि ?
अभि+आ+गम् (आना) अस्मद् गृहानद्यैकोऽभ्यागतोऽभ्यागमत् ।
आ+गम् (आना) स्नानार्थं स नदीमागच्छत् ।
प्रति+गम् (लौटना) कदा सा प्रतिगमिष्यति ?
प्रति+आ+गम् (लौटना) माणवकः कुटीरं प्रत्यागच्छति ।

निर्+गम् (बाहर जाना) स गृहान्निर्गतः।
सम्+गम् (मिलना) (क) संगत्य कलं क्वणन्ति पक्षिणः।
(ख) प्रयागे यमुना गङ्गां संगच्छति।
उत्+गम् (उड़ना) पक्षी आकाशमदगच्छत्।
प्रति+उद्+गम् (अगवानी के लिए जाना) लङ्का तो निवर्तमानं श्रीरामं भरतः प्रत्युज्जगाम

ग्रह् (लेना)

नि+ग्रह् (दंड देना) शीघ्रमयं दुष्टवणिक् निगृह्यताम्।
अनु+ग्रह् (कृपा करना) गुरो मामनुगृहाण।
वि+ग्रह् (लड़ाई करना) विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा बली य इत्थमस्वास्थ्यमहर्दिवं दिवः (शिशुपालवधे)।
प्रति+ग्रह् (स्वीकार करना) तथेति प्रतिजग्राह प्रीतिमान्सपरिग्रहः।
आदेशं देशकालज्ञः शिष्यः शासितुरानतः॥ (रघुवंशे)

चर् (चलना)—

अति+चर् (विरुद्ध आचरण करना) पुत्राःपितॄनत्यचरन् नार्यश्चात्यचरन् पतीन्
आ+चर् (व्यवहार करना) प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।
अनु+चर् (पीछा करना) सत्यमार्गमनुचरेत्।
उत्+चर् (कहना) स धर्मोपदेशं नोच्चरते।
परि+चर् (सेवा करना) भृत्याः स्वामिनं परिचरन्ति।
सम्+चर् (आना-जाना) भूयांसो जना मार्गेणानेन संचरन्ते।
प्र+चर् (प्रचार होना) यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति॥
उप+चर् (सेवा करना) पार्वती अहोरात्रं शिवमुपचचार।

चि (चुनना)—

उप+चि (बढ़ाना) अधोधः पश्यतः कस्य महिमा नोपचीयते (हितोपदेशे)।
अप+चि (घटना) राजहंस तव सैव शुभ्रता चीयते न च नचापचीयते।
अव+चि (चुनना) सा उद्याने प्रतानिनीभ्यो बहूनि कुसुमान्यवाचिनोत्।
निस्+चि (निश्चय करना) वयं निश्चिनुमः न वयं विश्रमिष्यामो यावत् स्वातन्त्र्यं प्रतिलभामह इति।

अभि+उद्+चि (इकट्ठा होना) अभ्युच्चितास्तर्काः प्रभावुका भवन्ति ।
आ+चि (बिछाना) भृत्यः शय्यां प्रच्छदेनाचिनोति ।
उप+चि (बढ़ाना) मांसाशिनो मांसमेवोपचिन्वन्ति न प्रज्ञाम् ।
वि+नि+चि (निश्चय करना) विनिश्चेतुं शक्ये न सुखमिति वा दुःखमिति वा ।
सम्+चि (इकट्ठा करना) रक्षायोगादयमपि तपः प्रत्यहं संचिनोति । (शाकु०)
प्र+चि (पुष्ट होना) स पुष्टिप्रदमन्नं भुङ्क्ते तस्मात्प्रचीयन्ते तस्य गात्राणि ।

ज्ञा (जानना)—
अनु+ज्ञा (आज्ञा देना) तत् अनुजानीहि मां गमनाय (उत्तररामचरिते) ।
प्रति+ज्ञा (प्रतिज्ञा करना) कथं वृथा प्रतिजानीषे ।
अव+ज्ञा (अनादर करना) अवजानासि मां यस्मादतस्ते न भविष्यति ।
मत्प्रसूतिमनाराध्य प्रजेति त्वां शशाप सा ।। (रघुवंशे) ।
अप+ज्ञा (झुठाना) शतमपजानीते ।

तॄ (तैरना)—
अव+तॄ (उतारना) अवतरति आकाशात् वायुयानम् ।
उत्+तॄ (तैरना) स अनायासं गङ्गामुदतरत ।
वि+तॄ (देना) वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्याम् (उत्तररामचरिते) ।
सम्+तॄ (तैरना) स हि घटिकाप्रायं नद्यां सन्तरेत् ।

दिश् (देना)—
आ+दिश् (आज्ञा देना) गुरुः शिष्यान् आदिशति ।
उप+दिश् (उपदेश देना) उपदिशतु मां धर्मशास्त्रम् ।
सम्+दिश् (संदेश देना) किं संदिशतु स्वामी ?
निर्+दिश् (बताना) यथाभिलषितं स्थानं निर्दिशेत् ।

दा (देना)
आ+दा (स्वीकार करना) नृपतिः प्रकृतीरवेक्षितुं व्यवहारासनमाददे युवा ।
(रघुवंशे)
आ+दा (कहना आरम्भ करना) अर्थ्यामर्थपतिर्वाचमाददे वदतांवरः । (रघुवंशे)

धा (धारण करना)—
अभि+धा (कहना) पयोऽपि शौण्डिकीहस्ते वारुणीत्यभिधीयते (हितोपदेशे) ।

अपि+धा (बंदकरना) द्वारं पिधेहि अतिकालमागतास्ते मा प्रविक्षन्निति।

अव+धा (ध्यान देना) गोपालः पठने नावधत्ते।

सम्+धा (सन्धि करना) बलीयसा शत्रुणा संदध्यात् विगृह्णानो हि ध्रुवमुत्सीदेत्।

वि+धा (करना) सहसा विदधीत न क्रियाम् (किराते)।

वि+परि+धा (बदलना) विपरिधेहि वासांसि मलिनानि तानि जातानि।

आ+धा (गिरवी रखना) धनमिच्छामि, तन्मया साधवे स्वं गृहमाधातव्यं भविष्यति।

परि+धा (पहनना) उत्सवे नरः नवं वस्त्रं परिदधाति।

नि+धा (विश्वास रखना) निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे (रघु०)।

नि+धा (नीचे बैठना) सलिलैर्निहितं रजः क्षितौ (घटकारिकाव्ये)।

नि+धा (अमानत रखना) काशीं गच्छामि, अवशिष्टं धनं विश्वासे ग्रामवणिजि निधास्यामि।

नी (ले जाना)—

अनु+नी (मनाना) अनुनय मित्रं कुपितम्।

अभि+नी (अभिनय करना) गोपालः सीतायाः पाठमभिनयेत्।

आ+नी (लाना) आनय जलं पूजार्थम्।

उप+नी (लाना) उपनयति मुनिकुमारकेभ्यः फलानि (कादम्बर्याम्)

उप+नी (यज्ञोपवीत देना) गुरुः शिष्यमुपानयत्।

उप+नी (पास में लाना) उपनय रथं यावदारोहामि।

उप+आ+नी (समर्पण करना) स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत्पिण्डमिवामिषस्य (रघुवंशे)।

परि+नी (ब्याह करना) नलो दमयन्तीं परिणिनाय।

प्र+णी (बनाना) वाल्मीकिः रामायणं प्रणिनाय।

वि+अप+नी (दूर करना) सन्मार्गालोकनाय व्यपनयतु स वस्तामसीं वृत्तिमीशः।

अप+नी (हटाना) अपनेष्यामि ते दर्पम्।

उद्+नी (ऊँचा उठाना) अवदातेनानेन चरितेन कुलमुन्नेष्यसि।

निर्+नी (निर्णय करना) कलहस्य मूलं निर्णयति।

पत् (गिरना)—

आ+पत् (आ पड़ना) अहो, कष्टमापतितम्!

उत्+पत् (उड़ना) प्रभाते पक्षिणः उत्पतन्ति।

प्र+नि+पत् (प्रणाम करना) उपाध्यायचरणयोः प्रणिपतति शिष्यः।

नि+पत् (गिरना) क्षते प्रहारा निपतन्त्यभीक्ष्णम्।

सम्+नी+पत् (इकट्ठा होना) नाना देशस्था नयज्ञा इह सनिपतिष्यन्ति।

सम्+नी+पत् (टूट पड़ना) अभिमन्युः शत्रुसैन्ये संन्यपतत्, शतधा च तद् व्यदलयत्।

वि+नि+पत् (पतन होना) विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः।

पद् (जाना)—

प्र+पद् (भजना) ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् (गीतायाम्)।

उत्+पद् (उत्पन्न होना) दुग्धात् नवनीतम् उत्पद्यते।

वि+पद् (विपद् में पड़ना) स विपद्यते (विपन्नो भवति)।

उप+पद् (योग्य होना) नैतत् त्वय्युपपद्यते (गीतायाम्)।

भू (होना)—

अनु+भू (अनुभव करना) सन्तः सुखम् अनुभवन्ति।

आवि+भू (निकलना) आविर्भूते शशिनि तमो विलीयते।

अभि+भू (तिरस्कार करना) कस्त्वामभिभवितुमिच्छति बलात्?

परा+भू (हराना) बलवान् दुर्बलान् पराभवति।

प्रादुः+भू (पैदा होना) प्रादुर्भवति भगवान् विपदि।

परि+भू (तिरस्कार करना) रावणः विभीषणं परिबभूव।

प्र+भू (समर्थ होना) प्रभवति शुचिर्बिम्बोद्ग्राहे मणिः (उत्तररामचरिते)।

कुसुमान्यपि गात्रसंगमात् प्रभवन्त्यायुरपोहितुं यदि।
न भविष्यति हन्त साधनं किमिवान्यत्प्रहरिष्यतो विधेः॥ (रघुवंशे)।

प्र+भू (निकलना) हिमवतो गङ्गा प्रभवति।

सम्+भू (पैदा होना) सम्भवामि युगे युगे (गीतायाम्)।

सम्+भू (मिलना) सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा। (शिशु०)

अनु+भू (मालूम करना) अनुभवामि एतत्।

वि+भावि (देखना) नाहं ते तर्के दोषं विभावयामि ।

परि+भावि (विचार करना) गुरोर्भाषितं मुहुर्मुहुः परिभावय ।

च्विप्रत्ययान्त भू के प्रयोग—

१—भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ?

२—दृढीभवति शरीरं व्यायामेन ।

३—भवतां शुभागमनेन पवित्रीभूतं मे गृहम् ।

४—तपसा भगवान् प्रत्यक्षीभवति ।

विश् (प्रवेश करना)—

अभि+नि+विश् (सम्मिलित होना) छात्रः पाठम् अभिनिविशते ।

उप+विश् (बैठना) आसन उपविशतु भवान् ।

प्र+विश् (प्रवेश करना) संन्यासी वनान्तरं प्राविशत् ।

मन् (सोचना)—

अव+मन् (अनादर करना) नावमन्येत निर्धनम् ।

अनु+मन् (आज्ञा या सलाह देना) राजन्यान्स्वपुरनिवृत्तयेऽनुमेने (रघुवंशे)

सम्+मन् (आदर करना) कच्चिदग्निमिवानाय्यं काले संमन्यसेऽतिथिम् ।

(भट्टिकाव्ये)

मन्त्र् (सलाह करना)—

अभि+मन्त्र् (संस्कार करना) जलम् अभिमन्त्र्य ददौ ।

आ+मन्त्र् (विदा होना) तात, लताभगिनीं वनज्योत्स्नां तावदामन्त्रये ।

(शाकुन्तले)

आ+मन्त्र् (बुलाना) आमन्त्रयध्वं राष्ट्रेषु ब्राह्मणान् (महाभारते) ।

नि+मन्त्र् (न्यौता देना) ब्राह्मणान् निमन्त्रस्व ।

रम् (क्रीडा करना)—

वि+रम् (हटाना) विरम विरम पापात् ।

उप+रम् (मरना) स शोकेन उपरतः ।

उप+रम् (लगाना) यत्रोपरमते चित्तम् (भगवद्गीतायाम्) ।

वद् (कहना)—

अप+वद् (निन्दा करना) दुर्जनः सज्जनमपवदति ।

लोकापवादो बलवान् मतो मे (रघुवंशे) ।

वि+वद् (झगड़ा करना) कृषकाः क्षेत्रे विवदन्ते ।

अनु+वद् (अनुवाद करना) स विद्वान् वेदमनुवदति ।

प्रति+वद् (उत्तर देना) तान् प्रत्यवादीदथ राघवोऽपि ।

लप् (बोलना)—

अप+लप् (छिपाना) दुष्टः सत्यमपलपति ।

आ+लप् (बातचीत करना) साधुः साधुना सह आलपत् ।

प्र+लप् (बकवाद करना) उन्मत्ताः सदा प्रलपन्ति ।

वि+लप् (रोना) विललाप स वाष्पगद्गदं सहजामप्यपहाय धीरताम् (रघुवंशे) ।

सम्+लप् (बातचीत करना) संलापितानां मधुरैः वचोभिः ।

वह् (ले जाना)—

उद्+वह् (ब्याह करना) इति शिरसि स वामं पादमाधाय राज्ञा-
मुदवहदनवद्यां तामवद्यादपेतः (रघुवंशे) ।

अति+वह् (बिताना) किं या मयापि न दिनान्यतिवाहितानि (मालतीमाधवे)।

आ+वह् (पैदा करना) महदपि राज्यं सुखं नावहति ।

आ+वह्—(पहनना) मण्डनमावहन्तीम् (चौरपञ्चासिकायाम्) ।

आ+वह्—(धारण करना) मा रोदीर्धैर्यमावह (मार्कण्डेयपुराणे) ।

निः+वह् (चलाना) स कार्यमेतत् निर्वहति ।

प्र+वह् (बहना) अनेन मार्गेण गङ्गा प्रावहत् ।

वृत् (होना)—

अनु+वृत् (अनुसरण करना) साधवः साधुमनुवर्तन्ते ।

आ+वृत् (वापस आना) अनिन्द्या नन्दिनी नाम धेनुराववृते वनात् (रघुवंशे) ।

आ+वृत्+णिच् (माला फेरना) अक्षवलयमावर्तयन्तं तापसकुमारमदर्शम् ।

परि+वृत् (घूमना) चक्रवत् परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च ।

प्र+वृत् (प्रवृत्त होना) प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः ।

नि+वृत् (रुकना) प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षणात् (मनुस्मृतौ) ।

नि+वृत् (लौटना) न च निम्नादिव सलिलं निवर्तते मे ततो हृदयम् (शाकु०)
यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम (भ० गीतायाम्) ।

प्रति+आ+वृत् (लौटना) अचिरं स प्रत्यावर्तिष्यते ।

प्र+वृत् (लगाना) प्रवर्तताम् प्रकृतिहिताय पार्थिवः (शाकुन्तले)।

अपि स्वशक्त्या तपसि प्रवर्तसे ? (कुमारसंभवे)।

प्र+वृत् (शुरू होना) ततः प्रववृते युद्धम्।

परि+वृत् (घूमना) चक्रवत् परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च।

वस् (रहना)—

अधि+वस् (रहना) रामः अयोध्यामध्यवसत्।

उप+वस (उपवास करना) स एकादश्यामुपवसति।

,, ,, (समीप रहना) ब्राह्मणः ग्रामम् उपवसति।

नि+वस् (रहना) स कुत्र निवसति ?

प्र+वस् (परदेश में रहना) विधाय वृत्तिं भार्यायाः प्रवसेत्कार्यवान्नरः (मनु०)

सद् (जाना)—

अव+सद् (हिम्मत हारना) प्रतिहतप्रयत्नाः क्षुद्रमनसः प्रवसीदन्ति।

उत्+सद् (नाश होना) उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्।

उत्+सद्+णिच् (नष्ट करना) अयमसत्येऽभिनिवेशो नियतमुत्सादयिष्यति व:

आ+सद् (पाना) पान्थः कूपमेकमाससाद।

प्र+सद् (प्रसन्न होना) प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वम् (दुर्गासप्तशत्याम्)।

वि+सद् (दुखी होना) यूयं मा विषीदत।

नि+सद् (बैठना) यल्लघु तदुत्प्लवते यद् गुरु तन्निषीदति।

उप+सद् (सेवा में जाना) उपसेदिवान् कौत्सः पाणिनिम् चिरं तत्

व्याकरणमधिजगिवान्।

प्रति+आ+सद् (अति समीप आना) प्रत्यासीदति परीक्षा, त्वं च पाठेऽनवहितः

सृ (जाना)—

अप+सृ (हटना) इतो दूरमपसर।

निः+सृ (निकलना) क्षतात् रक्तं निःसरति।

अनु+सृ (पीछा करना) वनं यावदनुसरति।

प्र+सृ (फैलना) प्रससार यशस्तव।

अभि+सृ (पति के पास जाना) सा अभिसरति।

स्था (ठहरना)—

अधि+स्था (रहना) साधवः साधुतामधितिष्ठन्ति।

अनु+स्था (करना) मनसापि पापकार्यं नानुतिष्ठेत् ।

अव+स्था (ठहरना) भगवन् ! नावतिष्ठतामत्र ।

उत्+स्था (उठना) उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगत्पते !

प्र+स्था (रवाना होना) प्रीतः प्रतस्थे मुनिराश्रमाय ।

उप+स्था (आना) भोजनकाल उपतिष्ठसे कार्यकाले क्व यासि ?

उप+स्था (पूजा करना) स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती (रघुवंशे) ।

हृ (चुरा ले जाना)—

अनु+हृ (नकल करना) पैतृकमश्वा गतमनुहरन्ते ।

अप+हृ (चुराना) चौरः धनमपहरति ।

अप+हृ (दूर करना) अपह्रिये खलु परिश्रमजनितया निद्रया (उत्तररा०) ।

आ+हृ (लाना) वित्तस्य विद्यापरिसंख्यया मे कोटीश्चतस्रो दश चाहरेति ।
(रघुवंशे) ।

उत्+हृ (उद्धार करना) मां तावदुद्धर शुचो दयिताप्रवृत्त्या (विक्रमोर्वशीये) ।

उत्+आ+हृ (उदाहरण देना) त्वां कामिनां मदनदूतिमुदाहरन्ति (विक्रमो०) ।

अभ्यव+हृ (खाना) सक्तून् पिब धानाः खादेत्यभ्यवहरति (पा० अष्टाध्यायी) ।

परि+हृ (छोड़ना) स्त्रीसन्निकर्षं परिहर्तुमिच्छन्नन्तर्दधे भूतपतिः सभूतः (कुमा०)

उप+हृ (भेंट देना) देवेभ्यः बलिमुपहरेत् ।

प्र+हृ (मारना) कृष्णः कंस शिरसि प्राहरत् ।

वि+हृ (क्रीड़ा करना) विहरति हरिरिह सरसवसन्ते । (गीतगोविन्दे)

स कदाचिदवेक्षितप्रजः सह देव्या विजहार सुप्रजः (रघुवंशे) ।

सम्+हृ (पीछे हटाना) न हि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनः । (हितो०) ।

सं+हृ (रोकना) क्रोध प्रभो संहर संहरेति यावद् गिरः खे मरुतां चरन्ति ।

तावत्स वह्निर्भवनेत्रजन्मा भस्मावशेषं मदनं चकार (कुमारसंभवे) ।

क्रम् (चलना)—

अति+क्रम् (गुजरना) यथा यथा यौवनमतिचक्राम (कादम्बर्याम्) ।

" (उल्लङ्घन करना) कथमतिक्रान्तमगस्त्याश्रमपदम् (महावीरचरिते) ।

अप+क्रम् (दूर हटना) नगरादपक्रान्तः (मुद्राराक्षसे) ।

आ+क्रम् (आक्रमण करना) परस्थानेष्वाक्रामंस्तांस्तान्जनपदाञ्जयी (रघुवंशे)

निस् + क्रम् (निकलना) इति निष्क्रान्ताः सर्वे।

उप + क्रम् (आरंभ करना) राज्ञस्तस्याज्ञया देवी वसिष्ठमुपचक्रमे (भट्टिकाव्ये)।

परि + क्रम् (परिक्रमा करना) स परिक्रामति।

वि + क्रम् (विक्रम दिखाना) विष्णुस्त्रेधा विचक्रमे।

सम् + क्रम् (संक्रमण करना) कालो ह्ययं संक्रमितुं द्वितीयं सर्वोपकारक्षममाश्रमं ते। (रघुवंशे)।

द्रु (पिघलाना) द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः (मालतीमाधवे)।

उप + द्रु (आक्रमण करना) प्राग्ज्योतिषमुपाद्रवत् (महाभारते)।

वि + द्रु (भागना) जलसङ्घात इवासि विद्रुतः (कुमारसम्भवे)।

क्षिप् (फेंकना) किं कूर्मस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मां न क्षिपत्येष यत् (मुद्राराक्षसे)।

अव + क्षिप् (निन्दा करना) मदलेखामवक्षिप्य (कादम्बर्याम्)।

आ + क्षिप् (अपमान करना) अरेरे राधागर्भभारभूत ! किमेवमाक्षिपसि। (वेणीसंहारे)

उत् + क्षिप् (ऊपर फेंकना) बलिमाकाश उत्क्षिपेत् (मनुस्मृतौ)।

सम् + क्षिप् (संक्षिप्तकरना) संक्षिप्येत क्षण इव कथं दीर्घयामा त्रियामा (मेघ०)।

बन्ध् (बाँधना, पहनना) न हि चूड़ामणिः पादे प्रभवामीति बध्यते (पञ्चतन्त्रे)।

उत् + बन्ध् (बाँधना) पादपे आत्मानमुद्बध्य व्यापादयामि (रत्नावल्याम्)।

निर् + बन्ध् (जोरदार माँग करना) निर्बन्धपृष्टः स जगाद सर्वम् (रघुवंशे)।

सम् + बन्ध् (मेल होना) सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः (रघुवंशे)।

रुध् (ढाँकना)—

अनु + रुध् (आज्ञा मानना) अनुरुध्यस्व भगवती वसिष्ठस्यादेशम् (उत्तररामचरिते)।

वि + रुध् (विरोध करना) विपरीतार्थधीर्यस्मात् विरुद्धमतिकृन्मतम्।

संस्कृत में अनुवाद करो---

१—इस बरतन में एक प्रस्थ चावल समा सकते हैं।* २—प्रयाग में यमुना गङ्गा से मिलती हैं (सम् + गम् + परस्मै०)। ३—लङ्का से लौटते हुए राम को लिवा लाने के लिये (प्रति + उद् + गम्) भरत आगे बढ़ा। ४—दुष्यन्त ने देखा कि

*इदं भाजनं तण्डुलप्रस्थं सम्भवति।

शकुन्तला अपनी सखियों के साथ विहार कर रही है (वि+हृ)। ५—क्या तुम्हारे घर आज एक पाहुना (प्राघुणिकः) आया है (अभि+आ+गम्) ? ६—सज्जन अपकार करनेवाले के साथ भी उपकार करते हैं (उप+कृ)। ७—क्या आपको यह प्रस्ताव स्वीकृत है (अभि+उप+गम्)? जी हाँ हमारा इससे कोई विरोध नहीं।† ८—उत्सव के अवसर पर स्त्रियाँ अपने को वस्त्रों तथा अलङ्कारों से सजाती हैं। ९—सती स्त्रियाँ अपने पतियों की सेवा करती हैं (उप+चर्)। १०—श्रीमान् जी को मैं कौन व्यक्ति जानूं (अव+गम्) ? ११—सूर्य निकल रहा है और अँधेरा दूर हो रहा है। १२—गङ्गा और यमुना प्रयागराज में मिलती हैं (सम्+गम्+आत्म०) १३—यह सुन्दर पुस्तक किसने बनाई है (प्र+नी) ? १४—उसने दोनों हाथ जोड़ कर (समा+नी) गुरु को प्रणाम किया (प्र+नम्)। १५—भोजन के समय आ जाते हो (उप+स्था) काम के समय कहाँ चले जाते हो ?

तृतीयोऽध्यायः

प्रथम अभ्यास (कृदन्त)

कर्तृवाचक और भाववाचक कृदन्त

'करनेवाला', 'जानेवाला' आदि कर्तृवाचक कृदन्त शब्दों के लिए 'तृच्' (तृ), अण् आदि निम्नलिखित प्रत्ययों से बने हुए शब्द प्रयोग में लाने चाहिएँ। इन कर्तृवाचक कृदन्तों के कर्म का इनके साथ समास भी हो जाता है। यथा—

(असमस्त) शास्त्राणां ज्ञातारः क्व निवसन्ति (शास्त्रों के जाननेवाले कहाँ रहते हैं ?) वा.

(समस्त) शास्त्रज्ञातारः क्व निवसन्ति (शास्त्रों के जाननेवाले कहाँ रहते हैं ?)

(ण्वुल् तृचौ) 'वाला' के अर्थ में कर्तृवाच्य में धातुओं से ण्वुल् (अक) और तृच् (तृ) ये दो प्रत्यय होते हैं, यथा—कर्तृ—कर्त्ता, योधृ=योद्धा, भू=भविता नी=नेता, विद्=वेत्ता, सेव्=सेविता, गम्=गन्ता इत्यादि। ण्वुल् (अक) पच्= पाचकः, (पाचिका स्त्री०) पाठकः, नायकः, गायकः, पालकः, दायकः, सेवकः, जनकः, रोधकः इत्यादि। ण्वुल् (अक) और 'तृच्' (तृ) प्रत्ययान्त शब्दों के रूप कर्त्ता के अनुसार तीनों लिङ्गों में होते हैं।

---

†ननु नाहमेनं विरुन्धे।

(कर्मण्यण्) कर्मवाचक पद के उत्तरवर्ती धातु से कर्तृवाच्य में अण् होता है और धातु को वृद्धि होती है, यथा—कुम्भं करोति इति कुम्भकारः, सूत्रधारः, तन्तुवायः, वारिवाहः, भाष्यकारः इत्यादि।

(इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः) कर्तृवाच्य में धातुओं से 'क' प्रत्यय होता है, यथा—फलं प्रददाति इति=फलप्रदः, अभिजानाति इति=अभिज्ञः, लिखः, बुधः, कृशः, क्षिप्रः, ज्ञः। 'अ' प्रत्यय=पच्=पचः, दिव्=देवः, चल्=चलः, धृ=धरः।

सुबन्त पद के परवर्ती भिन्न-भिन्न धातुओं के उत्तर भिन्न-भिन्न अर्थों में भी 'अ' प्रत्यय होता है, यथा—शोकहरः, पूजार्हः, धनदः, सर्वज्ञः, मधुरः, प्रकृतिस्थः, पङ्कजम्, पारगः, पतङ्गः, शोकापहः, प्रभाकरः, हितकरः, अग्रसरः, रात्रिचरः, मित्रघ्नः।

(नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः) कर्तृवाच्य में णिन् (इन्) प्रत्यय भी होता है, यथा निवसतीति निवासी, अधिकारी, प्रवासी, विद्रोही, अधिकारी, अभिलाषी, स्थायी, द्वेषी, सञ्चारी इत्यादि। सुबन्तपद के उत्तरवर्ती धातुओं से भिन्न-भिन्न अर्थों में भी 'इन्' प्रत्यय होता है। (स्वभाव अर्थ में) जैसे—उष्णं भोक्तुं शीलं यस्य सः=उष्णभोजी (गरम खाने की इच्छावाला) मनोहारी, अग्रयायी, अनुगामी, शाकाहारी, मिथ्यावादी, मित्रघाती इत्यादि। अपने आपको समझने के अर्थ में णिनि और खश् (अ) दोनों प्रत्यय होते हैं, यथा—पण्डितंमानी, पण्डितंमन्यः।

(स्त्रियां क्तिन्) भाववाच्य में धातुओं से क्तिन् प्रत्यय होता है। 'क्तिन्' का केवल 'ति' शेष रहता है। ति प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग ही होते हैं, यथा—मतिः, बुद्धिः, नीतिः, दृष्टिः, शान्तिः, गतिः, प्रीतिः, धृतिः, स्तुतिः, कृतिः, स्थितिः, रतिः, नतिः, भुक्तिः, मुक्तिः इत्यादि।

(भावे, अकर्तरि च कारके घञ्) भाववाच्य और कर्तृभिन्न कारक वाच्य में घञ् प्रत्यय होता है, यथा—हस्—हासः (हंसी) देवस्य हासः, पाकः (पकना) भागः, त्यागः, नाशः, (पठ्) पाठः, (लिख्) लेखः, (भू) भावः, (कृ) कारः, विकारः, प्रकारः, उपकारः, अपकारः, (हृ) हारः, आहारः, प्रहारः, विहारः, संहारः, उपहारः, (चर्) चारः, विचारः, संचारः आचारः, (वद्) वादः विवादः, संवादः, प्रवादः, अनुवादः, अपवादः इत्यादि। घञ् प्रत्यायान्त शब्द पुंल्लिङ्ग ही होते हैं।

भाववाच्य में धातुओं से 'अ' प्रत्यय भी होता है। जैसे—भवः, कोषः, तोषः, हर्षः, जपः, मदः इत्यादि।

(नपुंसके भावेक्तः, ल्युट् च) भाववाचक शब्द बनाने के लिए धातुओं से क्त (त) और ल्युट् (अन) प्रत्यय होते हैं और ऐसे शब्द नपुंसक लिङ्ग होते हैं, यथा—हसितम्, हसनम्, (हँसना), इसी प्रकार—गमनम्, हरणम्, करणम्, भरणम्, शोचनम्, रोदनम् आदि। (भावकरणाधिकरणेषु ल्युट्) करण और अधिकरण अर्थ में भी (ल्युट्) 'अन्' होता है। जैसे—करणम् (जिससे किया जाय) शयनम् (जिस पर सोया जाय)। उपकरणम् (जिससे काम करते हैं), आवरणम् (जिससे ढकते हैं।)

(ईषद् दुःसुषु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल्) सु, दुर्, ईषत् परवर्ती धातुओं से कर्म और भाववाच्य में खल् (अ) प्रत्यय होता है, यथा—सुकरः, दुष्करः, ईषत्करः, सुवहः, दुर्लभः, दुःशासनः इत्यादि।

(सनाशंसभिक्षउः) सन्नन्त, आशंस्, और भिक्ष् धातु से 'उ' होता है, यथा—लिप्सुः पिपासुः, आशंसुः, भिक्षुः इत्यादि।

उपमानवाचक तद्, यद्, एतद्, भवत्, युष्मद्, अस्मद्, इदम्, अदस्, किम्, अन्य और समान शब्दों के आगे दृश् धातु से क्विप् और षङ् प्रत्यय होते हैं। इनके निम्नलिखित रूप होते हैं, यथा—तादृक्, तादृशः—(उनके ऐसा) त्वादृशः—(तुम्हारे ऐसा) सदृक्, सदृशः—(तुल्य दिखाई पड़ने वाला) तादृक्, तादृशः। यादृक्, यादृशः। भवादृक्, भवादृशः। युष्मादृक्, युष्मादृशः। अस्मादृक्, अस्मादृशः। कीदृक्, कीदृशः। ईदृक्, ईदृशः। एतादृक्, एतादृशः।

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—खेलना तथा पढ़ना समय पर होना चाहिए। २—भले आदमी अपकार का बदला उपकार से चुकाते हैं। ३—यह बहुत आनन्द देने वाला वृत्त है। ४—झूठ बोलने वाले मित्र मित्रघाती होते हैं। ५–काम करनेवाला मानव है, पर कर्म का फल देनेवाला भगवान् है। ६—यह उपदेश शोक को नाश करनेवाला है। ७—झूठ बोलनेवाले का कोई विश्वास नहीं करता। ८—इस गांव के कुम्हार बहुत चतुर हैं। ९—नाश होनेवाले शरीर का क्या विश्वास ? १०—क्या इस घर में सभी खानेवाले हैं, कमानेवाला कोई नहीं ? ११—यह पकानेवाला बहुत निपुण है। १२—क्या इस नगर में कोई बड़ा गवैया नहीं ? १३—वेद का पढ़ना पापों का नाश करनेवाला है। १४—इस नगर के प्रायः सभी बनिये बहुत लुटेरे हैं। १५—कल विमला ने एक मनोहर राग अलापा। १६—तुम्हारे जैसे आदमी को धिक्कार है।

द्वितीय अभ्यास

वर्त्तमान-कालिक कृदन्त

(लटःशतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे) पढ़ता हुआ (पढ़ती हुई), लिखता हुआ (लिखती हुई) आदि वर्तमान-कालिक कृदन्त शब्दों का संस्कृत में अनुवाद शतृ और शानच् प्रत्ययान्त शब्दों से किया जाता है। परस्मैपदी धातुओं से शतृ (अत्) और आत्मनेपदी धातुओं से शानच् (आन, मान) प्रत्यय होते हैं और शतृ शानच् प्रत्ययान्त शब्द कर्त्ता के विशेषण होते हैं।

१—कदापि नरः खादन् न पठेत् (मनुष्य खाता हुआ कभी न पढ़े)।

२—सः हसन् अवदत्। ४—जलं पिबन् न हसेत्।

३—रुदन्ती बाला प्राह। ६—लज्जमाना वधूः आगच्छति।

५—शयानं शिशुं मा प्रबोधय। ७—विलपन्तीं सीतां दृष्ट्वा लक्ष्मणः विषण्णः सञ्जातः

परस्मैपदी धातुओं से शतृप्रत्ययान्त *शब्द

धातु	नपुंसकलिङ्ग	पुंल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
भू (होना)	भवत्	भवन्	भवन्ती
दा (देना)	ददत्	ददत् / न्	ददती

*शतृ (अत्) प्रत्ययान्त शब्दों के स्त्रीलिङ्ग के रूप बनाने के लिए भ्वादि दिवादि, चुरादि, तुदादि के लट् प्रथम पुरुष के बहुवचन के 'अन्तिम' प्रत्ययान्त पद के आगे 'ई' जोड़ देते हैं, यथा—'गच्छति, गच्छतः, गच्छन्ति' इत्यादि रूपों में गच्छन्ति +ई=गच्छन्ती। इसी प्रकार—कूजन्ति+ई=कूजन्ती, पूजयन्ति+ई =पूजयन्ती जिगमिषन्ति+ई=जिगमिषन्ती, हसन्ति+ई=हसन्ती, वदन्ति+ई=वदन्ती।

अदादिगणीय (अदती, रुदती आदि) स्वादिगणीय (चिन्वती, शृण्वती आदि) क्र्यादिगणीय (क्रीणती, प्रीणती आदि) तनादिगणीय (कुर्वती, तन्वती आदि) और जुहोत्यादिगणीय (ददती, जहती आदि) धातुओं में 'ई' जोड़कर 'न्' हटाने से स्त्रीलिङ्ग रूप बनते हैं।

अदादिगणीय आकारान्त (भान्ती, भाती आदि) और तुदादिगणीय (तुदती तुदन्ती आदि) में विकल्प से न् का लोप होता है। ये स्त्रीलिङ्ग शब्द नदी की भाँति चलते हैं (विशेष नियम स्त्रीप्रत्यय प्रकरण में देखिए।)

श्रु	(सुनना)	शृण्वत्	शृण्वन्	शृण्वती
कृ	(करना)	कुर्वत्	कुर्वन्	कुर्वती
क्री	(खरीदना)	क्रीणत्	क्रीणन्	क्रीणती
चिन्त्	(सोचना)	चिन्तयत्	चिन्तयन्	चिन्तयन्ती
अस्	(होना)	सत्	सन्	सती
आप्	(प्राप्त करना)	आप्नुवत्	आप्नुवन्	आप्नुवती
इष्	(इच्छा करना)	इच्छत्	इच्छन्	इच्छती, इच्छन्ती
अनु+इष्	(ढूंढ़ना)	अन्विष्यत्	अन्विष्यन्	अन्विष्यन्ती
कथ्	(कहना)	कथयत्	कथयन्	कथयन्ती
कूज्	(कूजना)	कूजत्	कूजन्	कूजन्ती
क्रुध्	(नाराज होना)	क्रुध्यत्	क्रुध्यन्	क्रुध्यन्ती
क्रीड्	(खेलना)	क्रीडत्	क्रीडन्	क्रीडन्ती
गर्ज्	(गर्जना)	गर्जत्	गर्जन्	गर्जन्ती
गुञ्ज्	(गूँजना)	गुञ्जत्	गुञ्जन्	गुञ्जन्ती
गै	(गाना)	गायत्	गायन्	गायन्ती
घ्रा	(सूँघना)	जिघ्रत्	जिघ्रन्	जिघ्रन्ती
चल्	(चलना)	चलत्	चलन्	चलन्ती
जागृ	(उठना)	जाग्रत्	जाग्रन्	जाग्रती
तॄ	(तैरना)	तरत्	तरन्	तरन्ती
दंश्	(डसना)	दशत्	दशन्	दशन्ती
दृश्	(देखना)	पश्यत्	पश्यन्	पश्यन्ती
निन्द	(निंदा करना)	निन्दत्	निन्दन्	निन्दन्ती
नृत्	(नाचना)	नृत्यत्	नृत्यन्	नृत्यन्ती
पठ्	(पढ़ना)	पठत्	पठन्	पठन्ती
पा	(पीना)	पिबत्	पिबन्	पिबन्ती
पूज्	(पूजा करना)	पूजयत्	पूजयन्	पूजयन्ती
प्रच्छ्	(पूछना)	पृच्छत्	पृच्छन्	पृच्छती—न्ती
मस्ज्	(डूबना)	मज्जत्	मज्जन्	मज्जती—न्ती

रच्	(बनाना)	रचयत्	रचयन्	रचयन्ती
आ+रुह्	(चढ़ना)	आरोहत्	आरोहन्	आरोहन्ती
लिख्	(लिखना)	लिखत्	लिखन्	लिखती—न्ती
शक्	(सकना)	शक्नुवत्	शक्नुवन्	शक्नुवती
सृज्	(पैदा करना)	सृजत्	सृजन्	सृजती—न्ती
स्था	(ठहरना)	तिष्ठत्	तिष्ठन्	तिष्ठन्ती
स्पृश्	(छूना)	स्पृशत्	स्पृशन्	स्पृशती-न्ती
स्वप्	(सोना)	स्वपत्	स्वपन्	स्वपती

आत्मनेपदी धातुओं से शानच् प्रत्ययान्त शब्द

आ+ह्वे	(बुलना)	आह्वयत्	आह्वयन्	आह्वयन्ती
ईक्ष	(देखना)	ईक्षमाणम्	ईक्षमाण:	ईक्षमाणा
कम्प्	काँपना (देखना)	कम्पमानम्	कम्पमान:	कम्पमाना
जन्	(पैदा करना)	जायमानम्	जायमान:	जायमाना
दय्	(दया करना)	दयमानम्	दयमान:	दयमाना
वन्द्	(प्रशंसा करना)	वन्दमानम्	वन्दमान:	वन्दमाना
वृत्	(होना)	वर्तमानम्	वर्तमान:	वर्तमाना
वृध्	(बढ़ना)	वर्धमानम्	वर्धमान:	वर्धमाना
व्यथ्	(दु:खित होना)	व्यथमानम्	व्यथमान:	व्यथमाना
मन्	(मानना)	मन्यमानम्	मन्यमान:	मन्यमाना
यत्	(यत्न करना)	यतमानम्	यतमान:	यतमाना
लभ्	(पाना)	लभमानम्	लभमान:	लभमाना
सेव्	(सेवा करना)	सेवमानम्	सेवमान:	सेवमाना

उभयपदी धातुओं से शतृ और शानच्

कृ	(करना)	कर्वत्	(कुर्वाण:)	कुर्वन्	कुर्वती
छिद्	(काटना)	छिन्दत्	(छिन्दान:)	छिन्दन्	छिन्दती
ज्ञा	(जानना)	जानत्	(जानान:)	जानन्	जानती

धातु	नपुंसकलिङ्ग		पुंल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
नी (ले जाना)	नयत्	(नयमानः)	नयन्	नयन्ती
ब्रू (कहना)	ब्रुवत्	(ब्रुवाणः)	ब्रुवन्	ब्रुवती
लिह् (चाटना)	लिहत्	(लिहानः)	लिहन्	लिहती
धा (रखना)	दधत्	(दधानः)	दधन	दधती

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—मोहन दौड़ता हुआ गिर पड़ा। २—दुष्ट जानता हुआ भी बुरा काम करता है। ३—लड़ते हुए सिपाही ने युद्ध में वीरतापूर्वक प्राण दे दिये। ४—श्याम प्रयत्न करता हुआ भी इम्तिहान में फेल हो गया। ५—सिंह की डर से काँपता हुआ बच्चा माँ की गोद में चिपक गया। ६—यह कहते-कहते दमयन्ती का गला भर आया। ७—दयालु राजा ने एक काँपती हुई रमणी को देखा। ८—कुत्ते को भौंकते सुनकर चोर भाग गये। ९—परस्पर झगड़ते हुए किसान राजा के पास गये। १०—वह दौड़ता हुआ पत्र पढ़ रहा है। ११—जल पीते हुए भेड़िये को गोविन्द ने लाठी से पीटा। ११—राम भागता हुआ गया। १२—वह हँसता हुआ काम करता है। १४—वे बालक पढ़ते हुए कहीं जा रहे हैं। १५—सत्य जानता हुआ भी असत्य बोलता है। १६—चोर अन्धेरे को देखता हुआ चोरी करता है। १७—पापी धर्म को देखते हुए भी पाप करते हैं। १८—रावण ने रामचन्द्र जी को ईश्वर जानते हुए भी सीता नहीं दी। १९—गोपाल हँसता हुआ आचार्य से क्या पूछता है? २०—गाँव को जाते हुए किसान ने एक साँप को मार डाला।

तृतीय अभ्यास

भूतकालिक कृदन्त

भूतकाल अर्थ में धातु से क्त (त) और क्तवतु (तवत्) प्रत्यय होते हैं। क्त (त) प्रत्यय कर्मवाच्य और भाववाच्य में होता है और क्तवतु (तवत्) प्रत्यय कर्तृवाच्य में, यथा—

(क्त) मया जलं पीतम् (मैंने जल पिया)।

(क्तवतु) सः जलं पीतवान् (उसने जल पीया)।

क्त (त) प्रत्यय सकर्मक धातुओं से कर्म में होता है। इसमें कर्त्ता तृतीया विभक्ति में रक्खा जाता है और कर्म प्रथमा विभक्ति में। क्त प्रत्ययान्त शब्द लिङ्ग, वचन कर्म के अनुसार होते हैं, यथा—मया पुस्तकं पठितम्, मया पुस्तके पठिते, मया पुस्तकानि पठितानि। अकर्मक धातुओं से 'क्त' प्रत्यय कर्त्ता और भाव दोनों में होता है। जब 'क्त' प्रत्यय कर्त्ता में होता है तब क्तान्त शब्द कर्त्ता के अनुसार प्रथमा विभक्ति में होता है, यथा—गोपालः गतः, और क्त प्रत्यय जब भाव में होता है तब कर्त्ता में तृतीया विभक्ति और 'क्त' प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग के एकवचन में आता है, यथा—गोपालेन गतम्, इसी प्रकार—देवदत्तो हसितः, देवदत्तेन हसितम्।

क्तवतु (तवत्) प्रत्यय सकर्मक और अकर्मक धातुओं से 'कर्त्ता' में ही होता है। इसमें कर्त्ता और उसके अनुसार क्तवत्वन्त शब्द 'प्रथमा' विभक्ति में और द्वितीया विभक्ति में आता है, यथा—

अश्वो जलं पीतवान् (घोड़े ने पानी पिया)।

रामलक्ष्मणौ राक्षसान् हतवन्तौ (राम और लक्ष्मण ने राक्षस मारे)।

रमेशो हसितवान् (रमेश हँसा) इत्यादि।

इच्छार्थक, पूजार्थक, बुद्धयर्थक धातुओं से वर्तमान अर्थ में भी 'क्त' प्रत्यय होता है, उसमें कर्त्ता षष्ठी विभक्ति में और कर्म प्रथमा में होता है। यथा—प्रजानां रामः इष्टः, मतः, पूजितः (प्रजा के लोग राम को चाहते हैं, मानते हैं, पूजते हैं)।

द्विकर्मक धातुओं से क्त प्रत्यय गौण कर्म में, नी, हृ, कृष् और वह् से मुख्य कर्म में और णिजन्त धातुओं से क्त प्रत्यय प्रयोज्य कर्त्ता के अनुसार होता है, यथा—

शिष्यैः गुरुः शब्दार्थः पृष्टः (शिष्यों ने गुरु से शब्द का अर्थ पूछा)। देवेन छागः ग्रामं नीतः (देव बकरे को गाँव ले गया)। अध्यापकेन छात्रः शास्त्रम् बोधितः—(गुरु ने छात्र को शास्त्र समझाया)। अकर्मक या सकर्मक धातुओं से कर्म की विवक्षा न रहने पर 'क्त' प्रत्यय भाव में होता है, यथा—शिशुना शयितम् (बच्चा सोया), तेन कथितम्—(उसने कहा)।

धातु	क्त	क्तवतु	धातु	क्त	क्तवतु
अर्च्	अर्चितः	अर्चितवान्	जन्	जातः	जातवान्
अधि+इ	अधीतः	अधीतवान्	इष्	इष्टः	इष्टवान्
छिद्	छिन्नः	छिन्नवान्	कथ्	कथितः	कथितवान्

कृ	कृतः	कृतवान्	धा	हितः	हितवान्
कॄ	कीर्णः	कीर्णवान्	विधा	विहितः	विहितवान्
क्षि	क्षीणः	क्षीणवान्	निधा	निहितः	निहितवान्
क्षिप्	क्षिप्तः	क्षिप्तवान्	आह्वे	आहूतः	आहूतवान्
क्रम्	क्रान्तः	क्रान्तवान्	लिह्	लीढः	लीढवान्
क्री	क्रीतः	क्रीतवान्	शम्	शान्तः	शान्तवान्
खन्	खातः	खातवान्	निन्द्	निन्दितः	निन्दितवान्
गम्	गतः	गतवान्	नी	नीतः	नीतवान्
गॄ	गीर्णः	गीर्णवान्	पत्	पतितः	पतितवान्
गै	गीतः	गीतवान्	पी	पीतः	पीतवान्
ग्रह्	गृहीतः	गृहीतवान्	शास्	शिष्टः	शिष्टवान्
घ्रा	घ्राणः, घ्रातः	घ्रातवान्	चेष्ट्	चेष्टितः	चेष्टितवान्
चि	चितः	चितवान्	श्रु	श्रुतः	श्रुतवान्
पूज्	पूजितः	पूजितवान्	सह्	सोढः	सोढवान्
प्रच्छ्	पृष्टः	पृष्टवान्	स्पृश्	स्पृष्टः	स्पृष्टवान्
बन्ध्	बद्धः	बद्धवान्	सृज्	सृष्टः	सृष्टवान्
बुध्	बुद्धः	बुद्धवान्	स्मि	स्मितः	स्मितवान्
वद्	उदितः	उदितवान्	स्मृ	स्मृतः	स्मृतवान्
वच्	उक्तः	उक्तवान्	मन्	मतः	मतवान्
विद्	विदितः	विदितवान्	रभ्	रब्धः	रब्धवान्
भिद्	भिन्नः	भिन्नवान्	वस्	उषितः	उषितवान्
जि	जितः	जितवान्	लभ्	लब्धः	लब्धवान्
जॄ	जीर्णः	जीर्णवान्	शी	शयितः	शयितवान्
तॄ	तीर्णः	तीर्णवान्	हन्	हतः	हतवान्
त्यज्	त्यक्तः	त्यक्तवान्	हा	हीनः	हीनवान्
त्रै	त्रातः	त्रातवान्	हृ	हृतः	हृतवान्
दंश्	दष्टः	दष्टवान्	वह्	ऊढः	ऊढवान्
दा	दत्तः	दत्तवान्	कम्	कान्तः	कान्तवान्

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—अर्जुन ने जयद्रथ का वध किया। २—जज ने अपराधियों को दण्ड दिया। ३—राम ने रावण को वाण से मारा। ४—हाथी गहन वन में छोड़ा गया। ५—बिल्ली ने चूहे को पकड़ा। ६—कल रात मैं जल्दी सो गया। ७—अङ्गद और बाली का युद्ध हुआ। ८—मैंने जंगल में एक सिंह देखा। ९—आज सोहन वाटिका में नहीं आया। १०—उस व्याघ्र को देखकर बालक बहुत डरा। ११—बालक बिस्तर पर सो गया। १२—वाल्मीकि जी ने बड़े मधुर छन्दों में रामायण लिखी। १३—सब ने हृदय से सुरेश की प्रशंसा की। १४—प्रजापति से संसार उत्पन्न हुआ। १५—रामचन्द्र जी ने लंका का राज्य बिभीषण को दिया। १६—आज उस बालक ने क्या ही सुन्दर गाया ? १७—जोर की हवा ने पेड़ों को कँपा दिया। १८—मृग पानी पीने के लिए तालाब में गया। १९—रात पड़ते ही चोर महल में घुसा और बहुत-सा धन चुरा ले गया। २०—वोपदेव ने गुरु की सेवा की और सेवा का फल प्राप्त किया।

भविष्यत्कालिक कृदन्त

"वाला" का अनुवाद संस्कृत में भविष्यत्कालवाचक 'शतृ', शानच् प्रत्ययान्त शब्दों से किया जाता है। भविष्यत्कालवाचक शतृ, शानच् प्रत्ययों के रूप क्रम से 'स्यत्' और 'स्यमान' होते हैं। यथा—

१—हिमालयशिखरमारोक्ष्यन् साहसी वीरः तेनसिंहोऽस्ति।
(हिमालय की चोटी पर चढ़ने वाला साहसी वीर तेनसिंह है।)

२—मासिकवेतनं प्राप्स्यन् सेवकः अतीव प्रसन्नः दृश्यते।
(मासिक तनख्वाह पाने वाला नौकर बहुत खुश दीखता है)।

३—विदेशं गमिष्यन् गोपालः पितरौ प्राणमत्।
(विदेश जाने वाले गोपल ने अपने माता पिता को प्रणाम किया)।

४—पादकन्दुकेन क्रीडिष्यन्तः छात्राः क्रीडाक्षेत्रं गच्छन्ति।
(फुटबॉल खेलने वाले छात्र मैदान में जा रहे हैं)।

५—युद्धक्षेत्रे योत्स्यमानाः सैनिकाः सम्बन्धिन आपृच्छन्ति।
(लड़ाई के मैदान में लड़नेवाले सिपाही अपने सम्बन्धियों से विदा लेते हैं।)

परस्मैपदी (स्यतृ)	आत्मनेपदी (स्यमान)	उभयपदी (स्यतृ, स्यमान)
भू—भविष्यत्	जनु—जनिष्यमाणः	कृ—करिष्यत्—करिष्यमाणः
गम्—गमिष्यत्	सह्—सहिष्यमाणः	दा—दास्यत्—दास्यमानः
स्था—स्थास्यत्	व्यथ्—व्यथयिष्यमाणः	ग्रह्—ग्रहीष्यत्—ग्रहीष्यमानः
दृशि—दर्शयिष्यत्	प्र+स्था—प्रस्थास्यमानः	नी—नष्यत्—नेष्यमाणः
मृ—मरिष्यत्	युध्—योत्स्यमानः	ज्ञा—ज्ञास्यत्—ज्ञास्यमान्
हन्—हनिष्यत्	लभ्—लप्स्यमानः	छिद्—छेत्स्यत्—छेत्स्यमानः

कर्मवाच्य में भविष्यत् अर्थ में धातुओं से 'स्यमान' प्रत्यय होता है और 'स्यमान' प्रत्ययान्त पद कर्म के विशेषण हो जाते हैं, यथा—रामेण सेविष्यमाणः विश्वामित्रः। सीतया सेविष्यमाणा अरुन्धती। अस्माभिः भोक्ष्यमाणानि फलानि।

'स्यतृ' और 'स्यमान' प्रत्ययों से बने हुए शब्द विशेषण होते हैं, इसलिए विशेष्य के अनुसार उनमें लिङ्ग, विभक्ति और वचन होते हैं, यथा—वक्ष्यमाणं वचनम्, वक्ष्यमाणेन वचनेन, वक्ष्यमाणे वचने इत्यादि।

चतुर्थ अभ्यास

पूर्वकालिककृदन्त (क्त्वा और ल्यप्)

(समानकर्तृकयोः पूर्वकाले) 'पढ़कर' 'लिखकर' 'खाकर' 'पीकर' आदि पूर्वकालिक कृदन्तों का अनुवाद संस्कृत में 'क्त्वा' (त्वा) प्रत्ययान्त शब्दों से किया जाता है। यदि धातु के पूर्व कोई उपसर्ग लगा हो तो 'क्त्वा' के स्थान में 'ल्यप्' (य) प्रत्यय होता है। यदि यह 'य' ह्रस्व स्वर के बाद आता है तो इसके पूर्व 'त्' लगकर इसका रूप 'त्य' हो जाता है, यथा—(सं+चि+य—संचित्य)।

१—वैशम्पायनो मुहूर्तमिव ध्यात्वा सादरमब्रवीत् (कादम्बर्याम्)।
(वैशम्पायन ने क्षण भर सोचकर विनयपूर्वक कहा)।

२—तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।
(मैं तुम्हें ऐसे कर्म बताऊं जिसे जान कर तुम मुक्त हो जाओगे।)

३—यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम। (गीतायाम्)
(जहाँ से लौटते नहीं वही मेरा उत्तम स्थान है)

४—प्रातः आरभ्य सायं यावत् त्वमत्रैव तिष्ठ।
(सुबह से शाम तक तुम यहीं ठहरो)।

५—उत्थाय हृदि लीयन्ते दरिद्राणां मनोरथाः ।

(निर्धनों की इच्छाएँ चित्त में उठकर लीन हो जाती हैं)

६—स वेदानधीत्य विद्वान् अभवत् । (वेदों को पढ़कर वह विद्वान् हो गया)।

उपसर्ग और च्वि प्रत्यय-युक्त धातु से पूर्वकालिक कृदन्त के 'त्वा' के स्थान पर ल्यप् (य) होता है (नञ् समास में नहीं।) ल्यप् प्रत्यय होने पर ये परिवर्तन होते हैं—

अ, ई, ऊ+ल्यप्=य । इ, उ, ऋ+ल्यप्+त्य । ॠ+ल्यप्=इर्य । यथा—(आकारान्त) उत्—स्था+यप्=उत्थाय, आ—दा+यप्=आदाय; (ईकारान्त) आ—नी+यप्=आनीय, वि—क्री+यप्=विक्रीय । (ऊकारान्त) अनु—भू+यप्=अनुभूय; प्र—सू+यप्=प्रसूय । (च्विप्रत्ययान्त) मलिनी+भू+यप्=मलिनी—भूय । स्थिरी+भू+यप्=स्थिरीभूय । (इकारान्त) वि—जि+यप्=विजित्य; अधि—इ+यप्=अधीत्य । (उकारान्त) प्र—स्तु+यप्=प्रस्तुत्य । प्रति-श्रु+यप्=प्रति-श्रुत्य । (ऋकारान्त) अधि—कृ+यप्=अधिकृत्य; अनु—सृ+यप्=अनुसृत्य । (ॠकारान्त) अव—तॄ+यप्=अवतीर्य । वि—कॄ+यप=विकीर्य इत्यादि ।

वच्, वद्, वस्, वह्, स्वप् धातुओं के 'अ' के स्थान में 'उ' हो जाता है। शी के स्थान में शय्, ह्वे=हू, ग्रह्=गृह्, प्रच्छ=पृच्छ् । जैसे—प्र—वच्+यप=प्रोच्य; अनु—वद्+यप्=अनूद्य; अधि—वस्+यप्=अध्युष्य; सम्—ग्रह्+यप्=संगृह्य; सम्—शी+यप्=संशय्य ।

णिजन्त धातुओं के इकार का साधारणतया लोप हो जाता है और रच् प्रभृति धातुओं के इकार के स्थान में 'अय्' हो जाता है। सम्+चिन्ति=सञ्चिन्त्य; प्र+दर्शि=प्रदर्श्य; सम+स्थापि=संस्थाप्य । वि+रचि=विरचय्य इत्यादि ।

धातु	क्त्वा	ल्यप्	धातु	क्त्वा	ल्यप्
आप्	आप्त्वा	प्राप्य । समाप्य ।	कृ	कृत्वा	अनुकृत्य ।
			क्री	क्रीत्वा	विक्रीय ।
इ	इत्वा	अधीत्य ।	क्षिप्	क्षिप्त्वा	निक्षिप्य ।
ईक्ष्	ईक्षित्वा	निरीक्ष्य । परीक्ष्य ।	गण्	गणयित्वा	विगणय्य ।
			कॄ	कीर्त्वा	विकीर्य ।

दृश्	दृष्ट्वा	संदृश्य	हा	हित्वा	विहाय
धा	हित्वा	विधाय।	ह्वे	हूत्वा	आहूय
नम्	नत्वा	{ प्रणत्य। प्रणम्य।	चिन्ति	चिन्तयित्वा	संचिन्त्य
			छिद्	छित्वा	विच्छिद्य
नी	नीत्वा	आनीय।	ज्ञा	ज्ञात्वा	{ विज्ञाय प्रतिज्ञाय
गम्	गत्वा	{ आगत्य। आगम्य।	तॄ	तीर्त्वा	संतीर्य
			त्यज्	त्यक्त्वा	परित्यज्य
ग्रन्थ्	ग्रन्थित्वा	संग्रथ्य।	दंश्	दष्ट्वा	संदश्य
ग्रह्	गृहीत्वा	{ संगृह्य। अनुगृह्य।	रुह्	रुढ्वा	आरुह्य
			भू	भूत्वा	संभूय
घ्रा	घ्रात्वा	समाघ्राय।	भ्रम्	{ भ्रमित्वा भ्रान्त्वा	विभ्रम्य
ची	चित्वा	संचित्य।			
पत्	पतित्वा	निपत्य।	मन्	मत्वा	अवमत्य
लभ्	लब्ध्वा	उपलभ्य।	मन्थ्	मथित्वा	संमथ्य
लिख्	लिखित्वा	विलिख्य।	रुध्	रुद्ध्वा	अवरुद्ध्य
वस्	उषित्वा	अध्युष्य।	सिच्	सिक्त्वा	निषिच्य
शम्	शमित्वा	निशम्य।	सृज्	सृष्ट्वा	विसृज्य
श्वस्	श्वसित्वा	विश्वस्य।	स्था	स्थित्वा	उत्थाय
शी	शयित्वा	अधिशय्य।	स्पृश्	स्पृष्ट्वा	उपस्पृश्य
लप्	लप्त्वा	विलप्य।	स्मृ	स्मृत्वा	विस्मृत्य
पा	पीत्वा	निपीय	हन्	हत्वा	निहत्य
प्रच्छ्	पृष्ट्वा	संपृच्छ्य।	हस्	हसित्वा	विहस्य
बुध्	बुद्ध्वा	प्रबुद्ध्य।	हृ	हृत्वा	संहृत्य
वद्	उदित्वा	अनूद्य।	विश्	विष्ट्वा	प्रविश्य
भञ्ज्	भङ्क्त्वा	प्रबुध्य।	श्रि	श्रित्वा	आश्रित्य।

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—व्याध तरकस से बाण लेकर मोर को मारता है। २—हे बालक! तू सिंह को देखकर क्यों डरता है?। ३—माता पिता को प्रणाम कर पुत्र विदेश चला गया।

४—काश्मीर जाकर हम बहुत सुन्दर दृश्य देखते हैं। ५—मैं कपड़े पहनकर अभी आपके साथ चलूंगा। ६—व्याध चावलों को बिखेर कर कबूतरों को मारेगा। ७—प्रतिज्ञा करके कहो कि सत्य बोलूंगा। ८—महाराज दशरथ राम के लिए विलाप करके मर गये। ९—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर पढ़कर इन्स्पेक्टर हो गये। १०—कौत्सने अपने अध्ययन को समाप्त कर गुरु से दक्षिणा लेने का आग्रह किया। ११—रावण को मार कर श्रीराम ने लंका का राज्य विभीषण को दिया। १२—चोर घर में घुस कर माल के साथ भाग गये। १३—श्रीराम राक्षसों को जीत कर सीता के साथ घर लौटे। १४—वह धन इकट्ठा करके उसे दूसरों के लिए छोड़कर संन्यासी हुआ। १५—छात्रो, पुस्तक खोलकर पढ़ो।

पञ्चम अभ्यास

तुम् प्रत्यय

(तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्) 'को' 'के लिए' आदि निमित्त अर्थ को प्रकट करने के लिए 'तुमुन्' (तुम्) प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है, यथा—

१—स्वेदसलिलस्नाताऽपि पुनः स्नातुम् (स्नानाय) अवातरत्। (कादम्बर्याम्)
(पसीने से नहाई हुई भी नहाने के लिए उत्तरी)।

२—इच्छार्थक क्रिया के निमित्त में—
पिनाकपाणिं पतिमाप्तुमिच्छसि (तू शिवजी को वरना चाहती है ?) (कुमा०)

३—समय शब्द के योग से—
समयः खलु स्नानभोजनं सेवितुम् (स्नान और भोजन का यह वक्त है)।

४—शक्, ज्ञा, क्रम् आदि धातुओं के साथ—
न शक्नोति शिरोधरां धारयितुम्।
(यह गरदन नहीं उठा सकता) (कादम्बर्याम्)

५—समर्थद्योतक 'अलं' के योग में—
प्रासादास्त्वां तुलयितुमलम्। (महल तुम्हारे मुकाबले के लिए समर्थ हैं)।

६—काम और मनस् के आगे के म् का लोप हो जाता है (तुंकाममनसोरपि)

द्रष्टुमनाः जननी मेऽत्र समागता । (मेरी माता मुझे देखने के लिए यहाँ आयी)।

पुनरपि वक्तुकाम इव आर्यो लक्ष्यते (शाकुन्तले) ।

(आप और कुछ कहने की इच्छा रखते हैं ।)

अर्च् (पूजा करना) अर्चितुम् ।
अर्ज् (कमाना) अर्जितुम् ।
अधि+इ (पढ़ना) अध्येतुम् ।
ईक्ष् (देखना) ईक्षितुम् ।
कथ् (कहना) कथयितुम् ।
कृ (करना) कर्तुम् ।
क्री (खरीदना) क्रेतुम् ।
गै (गाना) गातुम् ।
त्यज् (छोड़ना) त्यक्तुम् ।
त्रै (रक्षा करना) त्रातुम् ।
दंश् (दशना) दष्टुम् ।
दृश् (देखना) द्रष्टुम् ।
धाव् (दौड़ना) धावितुम् ।
प्र+णम् (झुकना) प्रणन्तुम्
नी (लेजाना) नेतुम् ।
नृत् (नाचना) नर्तितुम् ।
पच् (पकाना) पक्तुम् ।
प्रच्छ् (पूछना) प्रष्टुम् ।
पूजि (पूजा करना) पूजयितुम् ।
वच् (कहना) वक्तुम् ।
भक्षि (खाना) भक्षयितुम् ।
भिद् (तोड़ना) भेत्तुम् ।
भ्रस्ज् (भूनना) भ्रष्टुम् ।
मुच् (छोड़ना) मोक्तुम् ।

स्तु (स्तुतिकरना) स्तोतुम् ।
स्था (ठहरना) स्थातुम् ।
स्ना (नहाना) स्नातुम् ।
स्पृश् (छूना) स्प्रष्टुम् । स्पर्ष्टुम्
हृ (चुराना) हर्तुम् ।
मृ (मरना) मर्तुम् ।
यज् (यज्ञ करना) यष्टुम् ।
रम् (रमना) रंतुम् ।
ग्रह् (पकड़ना) ग्रहीतुम् ।
चि (चुनना) चेतुम् ।
चिन्ति (सोचना) चिन्तयितुम् ।
छिद् (काटना) छेत्तुम् ।
जि (जीतना) जेतुम् ।
ज्ञा (जानना) ज्ञातुम् ।
ज्ञापि (सूचित करना) ज्ञापयितुम् ।
तॄ (तैरना) तरितुम्, तरीतुम् ।
रुद् (रोना) रोदितुम् ।
आ+रुह् (चढ़ना) आरोढुम् ।
रूपि (स्थिर करना) रूपयितुम् ।
लभ् (पाना) लब्धुम् ।
लिह् (चाटना) लेढुम् ।
वह् (लेजाना) वोढुम् ।
वप् (बोना) वप्तुम् ।
शम् (शांत करना) शमितुम् ।

शी (सोना) शयितुम् ।
शुच् (पछताना) शोचितुम् ।
श्रु (सुनना) श्रोतुम् ।
सह् (सहना) सहितुम्, सोढुम् ।
सृज् (पैदा करना) स्रष्टुम् ।
स्वप् (सोना) स्वप्तुम् ।
सेव् (सेवाकरना) सेवितुम् ।
स्मृ (याद करना) स्मर्तुम् ।
हन् (मारना) हन्तुम् ।
हस् (हसना) हसितुम् ।

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—ब्रह्मचारी यज्ञ करने के लिए यज्ञशाला में जाता है । २—व्याध जानव[illegible] का शिकार करने के लिए वन-वन में घूम रहा है । ३—मैं श्रीनेहरू का भाषण सु[illegible] के लिए जा रहा हूँ । ४—पिता जी कुम्भ—स्नान के लिए प्रयाग गये । ५—मा[illegible] फूल लेने के लिए जाता हूँ । ६—क्या तुम पुराण पढ़ना चाहते हो ? ७—क्या स[illegible] का यह समय है ? ८—वह अपने शत्रुओं को मारना चाहता है। ९—गुरु जी आज का[illegible] जाना चाहते हैं । १०—भरत जी श्रीरामजी को देखने के लिए चित्रकूट गये [illegible] ११—वीर अर्जुन शत्रुओं से लड़ने को उद्यत हुआ । १२—कल तुम्हा[illegible] नौकर काम करने नहीं आया । १३—श्रीराम रावण को दण्ड देने के लिए लंका [illegible] थे । १४—तुम गाने के लिए कहाँ जाओगे ? १५—इस भार को उठाने के लि[illegible] मजदूर कब आवेगा ? १६—आज मैं पुस्तकें खरीदने को जाऊँगा । १७—सोहन[illegible] हमें यहाँ पर भोजन के लिए निमन्त्रण दिया । १८—उपदेश देने में सभी समर्थ[illegible] किन्तु उपदेश ग्रहण करने के लिए कोई नहीं है । १९—अध्यापक छात्रों को उप[illegible] देना चाहते हैं । २०—दुर्वासा का तप समग्र लोकों को भस्म करने के लिए पर्या[illegible] था ।

षष्ठ अभ्यास

कृत्यप्रत्यय (तव्यत्, अनीयर्, यत्)

(तव्यत्तव्यानीयरः) 'चाहिए' अर्थ का बोध करने के लिए 'संस्कृत में 'त[illegible] 'अनीय' और 'य' प्रत्यय प्रयोग में आते हैं । ये प्रत्यय धातुओं से कर्म और भाववा[illegible] में होते हैं और कृत्य प्रत्यय कहलाते हैं, यथा—

(भाव में) त्वया अवश्यमेव गन्तव्यम् (तुझे अवश्य जाना चाहिए) ।

(कर्म में) आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः (शाकुन्तले)।
(यह आश्रम का मृग है इसे नहीं मारना चाहिए, नहीं मारना चाहिए)।

दातुम् उचितम्—दातव्यम्—दानीयम्—देयम्।
श्रोतुं योग्यम्—श्रोतव्यम्—श्रवणीयम्—श्रव्यम्।
स्थातुमुचितम्—स्थातव्यम्—स्थानीयम्—स्थेयम्।

धातु	तव्य	अनीय	धातु	तव्य	अनीय
आप्	आप्तव्य	आपनीय	गम्	गन्तव्य	गमनीय
इ	एतव्य	अयनीय	ग्रह्	ग्रहीतव्य	ग्रहणीय
अधि+इ	अध्येतव्य	अध्ययनीय	जि	जेतव्य	जयनीय
ईक्ष्	ईक्षितव्य	ईक्षणीय	चि	चेतव्य	चयनीय
वन्द्	वन्दितव्य	वन्दनीय	जीव्	जीवितव्य	जीवनीय
कृ	कर्तव्य	करणीय	त्यज्	त्यक्तव्य	त्यजनीय
क्री	क्रेतव्य	क्रयणीय	दा	दातव्य	दानीय
क्षम्	क्षन्तव्य	क्षमणीय	पा	पातव्य	पानीय
दृश्	द्रष्टव्य	दर्शनीय	वह्	वोढव्य	वहनीय
पठ्	पठितव्य	पठनीय	शी	शयितव्य	शयनीय
ज्ञा	ज्ञातव्य	ज्ञानीय	सृज्	स्रष्टव्य	सर्जनीय
पत्	पतितव्य	पतनीय	सिव्	सेवितव्य	सेवनीय
चर्	चरितव्य	चरणीय	स्था	स्थातव्य	स्थानीय
भिद्	भेत्तव्य	भेदनीय	स्मृ	स्मर्तव्य	स्मरणीय
भृ	भर्तव्य	भरणीय	हन्	हन्तव्य	हननीय
याच्	याचितव्य	याचनीय	श्रु	श्रोतव्य	श्रवणीय

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—पाठशाला में देर से न पहुँचना चाहिए। २—छात्रों को सदाचार से रहना चाहिए। ३—परिश्रम करके निर्वाह करना चाहिए, भीख माँगना अनुचित है। ४—सैनिकों को देश के लिए प्राण दे देने चाहिएँ। ५—स्वार्थ के लिए दूसरों की हानि न करनी चाहिए। ६—छात्रों को प्रातःकाल उठकर ईश्वर की प्रार्थना करनी

चाहिए। ७—स्वच्छ भोजन करना और स्वच्छ जल पीना चाहिए। ८—प्रत्येक नागरिक को अपना इतिहास और भूगोल जानना चाहिए। ९—हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए। १०—योग्य पुरुष को ही उपदेश देना चाहिए। ११—दुष्ट के साथ न ठहरना और न जाना ही चाहिए। १२—छात्रों को अपने अपने गुरुओं से सन्देह निवृत्त करना चाहिए। १३—सदा वही काम करना चाहिए जो कि करने के योग्य हो। १४—नीच पुरुष से भी उपदेश ग्रहण करना चाहिए। १५—मेरी बात पर आप को थोड़ा भी सन्देह नहीं करना चाहिए। १६—निर्धन और असहाय मनुष्यों को देखकर नहीं हँसना चाहिए। १७—मृत्यु को देखकर हमें जरा भी नहीं डरना चाहिए। १८—हमें अब जल्दी अपना अध्ययन समाप्त करना चाहिए। १९—सदैव हमें दुष्टों का संग छोड़ना चाहिए। २०—हमें अपने गुरुजनों की सेवा करनी चाहिए।

सप्तम अभ्यास

तद्धितान्त शब्द

शब्दों पर प्रत्यय लगने से पुनः शब्द बन जाते हैं। ऐसे शब्दों को तद्धितान्त शब्द कहते हैं। तद्धित-प्रत्ययों की संख्या अधिक है, अतः अधिक प्रचलित प्रत्यय ही इस पुस्तक में दिये गये हैं।

(१) (तस्यापत्यम्) अपत्य (पुत्र या पुत्री) अर्थ में शब्द के बाद अण् (अ) प्रत्यय लगता है। शब्द के सर्वप्रथम स्वर को वृद्धि होती है (अ को आ, इ ई को ऐ, उ ऊ को औ, ऋ को आर् और अन्तिम उ को ओ होगा), यथा—रघु का पुत्र राघव, वसुदेव का पुत्र वासुदेव, पाण्डु का पुत्र पाण्डव, कुरु का पुत्र कौरव, पृथा (कुन्ती) का पुत्र पार्थ, पुत्र का पुत्र पौत्र, शिव का शैव, विष्णु का वैष्णव। ये सब अकारान्त शब्द देववत् चलेंगे और स्त्रीलिङ्ग में नदी के समान।

(२) (अत इञ्) अकारान्त शब्दों से अपत्य अर्थ में शब्द के अन्त में इञ् (इ) प्रत्यय होता है। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है और निष्पन्न शब्द हरि की भाँति चलेगा। यथा—द्रोण का पुत्र द्रौणि (अश्वत्थामा), दक्ष का पुत्र दाक्षि, दशरथ का पुत्र दाशरथि (राम), सुमित्रा का पुत्र सौमित्रि (लक्ष्मण)।

(३) (दित्यदित्यादित्यपत्युत्तर०) दिति आदि शब्दों से अपत्य अर्थ में शब्द के अन्त में ण्यत् (य) प्रत्यय लगता है और शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—दिति के पुत्र दैत्य (राक्षस), अदिति के आदित्य (देवता), वत्स का वात्स्य, प्रजापति का प्राजापत्य, गर्ग का गार्ग्य।

(४) (स्त्रीभ्यो ढक्) अपत्य अर्थ में स्त्रीलिङ्ग शब्दों से ढक् (इय्) प्रत्यय होता है और शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—कुन्ती का पुत्र कौन्तेय, द्रौपदी का पुत्र (द्रौपदेय), माद्री का माद्रेय, राधा का राधेय, विनता का वैनतेय, गङ्गा का गाङ्गेय।

(५) (तत्र जातः, तत्र भवः) उत्पन्न होना या होना अर्थ में अण् आदि प्रत्यय होते हैं, कुछ शब्दों के अन्त में अ प्रत्यय भी होता है और प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—मथुरा में उत्पन्न माथुर, कान्यकुब्ज में उत्पन्न कान्यकुब्ज, सुघ्न में उत्पन्न सौघ्न (आगरा के निवासी) सिन्धु (समुद्र या देश) में होने वाला सैन्धव (नमक या घोड़ा)।

कुछ शब्दों में इक् प्रत्यय लगता है और शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—मासेभवः मासिकः, त्रैमासिकः, षाण्मासिकः, वर्ष—वार्षिक, काल—कालिक, तात्कालिक, (प्रातःकालीन एवं सायंकालीन शब्द भी प्रचलित हो गये हैं पर वे अशुद्ध हैं अतः त्याज हैं।) (सायं चिरं प्राह्णेप्रगे०) कुछ शब्दोंके अन्त में 'तन' प्रत्यय लग जाता है, यथा—सायंतनम्, चिरंतनम्, प्राह्णेतनम्, प्रागेतनम्, दोषातनम्, अद्यतनम्, पुरातनम्, इदानींतनम्।

(६) (तदधीते तद्वेद) पढ़नेवाला या जाननेवाला (पढ़ानेवाला) अर्थ में अ या इक् प्रत्यय लगता है, और शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—व्याकरण-मधीते वैयाकरणः, वेद पढ़नेवाला वैदिकः, पुराण—पौराणिकः, तर्क—तार्किक, न्याय—नैयायिकः।

(७) (तेन प्रोक्तम्) पुस्तक-रचना के अर्थ में रचयिता के नाम के आगे अ या ईय् प्रत्यय लगते हैं, शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि भी होती है, यथा—ऋषि रचित आर्ष, वाल्मीकि रचित—वाल्मीकीय (रामायण), मनुरचित—मानव, पाणिनि रचित पाणिनीय (अष्टाध्यायी)।

(८) (तस्येदम्) 'उसका यह' सम्बन्ध सूचक शब्द से अ या इक् अन्त में लगता है, प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है, यथा—शरद् सम्बन्धी शारद, दिन सम्बन्धी

दैनिक, अहन् सम्बन्धी आह्निक, देव सम्बन्धी दैव, भूत सम्बन्धी भौतिक, लोक सम्बन्धी लौकिक।

(६) (तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्) 'वाला' या 'युक्त' अर्थ में सबसे मतुप् (मत्) प्रत्यय होता है। यदि शब्द की उपधा या अन्त में अ, आ, या म् होता है तो मत् को वत् हो जाता है, यथा—गुण से युक्त गुणवान्, धन से युक्त धनवान्, ज्ञानवान्, विद्यावान्, मतिमान्, धीमान् बुद्धिमान्। स्त्रीलिंग में—धनवती, ज्ञानवती, गुणवती।

(१०) (अत इनिठनौ) अकारान्त शब्दों से 'वाला' या 'युक्त' अर्थ में शब्द के अन्त में इनि (इन्) और ठन् (इक्) प्रत्यय लगते हैं, यथा—गुण से गुणिन्, ज्ञान से ज्ञानिन्, धन से धनिन्, दन्ति से दन्तिन् (हाथी)। इक् प्रत्ययान्त—माया-मायिकः, धन-धनिकः, दण्ड–दण्डिकः।

(११) (तदस्य संजातंतारिकादिभ्य इतच्) युक्त अर्थ में तारकादि शब्दों से इतच् (इत) प्रत्यय होता है, यथा—तारक–तारकितं नभः, पिपासितः, क्षुधितः, पुष्पित, कुसुमिता (लता), दुःखितः, अङ्कुरितः।

(१२) (तस्यभावस्त्वतलौ) 'भाव' अर्थात् 'पन' अर्थ में शब्द के अन्त में 'त्व' और 'ता' प्रत्यय लगते हैं। (त्व प्रत्ययान्त शब्दों के रूप नपुंसक लिङ्ग में और ता प्रत्ययान्त शब्दों के रूप स्त्रीलिङ्ग में चलेंगे।) यथा—लघु–लघुता—लघुत्वम्, मूर्खता–मूर्खत्वम्, गुरुता–गुरुत्वम्, विद्वत्ता–विद्वत्त्वम्, क्षत्रियत्वम्, ब्राह्मणत्वम्, शूद्रत्वम्, हीनत्वम्।

(१३) (गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः०) गुणवाचक एवं ब्रह्मणादि शब्दों से भाव अर्थ में ष्यञ् (य) प्रत्यय होता है। शब्द के प्रथम स्वर को वृद्धि हो जाती है तथा अ का लोप हो जाता है, यथा—सुन्दर सौन्दर्य, सुख–सौख्य, शूर–शौर्य, धीर–धैर्य, कवि–काव्य, ब्राह्मण–ब्राह्मण्य, विदुष्–वैदूष्य, विदग्ध–वैदग्ध्य।

कुछ शब्दों के अन्त में ष्यञ् (य) या अ प्रत्यय स्वार्थ में होता है, यथा—बन्धु से बान्धव, प्रज्ञ से प्राज्ञ, करुणा से कारुण्य, चतुर्वर्ण–चातुर्वर्ण्य, सेना से सैन्य, समीप से सामीप्य, त्रिलोक से त्रैलोक्य, रक्षस् से राक्षस आदि।

(१४) (पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा) पृथु आदि शब्दों से भाव अर्थ में शब्द के अन्त में 'इमन्' प्रत्यय लगता है। अन्तिम अक्षर का लोप हो जाता है, यथा—गुरु से गरिमा, लघु से लघिमा, महत् से महिमा, अणु से अणिमा, मृदु से म्रदिम्ना। (ये शब्द पुंल्लिङ्ग में चलते हैं स्त्रीलिङ्ग में नहीं।)

(१५) (तेन तुल्यं क्रियाचेद् वतिः, तत्र तस्येव) तुल्य या सदृश अर्थ को बताने के लिए शब्द के बाद 'वत्' प्रत्यय लगता है, यथा—ब्राह्मण के तुल्य ब्राह्मणवत्, क्षत्रियवत्, वैश्यवत्, शूद्रवत्, देव शब्द के तुल्य देववत् आदि ।

(१६) (पञ्चम्यास्तसिल्) पञ्चमी विभक्ति के स्थान पर 'तः' प्रत्यय होता है, यथा गृहात्—गृहतः, कस्मात्—कुतः, यतः, ततः, इतः, सर्वतः, अभितः, परितः, समन्ततः, मत्तः (मुझ से), त्वत्तः (तुझ से), अस्मत्तः (हम से) ।

(१७) (सप्तम्यास्त्रल्) सप्तमी के स्थान पर 'त्र' प्रत्यय होता है, यथा—यस्मिन्—यत्र, कस्मिन्—कुत्र, अत्र, अन्यत्र, सर्वत्र, तत्र, बहुत्र ।

(१८) (सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा) सर्व आदि शब्दों से समय अर्थ में दा प्रत्यय होता है, यथा—सदा, सर्वदा, एकदा (एक बार), कदा, तदा, यदा, अन्यदा । इदम् का इदानीम् (अब) होता है । किम्, यत् आदि शब्दों से 'र्हि' प्रत्यय भी होता है, यथा—कदा (कर्हि), तदा (तर्हि) ।

(१९) (प्रकारवचने थाल्) सर्वनाम शब्दों से प्रकार अर्थ में थाल् (था) प्रत्यय होता है, यथा—येन प्रकारेण यथा, तेन प्रकारेण तथा, सर्वथा, उभयथा, अन्यथा, (नहीं तो, अन्य प्रकार से) । इत्थम्, कथम् में 'था' प्रत्यय के स्थान पर 'थम्' लगता है ।

(२०) (संख्याया विधार्थे धा) संख्या वाचक शब्द से प्रकार अर्थ में 'धा' प्रत्यय होता है, यथा—एकधा, द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, पञ्चधा, बहुधा (अनेक बार, प्रायः) शतधा, सहस्रधा ।

(२१) (प्रमाणे द्वयसज् दघ्नञ् मात्रचः) प्रमाण (नाप, तोल) अर्थ में शब्द से मात्र प्रत्यय होता है, यथा—हस्तमात्रम् (हाथ भर), कटिमात्रम् (कमर तक), जानुमात्रम् (घुटने तक), मुष्टिमात्रम् (मुट्ठी भर) ।

(२२) (द्विवचनविभाज्योपपदे तरबीयसुनौ) जब दो की तुलना की जाती है और उनमें से एक की विशेषता या न्यूनता बताई जाती है तब विशेषण के आगे 'तरप्' (तर) या 'ईयसुन्' (ईयस्) प्रत्यय होता है, यथा—देवः सोमात्पटुतरः पटीयान् वा, (लघु) लघुतरः, लघीयान्, (महत्) महत्तरः, महीयान् ।

(२३) (अतिशायने तमबिष्ठनौ) बहुतों में से एक की विशेषता बताने पर तमप् (तम) या इष्ठन् (इष्ठ) प्रत्यय होता है, यथा—कवीनां कविषु वा कालिदासः

श्रेष्ठः, छात्राणां छात्रेषु वा गोपालः पटुतमः पठिष्ठो वा। इनका विस्तृत वर्णन तुलनात्मक विशेषणों में देखो। ११— सफा में

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—हमें समाज की बुराइयों को दूर करने का यत्न करना चाहिए। २—अर्जुन ने जयद्रथ को मारने के लिए कठोर प्रतिज्ञा की। ३—जब श्री दशरथ के पुत्र राम वन जाने लगे तो सुमित्रा के पुत्र व्याकुल हुए कि मुझे वे घर ही न छोड़जायें। ४—दिति और अदिति के पुत्रों में घोर संग्राम हुआ। ५—पाणिनि के व्याकरण जाननेवाले को पाणिनीय कहते हैं। ६—आप कहाँ से आ रहे हैं और कहाँ जा रहे हैं? ७—लव और कुश दशरथ जी के पुत्र के पुत्र थे। ८—घुटने तक पानी में जा कर स्नान करो, गहरे पानी में न जाओ। ९—ज्ञानवाले और धनवाले लोगों में बहुत अन्तर है। १०—पुराने जमाने में लोग सदाचारी और सत्यवादी होते थे। ११—मथुरा में उत्पन्न हुए लोगों को माथुर कहते हैं। १२—पुराण की कथाओं पर आजकल लोग विश्वास नहीं करते। १३—वेद सम्बन्धी शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए। १४—लोक की बातों में लिप्त न होना चाहिए। १५—वह स्त्री धनवाली और ज्ञानवाली भी है।



अष्टम अभ्यास

समासप्रकरण

कारक प्रकरण में विभक्तियों का प्रयोग बताया गया है, पर कभी-कभी शब्दों की विभक्तियों को हटा करके वे छोटे कर दिये जाते हैं और एक या दो से अधिक विभक्तिरहित शब्द मिला दिये जाते हैं। इस एकसाथ जोड़ने को ही समास कहते हैं।

समास का अर्थ है 'संक्षेप' या 'घटाना' अर्थात् दो या अधिक शब्दों को इस प्रकार मिला देना कि उनके आकार में कुछ कमी भी हो जाय और अर्थ पूरा-पूरा निकल जाय, यथा—नराणां पतिः=नरपतिः।

यहाँ 'नरपति' का वही अर्थ है जो 'नराणां पतिः' का है, परन्तु दोनों शब्दों को मिला देने से 'नराणाम्' शब्द के विभक्ति-सूचक प्रत्यय (आणाम्) का लोप हो गया और 'नरपतिः' शब्द 'नराणां पतिः' से छोटा हो गया।

जब समास वाले शब्द को तोड़कर पहले का रूप दिया जाता है तब उसे विग्रह कहते हैं। विग्रह का अर्थ है 'टुकड़े-टुकड़े' करना, यथा—'सभापतिः' का विग्रह है—'सभायाः पतिः'।

समास के लिए संस्कृत वैयाकरणों ने नियम बना दिये हैं। ऐसा नहीं कि जिस शब्द को चाहा उसे दूसरे शब्द के साथ मिला दिया।

समास के छः भेद हैं—

१—अव्ययीभाव,
२—तत्पुरुष,
३—कर्मधारय (तत्पुरुष का भेद),
४—द्विगु (तत्पुरुष का भेद,
५—बहुव्रीहि, और
६—द्वन्द्व।

अव्ययीभावसमास

अव्ययीभाव समास में पहला शब्द अव्यय (उपसर्ग या निपात) रहता है और दूसरा शब्द संज्ञा, दोनों मिलाकर अव्यय हो जाते हैं। अव्ययीभाव समासवाले शब्द के रूप नहीं चलते। अव्ययीभाव समास वाले शब्द नपुंसकलिङ्ग के एक वचन में ही रहते हैं। इस समास में प्रायः पूर्व पदार्थ प्रधान रहता है, यथा—

शक्तिमनतिक्रम्य=यथाशक्ति (शक्ति के अनुसार), कृष्णस्य समीपे=उपकृष्णम् (कृष्ण के पास), निर्विघ्नम् (विघ्न का अभाव), अनुरथम् (रथ के पीछे), सहरि (हरि की तरह), आसमुद्रम् (समुद्र तक), अधिगृहम् (घर में), परोक्षम् (आंख से परे), ग्रामाद् बहिः=बहिर्ग्रामम् (गाँव से बाहर), उपशरदम् (शरद ऋतु के पास), उपगिरम् (वाणी के पास), यथेच्छम्, यथाकामम्, सचक्रम्, आबालवृद्धम्, बहिर्ग्रामम्, अनुकूलम्, प्रतिकूलम् आदि।

तत्पुरुष समास

जिन दो या दो से अधिक शब्दों के बीच में द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी विभक्तियाँ छिपी रहती हैं उनमें तत्पुरुष समास होता है।

तत्पुरुष समास में उत्तरपद प्रधान होता है, यथा—'राज्ञःपुरुषः—राजपुरुषः' इसमें पुरुष पद प्रधान है।

द्वितीया—रामम्+आश्रितः=रामाश्रितः। दुखं--श्रितः=दुःखश्रितः। विस्मयम्--आपन्नः=विस्मयापन्नः। भयं प्राप्तः=भयप्राप्तः शिवम्--आश्रितः=शिवाश्रितः। शरणं--प्राप्तः=शरणप्राप्तः, इत्यादि।

तृतीया–सुखेन–युक्तः=सुखयुक्तः। खड्गेन–हतः=खड्गहतः। अग्निना–दग्धः=अग्निदग्धः। हरिणा+त्रातः=हरित्रातः। मदेन–शून्यः=मदशून्यः। विद्यया–हीनः=विद्याहीनः इत्यादि।

चतुर्थी—धनाय–लोभः=धनलोभः। भूताय–बलिः=भूतबलिः। गवे–हितम्=गोहितम्, स्नानाय इदम्=स्नानार्थम्, भोजनार्थम् आदि।

पंचमी—चौरात्–भयम्=चौरभयम्। वृक्षात्–पतितः=वृक्षपतितः। रोगात्–मुक्तः=रोगमुक्तः, पापान् मुक्तः=पापमुक्तः आदि।

षष्ठी=राज्ञः–पुरुषः=राजपुरुषः। रजतस्य–पत्रम्=रजतपत्रम्। देवस्य–पूजा=देवपूजा। सुखस्य–भोगः=सुखभोगः। देवस्य–मन्दिरम्=देवमन्दिरम् इत्यादि।

सप्तमी—युद्धे–निपुणः=युद्धनिपुणः। जले–मग्नः=जलमग्नः। आतपे–शुष्कः=आतपशुष्कः। कार्ये–दक्षः=कार्यदक्षः इत्यादि।

कर्मधारयसमास

(तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः) विशेषण और विशेष्य का जो समास होता है उसे कर्मधारय समास कहते हैं, किन्तु विशेषण पूर्व में रहता है। यथा—कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः (बुरा आदमी) कुत्सितः छात्रः=कुछात्रः (बुरा विद्यार्थी) दीर्घम्–नयनम्=दीर्घनयनम्। नीलम्–उत्पलम्=नीलोत्पलम्। सुन्दरः–पुरुषः=सुन्दरपुरुषः। भूषितः–बालकः=भूषितबालकः। सुन्दरी–नारी=सुन्दरनारी। महान्–चासौ देवः=महादेवः। महत्–फलम्=महाफलम्। दुःखमेव–समुद्रः=दुःखसमुद्रः। कमलमेव मुखम्=कमलमुखम्। घन इव श्यामः=घनश्यामः। नवनीतमिव कोमलम्=नवनीतकोमलम्। पुरुषः व्याघ्र इव=पुरुषव्याघ्रः, नरशार्दूलः, अधरपल्लवः, नृसिंहः, चन्द्रसदृशं मुखम्=चन्द्रमुखम्। कमलचरणम् इत्यादि।

द्विगुसमास

(संख्यापूर्वो द्विगुः) यदि कर्मधारय समास के पूर्व कोई संख्यावाचक शब्द हो तो उसे द्विगुसमास कहते हैं। यथा—समाहार में—पञ्चानां गवां समाहारः=पञ्चगवम्। पञ्चपात्रम्। त्रयाणां लोकानां समाहारः=त्रिलोकी, त्रयाणां भुवनानां समाहारः=त्रिभुवनम्। शतानाम् अब्दानां समाहारः=शताब्दी। तद्धितार्थ में—पञ्चभिः गोभिः क्रीतः=पञ्चगुः। पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः=पञ्चकपालः। उत्तरपद में—पञ्च

हस्ताः प्रमाणमस्य=पञ्चहस्तप्रमाणः। द्वाभ्यां मासाभ्यां जातः=द्विमासजातः इत्यादि।

समाहार अर्थ में समास में एक वचन ही रहता है। समास होने पर नपुंसकलिङ्ग या स्त्रीलिङ्ग शब्द बन जाते हैं, यथा—त्रिलोकम्—त्रिलोकी, चतुर्युगम्—चतुर्युगी, दशवर्षम्—दशाब्दी।

बहुव्रीहिसमास

(अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः) जिस समास में अन्य पद के अर्थ की प्रधानता हो अर्थात् जो-जो पद समस्त हों उनका स्वतन्त्र अर्थ बोध न होकर अन्य किसी व्यक्ति या वस्तु का बोध करके वे शब्द किसी अन्य शब्द के विशेषण की तरह काम करते हों उसे बहुव्रीहि समास कहते हैं। बहुव्रीहि के चार भेद हैं:-(१) समानाधिकरण (२) तुल्ययोग (३) व्यधिकरण और (४) व्यतिहार।

१-समानाधिकरण-जहाँ दोनों पदों में समान विभक्ति हो, यथा—निर्गतं भयं यस्मात् सः=निर्गतभयः (पुरुषः)। हताः शत्रवो येन सः=हतशत्रुः। दत्तं धनं यस्मै सः=दत्तधनः (भिक्षुः)। आरूढः कपिः यं सः=आरूढकपिः (वृक्षः)। पतितं पर्णं यस्मात् सः=पतितपर्णः (वृक्षः)। महान् आशयो यस्य सः=महाशयः (सत्पुरुषः)। निर्मलाः आपो यस्मिन् तत=निर्मलापम् (सरः)।

२-तुल्ययोग-इसमें सह शब्द का तृतीयान्त पद से समास होता है यथा—बान्धवैः सहितः=सबान्धवः या सहबान्धवः। अनुजेन सहितः=सानुजः या सहानुजः। विनयेन सह विद्यमानम्=सविनयम्, सानुरोधम्, सादरम्।

३-व्यधिकरण—जिसमें भिन्नभिन्न विभक्तिवाले पदों का समास हो, यथा—पुण्ये मतिः यस्य सः=पुण्यमतिः। धनुः पाणौ यस्य सः=धनुष्पाणिः। कुम्भात् जन्म यस्य सः=कुम्भजन्मा।

४-व्यतिहार—यह समास तृतीयान्त और सप्तम्यन्त पदों के साथ होता है और युद्ध का बोधक है। यथा—केशेषु केशेषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तम्=केशाकेशि। दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तम्=दण्डादण्डि। मुष्टामुष्टि इत्यादि।

द्वन्द्वसमास

(उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः) जब दो या अधिक संज्ञाएँ इस तरह जुड़ी रहती हैं

कि उनके बीच में 'च' (और) छिपा रहे तब उनमें 'द्वन्द्वसमास' होता है। द्वन्द्वसमास तीन प्रकार का है—१—इतरेतर, २—समाहार और ३—एकशेष।

१—इतरेतर—जिसमें शब्दों की संख्यानुसार अन्त में वचन होता है और प्रत्येक शब्द के बाद विग्रह में च लगता है, यथा—दिनञ्च यामिनी च=दिनयामिन्यौ। कन्दश्च मूलं च फलं च=कन्दमूलफलानि। माता च पिता च=मातापितरौ। सूर्यश्च चन्द्रमाश्च=सूर्याचन्द्रमसौ।

२—समाहार—जहाँ अनेक पदों का समाहार (एक जगह ठहरना) बोध हो। समाहार द्वन्द्व समास में समस्त पद में नपुंसकलिङ्ग का एक वचन होता है, यथा—हस्तौ च पादौ च=हस्तपादम्। भेरी च पटहश्च अनयोः समाहारः=भेरीपटहम्। हस्तिनश्च अश्वाश्च एतेषां समाहारः=हस्त्यश्वम्। मथुरा च पाटलिपुत्रश्च=मथुरापाटलिपुत्रम्। दधिघृतम्। गोमहिषम्। अहश्च दिवा च=अहर्दिवम्। (अपवाद) किन्तु कुशश्च लवश्च=कुशलवौ। अहश्च रात्रिश्च=अहोरात्रः।

३—एकशेष—एक विभक्ति वाले समस्त अनेक समानाकार पदों में जहाँ एक ही पद शेष रह जाय और अर्थ के अनुसार उसमें द्विवचन या बहुवचन हो, तो एकशेष समास होता है। यथा—स च स च=तौ। वृक्षश्च वृक्षश्च=वृक्षाः। ब्राह्मणश्च ब्राह्मणी च=ब्राह्मणौ। हंसी च हंसश्च—हंसौ। पुत्रश्च दुहिता च=पुत्रौ। माता च पिता च=पितरौ। श्वश्रूश्च श्वशुरश्च=श्वशुरौ इत्यादि।

जब उद्देश्य के रूप में प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुष में से दो या तीन एकत्र हो जाते हैं तब क्रिया का रूप इस प्रकार निर्धारित होगा—

(१) प्रथम पुरुष और प्रथम पुरुष—क्रिया प्रथम पुरुष की होगी और वचन कर्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार—यथा—(रमेश, गोपाल और सुरेश पढ़ते हैं) रमेशः गोपालः सुरेशश्च पठन्ति, देवः सुशीला च पठतः।

(२) प्रथम पुरुष तथा मध्यम पुरुष—क्रिया मध्यम पुरुष की होगी और वचन कर्त्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार, यथा—(वह और तू पढ़ता है) स त्वं च लिखथः। स यूयं च लिखथ अर्थात् प्रथम पुरुष और मध्यम पुरुष में मध्यम पुरुष के अनुसार क्रिया होगी

(३) जब उत्तम पुरुष साथ में होगा तब उत्तम पुरुष ही रहेगा और वचन

कर्ता की सामूहिक संख्या के अनुसार, यथा—(तू और मैं पढ़ते हैं) त्वमहं च पठावः। स त्वमहं च पठामः। अहं युवां च पठामः।

अन्यसमास

'नहीं' अर्थवाले नञ् का जब दूसरे शब्द के साथ समास होता है तब उसे नञ् समास कहते हैं। नञ् समास सुबन्त पद के साथ होता है। व्यञ्जन परे रहने पर 'अ' और स्वर परे होने पर "अन्' हो जाता है, यथा—न प्रियः=अप्रियः। न सुखम्=असुखम्। न उपकार=अनुपकारः इत्यादि।

मध्यमपदलोपी कर्मधारय या बहुव्रीहि में होता है। यथा—कर्मधारय—सिंह-चिह्नितम् आसनम्=सिंहासनम्। देवपूजको ब्राह्मणः=देवब्राह्मणः। बहुव्रीहि-चन्द्र इव आननं यस्याः सा=चन्द्रानना। कण्ठे स्थितः कालो यस्य सः=कण्ठकालः।

अलुक् समास—जिसमें बीच की विभक्ति का लोप न हो। यथा—मनसाकृतम्, आत्मनेपदम्, परस्मैपदम्। दूरादागतः। युधिष्ठिरः। वाचोयुक्तिः। अन्तेवासी। पङ्के-रुहम् इत्यादि।

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—देवप्रयाग के पास भागीरथी और अलकनन्दा का संगम है। २—माता-पिता पुत्र को सदुपदेश देते हैं। ३- शिष्य ने विनय के साथ गुरु को प्रणाम किया। ४—अशोक का राज्य समुद्रतक फैला हुआ था। ५—धार्मिक पुरुष मरते-मरते भी धर्म की रक्षा करते हैं। ६—मैं हर रोज विद्यालय जाता हूँ। ७—संसार में सच्चे मार्ग पर चलनेवाला मनुष्य साधु कहलाता है। ८—महात्मा पुरुष सुख से युक्त जीवन को नहीं चाहते। ९—शरण में आये हुए को नहीं मारना चाहिए। १०—व्याध के तीर से विधा हुआ मोर मर गया। ११—जो तुम्हारे घर अतिथि आया है उसको खाना खिलाओ। १२—तूने भूतों के लिए बलियाँ क्यों नहीं रखीं? १३—तुम्हारे जैसा मनुष्य तीनों लोकों में नहीं हैं। १४—ईश्वर की भक्ति मनुष्य के जीवन को सफल बना देती है। १५—क्षण-क्षण जीवन का काल घटता जाता है। १६—उसके पिता माता बड़े धर्मात्मा हैं। १७—महाराज विक्रमादित्य का राज्य हिमालय तक विस्तृत था। १८—संसार के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर हैं। १९—मैंने पिता जी के कमल समान चरणों को नमस्कार किया। २०—विद्या से हीन पुरुष का जीवन निरर्थक है।

नवम अभ्यास

स्त्रीप्रत्यय प्रकरण

पुंल्लिङ्ग शब्दों को स्त्रीलिङ्ग बनाने के लिए जिन प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है उन्हें स्त्रीप्रत्यय कहते हैं। स्त्रीप्रत्यय टाप् (आ) ङीप् (ई) हैं।

१—(अजाद्यतष्टाप्) अकारान्त शब्दों के आगे स्त्रीलिङ्ग में टाप् (आ) होता है, यथा—अचल—अचला, कृष्ण—कृष्णा, सरल—सरला, प्रथम—प्रथमा, अनुकूल—अनुकूला, पूर्व—पूर्वा, निपुणा, अज—अजा (बकरी), कोकिला, अश्वा, चटका, मूषिका, बाला, वत्सा, ज्येष्ठा, पुत्रिका, वैश्या, क्षत्रिया, शूद्रा इत्यादि।

२—अक भागान्त शब्दों के उत्तर 'आ' प्रत्यय होने से ककार के पूर्व अकार का इकार होता है, यथा—पाचक—पाचिका, साधक—साधिका, गायक—गायिका, बोधक—बोधिका इत्यादि।

३—(षिद्गौरादिभ्यश्च) गौर प्रभृति शब्दों के परे स्त्रीलिङ्ग में ईप् प्रत्यय होता है।

ईप् प्रत्यय होने के पूर्व अकार का लोप हो जाता है, यथा—गौर-गौरी, किशोरी, कुमारी, तरुणी, सुन्दरी, पितामही, मातामही, नदी, नटी, स्थली, तटी, कदली।

(४) (जातेरस्त्री०, पुंयोगा०) जाति बोध होने से जातिवाचक अकारान्त शब्दों के उत्तर स्त्रीलिङ्ग में 'ई' प्रत्यय होता है, यथा–सिंह-सिंही, मृगी, व्याघ्री, भल्लुकी, मानुषी, ब्राह्मणी, गोपी, महिषी, शूकरी, गर्दभी, शृगाली, बिडाली, घोटकी, हंसी, सारसी इत्यादि।

५—(ऋन्नेभ्योङीप्) ऋकारान्त शब्दों के उत्तर 'ईप्' प्रत्यय होता है, यथा—कर्तृ -कर्त्री, दात्री, जनयित्री, शिक्षयित्री इत्यादि।

सूचना—स्वसृ आदि शब्दों के उत्तर 'ईप्' प्रत्यय नहीं होता है, यथा—स्वसा, माता, दुहिता, ननान्दा, तिस्रः, चतस्रः।

६—नकारान्त शब्दों के उत्तर स्त्रीलिङ्ग में 'ईप्' प्रत्यय होता है, यथा—मालिन्–मालिनी, मानिनी, कामिनी, गुणिनी, मनोहारिणी, तपस्विनी, अधिकारिणी।

सूचना—स्त्रीलिंग में संख्यावाचक नान्त शब्दों और मन् भागान्त शब्दों के उत्तर

ईप् प्रत्यय नहीं होता, यथा—पञ्च. सप्त, अष्ट, नव, दश तथा सीमा, पामा, सुदामा, अतिहिमा इत्यादि ।

७—(उगितश्च) जिनमें उकार और ऋकार का लोप होता है उन प्रत्ययों (मतुप्, वतुप्, इयसु, तवतु, शतृ) से बने हुए शब्दों के उत्तर स्त्रीलिंग में ईकार होता है, यथा—उकार लोप—भवत्—भवती, श्रीमत्—श्रीमती, बुद्धिमत्—बुद्धिमती लज्जावत्—लज्जावती । ऋकार लोप—रुदत्—रुदती, जानत्—जानती,—गृह्णत्—गृह्णती इत्यादि ।

८—भ्वादि, दिवादि, और चुरादिगणीय धातुओं से तथा णिजन्त से शतृ प्रत्यय करने पर जो शब्द बनते हैं उन शब्दों से 'ई' प्रत्यय करने पर 'त्' के पूर्व न् लग जाता है, यथा—(गच्छत्)—गच्छन्ती, (वदत्)—वदन्ती, (दीव्यत्) दीव्यन्ती, (नृत्यत्) नृत्यन्ती, (चिन्तयत्) चिन्तयन्ती, (भक्षयत्) भक्षयन्ती, (दर्शयत्) दर्शयन्ती, (कारयत्) कारयन्ती इत्यादि ।

९—तुदादिगणीय धातुओं से और अदादिगणीय आकारान्त धातुओं से शतृ प्रत्यय करने पर जो शब्द बनते हैं उनके आगे स्त्रीलिंग में 'ई' प्रत्यय करने से विकल्प से त् के पूर्व न् लगता है। यथा—(इच्छत्) इच्छन्ती, इच्छती । (पृच्छत्) पृच्छन्ती, पृच्छती। (स्पृशत्) स्पृशन्ती, स्पृशती । (यात्) यान्ती, याती । (भात्) भान्ती, भाती । (इनके रूप नदी शब्द की भाँति चलते हैं ।)

१०—टकारेत् और षकारेत् प्रत्ययों से बने हुए शब्दों के परे स्त्रीलिंग में 'ई' होता है, यथा—टित्—गान—गानी (ल्युट्); कर्मकर,—कर्मकरी, अर्थंकरी, निशाचरी, भयंकरी (अट्), द्वयी, त्रयी, चतुष्टयी, दयामयी (तयट् आदि); षित्—वार्षिक—वार्षिकी, लौकिक—लौकिकी (षिकण्); मानवी, मैथिली, पार्वती, पौत्री (षण्); कीदृशी (षङ्); भागनेयी (षियण्), इत्यादि ।

११—(स्वाङ्गाच्चोपसर्जना०)—बहुव्रीहि समास में अवयववाचक अकारान्त शब्दों के उत्तर स्त्रीलिंग में विकल्प से 'ई' होता है, यथा—चन्द्रमुखी, चन्द्रमुखा । सुकेशी, सुकेशा । कृशाङ्गी, कृशाङ्गा । बिम्बोष्ठी, बिम्बोष्ठा, इत्यादि ।

१२—(जातेरस्त्री०) जाया (स्त्री) अर्थ में जातिवाचक अकारान्त शब्दों के आगे 'ई' होता है, यथा—ब्राह्मणस्य जाया ब्राह्मणी, शूद्री, गोपी, इत्यादि । पालक शब्द आगे होने से 'ई' नहीं होता, यथा—गोपालिका, पशुपालिका इत्यादि ।

जाया = स्त्री.

१३—(इन्द्रवरुणभवशर्व०)—जाया अर्थ में इन्द्र, वरुण, भव, शर्व, रुद्र, मृड और ब्रह्मन् शब्दों से स्त्रीलिंग में आनीप् प्रत्यय होता है, यथा—इन्द्रस्य जाया इन्द्राणी, वरुणानी, भवानी, शर्वाणी, रुद्राणी, मृडानी और ब्रह्माणी। (ब्रह्मन्—शब्द के 'न्' का लोप हो जाता है)।

१४—(बह्वादिभ्यश्च) कृत् के ह्रस्व इकारान्त शब्द से परे विकल्प से 'ई' प्रत्यय होता है, जैसे—रात्रिः; रात्री। श्रेणिः, श्रेणी। राजिः, राजी। भूमिः भूमी इत्यादि। क्तिन् प्रत्ययान्त में नहीं होता, जैसे—मतिः; गतिः स्थितिः इत्यादि।

१५—गुणवाचक उदन्त शब्द से परे विकल्प से 'ई' प्रत्यय होता है, यथा—मृद्वी, मृदुः। पट्वी, पटुः। साध्वी, साधुः। गुर्वी, गुरुः इत्यादि।

कुछ ज्ञातव्य स्त्रीप्रत्ययान्त शब्द

पुंल्लिग	स्त्रीलिंग	पुंल्लिग	स्त्रीलिंग
गवय	गवयी		
हय	हयी	मातुल	मातुलानी
मत्स्य	मत्सी		मातुली
मनुष्य	मनुषी	यवन (लिपि)	यवनानी
शूद्र (जाति)	शूद्रा	यवन (स्त्री)	यवनी, यवनिक
,, (पत्नी)	शूद्री	क्षत्रिय (जाति)	क्षत्रिया
			क्षत्रियाणी
राजन्	राज्ञी	,, (पत्नी)	क्षत्रियी
		उपाध्याय (पत्नी)	उपाध्यायानी
युवन	युवती		उपाध्यायी
,,	युवतिः	,, (अध्यापिका)	उपाध्याया
,,	यूनी	आचार्य (पाठिका)	आचार्या
श्वन्	शुनी	आचार्य (पत्नी)	आचार्यानी
		हिमम्	हिमानी
मघवन्	मघोनी	अरण्यम्	अरण्यानी
,,	मघवती	सखि	सखी
प्राच् (पूर्व)	प्राची	कुरुः	कुरूः
प्रत्यच् (पच्छिम)	प्रतीची	श्वशुर	श्वश्रूः

अवाच् (दक्खिन)	अवाची	अर्य (वैश्य)	(अर्याणी
तस्थिवस्	तस्थुषी	,, (जाति)	(अर्या
विद्वस्	विदुषी	अर्य (पत्नी)	अर्यी
सूर्य	सूर्या (देवता)		
सूर्य	सूरी (कुन्ती),	पतिः	पत्नी
चातुर्य	चातुरी		

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—छोटी उम्र वाली बालिका खेल रही है। २—इतनी पतलीकमर वाली स्त्री मेरे देखने में पहले नहीं आयी। ३—पति के वियोग में विलाप करती हुई दमयन्ती ने एक अजगर देखा। ४—वह कुम्हार की स्त्री घड़े बेच रही है। ५—गार्गी पढ़ी लिखी स्त्री थी। ६—मामा की स्त्री ने मेरा प्यार दुलार किया। ७—उस पुरुष की स्त्री अच्छे लक्षणों वाली है। ८—आचार्यजी की स्त्री छात्राओं को पढ़ा रही हैं। ९—उस तपकरती हुई पार्वती ने घोर तप करके शिव जी को प्रसन्न किया। १०—उपाध्याय की स्त्री माता के सदृश होती है। ११—श्रीराम का विवाह चन्द्र के समान मुखवाली सीता जी से हुआ। १२—उस नाचने वाली लड़की ने अपने कौशल से देखनेवालों को प्रसन्न कर दिया।

दशम अभ्यास

जातिवाचक शब्द

बढ़ई—वर्धकिः, स्यपतिः, तक्षकः
किसान—कृषीवलः, कृषकः
नौकर—भृत्यः प्रैष्यः, किङ्करः
पड़ोसी—प्रतिवेशी (पुं०)
खिलाड़ी—आक्रीडी (पुं०)
सुनार—स्वर्णकारः
लोहार—लौहकारः
माली—मालाकारः

मल्लाह—कर्णधारः, नाविक, कैवर्तः
चप्पू—अरित्रम्
चित्र बनाने वाला—चित्रकारः
तेली—तैलकारः, तैलिकः
जुआड़ी—द्यूतकारः
मेहतर—श्वपचः, मार्जकः, खलपूः
झाड़ू—सम्मार्जनी
चाक—चक्रम्

कारीगर—शिल्पी, कारुकः
धोबी—रजकः
जुलाहा—तन्तुवायः
मदारी—ऐन्द्रजालिकः, आहितुण्डिकः
फावड़ा—खनित्रम्
मजदूर—भारवाहः
मजदूरी—भृतिः
दर्जी—सौचिकः, सूचकः
नाई—नापितः,क्षौरिकः
रंगरेज—रञ्जकः, वस्त्ररागकृत्
शिकारी—व्याधः
दरवान—प्रतीहारः
बौना—वामनः
पेटू—तुन्दिलः
भूनने वाला—भर्जकः
भाड़—भूर्जनयन्त्रम्
लेप लगाने वाला—लेपकः, सुधाजीवी
ठग—वञ्चकः
चुड़िहार—काचकङ्कणविक्रेता (पुं०)
सितारिया—वैणिकः, वीणावादकः
खटिक—शाकविक्रेता
शाणवाला—शस्त्रमार्जकः, असिजीवी
कंघा वाला—कङ्कतकृत्
चमार—चर्मकारः
कुम्हार—कुम्भकारः, कुलालः
चारण—कुशीलवः
कान का मैल निकालने वाला—(कनमैलिया) कर्ण-मलनिस्सारकः

बँहगी—जलानयनयन्त्रम्
कहार—जलवाहः, कहारः
कसाई—मांसिकः, मांसविक्रेता
कलाल—शौण्डिकः, सुराजीवी
शराब—मद्यं, सुरा, मदिरा
शराबघर—शुण्डापानं, मद्यस्थानम्
खेत—वप्रः, केदारः, क्षेत्रम्
रेत—सिकता
टोकरा—कण्डोलः
पेटी—पेटिका,मञ्जूषा
प्याला—चषकः, पानपात्रम्
बाँसुरी—वंशी, वेणुः
मृदङ्गः—मृदङ्गः, मुरजः
मोम—द्रावकः
आवा—आपाकः
बाजा—वादनम्, वाद्यम्
ढोल—आनकः, पटहः
चक्की (घराट)—घरट्टः
नगारा—दुन्दुभिः
ढिंडोरापीटने का बाजा—डिण्डिमः
कैंची—कर्त्तरी, छेदनी (स्त्री०)
पनशाला—प्रपा, पानीयशालिका
आरा—क्रकचः (क्रकचिका)
चाकू—छुरी, छुरिका, असिपुत्री, कर्तरिका
सूई—सूचिः, सेवनी (स्त्री०)
सूई का काम—सूचिकर्म, सूत्रकर्म (न०)
दरांती—दात्रम्
तागा—सूत्रम्
छाज—शूर्पम् (न०)

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—वह खिलाड़ी लड़का पढ़ने में भी प्रथम आया। २—कारीगर ने कितनी अच्छी पेटी बनायी। ३—हमारा पड़ोसी शान्तिप्रिय है, कभी कलह नहीं करता। ४—सुनार देखते हुए सोना चुराता है अतएव 'पश्यतोहर' कहलाता है। ५—कुम्हार आवा में मिट्टी के बरतन पकाता है। ६—लोहार चाकू, कैंची, सूई बनाता है। ७—चमार चमड़े से जूता सीता है (सीव्यति)। ८—कुम्हार डंडे से चाक घुमा रहा है। ९—भूनने वाला रेत के साथ चना भून रहा है। १०—लेप लगाने वाल ने पैर में लेप लगाया। ११—खटिक सुबह और शाम तरकारियाँ बेचता है। १२—कल सरकार ने ढिंढोरा पिटवाया कि कोई आठ बजे के बाद न घूमे। १२—गौ माता को कसाइयों के हाथ न बेचना चाहिए। १४—इस पनशाला में ठंडा पानी मिलता है। १५—विवाह आदि उत्सवों में कहार बहंगियों से पानी लाते हैं।

एकादश अभ्यास

वस्त्रों के नाम

रुई (कपास)—कार्पास:, तूल:
कपड़ा—वस्त्र,वसनं,चीरम्
पगड़ी—उष्णीषं,शिरस्त्रम्
मुरेठा (टोपी)—शिरस्कं, शिरस्त्राणम्
कुरता मिर्जई कोट—कञ्चुक:, निचोल:
दुपट्टा—उत्तरीयम्
अंगरखा—अङ्गरक्षिणी-रक्षिका
जांघिया—जङ्घावस्त्रम्
धोती—अधोवस्त्रम्
गलेबन्द—गलबन्धनांशुकम्
रूमाल—करवस्त्रम्
कंबल—कम्बल:
लोई—रल्लक:
रजाई—तूलिका, नीशार:,
साड़ी—शाटिका

रेशमी—कौशिकं,क्षौमं, दुकूलम्
परदा—यवनिका, तिरस्करिणी
कनात—काण्डपट:, अपटी
पाजामा—जङ्घात्राणम्
पतलून—जङ्घावस्त्रम्
मोजा—पादत्राणम्
तकिया—उपधानम्
चादर (बिछाने की)—शय्याच्छादनम्, प्रच्छद:
बिछौना—शय्या
कमरबन्द—रशना, परिकर:, कटिसूत्रम्
पर्दा—अवगुण्ठनम्
जूता—उपानत् (स्त्री०)
जाकट—अङ्गरक्षक:
अंगोछा—गात्रमार्जनी

शृङ्गारिक वस्तुओं के नाम

सिन्दूरम्—सिन्दूरम्
बिन्दी—बिन्दुः (पुं०)
साबुन—फेनिलः
काजल—अञ्जनम्, कज्जलम्
इत्र—गन्धतैलम्
अंगूठी—अंगुलीयकम्
ओढ़ने की चादर—उत्तरीयाञ्चलः
आयना—दर्पणः, मुकुरः, आदर्शः
ब्रुश—लोममयीमार्जनी
कङ्घी—कङ्कतिका, प्रसाधनी
दांतकुरेदने की सुई—दन्तशोधनी, सूचं
मंगल टीका—ललाटिका

गहनों के नाम

गहना—अलङ्कारः, आभरणम्
कण्ठा—कण्ठिका, कण्ठाभरणम्
अंगूठी—अंगुलीयकम्, ऊर्मिका
माला—ललन्तिका, लम्बनम्, स्रक्
चूड़ी—काचवलयः-यम्
बाजूबन्द—केयूरम्, अङ्गदम्
कनफूल—कर्णपूरः, कर्णिका
पहुँची—आवापकः, कटकः
बुलाक—नासाभरणम्
करधनी—मेखला, काञ्चिः
हसुली—ग्रैवेयकम्
टिकुली—ललाटालङ्कारः
कँगना—कङ्कणः, कङ्कणम्
नथ—नासाभरणम्
पाजेब (झांझ)—नूपुरः
वाली—कुण्डलम्
बेणी—स्त्रीमस्तकाभरणम्

संस्कृत में अनुवाद करो---

१—पढ़ी लिखी स्त्रियाँ जेवर पसन्द नहीं करतीं। २—आजकल इत्र, तेल, साबुन के विना पूरा शृंगार नहीं होता। ३—साबुन से कपड़े साफ करो। ४—शहर की स्त्रीयाँ नथ, बुलाक से बड़ी नफरत करती हैं। ५—चूड़ी पहनने का रिवाज शहर और गांव सभी जगह है। ६—विवाह में कङ्कण पहनाया जाता है। ७—कङ्घी से बाल साफ रक्खो। ८—ओढने बिछाने की चादरें बिलकुल साफ होनी चाहिएँ। ९—सिन्दूर सुहाग की एक निशानी है। १०—रूमाल से हाथ-मुँह साफ रखने चाहिएँ। ११—कुरता, कोट पतलून पुराने जमाने के कपड़े नहीं हैं। १२—असभ्य जातियों में जेवरों का बहुत प्रचार है।

द्वादश अभ्यास

पशुओं के नाम

हाथी—गजः, करी
शेर—सिंहः, सिंही
बाघ—व्याघ्रः, व्याघ्री
भालू—ऋक्षः, भल्लूकः
गैंडा—गण्डकः
सुअर—शूकरः
भेड़िया—वृकः
गीदड़—शृगालः, फेरुः
खरगोश—शशकः
बंदर—वानरः, कपिः
हरिण—मृगः
नेवला—नकुलः
गाय—गौः
बैल—बलदः, वृषभः

घोड़ा—अश्वः
ऊँट—उष्ट्रः
गधा—गर्दभः
भैंस—महिषः, महिषी
कुत्ता—कुक्कुरः, श्वा
कुत्ती—शुनी
बिल्ली—मार्जारः, मार्जारी
बकरा—अजः
हिरन का बच्चा—हरिणकः
बकरी—अजा
भेड़—एडका
चूहा, चूही—मूषिकः, मूषिका
गोह—गोधा

पक्षियों के नाम

कोयल—कोकिलः
मोर—मयूरः
हंस—हंसः
तोता—शुकः
मैना—सारिका
पपीहा—चातकः
चकवा—चक्रवाकः
तीतर—तित्तिरिः
बटेरा—लावः
चकोर—चकोरः
ममोला—खञ्जनः

कबूतर—कपोतः
बतक—वर्तकः, वर्तिका
टिटीहर—टिट्टिभः, टिट्टिभी
चील—चिल्लः
कौवा—काकः
मुर्गा—कुक्कुटः, कुक्कुटी
चिड़िया—चटकः, चटका
गीध—गृध्रः
बगला—बकः
उल्लू—उलूकः
बाज—श्येनः

पशुपक्षियों की बोलियाँ

(शेर) दहाड़ते हैं—सिंहा गर्जन्ति
(हाथी) चिंघाड़ते हैं—गजा बृंहन्ति
(घोड़े) हिनहिनाते हैं—अश्वा ह्रेषन्ते
(गधे) हींगते हैं—गर्धवा रासन्ते
(गौवें) राँभती हैं—गावः रम्भन्ते
(भैंसे) रांभती हैं—महिष्यः रेभन्ते
(गीदड़) चीखते हैं—क्रोष्टारः क्रोशन्ति
(बिल्लियाँ) म्याऊं करती हैं—विडालाः षीवन्ति
(मेंढक) टर्राते हैं—दर्दुरा रुवन्ति
(सांप) फुंकारते हैं—फूत्कुर्वन्ति
(चिड़ियाँ) चूं चूं करती हैं—पक्षिणः चीभन्ते
(कौवे) काँव काँव करते हैं—काका: कायन्ति
(कुत्ते) भौंकते हैं—श्वानः बुक्कन्ति
(भेड़िये) गुर्राते हैं—वृकाः रसन्ति

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—शेर गरजता है और वह वन गूंज उठता था। २—गीदड़ों की चीखें सुनकर अन्य गीदड़ भी चीखते हैं। ३—गौवें अपने बच्चों के मिलने के लिए राँभती हैं। ४—शेर और हाथी का स्वाभाविक वैर है। ५—लोग तोता और मैना को चाव से पालते हैं। ६—कौवा एक ऐसा पक्षी है जिसके लिए किसी के दिल में स्थान नहीं। ७—बंदर और भालू का नाच बच्चों को बहुत अच्छा लगता है। ८—चूहा और बिल्ली का सहज वैर है। ९—जानवरों में श्रृगाल और पक्षियों में कौवा बड़ा चतुर है। १०—कहते हैं चकोर चन्द्र की किरणों का पान करता है। ११—जिन्हें घोड़े की सवारी नहीं आती वे गधे की सवारी करते हैं। १२—बाज बड़ा शिकारी पक्षी है। १३—रेगिस्तान में ऊँट का बड़ा महत्त्व है। १४—गैंडे को मारना अत्यन्त कठिन है। १५—मेंढ़क टर्राते हैं, किन्तु गायें पानी पीती ही हैं।

त्रयोदश अभ्यास

कुछ क्रियात्मक शब्द (नपुंसकलिंग)

उठना—उत्थानम्
बैठना—उपवेशनम्
सोना—शयनम्
जागना—जागरणम्
हँसना—हसनम्
रोना—रोदनम्
पीना—पानम्
खाना—खादनम्

बोलना—भाषणम्
धोखा देना—प्रतारणम्
गर्जना—गर्जनम्
छूना—स्पर्शनम्
जानना—ज्ञानम्
लेना—आदानम्
देना—दानम्
घूमना—परिभ्रमणम्
ढूंढना—अन्वेषणम्
निगलना—निगरणम्
चबाना—चर्वणम्
चढ़ना—आरोहणम्
उतरना—अवरोहणम्
डुबकी लगाना—निमज्जनम्
पानी से बाहर आना—उन्मज्जनम्
धोना—प्रक्षालनम्
निचोड़ना—निष्पीडनम्
पीसना—पेषणम्
घिसना—घर्षणम्
लीपना—लेपनम्
ढाँपना—आवरणम्
ठगना—वञ्चनम्
पोंछना—प्रोञ्छनम्
सूंघना—गन्धनम्
चाटना—लेहनम्
नाचना—नर्तनम्
गाना—गानम्
बजाना—वादनम्

तोलना—तोलनम्
मापना—मानम्
इकट्ठा करना—संग्रहणम्
बिखेरना—विक्षेपणम्
बाँधना—बन्धनम्
छोड़ना—मोचनम्, विसर्जनम्
खोलना—उद्घाटनम्
रँगना रञ्जनम्
चुनना—चयनम्
फेंकना—प्रक्षेपणम्
ऊपर फेंकना—उत्क्षेपणम्
नीचे फेंकना—अपक्षेपणम्
भूल जाना—विस्मरणम्
ढाँकना—पिधानम्
फैलाना—प्रसारणम्
भूनना—भर्जनम्
तोड़ना—त्रोटनम्
जोड़ना—संयोजनम्
खरीदना—क्रयणम्
बेचना—विक्रयणम्
घेरना—वेष्टनम्
भेजना—प्रेषणम्
गाड़ना—निखननम्
निकालना—निष्कासनम्
भागना—पलायनम्
बोना—वपनम्
बुनना—वयनम्
लेजाना—हरणम्, नयनम्

संस्कृत में अनुवाद करो

१—धन खर्च न करना गाड़ने के ही समान है। २—दूध आदि चीजें ढांक कर रखनी चाहिएँ। ३—भोजन गरम रखना चाहिए। ४—धन संग्रह करना चाहिए, पर उसको ठीक तरह से खर्च भी करना चाहिए। ५—सिपाहियों को देख कर चोरों ने भागना शुरू किया। ६—अच्छे गृहस्थ अपने घरों को लीप-पोत कर रखते हैं। ७—पहाड़ का चढ़ना-उतरना अच्छा व्यायाम है। ८—छात्रों को नाचने गाने में समय बरबाद न करना चाहिए। ९—वस्त्र निचोड़ने से जल्दी सूख जाता है। १०—दवाई घिसकर बीमार को पिला दो। ११—किसी चीज को निगलना न चाहिए उसे चबाना चाहिए। १२—हंसना, रोना मनुष्य-जीवन के साधारण धर्म हैं। १३—भोजन करने के बाद शेष भोजन फेंकना न चाहिए। १४—ठगने के भी अनेक ढग हैं, और ठगों के चुंगुल में चतुर से चतुर लोग भी फँस जाते हैं। चन्दन घिसने से हाथों में सुगन्धि आजाती है।

चतुर्दश अभ्यास

कुछ व्यावहारिक शब्द

देश में आया हुआ—आयातः
देश से गया हुआ—निर्यातः
अदल-बदल—विनियमः
ऐनक—उपनेत्रम्
आँधी—वात्या
कढ़ाई—कटाहः
कण्डा (पाथी)—करीषम्
कसरत—व्यायामः
गली—प्रतोलिका
कानून—राजनियमः, विधिः
कैद—कारावासः
खिड़की—गवाक्षः

मुद्दई—वादी
मुद्दालेह—प्रतिवादी
घूस—उत्कोचः
छींक—क्षवथुः, छिक्का
जामिन—प्रतिभूः
जुगनू—खद्योतः
जुर्माना—अर्थदंडः
झरना—निर्झरः
पैसा—पणः (पुं०)
अठन्नी—रूपकार्द्धकम्
चवन्नी—चतुराणकः
दुवन्नी—आणकद्वयम्

आना—आणकम्
रुपया—रौप्यकं, रूपकं, रजतमुद्रा
अशर्फी—स्वर्णमुद्रा, दीनारः
उधार—ऋणम्
वकील—व्यवहारजीवः
वसीयतनामा—चरमपत्रम्, मृत्युपत्रम्
ब्याज—कुसीदः, वृद्धिजीविका
साहूकार—उत्तमर्णः
कर्जदार—अधमर्णः
धरोहर—न्यासः, उपनिधिः
डाकिया—पत्रवाहकः
डाट—छिद्ररोधकः
ढक्कन—आच्छादनम्
तख्ता—काष्ठफलकम्
दखल—अधिकारः
भेंट—प्रतिग्रहः, उपहारः
दाढ़ी—कूर्चकम्
बोरा—शणपुटः
दूकान—आपणः
नकशा—मानचित्रम्
नियुक्तिपत्र—नियोगपत्रकम्

मुकदमा—अभियोगः
जज—विचारकः, न्यायाधीशः
पसीना—स्वेदः (पुं०)
पहरेदार—यामिकः
होड़—प्रतिद्वन्द्विता
प्रतिज्ञा—प्रतिश्रुतिः, प्रतिश्रवः
मखौल—परिहासः
मस्तूल—कूपकः
शोर—कोलाहलः
हद—सीमा
हैजा—विसूचिका
डेरा—निवेशः, वासस्थानम्
हाथी का झूल—कूथम्
चिंघाड़—चीत्कारः
कोड़ा—कषा
लगाम—खलीनः-नम्, प्रग्रहः, वल्गा (स्त्री)
रकाब—पादधानी
काठी—पर्याणम्
घुड़सवार—अश्वारोहः, अश्ववारः
पैदल—पत्तिः, पदातिः, पदगः, पदचारी
छावनी—शिबिरम्

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—घुड़सवार ने घोड़े को इतना दौड़ाया कि वह पसीना-पसीना होगया। २—खजाने से रुपये चुरानेवालों को दस-दस वर्ष की सजा हुई। ३—शोर न मचाओ, दूसरे कमरे में लड़के पढ़ रहे हैं। ४—जामिन के विना वह अपराधी न छूट सका। ५—कर्जदार अपने साहूकार से सदैव डरता रहता है। ६—डाकिया आज मेरी एक चिट्ठी दे गया। ७—उस घूस लेनेवाले अफसर को एक हजार रुपये जुर्माना और छः मास की सजा हुई। ८—न्यायाधीश ने उस तथाकथित घातक को संदेह

पर छोड़ दिया। ८—वह हृदय की गति रुकने से मर गया और वसीयतनामा न लिख सका। १०—इस मुकदमे के लिए एक अच्छे वकील की जरूरत है।

पञ्चदश अभ्यास

शरीरसम्बन्धी व्यावहारिक शब्द

पाँव—पादः, अङ्घ्रिः, (पुं०) चरणः (अस्त्री०)
सिर—शिरः, शीर्षम् (न०)
माथा—ललाटम् (न०)
भौं—भ्रूः (स्त्री०)
आँख—नेत्रम्, नयनम्, चक्षुः (न०)
पलक—नेत्रलोम (न०)
कान—कर्णः (पुं०)
नाक—नासिका (स्त्री०)
मुँह—मुखम्, आननम् (न०)
लार—लाला (स्त्री०)
दाँत—दन्तः, दशनः (पुं०)
होंठ—ओष्ठः (पुं०)
मसूड़े—दन्तमांसम् (न०)
जीभ—जिह्वा, रसना (स्त्री०)
गर्दन—ग्रीवा (स्त्री०), गलः (पुं०)
कन्धा—स्कन्धः (पुं०)
गला—कण्ठः, गलः (पुं०)
ठुड्डी—चिबुकम् (न०) हनुः (पुं०)
छाती—उरः, वक्षः (न०)
चूची—चूचुकम् (न०)
स्तन—कुचः, स्तनः (पुं०)

शरीर—शरीरम् (न०) कायः, देहम् (अस्त्री०)
मन—चित्तम्, हृदयम्, मनः (न०)
बुद्धि—बुद्धिः, मनीषा, धीः, प्रज्ञा (स्त्री०)
पेट—उदरम् (न०)
आंत—अन्त्रम् (न०)
पीठ—पृष्ठम् (न०)
कमर—कटिः, श्रोणिः (स्त्री०)
फेफड़ा—फुप्फुसम् (न०)
तोंद—तुन्दम् (न०)
कलेजा—वृक्कम्–कः, हृद् (न०)
खाल—चर्म (न०) त्वक् (स्त्री०)
खून—रक्तम्, रुधिरम् (न०)
चरबी—मेदः (न) वपा, वसा (स्त्री०)
हड्डी के भीतर की चर्बी—मज्जा (स्त्री०)
हाथ—करः, हस्तः, पाणिः (पुं०)
बांह—बाहुः, भुजः (पुं०)
हथेली—करतलः—लम् (अस्त्री०)
ताली—करतलध्वनिः (पुं०)
नाड़ी—स्नायुः (पुं०)
नाखून—नखः—नखम् (अस्त्री०) करुह (पुं०)
हड्डी—अस्थि, कीकसम् (न०)

मांस—मांसम्, पिशितम्, क्रव्यम् (न०)	योनि:—योनि: (स्त्री०) भग: (पुं०)
उंगली—अंगुलि: (स्त्री०)	अण्डकोष:—वृषण: (पुं०)
अंगूठा—अङ्गुष्ठ: (पुं०)	मूत—मूत्रम् (न०) प्रस्राव: (पुं०)
चारों उंगलियाँ—तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा (स्त्री०)	मल—विष्ठा (स्त्री०) मलम्, पुरीषम् (न०)
मुट्ठी—मुष्टिका (स्त्री०)	गोबर—गोमय:(अस्त्री०) शकृद्(स्त्री०)
चूतड़—नितम्ब: (पुं०)	स्त्री का वीर्य—रज:,पुष्पम्,आर्तवम् (न०)
जांघ—जङ्घा (स्त्री०) ऊरु:(पुं०)	पुरुष का वीर्य—शुक्रम् (न०)
गुदा—अपानम्, मलद्वारम् (न०)	टेहुना—जानु (न०)
लिङ्ग—लिङ्गम्(न०) शिश्न:,मेढ्र:(पुं०)	पैर की गिट्ठी—गुल्फक:

संस्कृत में अनुवाद करो----

१-बच्चे और बूढ़े को लार टपकती है।२-उस सुन्दर स्त्री की कमर बहुत पतली है। ३-नेहरूजी के व्याख्यान के अन्त में सब लोगों ने ताली बजाई। ४—उस बनिये की तोंद बड़ी है। ५—हम जीभ से स्वाद लेते हैं। ६—अच्छे लक्षणोंवाली स्त्री की कमर पतली होती है। ७—चुटकी मत बजाओ। ८—योगी आंतों को धोते हैं। ९—कान का मल निकालना चाहिए। १०—उसके शरीर में खून सूख गया। ११—बच्चे के पैदा होने से पहले माँ के स्तन में दूध आ जाता है। १२—उसकी जांघें केले के खम्भे की तरह और बाँह हाथी की सूड़ की तरह है। १३—उसके शरीर में खून का विकार है। १४—गोबर से लिपी हुई जमीन पवित्र होती है। १५—बनिये की तोंद देख कर बच्चा डर गया।

षोडश अभ्यास

पाठशालासम्बन्धी शब्द

स्कूल—पाठशाला (स्त्री०)	पुस्तक—पुस्तकम् (न०) ग्रन्थ: (पुं०)
पढ़ाने वाला—अध्यापक:, शिक्षक:, पाठक: (पुं०)	स्याही—मसी (स्त्री०)
जमात—श्रेणी, कक्षा (स्त्री०)	दवात—मसीपात्रम् (न०)
	कलम—लेखनी (स्त्री०)

पन्ना, कागज—पत्रम् (न०)
सफा, पेज—पृष्ठम् (न०)
पढ़ना—पठनम् (न०)
पढ़ाना—पाठनम् (न०)
लिखना—लेखनम् (न०)
याद करना—स्मरणम् (पुं०)
अच्छा लेख—सुलेखः (पुं०)
सवाल—प्रश्नः (पुं०)
उत्तर—उत्तरम् (न०)
सलाह—परामर्शः (पुं०)
इम्तिहान—परीक्षा (स्त्री०)
खेल—क्रीडा (स्त्री०)
खेलाड़ी—क्रीडकः (पुं०)
खेल का मैदान-क्रीडा-क्षेत्रम् (न०)
कालिज—विद्यालयः (पुं०)
विद्यार्थी—छात्रः, शिष्यः, विद्यार्थी, अध्येता, अधीती (पुं०)
मैनेजर—प्रवन्धकर्त्ता (पुं०)

हाजिर—उपस्थितः (पुं०)
गैरहाजिर—अनुपस्थितः (पुं०)
होशियार—प्राज्ञः, बुद्धिमान् (पुं०)
नालायक—मन्दधीः, मूर्खः (पुं०)
सजा—दण्डः (पुं०)
डिसिप्लिन—अनुशासनम् (न०), विनयः (पुं०)
बर्ताव—व्यवहारः (पुं०)
नतीजा—परिणामः (पुं०)
बकवक—जल्पनम् (न०)
नंबर—अङ्कः (पुं०)
थूकना—ष्ठीवनम् (न०)
दोस्त—मित्रम् (न०) सुहृद् (पुं०)
१२बजे—द्वादशवादनसमयः (पुं०)
झगड़ा—विवादः, कलहः (पुं०)
छुट्टी—अवकाशः (पुं०)
उपदेश—शिक्षा (स्त्री०)
आजकल—अद्यतन, इदानीन्तन (३लिं०)

संस्कृत में अनुवाद करो----

१—आज कल विज्ञान का युग है, पढ़ाई का भी वैज्ञानिक ढंग चला है। २—छात्रों में अनुशासन हीनता के कारण अध्यापक उनसे प्रेम नहीं करते। ३—पुरानी और आजकल की पढ़ाई में बड़ा अन्तर है। ४—पढ़ना तो आसान है पर नम्रता आना कठिन है। ५—पिछले इम्तिहान में तुमने कितने नम्बर पाये ? ६—लिखने पढ़ने के अलावा प्रतिदिन खेलना भी चाहिए। ७—अपने सहपाठियों के साथ सदैव मित्रता का व्यवहार करो ८—अपने अध्यापक का कहना मानो और अपना पाठ ध्यान पूर्वक पढ़ो। ९—आपस मे कभी मत झगड़ो और एक दूसरे को गाली मत दो। १०—रोज साफ कपड़े पहन कर स्कूल जाओ। ११—जो प्रश्न पूछा जाय उसी का उत्तर दो १२—विना कारण स्कूल में अनुपस्थित न रहना चहिए। १३—

चतुर विद्यार्थी को सभी अच्छा मानते हैं और नालायक को सभी घृणा की दृष्टि से देखते हैं। १४—स्कूल के अवकाश के दिनों में भी कुछ न कुछ अवश्य पढ़ना चाहिए। १५—गुरुकुल की प्रणाली में अनुशासनहीनता नहीं है।

सप्तदश अध्याय

भोजनसंबन्धी व्यावहारिक शब्द

कच्चा अन्न—आमान्नम् (न०)
पक्का अन्न—सिद्धान्नम् (न०)
रोटी—रोटिका (स्त्री०)
फुलका—पोलिका (स्त्री०)
भात—ओदनः, भक्तम्, ओदनम् (पुं० न०)
दाल—सूपः (पुं०)
सब्जी—व्यञ्जनम् (न)
साग—शाकः,शाकम् (पुं० न०)
खीर—पायसम्
पकवान—पक्वान्नम्
मिठाई—मिष्टान्नम्
लड्डू—मोदकः
पूरी—शष्कुली, पूलिका
पूआ—पूपः (पुं०) पीठिका (स्त्री०)
पूड़े—अपूपः (पुं०)
पापड़—पर्पटा (स्त्री०)
परौठा—पोलिका (स्त्री०)
मालपूआ—मल्लपूपः (पुं०)
खिचड़ी—कृशरः
चना—चणकः
जौ—यवः

धान—धान्यम् (न०) शालिः (पुं०)
कचौरी—माषगर्भा (स्त्री०)
रायता—दाधेयम् (न०)
अरहर—आढकी (स्त्री०)
मसूर—मसूरः (पुं०)
उड़द—माषः
हलुआ—लप्सिका (स्त्री०)
लपसी—यवागूः ,,
भरता—भर्त्ता ,,
शक्कर—शर्करा ,,
मिस्री—सिता ,,
लाजा (खील)—लाजाः (पुं० बहु०)
सत्तू—सक्तु (पुं०)
कढ़ी—तेमनम् (न०)
दूध—दुग्धम्, पयः (न०)
मलाई—कूर्चिका (स्त्री०)
मावा (खोवा)—किलाटिका
मक्खन—नवनीतम्, दधिजम्
घी—घृतम्
दही—दधि (न०)
छाछ—तक्रम्, कालशेयम
मट्ठा—मथितम्

भाँग—मातुलानी, भङ्गा
सेवई—सूत्रिका
कसैला—कषायम्
तेज—तिक्तम्
गरम—उष्णम्
ठण्डा—शीतलम्
खट्टा—अम्लम्
कड़ुआ—कटु
चिकना—चिक्कणम
गोल-माल—वर्तुलम्
टेढ़ा—वक्रम्
नमक—लवणम्
मूँग—मुद्गकः
मटर—वर्तुलः, कलायः (पुं०)
कोदो—कोद्रवः (पुं०)
कौनी—कंगुः (पुं०)
सरसों—सर्षपः, तन्तुकः

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—बीमार को पतली खिचड़ी खानी चाहिए। २—दूध और घी के सेवन से शरीर पुष्ट और बलवान् होता है। ३—पञ्जाब के लोग प्रायः रोटी खाते हैं और बङ्गाल के लोग प्रायः भात खाते हैं। ४—भात से रोटी अधिक बलदायक है। ५—दालभात के साथ साग और पापड़ अधिक स्वाद देते हैं ६—जाड़े की रातों में पूरी का भोजन बलदायक है। ७—खिचड़ी का खाना भी जाड़ों में हितकर है। ८—गरीब सत्तू खाकर दिन बिताते हैं। ९—खत्री लोग रात को प्रायः परौठा खाते हैं। १०—भोजन के अन्त में चीनी मिला हुआ दही खाया जाता है। ११—बीमार को मूँग की दाल दो। १२—तिलों से तेल निकलता है। १३—दूध पीने से बच्चे तन्दुरुस्त रहते हैं। १४—गर्मियों में मट्ठा पीने से तन्दुरुस्ती बढ़ती है। १५—कड़ी के साथ भात खाने में बहुत स्वाद आता है।

अष्टादश अभ्यास

खाद्य-पदार्थ

चावल—अक्षतानि, तण्डुलः
मकई—शस्यम्
गेहूँ का आटा—गोधूमचूर्णः
बाजरा—प्रियङ्गुः
सिम—कङ्गुः
खजुली—खाजा (स्त्री०)
अचार—सन्धितम्, संधानम्
मुरब्बा—रागखाण्डवम्

साठी—षष्ठिका (स्त्री०)
ककड़ी—कर्कटिका ,,
इलायची—एला
अदरक—आर्द्रकम्
कत्था—खदिरम्
बेर—बदरम्, कोलः
बरफी—चक्रिका (स्त्री०)
जलेबी, इमरती — कुंडलिका, कुंडलिनी
बालूशाही—मिष्टमण्ठः (पुं०)
फैनी—फेनिका (स्त्री०)
आलू—आलुः (पुं०)
ककोढ़ा—कर्कोटकम्
कद्दू—तुम्बी (पुं०)
पालकी—पालक्या (स्त्री०)
फूट, खीरा—चर्भटिः (स्त्री०)
हीरा—होलकरः (पुं०)
गरम मसाला—सौरभम्
शकरपारा—शर्करापालः-पालिका

चटनी—अवलेहः (पुं०)
पोदीना—अजगन्धः ,,
राई—राजिका
इमली—तिन्तडीफलम्
करौंदा—करमर्दकम्
ओल—सूरणकम्
कुलफा—मेघनादः
परवर—पटोलकम
प्याज—पलाण्डुः
लहशुन—लशुनः-नम्
गाजर—गृञ्जनम्
बैंगन—वृन्ताकम्, वार्ताकुः
मूली—मूलिका
बथुआ—वास्तुकम्
कचनार—काञ्चनारः
करेला—कारवेल्लम्
तरोई—कोशातकी
भिण्डी—रामकोशातकी
गोभी—गोजिह्वा

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—आलू की तरकारी स्वादिष्ट होती है किन्तु गुणकारी नहीं। २—लौकी की तरकारी बीमारों को दी जाती है। ३—जलेबी से भी अच्छी अनेक मिठाइयाँ हैं। ४—कुल्फा और पालक का शाक गर्मियों में अधिक पसन्द किया जाता है। ५—परवर की तरकारी बीमारी में भी हानिकारक नहीं है। ६—गोभी और आलू की तरकारी अच्छी होती है। ७—मटर और आलू की तरकारी बड़ी बलदायक होती है। ८—हिन्दू शास्त्रों में प्याज को निषिद्ध बताया गया है। ९—इमली की चटनी पोदीना के साथ बड़ी स्वादिष्ट होती है। १०—करेले की तरकारी बड़ी गुणकारक है। ११—कच्ची मूली बड़ी गुणकारी है। १२—फेनियाँ दूध में मिलाकर खाई

जाती हैं। १३—भिण्डियों में कागजी नींबू का रस पड़ने से बड़ी स्वादिष्ट हो जाती हैं। १४—तरोई वर्षा ऋतु में अधिक पैदा होती है। १५—बालूशाही, जलेबी, लड्डू आदि मिठाइयाँ स्वास्थ्य को लाभदायक नहीं।

एकोनविंशति अभ्यास

फलों के नाम

आम—आम्रः, रसालः (पुं०)
अनार—दाडिमफलम्
अंगूर—मृद्वीका, द्राक्षाफलम्
अमरूद—आम्रलम्
अखरोट—अक्षोटफलम्
केला—कदलीफलम्
कसेरू—कसेरुः (पुं०)
ककड़ी—कर्कटिका
कटहर—पनसः (पुं०)
कमरख—कर्मरक्षः
कच्चा फल—शलाटुः
करौंच—करमर्दकम्
कदम—कदम्बः, नीपफलम्
नींबू—जम्बीरफलम्
कागजीनींबू—निम्बूकम्
कैत (कत्था)—कपित्थम्
बिजौरा नींबू—बीजपूरः (पुं०)
खीर्नी—क्षीरिकाफलम्
खरबूज—दशाङ्गुलम्
खजूर—खर्जूरफलम्
खीरा—त्रपुषम्, चर्भटी
तरबूजा—तारबूजम्, कलिङ्गम्
बेर—बदरीफलम्, कर्कन्धुः
नारियल—नारिकेलफलम्
नारंगी—नारंगफलम्
सेव—सेवफलम्
बेल—बिल्वफलम्
बादाम—बादामः वातादफलम्
पीलू—पीलुफलम्
सुपारी—पूगः, पूगीफलम्
जामुन—जम्बूफलम्
नासपाती—अमृतफलम्
फालसा—परूषः (पुं०)
तूत—तूतम्
सरीफा—शिशवृक्षफलम्
पिस्ता—अङ्कोटफलम्

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—आम सब फलों का राजा है और लखनऊ का दशहरी आम सर्वोत्तम है। २—प्रयाग के अमरूद संसार भर में प्रसिद्ध हैं। ३—लखनऊ में खरबजों का स्वाद

अमृत के समान हैं। ४—चुनार के पास अच्छे स्वाद वाले शरीफे होते हैं। ५—कटहल की तरकारी अच्छी होती है। ६—गर्मियों में तरबूज खाने से ठंडक रहती है। ७—अंगूर खाने से बल बढ़ता है। ८—नारंगी का रस बड़ा स्वादिष्ट और मधुर होता है। ९—जामुन का मुरब्बा पाचक होता है। १०—गर्मियों में कसेरू भी ठंडा होता है। ११—कैत के फल की चटनी स्वादिष्ट होती है। १२—बिजौरे नींबू का अचार अच्छा होता है। १३—रोगियों को प्रायः अनार खाने के लिए दिया जाता है। १४—बेर सब फलों में निकृष्ट फल है। १५—खट्टी चीजों में कागजी नींबू का अधिक सेवन करना चाहिए। १६—अपने घर पर पान सुपारी से अतिथि का सम्मान करना चाहिए।

विंशति अभ्यास

संबन्धवाचक शब्द

पिता—पिता, जनकः
माता—माता, जननी
दादा—पितामहः
दादी—पितामही
परदादा—प्रपितामहः
परदादी—प्रपितामही
नाना—नानी—मातामहः, मातामही
परनाना—प्रमातामहः
परनानी—प्रमातामही
वृद्धपरनाना—वृद्धप्रमातामहः
चाचा-चाची—पितृव्यः पितृव्यपत्नी
चचेरा भाई—पितृव्यपुत्रः
भौजाई—(भाभी) भ्रातृजाया, प्रजावती
भतीजा—भ्रातृपुत्रः, भ्रात्रीयः
भतीजी—भ्रातृसुता
मामा, मामी—मातुलः, मातुली
मामा का लड़का—मातुलपुत्रः
पुत्र, पुत्री—पुत्रः, पुत्री
पोता, पोती—पौत्रः, पौत्री
परोतरा-तरी—प्रपौत्रः, प्रपौत्री
दामाद, जमाई—जामाता
बहिन—भगनी
बहनोई—भगिनीपतिः, आवृत्तः
भानजा—भागिनेयः
औरत—स्त्री, योषित्, नारी
यार—जारः, उपपतिः
फूफी—पितृष्वसा
फूफा—पितृष्वसृपतिः
फूफेरा भाई—पैतृष्वस्रीयः
मौसी—मातृष्वसा
मौसा—मातृष्वसृपतिः
मौसेरा भाई—मातृष्वस्रीयः

भाई— भ्राता
सगा भाई—सहोदरः
बहू—वधूः, स्नुषा
पति, स्त्री—पतिः, पत्नी
ससुर—श्वशुरः
सास—श्वश्रूः
साला—श्यालः
देवर—देवरः
देवरानी—याता
ननद—ननान्दा
पतोहू—पुत्रवधूः
नौकर—भृत्यः, प्रैष्यः, किङ्करः
नौकरानी—परिचारिका
मालिक—स्वामी
मित्र—मित्रम्, वयस्यः
दुश्मन—शत्रुः, अरिः, रिपुः
गाभिन—गर्भिणी
दूती—दूती, सञ्चारिका
सखी—आलिः, वयस्या
वेश्या—वारस्त्री, गणिका, वेश्या
रण्डा—विधवा, विश्वस्ता, रण्डा
सोहागिन—सौभाग्यवती, पतिवत्नी
पतिव्रता—साध्वी, पतिव्रता

संस्कृत में अनुवाद करो—

१—जब से उस घर में नयी ब्याही पतोहू आयी तब से सुख-समृद्धि का राज है। २—दामाद को ससुर के घर में अधिक दिनों तक न रहना चाहिए। ३—नौकर की सेवा से मालिक बहुत प्रसन्न हुआ। ४—बङ्गाल में विधवाओं की बड़ी दुर्दशा है। ५—दूती अपनी सखी के संदेश को उसके पति के पास पहुँचाती है। ६—अपने बड़े भाई की स्त्री माता के तुल्य होती है। ७—चंचल स्त्री का विश्वास न करना चाहिए। ८—सास को माता कहकर पुकारना चाहिए। ९—विधवा का यही शृंगार है कि वह ईश्वर की आराधना करे। १०—रामचन्द्र जी ने कहा था कि संसार में सहोदर भाई नहीं मिल सकता। ११—दक्षिण में मामा की लड़की से विवाह निषिद्ध नहीं। १२—वेश्या की संगति स्त्री को पतित कर देती है। १३—घर में पतोहू की बड़ी इज्जत होनी चाहिए। १४—उसका मौसेरा भाई सगे भाई से भी अच्छा है। १५—मेरी भतीजी का विवाह इसी वर्ष होगा।

संज्ञावाचक शब्द

(क) व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ

कुछ व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ ऐसी हैं जो हिन्दी और संस्कृत में एक समान रहती हैं, उन्हें तत्सम कहते हैं, यथा—

(१) काश्मीरदेशो भूस्वर्गः (काश्मीर संसार में स्वर्ग है।)

(२) प्रयागस्य आम्रलानि प्रसिद्धानि (इलाहाबाद के अमरूद प्रसिद्ध हैं।)

(३) चुनारस्य मृत्पात्राणि भारते विख्यातानि सन्ति (चुनार के मिट्टी के बरतन भारत में प्रसिद्ध हैं।)

(४) काश्याः कौशेयशाटकाजगद्विख्याताः (काशी की रेशमी साड़ियाँ संसार में प्रसिद्ध हैं।)

(५) यूरोपीयप्रदेशात् वायुयानेन वृत्तपत्राणि भारतमायान्ति (यूरोप से समाचारपत्र वायुयान द्वारा भारत आते हैं।)

(६) हिमालयाद् गङ्गा निर्गच्छति (हिमालय से गङ्गा निकलती है।)

(७) शान्तिनिकेतनं बोलपुरविश्रामस्थानस्य समीपम् (शान्तिनिकेतन बोलपुर स्टेशन के समीप है।)

(८) महेञ्जोदाडौ प्राचीनतमानि वस्तूनि भूम्या निर्गतानि (महेंजोदाड़ू में जमीन के नीचे से बहुत पुरानी वस्तुएँ निकली हैं।)

कुछ व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ हिन्दी में ऐसी हैं जिनका संस्कृत में थोड़ा सा परिवर्तन करके अनुवाद किया जाता है—

(१) पुरा मौर्यवंशोद्भवानां राज्ञां राजधानी पाटलीपुत्रमासीत् (प्राचीनकाल में पटना नगर मौर्य राजाओं की राजधानी था।)

(२) वङ्गदेशीयास्तण्डुलप्रिया भवन्ति (बङ्गाली चावल बहुत पसन्द करते हैं।)

(३) जयपुरे सङ्गमरमरस्य चित्रकर्म प्रसिद्धम् (जयपुर में सङ्गमरमर की चित्रकारी मशहूर है।)

(४) आगरानगरे यमुनातटे ताजमहलं जगद्विख्यातम (आगरा में यमुना तट पर ताजमहल संसार में मशहूर है।)

(५) सिन्धोरत्यधिकं जलम् (सिन्धु नदी में बहुत ज्यादा पानी है।)

(६) रणजितसिंहः पञ्चनदस्य शासक आसीत् (रणजीतसिंह पञ्जाब के शासक था।)

(७) गढदेशे श्रीबदरीशस्य मन्दिरमस्ति (गढ़वाल में श्रीबद्रीनाथजी का मन्दिर है।)

(८) पुरा तक्षशिलास्थाने जगद्विख्यातो विश्वविद्यालय आसीत् (पुराने जमाने में तक्षशिला में अतिविख्यात यूनिवर्सिटी थी।)

(९) शतद्रुः, विपाशा, इरावती, चन्द्रभागा, वितस्ता, सिन्धुश्च पञ्चनदे विद्यन्ते (सतलज, व्यास, रावी, चुनाव, जेहलम और सिन्धु नदी पञ्जाब में हैं।)

हिन्दी भाषा में कुछ ऐसे शब्द हैं जो दूसरी भाषाओं से आये हैं और कुछ ऐसे हैं जो संस्कृत से कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखते, उनका संस्कृत-अनुवाद ज्यों का त्यों करना चाहिए। किन्तु कुछ ऐसे भी शब्द हैं जो विदेशी भाषा और संस्कृत से कोई सम्बन्ध न रखते हुए भी संस्कृत लेखकों में प्रचलित हो गये हैं। उनके बदलने में कोई क्षति नहीं, यथा—

(१) कलकत्तानामकं भारतविख्यातं नगरम् (कलकत्ता भारत में मशहूर शहर है।)

(२) भोंदूमलः प्रयागे प्रसिद्धः वणिक् (भोंदूमल इलाहाबाद में प्रसिद्ध सौदागर हैं।)

(३) एस० एम० रञ्जिकस्य कानपुरे चर्मव्यापारोऽस्ति (एस० एम० रञ्जिक का कानपुर में चमड़े का व्यापार है।)

(४) जापानस्य व्यापारविषये महती उन्नतिरस्ति (जापान ने व्यापार में बड़ी उन्नति की है।)

(५) यवनदेशीयः सम्राट् अलक्षेन्द्रो भारतमाजगाम (ग्रीक सम्राट् अलेक्जण्डर भारत में आया था।)

(६) मानचैस्टराद् भारतमायाति स्म वस्त्रम् (मानचैस्टर से कपड़ा भारत को आता था।)

(७) जविस्कोनाम्नो गामानाम्नश्च मल्लयोर्मल्लयुद्धमभवत् (जविस्को और गामा का जोड़ हुआ था।)

(ख) जातिवाचक संज्ञाएँ

कुछ जातिवाचक शब्द ऐसे हैं, जिनके पर्यायवाची शब्द भी उनके स्थान पर व्यवहृत हो सकते हैं, यथा—मनुष्य, राजा, प्रजा, पशु, पक्षी, पुरुष, स्त्री आदि। उदाहरण—स एव राजा (नृपः, भूपः) यस्य प्रजायाः सुखम् (राजा वही है, जिसकी प्रजा सुखी है।)

परन्तु बिड़ला, मालवीय, सैयद आदि शब्द संस्कृत-अनुवाद में व्यक्तिवाचक संज्ञाओं की भाँति प्रयुक्त होते हैं, यथा—

बिडलोपाह्वः घनश्यामदासः (घनश्यामदास बिडला।)

कुछ देशी या विदेशी शब्द आजकल संस्कृत में कल्पित रूप से प्रचलित हो गये हैं, उनका अनुवाद प्रचलित शब्दों में होगा, यथा—

१—भारतमन्त्री=सेक्रेटरी आफ स्टेट् फार इण्डिया।
२—प्रधानमन्त्री=प्राइम मिनिस्टर।
३—विधानपरिषद्=लेजिस्लेटिव काउंसिल।
४—विधानसभा=लेजिस्लेटिव असेंबली।
५—विषयनिर्धारिणी सभा=सब्जेक्ट कमेटी।
६—कार्यकारिणी सभा=एग्जीक्यूटिव कमेटी।
७—मण्डलम्=जिला।
८—लोकपरिषद्=पार्लियामेंट।
९—राज्यपरिषद्=काउंसिल आफ स्टेट्स।
१०—प्रदेशः=प्राविंस।
११—वाष्पयानम्=रेलगाड़ी।
१२—राष्ट्रपतिः=प्रेसीडेण्ट।
१३—जलयानम्=जहाज।
१४—वायुयानम्=हवाईजहाज।
१५—राज्यपालः=गवर्नर।
१६—निरीक्षकः=इन्स्पेक्टर।
१७—मुख्य मन्त्री=चीफ़ मिनिस्टर।
१८—विद्यालयः=कालिज।
१९—विश्वविद्यालयः=यूनिवर्सिटी।
२०—अध्यक्षः=स्पीकर।
२१—शिक्षा सञ्चालकः=डाइरेक्टर आफ एजूकेशन।
२२—द्विचक्रिका=बाइसिकिल।
२३—जलान्तरितयानम्=सबमैरीन (पनडुब्बी)।

परन्तु मोटरकार के लिए 'मोटरयानम्' और कोट के लिए 'कोटनामकं वस्त्रम्' ही लिखना उचित है।

(ग) भाववाचक संज्ञाएँ

भाववाचक संज्ञाएँ वे हैं जिनसे किसी जाति आदि संज्ञाओं के भाव का बोध हो, यथा—मनुष्यत्व, ज्ञान, मान, मृदुता, मधुरता, आलाप, चतुरता इत्यादि।

विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन (विद्वत्व और राजत्व हरगिज बराबर नहीं।) तस्य ज्ञानमेवैतावत् आसीत् (उसका ज्ञान ही इतना था।)

असहयोगान्दोलनस्य कार्यक्रमे बहवः प्रस्तावा आसन् (नानकोआपरेशन मूवमेंट के प्रोग्राम में बहुत से रेजोल्यूशन थे।)

कुछ अन्य भाववाचक संज्ञाओं के उदाहरण—

१—नूनं छनच्छनिति वाष्पकणाः पतन्ति (निःसन्देह 'छनछन' शब्द करती आंसुओं की बूदें गिर रही हैं।)

२—स्थाने स्थाने मुखरककुभो झांकृतैर्निर्झराणाम् (स्थान-स्थान पर झरनों के झांकृत शब्द से दिशाएँ गूँज रही थीं।)

३—क्वणत्कनककिङ्किणीझणझणायितस्यन्दनैः (रथ पर टकरा कर सोने की किंकिणियाँ झण-झण कर रही थीं।)

४—धनुष्टङ्कारो दूरतोऽपि श्रूयते (धनुष का टंकार दूर से भी सुनाई देता है।)

५—नूपुराणां शिञ्जितं मधुरम् (जेवरों का शब्द बहुत ही मनोहर था।)

६—क्व श्रूयते षट्पदानां झङ्कारः (भौंरों का शब्द कहां सुनाई देता है?)

७—गजानां बृंहितेन, सिंहानां नादेन च वनमेवाकम्पत (हाथियों की चिंघाड़ और सिंहों की गर्जना से जंगल ही काँप उठा।)

८—चरणसिंहेऽतीव धृष्टता विद्यते (चरणसिंह में बड़ी ढिठाई है।)

९—समुद्रस्य गाम्भीर्यं ज्ञातुमसुलभम् (समुद्र की गहराई कठिनता से जानी जाती है।)

१०—सत्यं वद (सच बोल।)

लिङ्गज्ञान

संस्कृत में लिङ्गज्ञान बहुत कठिन है। उसमें संस्कृत व्याकरण का ज्ञान अधिक सहायक नहीं हो सकता। केवल कोष की सहायता, पाणिनीय के लिङ्गानुशासन तथा संस्कृत साहित्य के अध्ययन से लिङ्गज्ञान हो सकता है। संस्कृत में एक ही वस्तु या व्यक्ति के वाचक शब्द भिन्न-भिन्न लिङ्गों के हैं, यथा—"तटः-तटी-तटम्" इन तीनों

का अर्थ किनारा है। इसी प्रकार "सङ्गरः-युद्धम्-आजिः" इन तीनों का अर्थ युद्ध है।) यद्यपि दार, भार्या और कलत्र इन तीनों का अर्थ स्त्री है। कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनका अर्थभेद से लिङ्गभेद होता है, जैसे—मित्र शब्द सखा का बोधक होने से नपुंसकलिङ्ग और सूर्य का बोधक होने से पुंलिङ्ग होता है। इस प्रकार संस्कृत के प्रत्येक शब्द का लिङ्ग निश्चित है। संस्कृत में लिङ्ग तीन हैं-पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग। संस्कृत शब्दों के लिङ्गनिर्णय के कुछ नियम नीचे लिखे गये हैं—

पुंल्लिङ्ग

१—घञ्, अप्, घ और अच् प्रत्ययान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा—पाकः, त्यागः, भावः, गरः, विस्तरः, गोचरः, सञ्चयः, विजयः, विनयः इत्यादि। परन्तु भय, सुख, वर्ष, पद, लिङ्ग आदि शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं

२—नकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा राजन्—राजा, आत्मन्-आत्मा, किन्तु मन् प्रत्ययान्त कर्म्मन् और चर्म्मन् आदि शब्द नपुंसकलिङ्ग हैं।

३—साधारण और विशेष सुर (देवता) और असुर (राक्षस) और इनके अनुचर वाचक शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा—देवः, विष्णुः, शिवः, दानवः, दैत्यः आदि।

४—कि प्रत्ययान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा—विधिः, निधिः, वारिधिः इत्यादि, परन्तु कि प्रत्ययान्त इषुधि शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिङ्ग दोनों में होता है।

५—नङ् प्रत्ययान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं। यथा—यत्नः, प्रश्नः, स्वप्नः। परन्तु याच्ञा शब्द स्त्रीलिङ्ग होता है।

६—इमन् प्रत्ययान्त शब्द पुँल्लिङ्ग होते हैं, यथा—महिमा, गरिमा, लघिमा इत्यादि। परन्तु प्रेमन् शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों में होता है।

७—करः (किरण) हाथ और बलिः, गण्डः (कपोल), ओष्ठः (ओठ), दोः (बाहु), दन्तः (दांत), कण्ठः, केशः, नखः (नाखून) और स्तनः—ये सब शब्द और इनके पर्यायवाचक शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं। दीधितिः (किरण) शब्द स्त्रीलिङ्ग है, मरीचिः शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिङ्ग दोनों है।

८—दार, अक्षत, लाज, असु (प्राण) शब्द पुंल्लिङ्ग और बहुवचनान्त होते हैं।

९—स्वर्ग, याग (यज्ञ), अद्रि (पर्वत), मेघ, अब्धि (समुद्र), द्रु (वृक्ष), काल

(समय), असि (तलवार), शर (बाण) और शत्रु ये शब्द और इनके पर्याय वाचक शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं। किन्तु त्रिविष्टपम् (स्वर्ग), अभ्र (मेघ) ये शब्द नपुंसकलिङ्ग हैं। द्यौः और दिव् (स्वर्ग) ये शब्द स्त्रीलिङ्ग हैं। इषुः (वाण) शब्द पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग दोनों हैं। स्वर् (स्वर्ग) अव्यय है।

१०—मास वाचक (वैशाख जेठ आदि महीने), ऋतु (वसन्त, ग्रीष्म आदि), रस (कटु, तिक्त आदि), वर्ण (शुक्ल, कृष्ण आदि रंग), अग्नि, शब्द, वायु (हवा), नर (आदमी), अहि (सांप) ये शब्द तथा इनके पार्यिवाचक शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं। किन्तु ऋतुवाचक शरत् और वर्षा शब्द स्त्रीलिङ्ग हैं।

११—समास-युक्त अह्न और अह-भागान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा—पूर्वाह्णः, पराह्णः, मध्याह्नः, एकाहः, द्व्यहः, त्र्यहः इत्यादि। किन्तु पुण्याह शब्द नपुंसकलिङ्ग हैं।

१२—समासोत्पन्न रात्रभागान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं, यथा—सर्वरात्रः, मध्यरात्रः आदि। किन्तु संख्यावाचक शब्द के आगे रात्र शब्द रहने से नपुंसकलिङ्ग होता है। यथा—द्विरात्रम्, पञ्चरात्रम् इत्यादि।

१३—खर्वः, निखर्वः, शङ्खः, पद्मः और सागरः शब्द पुंल्लिङ्ग हैं।

स्त्रीलिङ्ग

१—क्तिन् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं यथा—मतिः, गतिः, सम्पत्तिः इत्यादि। परन्तु ज्ञाति शब्द पुंल्लिङ्ग होता है।

२—तिथिवाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—प्रतिपत् द्वितीया, चतुर्थी, पूर्णिमा आदि।

३—एकाक्षर ईकारान्त और ऊकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—श्रीः, ह्रीः, भूः, भ्रूः आदि;

४—ईकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—नदी, लक्ष्मीः, गौरी, देवी।

५—तल् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—लघुता, सुन्दरता, ब्राह्मणता।

६—ऋकारान्त मातृ (माता) दुहितृ (कन्या) स्वसृ (बहिन) यातृ (पति के भाइयों की स्त्रियां) और ननांदृ (ननद) शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं।

७—ऊङ् और आप् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—कुरूः, विद्या, शोभा आदि।

८—विद्युत् (बिजली) निशा (रात) वल्ली (लता) वीणा (बीन), दिक् (दिशा) भू (पृथ्वी) नदी, ह्री (लाज) वाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं।

९—समाहार द्विगु समासयुक्त अकारान्त शब्द (जिनके आगे ईप् होता है) स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—त्रिलोकी, पञ्चवटी, द्विपुरी आदि। किन्तु पात्र, युग और भुवन शब्द परे रहने से नपुंसकलिङ्ग होता है, यथा—पञ्चपात्रं, चतुर्युगं, त्रिभुवनम् आदि।

१०—विंशति से नवति पर्यन्त संख्यावाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं, यथा—विंशतिः, त्रिंशत् आदि।

नपुंसकलिङ्ग

१—भाववाच्य में ल्युट् (अन) प्रत्यय करने से जो शब्द बनते हैं वे नपुंसक लिङ्ग होते हैं, यथा—गमनं, शयनं, भोजनम् इत्यादि।

२—भाव में क्त (त) प्रत्यय करने से बने हुए शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—हसितं, गीतं, जीवितम् इत्यादि।

३—भाववाच्य में कृत्य (तव्य, अनीय, ण्यत्, यत्, (क्यप्) प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—भवितव्यं, भवनीयं, भाव्यम् आदि।

४—तद्धित के त्व और ष्यञ् प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—शुक्लत्वं—शौक्ल्यं, सुन्दरत्वं, सौन्दर्यं, राजत्वं—राज्यम्, मधुरत्वं—माधुर्यम् इत्यादि।

५—यत्, य; ढक्, यक्, अञ्, अण्, वुञ् छ प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—स्तेयं, सख्यं, कापयम्, आधिपत्यम्, औष्ट्रं, द्वैहायनं, पितापुत्रकं, किराताजुंनीयम् आदि।

६—उसका भाव या कर्म, इस अर्थ में षण् (अ) प्रत्यय से जो शब्द बनते हैं वे नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—शैशवं, गौरवं, लाघवम् आदि।

७ - शत आदि संख्यावाचक शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हं, यथा—शतं, सहस्रम् आदि। पर कोटि शब्द स्त्रीलिङ्ग होता है। शत, अयुत, प्रयुत, शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों होते हैं, यथा—अयं शतः, इदं शतम् इत्यादि।

८—डयट् और तयट् प्रत्ययान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—द्वयं, त्रयं, द्वितयं, त्रितयम् इत्यादि। ये शब्द स्त्रीलिङ्ग भी होते हैं।

९—त्र जिनके अन्त में हो ऐसे शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं. यथा—छत्रं, पत्रं, चरित्रम् इत्यादि । परन्तु अमित्र, छात्र, पुत्र, मन्त्र, वृत्र, मेढ्र और उष्ट्र शब्द पुंल्लिङ्ग हैं और पत्र, पात्र, पवित्र सूत्र और छत्र पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग दोनों होते हैं। यात्रा, मात्रा, भस्त्रा और दंष्ट्रा ये शब्द स्त्रीलिङ्ग हैं । मित्र शब्द सूर्य के अर्थ में पुंल्लिङ्ग और सखा के अर्थ में नपुंसकलिङ्ग है ।

१०—क्रियाविशेषण और अव्ययविशेषण नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—साधु वदति–अच्छा कहता है । मनोहरं प्रातः – सुन्दर सबेरा ।

११—समाहारद्वन्द्व और अव्ययीभावसमासोत्पन्न शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—पाणिपादं, हस्त्यश्वम्, प्रतिदिनम्, और यथाशक्ति आदि ।

१२—संख्यावाचक और अव्यय शब्द के परवर्ती समासोत्पन्न 'पथ' शब्द नपुंसकलिङ्ग होता है, यथा—त्रिपथं, चतुष्पथं, विपथम् आदि ।

१३—यदि संख्यावाचक शब्द आदि में हो और अन्त में रात्र शब्द हो तो नपुंसकलिङ्ग होता है, यथा—द्विरात्रम्, पञ्चरात्रम् आदि ।

१४—दो स्वर वाले अस्, इस्, उस् और अन् भागान्त शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं, यथा—अस् भागान्त—यशस्, तेजस् आदि । इस् भागान्त—सर्पिस्, हविस् आदि । उस भागान्त–वपुस्, धनुस् आदि । अन् भागान्त—नामन्, चर्मन् इत्यादि। किन्तु अर्चिस् शब्द स्त्रीलिङ्ग और वेधस् शब्द पुंल्लिङ्ग है । दो से अधिक स्वर होने के कारण अणिमा, महिमा, चन्द्रमा आदि शब्द पुंल्लिङ्ग हैं और अप्सरस् शब्द स्त्रीलिङ्ग है । ब्रह्मन् शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों है ।.

१५—जो शब्द स्त्रीलिङ्ग या पुल्लिङ्ग नहीं हैं, वे भी नपुंसकलिङ्ग होते हैं। वृन्दं (समूह) खं (आकाश) अरण्यं (वन) पर्णं (पत्ता) श्वभ्रं (बिल) हिमं (पाला) उदकं (जल) शीतं (ठण्ढा) उष्णं (गर्म) मांसं (मांस) रुधिरं (रक्त) मुखं (मुंह) अक्षि (आँख) द्रविणं (धन) बलं (बल) हलं (हल) हेम (सोना) शुल्वं (तांबा) लोहं (लोहा) सुखं (सुख) दुःखं (दुःख) शुभं (कुशल) अशुभम् (अमंगल) जलपुष्पं (पानी में उत्पन्न होने वाला फूल) लवणं (नमक) व्यञ्जनं (दूध दही आदि) अनुलेपनं (चन्दन आदि) ये ऊपर लिखे हुए तथा इन शब्दों के अर्थ बोध करने वाले अन्यान्य शब्द नपुंसकलिङ्ग होते हैं। किन्तु अर्थः और विभवः (धन) अवश्यायः नीहारः और तुषारः (पाला) तथा छदः (पत्ता) पुंल्लिङ्ग हैं । अप् (जल) अटवी

(वन) मुद् और प्रीतिः (हर्ष) वपा और शुषिः (विल), दृश् और दृष्टिः (आँख) तथा मिहिका (पाला) स्त्रीलिङ्ग हैं। आकाशः और विहायस् (आकाश) तथा क्षमः, ये पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों होते हैं।

१५—यदि संख्यावाचक शब्द आदि में हो और अन्त में रात्र शब्द हो तो नपुंसकलिङ्ग होता है, यथा—द्विरात्रं, पञ्चरात्रम् इत्यादि।

एकविंशति अभ्यास

लेखोपयोगी चिह्न

हम "प्राक्कथन" में बतला चुके हैं कि संस्कृत भाषा की वाक्यरचना में शब्दों का कोई क्रम निश्चित नहीं है। कर्त्ता, कर्म, क्रिया वाक्य के आदि, मध्य और अन्त में भी रखे जा सकते हैं। इसी कारण संस्कृत ग्रन्थों में आधुनिक लेखोपयोगी चिह्नों का विशेष महत्त्व नहीं है। तथापि "अत्र तुनोक्तम् तत्रापि नोक्तम्" प्रसिद्ध संस्कृत वाक्य का सीधा अर्थ यही ज्ञात होता है—"इस स्थल पर नहीं कहा गया है (और) उस स्थल पर भी नहीं कहा गया है।" लेखक को यह अर्थ अभिप्रेत नहीं। वह तो चाहता है—"अत्र तुना उक्तम्" अर्थात् "जो बात इस स्थल पर "तु" शब्द से प्रकट की गयी है वही बात उस स्थल पर "अपि" शब्द द्वारा व्यक्त की गयी है"। अतः मानना पड़ेगा कि शोभन शब्द-विन्यास से लेख में अवश्य चारुता आ जाती है और जटिलता भी जाती रहती है। इसी ध्येय को दृष्टि में रखकर हमने कुछ लेखोपयोगी चिह्न दिये हैं :—

अल्प-विराम-चिह्नम्	,	(Comma)
अर्धविरामचिह्नम्	;	(Semi-Colon)
पूर्णविराम-चिह्नम्	।	(Full-Stop)
प्रसङ्गसमाप्तिचिह्नम्	॥	
प्रश्नबोधकचिह्नम् (काकुचिह्नम्)	?	(Sign of Interrogation)
विस्मयादिबोधकचिह्नम् (सम्बोधनाऽऽश्चर्यखेदचिह्नम्)	!	(Sign of admiration, Surprise etc.)
उद्धरणचिह्नम्	" "	(Inverted Commas)
निर्देशचिह्नम्	:—	

योजकचिह्नम्	–	(Hyphen)
कोष्ठक (पाठान्तर) चिह्नम्	[ ] ( )	(Parenthesis)
सन्धिच्छेदचिह्नम्	+ ·	
पर्याय-चिह्नम्	=	
त्रुटिनिर्देशचिह्नम्	ʌ	

लेखोपयोगी चिह्नों पर ध्यान दो और हिन्दीभाषा में अनुवाद करो

१—अपि क्रियार्थं सुलभं समित्कुशम् ? (कुमारसम्भवे)

२—तारापीडो देवीमवदत्—"अफलमिवाखिलं पश्यामि जीवितं राज्यं च अप्रतिविधेये (निष्प्रतीकारे) धातरि किं करोमि ! तन्मुच्यतां देवि ! शोकानुबन्धः आधीयतां धैर्ये च धीः।" (कादम्बर्याम्)

३—अहो प्रभावो महात्मनाम् ! अत्र शाश्वतं विरोधमपहायोपशान्तान्तरात्मानस्तिर्यञ्चोऽपि तपोवनवसतिसुखमनुभवन्ति। (कादम्बर्याम्)

४—हा कथं सीतादेव्या ईदृशं जनापवादं देवस्य कथयिष्यामि ! अथवा नियोगः खल्वीदृशो मन्दभाग्यस्य। (उत्तररामचरिते)

५—आसीच्च मे मनसि, "शान्तात्मन्यस्मिञ्जने मां निक्षिपता, किमिदमनार्येणासदृशमारब्धं मनसिजेन !" (कादम्बर्याम्)

संस्कृत में अनुवाद करो---

१—जेठ महीने की पूर्णमासी तिथि को पतिव्रता स्त्रियाँ वट वृक्ष की पूजा और उपवास करती हैं। इस तिथि को प्राचीनकाल में सत्यवान् की भार्य्या सावित्री ने यम से लिये जाते हुए अपने पति सत्यवान् को छुड़ाया था। तभी से इस व्रत का आरम्भ हुआ है। स्त्रियाँ यह मानती हैं कि इस व्रत के करने से उनके पति की आयु दीर्घ होती है। सब सोहागिन स्त्रियाँ इस व्रत को करती हैं। (काशी प्रथमा परीक्षा १९३१)

२—हे मित्र ! अब आप आदि से मेरा वृत्तान्त सुनिए। मेरा जन्म पद्मपुर में हुआ था। मेरे पिता के पाँच भाई थे, जो मृत्यु को प्राप्त हुए। आप ही के देश से आये हुये एक ब्राह्मण से मेरा विवाह हुआ। उनको मरे आज सात वर्ष हो गये। मैं अनाथ अब क्या करूँ ? मन्दभागिनी मैं कहा जाऊँ ? इस अवस्था में आप ही मेरी शरण हैं। (काशी प्रथमा परीक्षा १९३१)

चतुर्थोऽध्यायः

अनुवादार्थ संस्कृतवाक्य

१—एकस्मिञ्जीर्णकोटरे जायया सह निवसतः पश्चिमे वयसि वर्तमानस्य कथमपि पितुरहमेवैको विधिवशात्सूनुरभवम् (कादम्बर्याम् २६)

२—देव काचिच्चाण्डालकन्या शुकमादाय देवं विज्ञापयति—"सकलभुवनतल-सर्वरत्नानामुदधिरिवैकभाजनं देवः । विहङ्गमश्चायमाश्चर्यभूतो निखिलभुवनतलरत्न-मितिकृत्वा देवपादमूलमागताहमिच्छामि देवदर्शनसुखमनुभवितुमिति" । (कादम्बरी८)

३—अयं शिशुर्न शक्नोति शिरोधरां धारयितुम् । तदेहि गृहाणेममवतारय सलिलसमीपमित्यभिधाय तेनर्षिकुमारेण मां सरस्तीरमनाययत् । उपसृत्य च जलसमीपं स्वयं मामादाय मुक्तप्रयत्नमुत्तानितमुखमंगल्या कतिचित्सलिलबिन्दूनपाययत् । (कादम्बर्याम् ३८)

४—अयि पञ्चालतनये ! अलं विषादेन । किं बहुना । यत्करिष्ये, तच्छ्रू-यताम्—अचिरेणैव कालेन सुयोधनशोणितशोणपाणिस्तव कचान् भीम उत्तंसयिष्यति । (वेणीसंहारे १)

५—एषा मे मनोरथप्रियतमा सकुसुमास्तरणं शिलापट्टमधिशयाना सखीभ्या-मन्वास्यते । सागरं वर्जयित्वा कुत्र वा महानद्यवतरति । क इदानीं सहकारमन्तरे-णातिमुक्तलतां पल्लवितां सहते । (शाकुन्तले ३)

६—तं क्रमेण जन्मभूमिं जातिं विद्यां च कलत्रमपत्यानि विभवं वयःप्रमाणं प्रव्रज्याकारणं स्वयमेव पप्रच्छ चन्द्रापीडः । (कादम्बरी)

७—तौ कुशलवौ भगवता वाल्मीकिना धात्रीकर्म वस्तुतः परिगह्य पोषितौ परिरक्षितौ च वृतचूडौ च त्रयीवर्जमितरा विद्याः सावधानेन परिपाठितौ । समनन्त-

---

१—जीर्णकोटरे=पुराने कोटर में । जाया=स्त्री । २—उदधि=समुद्र । विहङ्गम=पक्षी । ३—शिरोधरा=गर्दन । उत्तानित=खुला हुआ । ४—शोणित=खून । शोणपाणि=रक्तहस्त । कच=बाल । उत्तंस=शोभित करना । ५—अन्वास्यते=सेवा की जा रही है ! सहकार=आम । अतिमुक्तलता=माधवीलता । पल्लव=पत्र । ६—कलत्र=स्त्री । प्रव्रज्या=संन्यास । ७—कल्य=प्राथमिक ।

रञ्च गर्भादिकादशे वर्षे क्षात्रेण कल्पेनोपनीय गुरुणा त्रयीं विद्यामध्यापितौ। (उत्तर०२)

८—प्रवातशयने निषण्णा देवी परिजनहस्तगृहीतेन चरणेन परिव्राजिकया कथाभिर्विनोद्यमाना तिष्ठति। (मालविकाग्निमित्रे ४)

९—तेषु तेषु रम्यतरेषु स्थानेषु तया सह तानि तान्यपरिसमाप्तान्यपुनरुक्तानि न केवलं चन्द्रमाः कादम्बर्या सह, कादम्बरी महाश्वेतया सह, महाश्वेता तु पुण्डरीकेण सह, पुण्डरीकोऽपि चन्द्रमसा सह सर्व एव सर्वकालं सर्वसुखान्यनुभवन्तः परां कोटिमानन्दस्याध्यगच्छन्। (कादम्बर्याम् ३६९)

१०—मूर्ख, नैष तव दोषः। साधोः शिक्षा गुणाय सम्पद्यते, नासाधोः। (पञ्चतन्त्रे १—१८)

११—प्रसीद भगवति वसुन्धरे! शरीरमसि संसारस्य। तत्किमसंविदानेव जामात्रे कुप्यसि। (उत्तररामचरिते ७)

१२—सखि वासन्ति! दुःखायेदानीं रामस्य दर्शनं सुहृदाम्। तत्कियच्चिरं त्वां रोदयिष्यामि। तदनुजानीहि मां गमनाय। (उत्तररामचरिते ३)

१३—न जानामि केनापि कारणेनापहस्तितसकलसखीजनं त्वयि विश्वसिति मे हृदयम्। (कादम्बर्याम् २३३)

१४—धिङ्मां दुष्कृतकारिणीं यस्याः कृते तवेयमीदृशी दशा वर्तते।

१५—हा दयित माधव! परलोकगतोऽपि स्मर्तव्यो युष्माभिरयं जनः। न खलु स उपरतो यस्य वल्लभो जनः स्मरति। (मालतीमाधवे)

१६—अत्रान्तरे शक्तिखण्डनामर्षितेन गाण्डीविनैवं भणितम्—"अरे दुर्योधनप्रमुखाः कुरुबलसेनाप्रभवः! अरे अविनयनदीकर्णधार कर्ण! युष्माभिर्मम परोक्ष एकाकी पुत्रकोऽभिमन्यु र्व्यापादितः। अहं पुनर्युष्माकं प्रेक्षमाणानामेनं कुमारवृषसेनं स्मर्तव्यशेषं नयामि।" (वेणीसंहारे ४)

१७—तदेव पञ्चवटीवनम्। सैव प्रियसखी वासन्ती। त एव जातनिर्विशेषाः पादपाः। मम पुनर्मन्दभाग्यायाः सर्वमेवैतद् दृश्यमानमपि नास्ति (उत्तर ३)

८-प्रवात-हवा वाला। परिव्राजिका=संन्यासिनी। ११-असंविदान-अनभिज्ञ। १२—अपहस्तित – दूर करके। १५—गाण्डीविन् – अर्जुन। अमर्षित – क्रुद्ध। १७—पादप – वृक्ष। १८—तरुषण्ड– वृक्षवन। त्र्यम्बकवृषभ—शिवजी का बैल। विषाण – सींग। ऐरावत—इन्द्रका हाथी।

१८—तस्य तरुषण्डस्य मध्ये मणिदर्पणमिव त्रैलोक्यलक्ष्म्याः क्वचित् त्र्यम्बक-वृषभविषाणकोटिखण्डिततटशिलाखण्डं क्वचिदैरावतदशनमुसलखण्डितकुमुददण्डमच्छोदं नाम सरो दृष्टवान् । (कादम्बर्याम् १२३)

१९—अलमनया कथया । संह्रियतामियम् । अहमप्यसमर्थः श्रोतुम् । अतिक्रान्तान्यपि संकीर्त्यमानान्यनुभवसमां वेदनामुपजनयन्ति सुहृज्जनस्य दुःखानि । तन्नार्हसि कथं कथमपि विधृतानिमानसुलभानसून् पुनः पुनः स्मरणशोकनलेन्धनता-मुपनेतुम् । (कादम्बर्याम्)

२०—उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ यः समाचरति पापम् ।
तं जनमसत्यसन्धं भगवति वसुधे कथं वहसि ॥

२१—कन्या वरयते वित्तं माता रूपं पिता सुखम् ।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति मिष्टान्नमितरे जनाः ॥

१२—गुरोः प्राप्तः परीवादो न श्रोतव्यः कदाचन,
कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं वा ततोऽन्यथा ॥

२३—अलं भारतीया मतानां विभेदैरलं देशभेदेन वैरेण चालम् ।
अयं शाश्वतो धर्म एको धरायां न सम्भाव्यते धर्मतत्त्वेषु भेदः ॥

२४—लक्ष्मीश्चन्द्रादपेयाद्वा हिमवान्वा हिमं त्यजेत् ।
अतीयात्सागरो वेलां न प्रतिज्ञामहं पितुः ॥

२५—अनित्यं यौवनं रूपं जीवितं द्रव्यसञ्चयः ।
ऐश्वर्यं प्रियसंवासो मुह्येत्तत्र न पण्डितः ॥

२६—आदरेण यथा स्तौति धनवन्तं धनेच्छया ।
तथा चेद्विश्वकर्त्तारं को न मुच्येत बन्धनात् ॥

२७—न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ॥

२८—रघुमेव निवृत्तयौवनं तममन्यन्त नवेश्वरं प्रजाः ।
स हि तस्य न केवलां श्रियं प्रतिपेदे सकलान्गुणानपि ॥

१९—वेदना – दुख । असु – प्राण । अनल – आग । इन्धन – लकड़ी । २०—असत्यसन्ध – झूठ बोलनेवाला । २२—परीवाद – निन्दा । पिधातव्यौ—बन्द करने चाहिएँ । २३—शाश्वत—नित्य । २७—हविष्=घी । कृष्णवर्त्मन्=अग्नि । २९—दिदृक्षा=देखने की इच्छा ।

२९—सर्वोपमाद्रव्यसमुच्चयेन यथा प्रदेशं विनिवेशितेन ।
सा निर्मिता विश्वसृजा प्रयत्नादेकस्थसौन्दर्यदिदृक्षयेव ॥

३०—विश्वासप्रतिपन्नानां वञ्चने का विदग्धता ।
अङ्कमारुह्य सुप्तं हि हत्वा किन्नाम पौरुषम् ॥

३१—साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः ।
तृणं न खादन्नपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम् ॥

३२—सा सीतामङ्कमारोप्य भर्तृप्रणिहितेक्षणाम् ।
मामेति व्याहरत्येव तस्मिन्पातालमभ्यगात् ॥

३३—गुणेषु क्रियतां यत्नः किमाटोपैः प्रयोजनम् ।
विक्रीयन्ते न घण्टाभिर्गावः क्षीरविवर्जिताः ॥

वाग्व्यवहार के प्रयोग

१—कर्तव्यं हि सतां वचः—(सज्जन पुरुषों की बात माननी चाहिए।)

२—द्वितीयगामी नहि शब्द एष नः—(यह हमारा उपाधिसूचक पद दूसरे किसी के नाम के साथ नहीं जा सकता ।)

३—इयं कथा मामेव लक्षीकरोति—(इस कथा का संकेत-विषय मैं ही हूँ।)

४—न ते वचोऽभिनन्दामि—(मैं तेरे वचन का समर्थन नहीं करता ।)

५—नाहमात्मविनाशाय वेतालोत्थापनं करिष्यामि—(मैं अपने नाश के लिए शैतान को नहीं उठाऊंगा ।)

६—वसुधां तस्य हस्तगामिनीमकरोत्—(उसने भूमि उसे देदी ।)

७—अतिभूमिं गतोऽस्या अनुरागः—(इसके प्रेम की सीमा की न रही ।)

८—मनो मे संशयमेव गाहते—(मेरे चित्त में संदेह ही है ।)

९—मम द्रव्यस्य कथं त्वया विनियोगः कृतः ?—(तुमने मेरे द्रव्य को किस प्रकार खर्च किया ?)

१०—अपि कुशलं (शिवं) भवतः—(आप अच्छे तो हैं ?)

११—नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण—(चक्र की नेमि के समान सुख और दुःख घूमते रहते हैं ।)

३२—व्याहृ=बोलना । ३३—आटोप=कृत्रिम वेष ।

१२—शिखी केकाभिस्तिरयति मे वचनम्—(मयूर अपनी आवाज से मेरे वचन को छिपाता है।)

१३—न परिहसामि, नायं समयः परिहासस्य—(मैं सत्य कहता हूँ, यह हंसी करने योग्य बात नहीं है।)

१४—मृगा मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति—(मृग मृग का साथ है, अर्थात्—अच्छे अच्छों या बुरे बुरों का साथ होता है।)

१५—लोकापवादो बलवान्मतो मे—(मेरा विचार है कि लोकनिन्दा बड़ी बलवती है।)

१६—सकलवचनानामविषयम्–वर्णनविषयातिक्रान्तं तत्स्थानम्–(उस स्थान का वर्णन ही नहीं हो सकता।)

१७—किं मिष्टमन्नं खरसूकराणाम्—(भैंस के आगे बीन बजाना।)

१८—स्वभावो दुरतिक्रमः—(स्वभाव नहीं बदल सकता।)

१९—अतिभूमिं गतो रणरणकोऽस्याः—(इसकी चिन्ता की कोई हद नहीं।)

२०—अग्निसात्कुरु—(आग में फेंक दो।)

२१—अपि रक्ष्यते रहस्यनिक्षेपः? (क्या तूने गुप्त बात की रक्षा की?)

२२—सर्वजनस्योपहास्यतामुपयान्ति—(सब उनकी हंसी करते हैं।)

२३—सा पुपोष लावण्यमयान् विशेषान्—(उस [उमा] के अंग अंग में सौन्दर्य भर गया।)

२५—इति लोकवादः न विसंवादमासादयति—(इस लोकोक्ति में कोई विवाद नहीं।

२६—कालस्य कुटिला गतिः—(समय की गति कुटिल है।)

२७—गुणान् भूषयते रूपम्—(रूप और गुण का साथ सोने में सुगन्ध के समान है।)

२८—शृणु मे सविशेषं वचः—(मेरी पूरी बात तो सुनो।)

२९—अजीर्णे भोजनं विषम्—(अपच में भोजन करना विष के तुल्य है।)

३०—कुतूहलेन तस्य चेतसि पदं कृतम्—(उसके चित्त में बड़ा आश्चर्य है।)

३१—अतिदानाद् बलिर्बद्धः—(अति बुरी है।)

३२—अलमतिविस्तरेण—(अति विस्तार की आवश्यकता नहीं।)

३३—अपुत्रस्य गृहं शून्यम्—(निपूते का घर मसान।)

३४—आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया—(बड़ों की आज्ञा सिर माथे।)

३५—अनुतिष्ठात्मनो नियोगम्—(अपना कार्य करो।)

३६—अतिपरिचयादवज्ञा—(अधिक परिचय से अपमान होता है।)

३७—को वृत्तान्तस्तत्रभवत्याः—(श्रीमती जी का कैसा हाल है?)

३८—सचेतसः कस्य मनो न दूयते—(किस सहृदय का मन दुःखित न होगा।)

३९—चिन्ता ज्वरो मनुष्याणाम्—(चिन्ता बहुत बुरी है।)

४०—सम्मुखासक्तदृष्टिः—(एक टक से मेरी ओर दृष्टि वाला।)

४१—सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः—(बिलकुल न होने से थोड़ा अच्छा है।)

४२—महतां पदमनुविधेयम्—(बड़ों का अनुकरण करो।)

४३—न चलति खलु वाक्यं सज्जनानां कदाचित्—(सत्पुरुष अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते हैं।)

४४—नात्र मुनिर्दोषं ग्रहीष्यति—(मुनि इसमें दोष न मानेंगे।)

४५—चौराणामनृतं बलम्—(चोर का बल झूठा है।)

४६—यौवनपदवीमारूढः—(वह जवान हो गया।)

४७—तृष्णैका तरुणायते—(तृष्णा कभी कम नहीं होती।)

४८—किमस्मान् सम्भृतदोषैरधिक्षिपथ—(हमारे ऊपर इतने दोष क्यों फेंकते हैं।)

४९—स महति जीवितसंशये अवर्तत—(वह मृत्यु के अत्यन्त खतरे में है।)

५०—इति कर्णपरम्परया श्रुतमस्माभिः—(ऐसा हमने जनोक्ति द्वारा सुना है।)

५१—विना पुरुषकारेण दैवं न सिद्ध्यति—(ईश्वर उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करते हैं।)

५२—भिन्नरुचिर्हि लोकः—(अपनी अपनी पसन्द अपना अपना स्वाद।)

५३—इति राज्ञां शिरसि वामपादमाधाय—(इस प्रकार राजाओं को भली भांति नीचा दिखाकर।)

५४—वाच्यतां याति-दोषभाजनं भवति—(दोषी बनता है।)

५५—स्वगृहनिर्विशेषमत्र वस—(अपने घर की तरह यहाँ ठहरो।)

५६—आकृतिरेवानुभापयत्यमानुषताम्—(उसकी शक्ल ही मनुष्य से भिन्न आकृति को बता रही है।)

५७—रामस्य दैवदुर्नियोगः कोऽपि—(यह राम का मन्द भाग्य था।)

५८—परिहासविजल्पितं सखे!—(हे मित्र! हँसी में कहा गया है।)

५९—विषयसुखनिरतो जीवितमत्यवाहयत्—(विषय सुख में लीन होकर उसने जीवन बिताया।)

६०—उमाख्यां सा जगाम—(उसका नाम उमा प्रसिद्ध हुआ।)

६१—ममाशयं सम्यग्गृहीतवानसि—(तू मेरा भाव अच्छी तरह समझ गया है।)

६२—मृत्योर्मुखे वर्तते, मृत्युगोचरं गतः—(मरने वाला है।)

६३—न हि सर्वविदः सर्वे—(संसार में कोई भी सर्वज्ञ नहीं।)

६४—नास्ति वन्धुसमं वलम्—(बन्धु सदृश कोई वल नहीं।)

६५—निःस्पृहस्य तृणं जगत्—(योगी को संसार तृणवत् है।)

६६—पुत्रः शत्रुरपण्डितः—(मूर्ख पुत्र शत्रु के समान है।)

६७—मानुषीं गिरमुदीरयामास—(मनुष्य की भाषा में कहा।)

६८—अहो दारुणो दैवदुर्विपाकः—(ऐ बदकिस्मत!)

६९—भूस्वर्गायमानमेतत्स्थलम्—(यह स्थान पृथ्वी पर स्वर्ग है।)

७०—लुब्धमर्थेन गृह्णीयात्—(लोभी को द्रव्य से वश में करना चाहिए।)

७१—गतोऽसि सर्वास्वायुधविद्यासु परां प्रतिष्ठाम्—(समग्र शस्त्रविद्याओं में तू पारङ्गत हो गया है।)

७२—गात्राणामनीशोऽस्मि संवृत्तः—(मेरा अपने अङ्गों पर भी स्वामित्व न रहा।)

७३—तस्य यश इयत्तया परिच्छेत्तुं नालम्—(उसकी कीर्ति की कोई सीमा नहीं।)

७४—स न तस्या रुचये बभूव—(वह उस [स्त्री] की इच्छा के अनुकूल नहीं था।)

७५—बंधे मोक्षे चाधुना सा ते प्रभवति—(तुम्हें रोकने या छोड़ने में वही अब समर्थ है।)

७६—एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जति—(अनेक गुणों में एक दोष छिप जाता है।)

७७— आनन्दपरिवाहिणा चक्षुषा–(आनन्दपूर्ण नेत्रों से।)

७८—मालती मूर्धानं चालयति–(मालती सिर हिलाती है।)

७९— न चेदन्यत्कार्यातिपातः–(यदि और कोई कार्य न रहा।)

८०—अमी विनोदनोपायाः संदीपना एव दुःखस्य–(ये विनोद के साधन दुःख को अधिक बढ़ा रहे हैं।)

८१— ओजस्वितया सा न परिहीयते शच्याः–(वह ओजस्विता में इन्द्राणी से कम नहीं।)

८२—एष ते जीविताबधिः प्रवादः–(यह अपवाद जीवन पर्यन्त ठहरेगा।)

८३—तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्–(युद्ध बराबर ताकत वाले वीरों में हुआ।)

८४—कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्रीः–(जवानी की शोभा बहुत थोड़े दिन ठहरती है।)

८५—अनुदिवसं परिहीयसेऽङ्गैः–(दिन प्रतिदिन तू बहुत कमजोर हो रही है।)

८६—मनुष्याः स्खलनशीलाः–(गलती करना मनुष्य का स्वभाव ही है।)

८७—सुखमुपदिश्यते परस्य–(दूसरे को उपदेश देना सरल है।)

८८—परित्रायस्वैनां मा कस्यापि तपस्विनो हस्ते पतिष्यति–(इसको बचाओ अब तक यह किसी तपस्वी के हाथ में नहीं पड़ती।)

८९—स सुहृद्व्यसने यः स्यात्–(आपत्तिकाल में साथ देने वाला ही मित्र होता है।)

९०—लघुसंदेशपदा सरस्वती–(संक्षिप्त पदों वाला संदेश।)

९१—कस्मिन्नपि पूजार्हे अपराद्धा शकुन्तला–(किसी पूज्य व्यक्ति की शकुन्तला ने अवहेलना की है।)

९२–विहगाः समदुःखा इव चुक्रुशुः–(मानो सहानुभूति भरे पक्षी चिल्लाने लगे।)

९३—तव न कदापि मया विप्रियं कृतम्–(मैंने कभी आपकी बुराई नहीं की।)

९४—धारासारैर्महती वृष्टिर्बभूव–(मुसलाधार वर्षा हुई।)

९५—तया हृदयवल्लभोऽभिलिख्य कामदेवव्यपदेशेन सखीपुरतोऽपह्नुतः–(उसने अपने प्राणप्रिय का चित्र खींचा किन्तु सखियों के आगे कामदेव कह कर छिपा दिया।)

९६—ग्राहकैर्गृह्यते चौरः पदेन–(चोर पैरों के चिह्नों से पकड़ा जाता है।)

९७—अन्तःपुरविरहपर्युत्सुको राजर्षिः—(राजर्षि अपनी स्त्रियों के वियोग से दुःखित हैं।)

९८—विललाप विकीर्णमूर्धजा—(बालों को बिखेर कर उसने विलाप किया।)

९९—न कामचारो मयि शङ्कनीयः—(मेरे ऊपर व्यभिचार की शङ्का न करनी चाहिए।)

१००—अलमन्यथा गृहीत्वा—(ऐसा न समझो।)

१०१—सर्वत्र नो वार्तमवेहि—("हम सब प्रकार अच्छे हैं" ऐसा समझो।)

१०२—खलः सर्षपमात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति।
आत्मनो बिल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति॥
(दुष्ट पुरुष दूसरे के छोटे-छोटे दोषों को भी देखता है,
किन्तु अपने स्पष्ट दिखाई देते हुए दोषों को भी नहीं देखता।)

१०३—त्वं मम जीवितसर्वस्वीभूतः—(तुम मेरे जीवन के एक मात्र धन हो।)

१०४—वाच्यस्त्वया मद्वचनात्स राजा—(मेरी ओर से उस राजा को कहना।)

१०५—अनुरूपभर्तृगामिनी—(अपने अनुकूल पति पानेवाली।)

१०६—अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी—(विद्या उसकी जिह्वा पर थी।)

१०७—ज्ञायतां कः कः कार्यार्थीति—(मालूम करो कि कौन-कौन प्रार्थी हैं।)

१०८—बधिरात् मन्दकर्णः श्रेयान्—(बहरे से अर्ध बहरा अच्छा है।)

१०९—शनैर्निद्रा निमीलितलोचनं मामकार्षीत्—(निद्रा ने धीरे-धीरे मेरी आँखें बन्द कर दीं।)

११०—वरं मृत्युर्न पुनरपमानः—(अपमान से मौत अच्छी है।)

१११—प्रस्तूयतां विवादवस्तु—(विवाद के विषय का प्रारम्भ करो।)

११२—वक्तुं सुकरमिदमध्यवसातुं तु दुष्करम्—(करने से कहना सरल है।)

११३—तद्वचः मम हृदये शल्यं जातम्—(उसके वचन ने मेरे हृदय पर बाण का काम किया।)

११४—तदहं विदधे तव स्तवं दमयन्त्याः सविधे—(सो मैं दमयन्ती के आगे तुम्हारी प्रशंसा करूंगा।)

११५—सकलरिपुजयाशा यत्र बद्धा सुतैस्ते—(जिसके ऊपर तुम्हारे लड़कों ने समग्र शत्रुओं को जीतने की आशा रक्खी हुई है।)

११६—इदं प्रायेण तव कर्ण-पथमायातम्–(शायद आपने यह सुन लिया हो।)

११७—हृदि एनां भारतीमुपधातुमर्हसि—(इन शब्दों को भली-भांति याद रखिए।)

११८—तेनाष्टौ परिगमिताः समाः कथंचित्—(उसने किसी प्रकार आठ वर्ष विताये।)

११९—उपकारः प्रत्युपकारेण निर्यातयितव्यः—(उपकार का बदला उपकार से चुकाना चाहिए।)

१२०—हृदयंगमः परिहासः—(मनोहर हास्य।)

१२१—मित्राणां तत्वनिकषग्रावा विपत्—(मित्रों को परखने में विपत्ति कसौटी है।)

१२२—यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम् (अंग-अंग में जवानी भर गयी है।)

१२३—अपत्यमन्योन्यसंश्लेषणं पित्रोः—(सन्तान माता पिता के बन्धन की गांठ है।)

१२४—दासी देवीभावं गमिता—(दासी रानी के पद को प्राप्त हुई।)

१२५—अस्मत्स्थानात्पदात्पदमपि न गन्तव्यम्—(इस स्थान से एक कदम भी मत हिलो।)

१२६—स्नेहस्यैकायनीभूता—(एक मात्र स्नेह की वस्तु।)

१२७—अन्यथा एषा वीप्सा न चरितार्था भविष्यति—(नहीं तो यह पुनरुक्ति सफल न होगी।)

१२८—केन वान्येन साधारणीकरोमि दुःखम्—(अन्य किसके साथ में अपने दुःख को कम करूं।)

लोकोक्तियाँ PROVERBS

१—अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति (प्राण जाय पर वचन न जाय।) The virtuous make good their promise.

२—अर्धो घटो घोषमुपैति नूनम् (थोथा चना बाजे घना।) An empty vessel makes much noise.

३—इतो भ्रष्टस्ततो नष्टः (धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का।) A man falls between two stools.

४—'कञ्चुकमेव निन्दति शुष्कस्तनी (पीनस्तनी) नारी' (नाच न जाने आँगन टेढ़ा।) A bad workman quarrels with his tools.

५—'आसुखापाति कल्याणं कार्यसिद्धि हि शंसति' (होनहार बिरवान के होत चीकने पात) Coming events cast their shadows before.

६—'निःसारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान्' (ऊंची दूकान फीका पकवान।) Great cry and little wool.

७—'नवांगनानां नव एव पंथाः' (हर एक अपनी डेढ़ ईंट की मस्जिद बनाता है।) New Lords new laws.

८—'गतस्य शोचनं नास्ति' या 'निर्वाणदीपे किमु तैलदानन्' अथवा 'कालेदत्तं वरं ह्यल्पमकाले बहुनाऽपि किम् ?' (अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।) It is no use crying over spilt milk.

९—'छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति' या 'विपद् विपदमनुबध्नाति' (गरीबी में आटा गीला, या ताड़ से गिरा खुजूर पै अटका।) Misfortunes never come alone.

१०—'न कूपखननं युक्तं प्रदीप्ते वह्निना गृहे' या 'शिरसि फणी दूरे तत्प्रतीकारः' (जब तक हिमालय से संजीवनी आवे बीमार मर जावे।) While the grass grows the horse starves.

११—'अतिपरिचयादवज्ञा सन्ततगमनादनादरो भवति' (मान घटे नित के घर जाये।) A constant guest is never welcome.

१२—'याचको याचकं दृष्ट्वा श्वानवद् गुर्गुरायते' (कुत्ता कुत्ते का बैरी होता है।) Two of the traders seldom agree.

१३—'महाजनो येन गतः स पथाः' (बड़ों की राह भली।) Do what the great men do.

१४—'श्वा यदि क्रियते राजा स किं नाश्नात्युपानहम्'. या 'सुतप्तमपि पानीयं शमयत्येव हि पावकम्' (आदत सिर के साथ जाती है।)

१५—'निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते' या 'यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राल्पधीरपि' (अन्धों में काना राजा।) Figure among ciphers.

१६—'महान् महत्येव करोति विक्रमम्' अथवा 'अनहुंकुरुते घनध्वनिं न तु

गोमायुरुतानि केसरी' (शेर बादल गरजने पर ही गरजता है।) The great display their power only before the great.

१७—'वली बलं वेत्ति न वेत्ति निर्बलः' या 'गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुणः' (हीरे की परख जौहरी ही जाने।) The mighty knows what might is and not the weak.

१८—'अपि धन्वन्तरिर्वैद्यः किं करोति गतायुषि' या 'मरणं प्रकृतिः शरीरिणाम्' (एक दिन सबको मरना है।) Death is inevitable to every mortal.

१९—'इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयं प्रख्यापितैर्गुणैः' (अपने मुँह मियां मिट्ठू—अपने मुंह अपनी बड़ाई शोभा नहीं देती।) Self-praise is no recommendation.

२०—'कण्टकेनैन कण्टकम्' या 'पिशाचानां पिशाचभाषयैवोत्तरं देयम्' (काँटे से काँटा निकाला जाता है।) One nail drives out another.

२१—'यो यद्वपति बीजं हि लभते सोऽपि तत्फलम्' (जैसा करोगे वैसा भरोगे।) As you sow so shall you reap.

२२—'बह्वारम्भे लघुक्रिया' (खोदा पहाड़ निकली चुहिया।) Much ado about nothing.

२३—'हिताहितं वीक्ष्य निकाममाचरेत्' (जितनी चादर देखो उतने पैर फैलाओ।) Cut your coat according to your cloth.

२४—'सर्वः कान्तमात्मीयं पश्यति' (कोई अपनी लस्सी को खट्टी नहीं कहता।) Every potter praises his own pot.

२५—'न हि सुखं दुःखैर्विना लभ्यते' (सेवा बिन मेवा नहीं।) No pains no gains.

२६—'या यस्य प्रकृतिः स्वभावजनिता केनापि न त्यज्यते'; अथवा—
'भूयोऽपि सिक्तः पयसा घृतेन न निम्बवृक्षो मधुरत्वमेति'; अथवा—
'आकण्ठजलमग्नोऽपि श्वा लिहत्येव जिह्वया'; अथवा—
'नहि कस्तूरिकामोदः शपथेन निवार्यते' (आदत सिर के साथ जाती है।) It is hard to break an old hog of an ill custom.

२७—'कष्टःखलु पराश्रयः' (पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।) Dependence is indeed painful.

२८—'कुपुत्रेण कुलं नष्टम्' (डूबा वंश कबीर का उपजे पूत कमाल।) A bad descendant destroys the line.

२९—'को धर्मः कृपया विना' (दया धर्म का मूल) No pity without mercy.

३०—'जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः' (बूंद बूंद से घट भरे). Little drops make the pitcher full.

३१—'पयः पानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्धनम्' (जो तू सींचे दूध से नीम न मीठो होय।) Snake's venom increases by drinking milk.

३२—वीरभोग्या वसुन्धरा' वा 'बली बलीयान्न तु नीतिमार्गः' (जिसकी लाठी उसकी भैंस) Might is right or The brave rule the earth.

३३—'बालानां रोदनं बलम्' (बालक को बल रोदन एका।) Cry is the only strength of a child.

३४—'पाणौ पयसा दग्धे तक्रं फूत्कृत्य पामरः पिबति' (दूध का जला छाछ फूंक फूंक कर पीता है।) A burnt child dreads the fire.

३५—'निजसदननिविष्टः श्वा न सिंहायते किम् ?' (अपनी गली में कुत्ता भी शेर होता हैं।) Every cock fights best on its own dung-hill.

३६—'दुर्बलस्य बलं राजा' (निर्बल के बल राम।) The king is the strength of the weak.

३७—'दूरस्थाः पर्वता रम्याः' (दूर के ढोल सुहावने।) Distance lends enchantment to the view.

३८—'अर्थमनर्थं भावय नित्यम्' (दौलत का नशा बुरा हं।) Wealth is the root of all calamities.

३९—'सत्संगजानि निधनान्यपि तारयन्ति' अथवा 'कर्तव्यो महदाश्रयः' अथवा 'हरेः पदाहतिः श्लाघ्या न श्लाघ्यं खररोहणम्' (बड़ों के सहारे छोटे भी तर जाते हैं) It's wise to take refuge under the great.

४०—'मन्दोऽप्यविरतोद्योगः सदा विजयभाग्भवेत्' 'शनैः पन्थाः शनैः कन्था शनैः पर्वतलङ्घनम्' (सहज पके से मीठा होय।) Slow and steady wins the race.

४१—'न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः' (न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी।) If the sky falls we shall catch larks.

४२—'गतस्य शोचनं नास्ति' (बीती ताहि बिसारि दे।) Let bygone be bygone.

४३—'संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति' (एक मछली सारे ताल को गन्दा करती है।) A black sheep infects the whole flock.

४४—'वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति मनीषिणः' (जैसा देश वैसा भेष।) When you are at Rome, do as the Romans do.

४५—'यथा वृक्षस्तथा फलम्' (जैसी मुँह वैसी चपेट।) Thank a man according to his rank.

४६—'ये गर्जन्ति मुहुर्मुहुर्जलधरा वर्षन्ति नैतादृशाः' (जो गरजते हैं वे बरसते नहीं।) Barking dogs seldom bite.

४७—'एका क्रिया द्व्यर्थकरी प्रसिद्धा' (एक पन्थ दो काज।) To kill two birds with one stone.

४८—'काश्मीरजस्य कटुतापि नितान्तरम्या' अथवा 'पण्डितोऽपि वरं शत्रुर्न मूर्खो हितकारकः' (नीम हकीम खतरा जान।) Little knowledge is a dangerous thing.

४९—'अध्रुवाद् ध्रुवं वरम्' 'वरमद्य कपोतो न श्वो मयूरः' (नौ नकद न तेरह उधार।) A bird in hand is better than two in the bush.

५०—'नवा वाणी मुखे मुखे' (पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं।) There are men and men.

५१—'गतः कालो न चायाति' (गया वक्त फिर हाथ आता नहीं है।) Time once past cannot be recalled.

५२—'अतिदर्पे हता लङ्का' (गरूर का सिर नीचा।) Pride goth before a fall.

५३—'एकस्य हि विवादोऽत्र दृश्यते नच प्राणिनः' (एक हाथ से ताली नहीं बजती।) It takes two to make a row.

५४—'खलः करोति दुर्वृत्तं तद्धि फलति साधुषु।
दशाननोऽहरत् सीतां बन्धनं च महोदधेः॥'
(लड़ें लोह पाहन दोऊ बीच रूई जरि जाय।) Wicked person commits a fault and good man suffers for it.

५५—'भक्षितेऽपि लशुने न शांतो व्याधि:' (जेहिके कारण मूंड मुंडावा, सो दुख मोरे आगे आवा ।) Even in using bitter pills one is not free from disease.

५६—'स सुहृद् व्यसने य: स्यात्' (वक्त पड़े पर जानिए को बैरी को मीत) A friend in need is a friend indeed.

५७—'विषकुम्भं पयोमुखम्' (मुंह में राम बगल में छुरी ।) A wolf in lamb's clothing.

५८—'कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दु:खमेकान्ततो वा' (हर रोज ईद कहाँ) Christmas comes but once a year.

५९—'दारिद्रयदोषो गुणराशिनाशी' (गरीब की जोरू सब की भाभी ।) A light purse is a heavy curse.

६०—'चक्रवत्परिवर्तन्ते दु:खानि च सुखानि च' (चार दिन की चाँदनी फिर अन्धेरी रात । To every spring there is an autumn.

६१—'यो ध्रुवाणि परित्यज्य ह्यध्रुवाणि निषेवते ।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति ह्यध्रुवं नष्टमेव च ।।'
(दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम ।)
A man falls Between two stools.

६३—'प्राणिनां हि निकृष्टापि जन्मभूमि: परा प्रिया' (छज्जू जैसा सुख चुबारे न बल्ख न बुखारे) East or west home is the best.

६४—'हा हन्त सम्प्रति गतानि दिनानि तानि' (वे दिन गय जब अलीलखां फाखता उड़ाया करते थे) Those palmy days are gone.

६५—'विश्वस्तेषु च वञ्चना परिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत्'; अथवा
अङ्कमारुह्य सुप्तं हि हत्वा किं नाम पौरुषम् ।।'
(विश्वासघात महापाप है ।) It is a great sin to harm a person who comes for shelter.

६६—' अपन्थानं तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुञ्चति' (बुरे का साथी कौन है ?) None would like to be friend of a wicked person.

६७—'अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति' (आलस बुरी बला है।) Idleness is a great disease.

६८—'पावको लोहसंगेन मुद्गरैरभिहन्यते' (गेहूँ के संग घुन पिसें) One is to suffer when associated with another.

६९—'नीचो वदति न कुरुते, वदति न साधुः करोत्येव' अथवा 'ब्रुवते हि फलेन साधवो न तु कण्ठेन निजोपयोगिताम्' (सज्जन करते हैं कहते नहीं ।) Good men prove their usefulness by deeds not by words.

७०—'बन्धनभ्रष्टो गृहकपोतश्चिल्लाया मुखे पतितः' (भाड़ से निकला आग में पड़ा ।) He has escaped one danger only to fall into another.

७१—'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः' (भागते चोर की लंगोटी ही सही ।) Something is better than nothing.

७२—'पङ्को हि नभसि क्षिप्तः क्षेप्तुः पतति मूर्धनि' (आसमान पर थूका अपने सिर । Slander hurts the slanderer.

७३—'न बिडालो भवेद्यत्र तत्र क्रीडन्ति मूषकाः' (मियाँ घर नहीं बीवी को डर नहीं ।) When the cat is away the mice will play.

७४—'यत्र चौरा न विद्यन्ते तत्र किं स्यान्निरीक्षकैः' (मियाँ बीवी राजी तो क्या करेगा काजी ।) Where there is peace at home there is no need of judge.

७५—'को न याति वशं लोके मुखे पिण्डेन पूरितः' (लेने देने से सभी अपने हो जाते हैं ।) Wealth is a great attraction. or Friends are plenty when the purse is full.

७६—'प्रक्षालनाद्धि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम्' (पैर कीचड़ में डाल कर धोने से कीचड़ में न डालना ही अच्छा है ।) Prevention is better than cure.

७७—उष्ट्रणाँ च विवाहोऽस्ति गर्दभा गीतगायकाः' (जैसा घर वैसा वर जैसे को तैसा मिले ।) It is only asses that sing at the marriage of camel. or Birds of the same feather flock together.

७७—'आपदामापतन्तीनां हितोऽप्यायात्यहेतुताम्' (आपत्ति पड़ने पर अपना भी पराया हो जाता है ।) When calamities fall upon one, his own friends become his enemies.

७८—रत्नाकरो जलनिधिरित्यसेवि धनाशया ।
धनं दूरेस्तु वदनमपूरि क्षारवारिभिः ॥'
(चौबे गये छब्बे बनने दुब्बे बन के आये) One trying for better got urst

७९—'अगाधजलसञ्चारी न गर्वं याति रोहितः ।'
[अगाध (सागर) जल में विचरण करता हुआ भी रोहित (महामत्स्य) भिमान नहीं करता ।]

८०—'अश्नुते स हि कल्याणं व्यसने यो न मुह्यति ।'
(जो मुसीबत में नहीं घबराता वही संसार में सुख भोगता है ।)

८१—'आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत् ।'
(आहार और व्यवहार में संकोच न करने वाला सुखी रहता है ।)

८२—'उदिते हि सहस्रांशौ न खद्योतो न चन्द्रमाः ।'
(सूर्य के उदय हो जाने पर न जुगनू और न चन्द्रमा ही जँचते हैं ।)

८३—अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णं
शमयति परितापं छायया संश्रितानाम् ।'
(वृक्ष अपने सिर पर सूर्य की प्रचण्ड धूप लेता है, किन्तु अपने आश्रितों का ताप अपनी छाया से दूर करता है ।)

८४—'अन्यायं कुरुते यदा क्षितिपतिः कस्तं निरोद्धुं क्षमः ? ।'
(यदि राजा ही अन्याय करता है तो उसे कौन रोक सकता है ?)

८५—'अपि मुदमुपयान्तो वाग्विलासैः स्वकीयैः,
परभणितिषु तृप्तिं यान्ति सन्तः कियन्तः ?'
(अपनी रचनाएं तो सभी को अच्छी लगती हैं, किन्तु ऐसे सज्जन बहुत कम हैं जो दूसरों की रचनाओं को सुनकर प्रसन्न होते हैं ।)

८६—'अप्रकटीकृतशक्तिः शक्तोऽपि जनस्तिरस्क्रियां लभते ।'
(अपनी शक्ति का परिचय न देने पर शक्तिशाली व्यक्ति भी तिरस्कृत होता है ।)

८७—किं वाऽभविष्यदरुणस्तमसां विभेत्ता,
तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाऽकरिष्यत् ?

[सूर्य भगवान् यदि पीठ पर न होते तो क्या अरुण (संसार के) घने अन्धकार को मिटा सकता ?]

८८—को जानाति जनो जनार्दनमनोवृत्तिः कदा कीदृशी।

(कौन जानता है—भगवान् कब क्या करते हैं ?)

८९—को वा दुर्जनवागुरासु पतितः क्षेमेण यातः पुमान् ?

(दुर्जन के फन्दे में पड़कर कौन कुशल पूर्वक बच सकता है ?)

९०—ग्रावाणोऽप्यार्द्रतां सम्यग् भजन्त्यभिमुखे विधौ।

(भाग्य साथ दे तो पत्थर भी रुखाई छोड़ कर चिकनाई धारण कर लेते हैं।)

९१—दर्दुरा यत्र वक्तारस्तत्र मौनं हि शोभनम्

(जहां मेंढक ही वक्ता हों वहां चुप रहना ही अच्छा है।)

९२—दुग्धधौतोऽपि किं याति वायसः कलहंसताम् ?

(दूध में नहलाने से क्या कौआ हंस बन सकता है ?)

९३—कलौ वेदान्तिनो भान्ति फाल्गुने बालका इव।

(कलियुग में इसी प्रकार वेदान्ती दिखाई देते हैं जैसे फागुन मास में बालक।)

९४—कल्पवृक्षोऽप्यभव्यानां प्रायो याति पलाशताम्।

(भाग्यहीनों के लिए कल्पवृक्ष भी ढाक का पेड़ बन जाता है।

९५—कष्टं निर्धनिकस्य जीवितमहो दारैरपि त्यज्यते !

(ओह ! निर्धन पुरुष का भी कोई जीवन है, स्त्री भी जिसका साथ छोड़ देती है।)

९६—कः प्राज्ञो वाञ्छति स्नेहं वेश्यासु सिकतासु च।

(कौन बुद्धिमान् वेश्याओं और बालू से स्नेह की आशा करेगा ? स्नेह—प्रेम और तेल।)

९७—काले दत्तं वरं ह्यल्पमकाले बहुनाऽपि किम् ?

(समय पर थोड़ा भी दिया जाय तो बहुत है, बाद में अधिक दिया हुआ भी बेकार।)

९८—कुदेशेष्वपि जायन्ते क्वचित्केचिन्महाशयाः।

(कभी-कभी निकृष्ट स्थान में भी बड़े आदमी पैदा हो जाते हैं।)

९९—न स्पृशति पल्वलाम्भः पञ्जरशेषोऽपि कुञ्जरः क्वापि।

(पंजरमात्र रह जाने पर भी हाथी कभी छिछली तलैया का पानी नहीं छूता।)

१००—दैवे दुर्जनतां गते तृणमपि प्रायेण वज्रायते ।
(भाग्य के विपरीत होने पर तिनका भी प्रायः वज्र बन जाता है ।)
१०१—न सुवर्णे ध्वनिस्तादृक् यादृक् कांस्ये प्रजायते ।
(सोने में वैसी आवाज नहीं होती जैसी कांसे में ।)
१०२—बुभुक्षितैर्व्याकरणं न भुज्यते न पीयते काव्यरसः पिपासुभिः ।
(भूखे व्याकरण नहीं खाते और प्यासे काव्यरस को नहीं पीते ।)

शुद्धाशुद्धज्ञान

लिंग, वचन एवं कारक की अशुद्धियाँ

१—गोपालौ मम स्नेहपात्रः	गोपालो मम स्नेहपात्रम् ।
२—भवान् मम मित्रोऽसि	भवान् मम मित्रमस्ति ।
३—जटायुः प्राणं तत्याज	जटायुः प्राणान् तत्याज ।
४—देवो भ्रातुः सह गृहं गतः	देवो भ्रात्रा सह गृहं गतः ।
५—किं ते तव दाराः भवन्ति	किं सा तव दाराः भवति ?
६—देव तं भोजनं देहि	देव तस्मै भोजनं देहि ।
७—कोऽस्ति राजसखा	कोऽस्ति राजसखः ।
८—बालः चंद्रमां पश्यति	बालः चन्द्रमसं पश्यति ।
९—मम सुहृदस्य गृहम्	मम सुहृदः गृहम् ।
१०—भवान् केन पथेन यास्यति	भवान केन पथा यास्यति ?
११—नरः इह जन्मे भक्ति कुर्यात्	नरः इह जन्मनि भक्ति कुर्यात् ।

१—पात्र शब्द नपुंसकलिङ्ग है । २—मित्रम् दोस्त के अर्थ में नपुंसक लिङ्ग है और भवत् शब्द के साथ प्रथम पुरुष की क्रिया लगती है । ३—दार अक्षत, लाज असु और प्राण शब्द का प्रयोग बहुवचन में होता है । ४—सह के साथ तृतीया विभक्ति होती है । ५—दार शब्द बहुववनान्त है । ६—दा धातु के कर्म में चतुर्थी होती है । ७—सखि शब्द समास में अकारान्त होता है । ८—चन्द्रमस् शब्द हलन्त है । ९—सुहृद् शब्द भी हलन्त है । १०—पथिन् शब्द के तृतीय के एकवचन में पथा होता है । ११—जन्मन् शब्द हलन्त है ।

१२—महाराज्ञः आज्ञास्ति	महाराजस्य आज्ञा अस्ति
१३—परमात्मस्य महिमाँ पश्य	परमात्मनः महिमानं पश्य।
१४—मम लक्ष्मी नास्ति	मम लक्ष्मीः नास्ति।
१५—भवानस्य किं नाम	भवतः किं नाम?
१६—मम् मने सन्देहः	मम मनसि सन्देहः।
१७—नदीपथा नगरं गच्छ	नदीपथेन नगरं गच्छ।
१८—भूपत्युः आज्ञा अस्ति	भूपतेः आज्ञा अस्ति।
१९—नवमे कक्षायां शतानि छात्राः	नवम्यां कक्षायां शतं छात्राः।

सन्धि की अशुद्धियाँ

२०—देवोवाच	देव उवाच।
२१—कवीमौ यातः	कवी इमौ यातः।
२२—अम्यजा गच्छन्ति	अमी अजा गच्छन्ति।
२४—अत्याधिक	अत्यधिक।
२५—नरान्नाकारय	नरान् आकारय।
२६—हे देवागच्छ	हे देव आगच्छ।
२७—मित्रं अहं अवदम्	मित्रमहमवदम्।
२८—सो कृषक आगच्छति	स कृषक आगच्छति।

१२—राजन् शब्द महत् के साथ समस्त होने से अकारान्त हो जाता है। १३—परमात्मन् की षष्ठी में परमात्मनः और महिमन्की द्वितीया में महिमानम् होता है। १४—लक्ष्मी शब्द के प्रथमा के एकवचन में विसर्ग होता है। १५—भवत् शब्द नपुंसकलिङ्ग और हलन्त है। १६—मनस् शब्द हलन्त है। १७—पथिन् शब्द समास में अकारान्त हो जाता है। १८—पति शब्द समास में हरि के समान होता है। १९—विंशति के बाद के सभी संख्यावाचक शब्द केवल एकवचन में आते हैं। २०—विसर्ग के लोप होने पर सन्धि नहीं होती। २१—ईकारान्त द्विवचन में सन्धि नहीं होती। २२—अदस् शब्द के मकारयुक्त-ई में सन्धि नहीं होती। २४—अति अधिक 'इ' को 'य' हो गया। २५—दीर्घ स्वर से न् परे रहने पर द्वित्त्व नहीं होता। २६—सम्बोधन के अवर्ण की स्वर के साथ सन्धि नहीं होती। २७—स्वर परे तथा पदान्त में 'म्' का अनुस्वार नहीं होता। २८—आकार भिन्न स्वर तथा व्यञ्जन परे होने पर 'स्' के विसर्ग का लोप हो जाता है। काश्मीर शब्द देश विशेष का नाम होने से बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है।

२९—सखि प्रियम्वदा	सखि प्रियंवदा।
३०—स काश्मीरेषु अनिवसत्	स काश्मीरेषु न्यवसत्।
३१—भ्रातृ आदेशात्	भ्रातुरादेशात्।
३२ गर्धवो पञ्चत्वं गतः	गर्धवः पञ्चत्वं गतः।
३३—बालो सुखेन शेते	बालः सुखेन शेते।

सर्वनाम तथा विशेष्य-विशेषण की अशुद्धियां

३४—इमं पुस्तकं पश्य	इदं पुस्तकं पश्य।
३५—सर्वाः नराः गच्छन्ति	सर्वे नरा गच्छन्ति।
३६—स इमं स्त्रीमपश्यत्	स इमां स्त्रीमपश्यत्।
३७—किञ्चत् अन्यंवद	किञ्चिद् अन्यद् वद।
३८—सर्वाणां प्रियो हरिः	सर्वेषां प्रियो हरिः।
३९—त्रयः सुन्दरा बालिकः	तिस्रः सुन्दर्यः बालिकाः।
४०—प्रातः प्रभृति वर्षा भवति	प्रातः प्रभृति वर्षति देवः।
४१—सुन्दरी अबलागणः याति	सुन्दरोऽबलागणो याति।
४२—मे भ्राता आगतः	मम भ्राता आगतः।
४३—इमं फलम् अस्ति	इदं फलमस्ति।
४४—स महति विपदि वर्तते	स महत्यां विपदि वर्तते।

२९—३०—३१—एक पद में, धातूपसर्ग में और समास में सन्धि अवश्य होती है। ३२—३३ क, ख, प, फ, ष, स, श परे रहने पर विसर्ग का ओ नहीं होता। ३४—३५—३६—नपुंसकलिंग पुंल्लिग, स्त्रीलिंग में सर्वनाम शब्दों के लिंग वचन विशेष्य के समान ही होंगे। ३७—नपुंसकलिंग में अन्यत् होता है। ३८—सर्वनाम शब्दों के रूप अकारान्त शब्द से भिन्न हैं। ३९—बालिका शब्द स्त्रीलिंग है अतः उसके विशेषण भी स्त्रीलिंग ही होंगे। ४०—वर्षा भवति प्रयोग व्याकरण-सम्मत होते हुए भी व्यवहार के प्रतिकूल है। संस्कृत व्यवहार में 'वर्षा' नित्य बहुवचनान्त शब्द है और इसका अर्थ 'बरसात' है। ४१—गण शब्द पुंल्लिग है अतः उसका विशेषण सुन्दर शब्द भी पुंल्लिग होगा। ४२—युष्मद् और अस्मद् शब्द को पद के आदि में होने पर 'ते, मे' आदेश नहीं होते। ४३—फल प्रथमा विभक्ति और नपुं० में है इसलिए उसका विशेषण भी प्रथमा में नपुं० होगा। ४४—विपद् शब्द स्त्रीलिंग है इसलिए महत् शब्द की भी स्त्रीलिंग में सप्तमी विभक्ति ही होगी।

वर्ण तथा अव्ययों की अशुद्धियाँ——

४५—धनमान् बुद्धिवन्तं निन्दति	धनवान् बुद्धिमन्तं निन्दति ।
४६—अहं फलं गृहीतुमिच्छामि	अहं फलं ग्रहीतुमिच्छामि ।
४७—मार्गे हस्तिः पलायते	मार्गे हस्ती पलायते ।
४८—पितृण् संतर्पय	पितॄन् संतर्पय ।
४९—सशी आकासे सुसोभते	शशी आकाशे सुशोभते ।
५०—धनुःसु शरान् योजय	धनुःषु शरान् योजय ।
५१—स मिथ्यां वदति	स मिथ्या वदति ।
५२—देवः च गोविन्दः गच्छतः	देवः गोविन्दश्च गच्छतः ।
५३—तु अहं न गमिष्यामि	अहं तु न गमिष्यामि ।
५४—प्रतिदिनस्य प्रातरि याति	प्रतिदिनं प्रातः याति ।

क्रिया में काल आदि की अशुद्धियाँ

५५—त्वया भूयसे	त्वया भूयते ।
५६—अहम् अत्र स्थामि	अहमत्र तिष्ठामि ।
५७—स चन्द्रं दृश्यति	स चन्द्रं पश्यति ।
५८—तेन नगरे वस्यते	तेन नगरे उष्यते ।
५९—राज्ञा प्रजाः पाल्यते	राज्ञा प्रजाः पाल्यन्ते ।

४५—यदि उपधा में अवर्ण हो तो म् का व् हो जाता है । ४६—ग्रह् होता है। ४७—यह इन् प्रत्ययान्त शब्द है। ४८—पदान्त में न् का ण् नहीं होता। ४९—तालव्य (श) है। ५०—विसर्ग बीच में होने पर भी स् को ष् हो जाता है। ५१—अव्यय के साथ कोई विभक्ति नहीं होती। ५२—च दूसरे शब्द के बाद आता है। ५३—चेत्, तु, च, वा आदि वाक्यारम्भ में नहीं आते। ५४—अकारान्त अव्ययों में तृतीया, पंचमी और सप्तमी के सिवाय अम् होता है। ५५—भाववाच्य में सदा प्र० तृ० के एकवचन में क्रिया होती है। ५६ ५७—वर्तमानकाल में स्था को तिष्ठ् और दृश् को पश्य् हो जाता है। ५८—वस् का भाव में उष् हो जाता है। ५९—कर्मवाच्य में क्रिया कर्म के अनुसार होती है।

६०—तेन मृगं विध्यति — तेन मृगः विध्यते ।

६१—देवः भृत्यं भारं नायतति — देवः भृत्येन भारं नाययति ।

६२—प्रीतः यतिः प्रतस्थौ — प्रीतः यतिः प्रतस्थे ।

६३—स माम् अवदत् स्म — स माम् अवदत् ।

६४—तेन वाणीं श्रोतुमिष्यते — तेन वाणी श्रोतुमिष्यते ।

कृदन्त प्रत्ययों की अशुद्धियाँ—

६५—त्वाम् अगृह्य न यास्यामि — त्वामगृहीत्वा न यास्यामि ।

६३—भिक्षां ददन् बालः हसति — भिक्षां ददत् बालः हसति ।

६७—गृहम् आगत्वा पठिष्यामि — गृहमागत्य पठिष्यामि ।

६८—स पुष्पं दृष्टः — तेन पुष्पं दृष्टम् ।

६९—सा बालकं दृष्टवान् — सा बालकं दृष्टवती ।

७०—स पाठः पठित्वा भुङ्क्ते — स पाठं पठित्वा भुङ्क्ते ।

७१—अहं बालं वक्तुमश्रृणवम् — अहं बालं ब्रुवन्तमश्रृणवम् ।

७२—त्वया वचांसि श्रोतव्यम् — त्वया वचांसि श्रोतव्यानि ।

७३—अहं देवं जिज्ञासितः — मया देवः जिज्ञासितः ।

६०—कर्मवाच्य में कर्म प्रथमा में रहता है। ६१—नी धातु के प्रयोज्यकर्ता में तृतीया होती है। ६२—प्र उपसर्ग लगने से स्था आत्मनेपदी होता है। ६३—भूतकाल की क्रिया के साथ स्म नहीं लगता। ६४—यदि तुम् वाच्य का और क्रिया का एक ही कर्म हो तो कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है। ६५—नञ् समास में ल्यप् नहीं होता। ६६—जुहोत्यादिगणीय धातु के साथ नुम् नहीं होता। ६७—उपसर्ग पूर्व होने से क्त्वा को ल्यप् होता है। ६८—कर्मवाच्य के कर्त्ता में तृतीया और कर्म में प्रथमा होती है। ६९—कर्तृवाच्य के कर्त्ता में प्रथमा और उसी के अनुसार क्रियावाचक के लिङ्ग वचन होते हैं। ७०—क्त्वा शतृ शानच् और तुम् के कर्म में द्वितीया होती है। ७१—एक कर्त्ता में तुमुन् होता है, किन्तु दो क्रियाएँ एक समय होने से शतृ या शानच् होते हैं। ७२—कर्मवाच्य के कृदन्तीय प्रत्ययों में कर्मानुसार लिङ्ग, वचन होते हैं। ७३—कर्मवाच्य के कर्त्ता में तृतीया और कर्म में प्रथमा होती है।

७४—स आगत्य अहं गमिष्यामि	तस्मिन्नागते अहं गमिष्यामि।
७५—देव: गुरुं सेवन् तिष्ठति	देव: गुरुं सेवमान: तिष्ठति।
७६—स पुस्तकं पठनं करोति	स पुस्तकस्य पठनं करोति।
७७—अन्नपाचक: खादति	अन्नस्य पाचक: खादति।

स्त्रीप्रत्ययान्त तथा समासान्त पदों की अशुद्धियाँ

७८—दम्पती पुत्रम् अभाषत्	दम्पती पुत्रमभाषताम्।
७९—छात्रद्वयं पठत:	छात्रद्वयं पठति।
८०—बालक: हंसां पश्यति	बालक: हंसीं पश्यति।
८१—सा अश्वी गच्छति	सा अश्वा गच्छति।
८२—चन्द्रवदनीं बालां पश्य	चन्द्रवदनां बालां पश्य।
८३—नृत्यती बाला आगता	नृत्यन्ती बाला आगता।
८४—मया रुदन्ती स्त्री दृष्टा	मया रुदती स्त्री दृष्टा।
८५—महद्राजा अद्यैव गत:	महाराज: अद्यैव गत:।
८६—अहोरात्र्यौ वर्तेते	अहोरात्र: (त्रं) वर्तते।

अनुवादार्थ गद्य-पद्य संग्रह

१—हा कथं महाराजदशरथस्य धर्मदारा: प्रियसखी मे कौसल्या। क एतत्प्रत्येति संवेद्यमिति। ···धिक् प्रहसनम्। अयमृष्यश्रृंगाश्रमादरुन्धतीपुरस्कृतान् महाराजदशरथस्य

७४—एक कर्त्ता न होने से क्त्वा नहीं होता। ऐसी जगहों पर भाव में सप्तमी होती है। ७५—आत्मनेपदी से शानच् और परस्मैपदी से शतृ प्रत्यय होते हैं। ७६—पठन के योग में षष्ठी होती है। ७७—तृच्, अक् प्रत्ययान्त के साथ षष्ठी तत्पुरुष नहीं होता। ७८—दम्पती, पितरौ, अश्विनौ इनके रूप द्विवचन में ही चलते हैं और इनके साथ क्रिया भी द्विवचन की लगती है। ७९—द्वय, युगल, युग, द्वन्द्व ये चारों दो अर्थ के वाचक हैं और इनके साथ क्रिया एक वचन की लगती है। ८०—८१—हंस का स्त्रीलिङ्ग 'हंसी' और अश्व का 'अश्वा' होता है। ८२—दो से अधिक स्वर वाले शब्दों में 'ई' नहीं होता। ८३—नृत् धातु से नुम् होता है। ८४—रुद् से नुम् नहीं होता। ८५—समास में महत् शब्द का महा हो जाता है। ८६—समाहार द्वन्द्व में अन्त वाले शब्द में 'अ' लगाकर पुंल्लिङ्ग या नपुंसकलिङ्ग का एक वचन होता है।

दारानधिष्ठाय भगवान् वसिष्ठः प्राप्तः। तत्किमेवं प्रलपामि। (उत्तररामच० ४)

२—चन्द्रापीडस्य सहपांसुक्रीडिततया सहसंवृद्धतया च सर्वविश्रम्भस्थानं द्वितीयमिव हृदयं वैशंपायनः परं मित्रमासीत्। (कादम्बर्याम् ७६)।

३—स्वयमेवोत्पद्यन्ते एवंविधाः कुलपांसवो निःस्नेहाः पशवो येषां क्षुद्राणां प्रज्ञा पराभिसन्धानाय न ज्ञानाय, पराक्रमः प्राणिनामुपघाताय नोपकाराय, धनपरित्यागः कामाय न धर्माय, किं बहुना, सर्वमेव येषां दोषाय न गुणाय। (कादम्बर्याम् २८८)

४—राजा विस्फारितेन स्निग्धेन चक्षुषा पिबन्निवालपन्निव मनोरथसहस्रप्राप्तदर्शनं सस्पृहमीक्षमाणस्तनयाननं मुमुदे कृतकृत्यं चात्मानं मेने। (का० ७२)

५—सर्वथा निष्प्रतीकारेयमापदुपस्थिता। किमिदानीं कर्तव्यं कां दिशं गन्तव्यमित्येते चान्ये च विषण्णहृदयस्य मे सङ्कल्पाः प्रादुरासन्। (कादम्बरी १५७)

६—राजवाहनो रसालतरुषु कोकिलादीनां पक्षिणामालापाञ्छ्रावं श्रावं विकसितानि सरांसि दर्शं दर्शममंदलीलया ललनासमीपमवाप। (दश कु० १–५)

७—अतिप्रबलपिपासावसन्नानि गन्तुमल्पमपि मे नालमङ्गकानि। अलमप्रभुरस्यात्मनः। सीदति मे हृदयम्। अन्धकारतामुपयाति चक्षुः। अपि नाम खलो विधिरनिच्छतोऽपि मे मरणमद्यैवोपपादयेत्। (काद० ६)

८—सखे पुण्डरीक सुविदितमेतन्मम। केवलमिदमेव पृच्छामि, "यदेतदारब्धं भवता किमिदं गुरुभिरुपदिष्टमुत धर्मशास्त्रेषु पठितमुत मोक्षप्राप्तियुक्तिरियमाहोस्विदन्यो नियमप्रकारः?" (काद० १५५)

९—एवं कदलीदलेनानवरतं वीजयतः समुदभून्मे मनसि चिन्ता। नास्ति खल्वसाध्यं मनोभुवः। क्वायं हरिण इव वनवासनिरतः स्वभावमुग्धो जनः, क्व च विविधविलासरसराशिर्गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता! (का० १५७)

१०—स मद्वचनानन्तरमेव न वेद्मि किमसह्यवृत्तेर्मदनज्वरस्य वेगादुत, सद्योविपाकस्यात्मनो दुष्कृतस्य गौरवादाहोस्विन्मद्वचस एवं सामर्थ्यादाच्छिन्नमूलस्तरुरिव क्षितावपतत्। (काद०)

१—दार–स्त्री। २—पांशु–धूलि। विश्रम्भस्थान–विश्वासपात्र। ४—अभिसन्धान–छल। ४—विस्फारित–खोला हुआ। ईक्ष्–देखना। ५—निष्प्रतीकार–इलाज के विना। विषण्ण–दुःखित। ६—ललना–स्त्री। ७—अवसन्न–कमजोर। सीद–दुःखितः होना।। विधि–भाग्य। ६–अनुरोध=लिहाज। प्रणय=प्रेम। एनस्=पाप। १०—आहोस्वित्=अथवा।

११—तदेवं प्रायेऽतिकुटिलकष्टचेष्टासहस्रदारुणे राज्यतन्त्रेऽस्मिन् महामोहान्धकारकारिणि च यौवने कुमार! तथा प्रयतेथा यथा नोपहस्यसे जनैर्नोपालभ्यसे सुहृद्भिर्नाक्षिप्यसे विषयैर्न विकृष्यसे रागेण नापह्रियसे सुखेन। (का० १०६)

स किं सखा साधु न शास्ति योऽधिपं
हितान्न यः संशृणुते स किं प्रभुः।
सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिं
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः॥ १२॥ (किराता०)

मदसिक्तमुखैर्मृगाधिपः करिभिर्वर्तयते स्वयं हतैः।
लघयन् खलु तेजसा जगन्न महानिच्छति भूतिमन्यतः॥ १३॥

किमपेक्ष्य फलं पयोधरान्ध्वनतः प्रार्थयते मृगाधिपः।
प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्यसमुन्नतिं यया॥ १४॥

शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः॥ १५॥ (शाकु०)

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रवृत्तिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥ १६॥ (शाकु०)

(कुमारसम्भवे)

विधिप्रयुक्तां परिगृह्य सत्क्रियां परिश्रमं नाम विनीय च क्षणम्।
उमां स पश्यन्नृजुनैव चक्षुषा प्रचक्रमे वक्तुमनुज्झितक्रमः॥ १७॥

११—कदली=केला। अनवरत=निरन्तर। विलास=कौतुक। १२—मदन=काम। विपाक=फल। दुष्कृत=पाप। क्षिति=पृथ्वी। ११—दारुण=दुःखप्रद। उपालभ्=ताना मारना। १२—अमात्य=मन्त्री। १३—मृगाधिपः=सिंह, करिन्=हाथी, वर्तयते=पसन्द करता है। भूति=ऐश्वर्य। १४—पयोधर=मेघ, प्रकृति=स्वभाव, महीयस्=महापुरुष। १५—प्रतीप=विपरीत। अनुत्सेक=निरभिमान। १७—ऋजु=सीधा।

अपि क्रियार्थं सुलभं समित्कुशं जलान्यपि स्नानविधिक्षमाणि ते ।
अपि स्वशक्त्या तपसि प्रवर्तसे शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ॥ १८ ॥
किमित्यपास्याभरणानि यौवने धृतं त्वया वार्धकशोभि वल्कलम् ।
वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका विभावरी यद्यरुणाय कल्पते ॥ १९ ॥
वपुर्विरूपाक्षमलक्ष्यजन्मता दिगम्बरत्वेन निवेदितं वसु ।
वरेषु यद् बालमृगाक्षि मृग्यते तदस्ति किं व्यस्तमपि त्रिलोचने ॥ २० ॥
द्वयं गतं सम्प्रति शोचनीयतां समागमप्रार्थनया कपालिनः ।
कला च सा कान्तिमती कलावतस्त्वमस्य लोकस्य च नेत्रकौमुदी ॥ २१ ॥
उवाच चैनं परमार्थतो हरं न वेत्सि नूनं यत एवमात्थ माम् ।
अलोकसामान्यमचिन्त्यहेतुकं द्विषन्ति मन्दाश्चरितं महात्मनाम् ॥ २२ ॥
निवार्यतामालि किमप्ययं बटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः ।
न केवलं यो महतोऽपभाषते शृणोति तस्मादपि यः स पापभाक् ॥ २३ ॥
इतो गमिष्याम्यथवेति वादिनी चचाल बाला स्तनभिन्नवल्कला ।
स्वरूपमास्थाय च तां कृतस्मितः समाललम्बे वृषराजकेतनः ॥ २४ ॥
तं वीक्ष्य वेपथुमती सरसाङ्गयष्टिर्निक्षेपणाय पदमुद्धृतमुद्वहन्ती ।
मार्गाचलव्यतिकराकुलतेव सिन्धुः शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ ॥ २५ ॥
अद्य प्रभृत्यवनताङ्गि ! तवास्मिदासः क्रीतस्तपोभिरिति वादिनि चन्द्रमौलौ ।
अन्हाय सा नियमजं क्लममुत्ससर्ज क्लेशः फलेन हि पुनर्नवतां विधत्ते ॥ २६ ॥

(रघुवंशे)

अलं महीपाल तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात् ।
न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य ॥ २७ ॥
एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च ।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम् ॥ २८ ॥

१९—आभरण=जेवर, वल्कल=छाल, विभावरी=रात्रि, प्रदोष=निशाका मुख । २०—वसु=धन, व्यस्त=अलग-अलग, त्रिलोचन=शिव । २१—कपालिन्=शिव, कौमुदी=रोशनी । २३—आली=सखी, बटु=ब्रह्मचारी । २४—वृषराजकेतन=शिव । २६—अन्हाय=शीघ्र ही । २७—अंहस्=बेग ।

वपुषा करणोज्झितेन सा निपतन्ती पतिमप्यपातयत् ।
ननु तैलनिषेकबिन्दुना सह दीपार्चिरुपैति मेदिनीम् ॥ २९ ॥
विललाप स बाष्पगद्गदं सहजामप्यपहाय धीरताम् ।
अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते कैव कथा शरीरिषु ॥ ३० ॥
स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम् ।
विषमप्यमृतं क्वचिद्भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया ॥ ३१ ॥
कुसुमान्यपि गात्रसङ्गमात्प्रभवन्त्यायुरपोहितुं यदि ।
न भविष्यति हन्त साधनं किमिवान्यत्प्रहरिष्यतो विधेः ॥ ३२ ॥
अथवा मम भाग्यविप्लवादशनिः कल्पित एष वेधसा ।
यदनेन तरुर्न पातितः क्षपिता तद्विटपाश्रिता लता ॥ ३३ ॥
गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ ।
करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वत किन्न मे हृतम् ॥ ३४ ॥

(नैषधे)

मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो विधे त्वां करुणा रुणद्धि न ॥ ३५ ॥
पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा न तेषु हिंसारस एष पूर्यते ।
धिगीदृशं ते नृपते कुविक्रमं कृपाश्रये यः कृपणे पतत्रिणि ॥ ३६ ॥
इत्थममुं विलपन्तममुञ्चद्दीनदयालुतयावनिपालः ।
रूपमदर्शि धृतोऽसि यदर्थं गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय ॥ ३७ ॥

†अनुवाद के लिए नीतिसम्बन्धी रोचक श्लोक

कनकभूषणसंग्रहणोचितो यदि मणिस्त्रपुणि प्रणिधीयते ।
न स विरौति न चापि स शोभते भवति योजयितु र्वचनीयता ॥ (१९५४)

२९—मेदिनी=पृथिवी । ३०—अयस्=लोहा । ३१—स्रक्=माला । ३३-अशनि=वज्र । ३४—वरटा=हंसी । ३५-पतित्रन्=पक्षी । ३६-अवनिपाल=राजा (नल) ।

† ये श्लोक शिक्षा-प्रद होने से स्मरणीय हैं और ये पिछले वर्षों यू० पी० हाईस्कूल की परीक्षा में प्रायः पूछे गये हैं और प्रष्टव्य भी हैं । अतः इनका विशेष महत्त्व है । कुछ श्लोकों के साथ कोष्ठों में हाई स्कूल परीक्षा के वर्षों का संकेत भी किया गया है ।

लक्ष्मि क्षमस्व वचनीयमिदं यदुक्तमन्धीभवन्ति पुरुषास्त्वदुपासनेन ।
नोच्चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो नारायणः स्वपिति पन्नगभोगतल्पे ॥ (१६५४)
शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं गजभुजंगमयोरपि बन्धनम् ।
मतिमतां च निरीक्ष्य दरिद्रतां विधिरहो बलवानिति मे मतिः ॥ (१६५३)

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम् ।
कीर्तिं च दिक्षु विमलां वितनोति लक्ष्मीम्
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥४॥ (१६४०)

न चौरहार्यं न च राजहार्यं न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि ।
व्यये कृते वर्धत एव नित्यं विद्याधनं सर्वधनप्रधानम् ॥५॥ (१६५४)
तुल्यान्वयेत्यनुगुणेति गुणोन्नतेति दुःखे सुखे च सुचिरं सहवासिनीति ।
जानामि केवलमहं जनवादभीत्या सीते ! त्यजामि भवतीं न तु भावदोषात् ॥६॥

कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजखण्डं
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः ।
उदयतिहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं
हतविधिनिहतानां हा विचित्रो विपाकः ॥७॥ (१६५४)

घृष्टं घृष्टं पुनरपि पुनश्चन्दनं चारुगन्धं,
छिन्नं छिन्नं पुनरपि पुनः स्वादु चैवेक्षुकाण्डम् ।
दग्धं दग्धं पुनरपि पुनः काञ्चनं कान्तवर्णं,
प्राणान्तेऽपि प्रकृतिविकृतिर्जायते नोत्तमानाम् ॥७॥

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरजं यावज्जरा दूरतो,
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्
संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ॥६॥

सारङ्गाः सुहृदो गृहं गिरिगुहा शान्तिः प्रिया गेहिनी,
वृत्तिर्वन्यलताफलैर्निवसनं श्रेष्ठं तरूणां त्वचः ।
तद्ध्यानामृतपूतमग्नमनसां येषामियं निर्वृति-
स्तेषामिन्दुकलाऽवतंसयमिनां मोक्षेऽपि नो न स्पृहा ॥१०॥

मित्रं प्रीतिरसायनं नयनयोरानन्दनं चेतसः
पात्रं यत्सुखदुःखयोःसह भवेन्मित्रं हि तद्दुर्लभम्
ये चान्ये सुहृदः समृद्धिसमये द्रव्याभिलाषाकुला–
स्ते सर्वत्र मिलन्ति तत्त्वनिकषग्रावा तु तेषां विपत् ॥११॥ (१६५२)

महाराज श्रीमन् जगति यशसा ते धवलिते
पयः पारावारं परमपुरुषोऽयं मृगयते
कपर्दी कैलासं करिवर मभौमं कुलिशभृत्
कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥१२॥ (१६५२)

दूरादुच्छ्रितपाणिरार्द्रनयनः प्रोत्सारितार्धासनो
गाढालिंगनतत्परः प्रियकथाप्रश्नेषु दत्तादरः।
अन्तर्भूतविषो वहिर्मधुमयश्चातीव मायापटुः
को नामायमपूर्वनाटकविधिर्यः शिक्षितो दुर्जनैः ॥१३॥ (१६५३)

प्राक् पादयोः पतति खादति पृष्ठमांसं
कर्णे कलं किमपि रौति शनैर्विचित्रम्।
छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशंकं
सर्वं खलस्य चरितं मशकः करोति ॥१४॥ (१६५३)

कस्यादेशात् क्षपयति तमः सप्तसप्तिः प्रजानां
छायाहेतोः पथि विटपिनामञ्जलिः केन बद्धः।
अभ्यर्थ्यन्ते जललवमुचः केन वा वृष्टिहेतोः
जात्यैवैते परहितविधौ साधवो बद्धकक्ष्याः ॥१५॥

वयमिह परितुष्टा वल्कलैस्त्वं च लक्ष्म्या
सम इह परितोषो निर्विशेषावशेषः।
स तु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला
मनसि च परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः ॥१६॥

उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यजातं
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन।
श्रुतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्ते–
र्भवति हृदयदाही शल्यतुलो विपाकः ॥१७॥ (१६५४)

आश्वास्य पर्वतकुलं तपनोष्णतप्त—
मुद्दामदावविधुराणि च काननानि ।
नानानदीनदशतानि च पूरयित्वा
रिक्तोऽसि यज्जलद सैव तवोत्तमश्रीः ॥१८॥ (१६५०)

स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी दशशतकरधारी ज्योतिषां मध्यचारी ।
विधुरपि विधियोगाद्ग्रस्यतेराहुराणासीलिखितमपिललाटेप्रोज्झितुं कःसमर्थः॥१९॥

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति ।
एतत्तु मां दहति नष्टधनाश्रयस्य यत्सौहृदादपि जनाः शिथिलीभवन्ति ॥२०॥

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवेन देयमिति का पुरुषा वदन्ति ।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ॥२१॥

को वीरस्य मनस्विनः स्वविषयः को वा विदेशस्तथा
यं देशं श्रयते तमेव कुरुते बाहुप्रतापार्जितम् ।
यद्दंष्ट्रानखलांगुलप्रहरणैः सिंहो वनं गाहते
तस्मिन्नेव हतद्विपेन्द्ररुधिरैस्तृष्णां छिनत्त्यात्मनः ॥२२॥

कल्याणानां त्वमसि महसां भाजनं विश्वमूर्ते,
धुर्यां लक्ष्मीमथ मयि भृशं धेहि देव प्रसीद ।
यद्यत्पापं प्रतिजहि जगन्नाथ नम्रस्य तन्मे,
भद्रं भद्रं वितर भगवन्भूयसे मङ्गलाय ॥२३॥

तानीन्द्रियाण्यविकलानि तदेव नाम सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव ।
अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव अन्यः क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत् ॥२४॥

गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः ।
आस्वाद्यतोयाः प्रभवन्ति नद्यः समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः ॥२५॥ (१६५२)

चित्रं चित्रं वत वत महच्चित्रमेतद्विचित्रम्
जातो दैवादुचितरचनासंविधाता विधाता ।
यन्निम्बानां परिणतफलप्रीतिरास्वादनीया
यच्चैतस्याः कवलनकलाकोविदः काकलोकः ॥ २६ ॥

घर्मार्तं न तथा सुशीतलजलैः स्नानं न मुक्तावली
न श्रीखण्डविलेपनं सुखयति प्रत्यङ्गमप्यर्पितम् ।

प्रीत्या सज्जनभाषितं प्रभवति प्रायो यथा चेतसः
सद्वृत्त्या च पुरस्कृतं सुकृतिनामाकृष्टिमन्त्रोपमम् ॥ २७ ॥

सरल हिन्दी में व्याख्या कीजिए—

नाद्रव्ये निहिता काचित् क्रिया फलवती भवेत् ।
न व्यापारशतेनापि शुकवत् पाठ्यते वकः ॥ १ ॥ (१९५३)
तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ।
सतामेतानि गेहेषु नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥ २ ॥ (१९५२)
जातमात्रं न यः शत्रुं व्याधिं च प्रशमं नयेत् ।
अतिपुष्टाङ्गयुक्तोऽपि स पश्चात्तेन हन्यते ॥ ३ ॥ (१९५२)
सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ।
एतद् विद्यात् समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः ॥ ४ ॥ (१९५१)
नीतो न केनापि न दृष्टपूर्वो न श्रूयते हेममयः कुरङ्गः ।
तथापि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीतबुद्धिः ॥ ५ ॥
दुष्प्राप्याणि च वस्तूनि लभ्यन्ते वाञ्छितानि च ।
पुरुषैः संशयारूढैरलसैर्न कदाचन ॥ ६ ॥

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात् ।
दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना छायेव मैत्री खल-सज्जनानाम् ॥ ७ ॥
स्त्रीणां हि साहचर्याद् भवन्ति चेतांसि भर्तृसदृशानि ।
मधुरापि हि मूर्च्छयते विषविटप-समाश्रिता वल्ली ॥ ८ ॥

पशवोऽपि हि जीवन्ति केवलं स्वोदरम्भराः ।
तस्यैव जीवितं श्लाघ्यं यः परार्थे हि जीवति ॥ ९ ॥
मृषा वदति लोकोऽयं ताम्बूलं मुखभूषणम् ।
मुखस्य भूषणं पुंसः स्यादेकैव सरस्वती ॥ १० ॥
सहकारे चिरं स्थित्वा सलीलं बालकोकिल ।
तं हित्वाऽद्यान्यवृक्षेषु विचरन्न विलज्जसे ॥ ११ ॥
अनिष्टादिष्टलाभेऽपि न गतिर्जायते शुभा ।
यत्रास्ते विषसंसर्गोऽमृतं तदपि मृत्यवे ॥ १२ ॥

अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य हिमं न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः ॥ १३ ॥
कान्पृच्छामः सुराः स्वर्गे निवसामो वयं भुवि ।
किंवा काव्यरसः स्वादुः किंवा स्वादीयसी सुधा ॥ १४ ॥
विधौ विरुद्धे न पयः पयोनिधौ सुधौघसिन्धौ न सुधा सुधाकरे ।
न वाञ्छितं सिद्ध्यति कल्पपादपे न हेम हेमप्रभवे गिरावपि ॥ १५ ॥
असंभवं हेममृगस्य जन्म तथापि रामो लुलुभे मृगाय ।
प्रायः समापन्नविपत्तिकाले धियोऽपि पुंसां मलिना भवन्ति ॥ १६ ॥ (१६५२)
जनयति हृदि खेदं मङ्गलं न प्रसूते, परिहरति यशांसि ग्लानिमाविष्करोति ।
उपकृतिरहितानां सर्वभोगच्युतानां कृपणकरगतानां संपदां दुर्विपाकः ॥ १७ ॥
पात्रं पवित्रयति नैव गुणान् क्षिणोति, स्नेहं न संहरति नापि मलं प्रसूते ।
दोषावसानरुचिरश्चलतां न धत्ते, सत्सङ्गमः सुकृतसद्मनि कोऽपि दीपः ॥ १८ ॥

पञ्चमोऽध्यायः

संस्कृत अनुवाद के उदाहरण

[१]

१—अपने बड़ों के उपदेश की अवहेलना न करो । २—जल्दी न करो रेलगाड़ी [पर] पहुँचने के लिए काफी समय है । ३—किस के साथ में अपने दुःख को बँटा [स]कता हूँ ? ४—चपलता न करो इससे तुम्हारा स्वभाव बिगड़ जायगा । ५—तुम [इध]र-उधर की क्यों हाँकते हो, प्रस्तुत विषय पर आओ ।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—गुरूणामुपदेशान् माऽवमंस्थाः । २—मा त्वरिष्ठाः कालात् प्रयास्यति [य]यानम् । केन साधारणीकरोमि दुःखम् । ४—मा चापलम्, विकरिष्यते ते शीलम् । [५]—किमित्यप्रस्तुतमालपसि, प्रस्तुतमनुसन्धीयताम् ।

[२]

१—उसने मुझसे एक हजार रुपये ठग लिये, पुलिस उसका पीछा कर रही है । [२]—एक स्त्री जल के घडे को लेकर पानी लाने को जाती है । ३—सूर्य्य की प्रखर

किरणों से वृक्ष लता सब सूख जाते हैं। ४—हम घर जाकर अपने मित्रों से पूछ कर आवेंगे। ५—माता और गुरुजनों का सम्मान करना उचित है। ६—देशाटन करने से शरीर बलवान् हो जाता है। ७—मैं तुम्हारी जरा भी परवाह नहीं करता, तुम यों ही बड़े बनते हो।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—स मां रूप्यकसहस्रादवञ्चयेत, * रक्षिवर्गस्तमनुसरति। २—एका स्त्री जलकुम्भमादाय जलमानेतुं गच्छति। ३—सूर्य्यस्य तीक्ष्णकिरणैः वृक्षलताः शुष्का भवन्ति। ४—अहं गृहं गत्वा मित्राणि पृष्ट्वा आगमिष्यामि। ५—मातापितरौ गुरुजनाश्च सम्माननीयाः। ६—देशपर्य्यटनेन शरीरं बलवद् भवति। ७—अहं त्वां तृणाय † मन्ये अकारणं गुरुतां धत्से।

[३]

१—मेरा भाई और मैं मैच देखने जा रहे हैं पता नहीं कब तक लौटेंगे। २—डूबते को तिनके का सहारा। ३—इस समय मेरी घड़ी में पौने चार बजे हैं। ४—वह सदैव मेरे उन्नति-मार्ग में रोड़े अटकाता रहा है। ५—न्यूयार्क में मनुष्यों की चहल-पहल देखने योग्य है। ६—गोपाल ने इस ज़ोर से गेंद मारी कि शीशा टूट कर चूर चूर होगया। ७—दमयन्ती सुन्दरता में अन्तःपुर की दूसरी स्त्रियों से बाजी ले गयी है।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—मम सोदर्योऽहं च विजिगीषा-खेलां प्रेक्षितुं गच्छावः न विद्मः कदापरापताव। २—मज्जतो हि कुशं वा काशं वाऽवलम्बनम्। ३—अधुनामम कालमापनी (घटिका-यन्त्रम्) पादोनचतुर्थीं होरां दिशति। ४—स मे समुन्नतिपथं नित्यं प्रतिबध्नाति। ५—न्यूयार्कनगरे प्रचुरोजनसञ्चारः दर्शनीयः। ५—गोपालस्तथा देवेन कंदुकं प्राहरत् यथाऽऽदर्शः परिस्फुटय खण्डशोऽभूत्। ७—दमयन्ती लावण्येन सर्वान्तः पुर वनिताः अतिक्रामति (प्रत्यादिशति वा)।

---

* यहाँ ठगे जाने के अर्थ में पञ्चमी हुई और 'अवञ्चयत' यह प्रयोग वञ्चि (चुरादि के) आत्मनेपदी का है।

† 'मन्ये' के साथ चतुर्थी का प्रयोग हुआ है।

[४]

१—जो होना हो होवे, मैं उसके आगे नहीं झुकूंगा। २—राम ने वन में लाखों राक्षसों को मारा। ३—वह बानर वृक्ष से उतर कर नीचे बैठा है। ४—विद्याहीन मनुष्य और पशुओं में कोई भेद नहीं है। ५—एक पागल लड़का इधर दौड़ता हुआ आया। ६—ईश्वर की कृपा से उसका शरीर आरोग्य (युक्त) हो गया। ७—उसने रमेश को खूब उल्लू बनाया।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—यद्भावि तद्भवतु, नाहं तस्य पुरः शिरोऽवनमयिष्यामि। २—रामः वने लक्षशः राक्षसान् जघान। ३—स वानरः वृक्षात् अवतीर्य्य नीचैः उपविशति। ४—विद्याहीनानां नराणां पशूनाञ्च कोऽपि भेदो नास्ति। ५—कश्चित् (एकः) उन्मत्तो बालक इतो धावन्नागतः। ६—ईश्वरस्य कृपया तस्य शरीरं नीरोगमभवत्। ७—स रमेशं मातृमुखमुपदर्श्य व्यडम्बयत्।

[५]

१—उसकी मुट्ठी गरम करो, फिर तुम्हारा काम हो जायगा। २—मैंने आज पढ़ा नहीं, इसलिए मेरे पिता मुझ पर नाराज थे। ३—मैं खेलकर समय नष्ट नहीं करूँगा। ४—तुम घर जाओ, तुम्हारे साथ में नहीं खेलूंगा। ५—देवदत्त आज मेरे घर आवेगा। ६—इस वर्ष परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुआ, इस कारण वह परिश्रम से पढ़ता है। ७—चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—उत्कोचं तस्मै देहि तेन तव कार्यं सेत्स्यति। २—अहमद्य नापठम्, अतः मम पिता मयि अप्रसन्न आसीत्। ३—अहञ्च क्रीडित्वा समयं न नंक्ष्यामि। ४—त्वं गृहं गच्छ। त्वया सह अहं न क्रीडिष्यामि। ५—देवदत्तः अद्य मम गृहमागमिष्यति। ६—अस्मिन्वर्षे स परीक्षायामुत्तीर्णो नाभवत्, अतः परिश्रमेण पठति। ७—अहः कतिपयानि सम्पदस्ततो व्यापदः।

[६]

१—आपको अपने काम से मतलब औरों की बातों में क्यों टाँग अड़ाते हो। २—उसका दाँव नहीं चला, नहीं तो तुम इस समय अपना सिर धुनते होते। ३—चिर प्रवासी तथा रोगी रहने से वह ऐसा बदल गया है कि पहचाना नहीं जाता। ४—उसकी ऐसी दशा देखकर मेरा जी भर आया। ५—मेरी सब आशाओं पर पानी

फिर गया। ६—तुम तो दूसरे के घर में आग लगा कर तमाशा देखना चाहते हो। ७—तुम सदा मन के लड्डू खाते हो।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—भवान् पराधिकारचर्चां किमिति करोति। २—न स प्रभावश्चाठ्यस्य अन्यथा सम्प्रति स्वानि भाग्यानि निन्दयिष्यसि। ३—चिरं विप्रोषितो रुग्णश्चासौ तथा परिवृत्तो यथा परिचेतुं न शक्यः। ४—तस्य तथावस्थामवलोक्य करुणार्द्रचेता अभवम्। ५—सर्वा ममाशा मोघाः सञ्जाताः। ६—त्वं तु परिगृहेषु विसंवादमुद्भाव्य कौतुकं मार्गयसि। ७—मनोरथसतो मोदकप्रायानिष्ठानर्थानित्थं भुङ्क्षे।

[७]

१—दिल के बहलावे को गालिब यह खयाल अच्छा है। २—ईश्वर जब देता है तब छप्पर फाड़कर देता है। ३—मैंने सारी रात आँखों में काटी। ४—आज कल प्रत्येक मनुष्य अपना उल्लू सीधा करना चाहता है, दूसरों के हित की उसे चिन्ता नहीं। ५—आज सबेरे ही सबेरे बीस रुपयों पर पानी फिर गया। ६—मुझे इस बात के सिर पैर का पता नहीं लगता। ७—व्यायाम सौ दवा की एक दवा है, फिर हींग लगे न फिटकिरी।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—आत्मनो विनोदाय कल्पतेऽयं विचारः। २—भाग्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र। ३—पर्यङ्के निषण्णस्य ममाक्ष्णोः प्रभातमासीत्। ४—अद्यत्वे सर्वः स्वार्थमेव समीहते परहितं तु नैव चिन्तयति। ५—अद्य प्रातरेव विंशते रूप्यकाणां हानिर्मे जाता। अस्या वार्ताया अन्तादी (आद्यन्तौ वा) नावगच्छामि। ७—व्यायामो हि भेषजानां भेषजम्, एतदर्थे कश्चित्व्ययोऽपि नानुभवितव्यो भवति।

[८]

पुराणों में कथा है कि एक बार धर्म्म और सत्य में विवाद हुआ। धर्म्म ने कहा "मैं बड़ा" हूँ, सत्य ने कहा "मैं"। अन्त में फैसला करने के लिए वे दोनों शेषजी के पास गये। उन्होंने कहा कि "जो पृथ्वी धारण करे वही बड़ा"। इस प्रतिज्ञा पर धर्म्म को पृथ्वी दी, तो वे व्याकुल हो गये, फिर सत्य को दी, उन्होंने कई युग तक पृथ्वी को उठा रक्खा।

एतस्य प्रघटकस्य संस्कृतानुवादः

पुराणेषु कथास्ति यत् एकदा धर्म्मसत्ययोः परस्परं विवादोऽभवत् । धर्म्मोऽब्रवीत् "अहं बलवान्" "सत्योऽवददहम्" इति । अन्ते निर्णायितुं तौ सर्पराजस्य समीपे गतौ । तेनोक्तं यत् "यः पृथ्वीं धारयेत् स एव बलवान् भवेदिति ।" अस्यां प्रतिज्ञायां धर्म्माय पृथ्वीं ददौ । स कतिपययुगानि यावत् पृथ्वीमुदस्थापयत् ।

[९]

१—उसके मुँह न लगना वह बहुत चलता पुरजा है । २—सवेरे उठकर पढ़ने बैठ जाओ । ३—परीक्षा के बाद छुट्टियों में दूसरी जगह जाना अच्छा है । ४—अच्छी तरह पास करोगे तो एक किताब मिलेगी । ५—हस्तलिपि को साफ शुद्ध बनाओ । ६—पढ़ने के समय दूसरी ओर ध्यान मत दो । ७—मेरे पांव में काँटा चुभ गया है, उसे सूई से निकाल दो ।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—तेन साकं नाति परिचयः कार्यः, कितवोऽसौ । २—प्रातरुत्थाय अध्येतुमुपविश । ३—परीक्षानन्तरम् अवकाशेषु अन्यत्र गमनं वरम् । ४—सम्यगुत्तीर्णो भवेस्तर्हि पुस्तकमेकं लभेथाः । ५—हस्तलिपिं स्पष्टां कुरु । ६—अध्ययनसमये अन्यत्र मा ध्यानं देहि । ७—मम पादे कण्टको लग्नः, तं सूच्या समुद्धर ।

[१०]

१—एक ही बात अलापते जाते हो दूसरे की सुनते ही नहीं । २—पति वियोग से वह सूखकर काँटा हो गई है, उसकी दशा को देखते ही रोना आता है । ३—फोड़े में पीप भर गया है और उसका मुँह भी बन गया है, अब उसे चीर दिया जायगा । ४—जिसका काम उसी को साजे और करे तो ठींगा बाजे । ५—इस दुर्घटना में वह बाल-बाल बच गया । ६—पहले उसने अपनी जायदाद बंधक रखी थी, अब वह दिवाला दे रहा है । ७—विष वृक्ष को भी पाल करके स्वयं काटना ठीक नहीं ।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—एकमेवार्थमनुलपसि, न चान्यं शृणोषि । २—पतिविप्रयोगेण सा तनुतां गता, कङ्कालशेषा समजनि । ३—व्रणः पूयक्लिन्नो बद्धमुखश्च जातः, इदानीमस्य शलाक्यं करिष्यते । ४—यद् यस्योचितं तत् समाचरन् स एव शोभते इतरस्तु प्रवृत्तो

लोकस्य हास्यो भवति । ५—अस्मिन् दुर्योगे दैवात् तस्यासवो रक्षिताः । ६—पूर्वं स स्वां सम्पत्तिबन्धकेऽददात् साम्प्रतम् ऋणशोधनेऽक्षमतामुद्घोषयति । ७—विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं क्षेत्तुमसाम्प्रतम् ।

[११]

रात्रि समाप्त हुई; प्रभात का रमणीक दृश्य दृष्टिगोचर होने लगा। तारागण जो रात के अँधेरे में चमक दमक दिखा रहे थे, अपने प्रकाश को फीका देखकर धीरे-धीरे लोप हो गये। जैसे चोर प्रभात का प्रकाश होते ही अपने अपने ठिकाने को भागते हैं, ऐसे ही रात्रि की स्याही रङ्ग उड़ा। पूर्व दिशा में सफेदी प्रकट हुई मानो प्रेमी सुबह ने प्रेमिका रात्रि के स्याह बिखरे बालों को मुख से समेट लिया और उसका उज्ज्वल मस्तक दीखने लगा। पक्षियों ने चहचहाना आरम्भ किया। उद्यान में कलिकाएँ खिलने लगीं, जैसे नींद से कोई नेत्र खोले।

अस्य संदर्भस्य संस्कृतानुवादः

रात्रि र्गता, प्रातः सुरम्यं दृश्यं दृष्टिपथमवाप। नक्तं तमसि रोचिष्णून्युडूनि सम्प्रति मन्दरुचीनि सन्ति तिरोहितानि। यथा तस्कराः प्रातरालोके स्वावासं प्रति विद्रवन्ति तथैव रात्रिश्यामिकापि। पूर्वस्यां दिशि प्रकाशः प्राकट्यमगात्, मन्ये प्रियं प्रातः प्रियाया निशाया असितान् पर्याकुलान् मूर्धजान् मुखाग्रतिसमहार्षीत् समुज्ज्वलं च तन्मस्तकं दृष्टिपथमवातरत्। वैभातिको वायुर् युवजनवत् सविभ्रममवात्। पक्षिणः कलरवं कर्तुमारभन्त। उद्याने कलिका विकासोन्मुख्यः सञ्जाताः, यथा सुप्तोत्थितः कश्चिन्निमीलिते लोचने समुन्मीलयेत्।

[१२]

(१२, १३ वाक्य खण्डों में सोपसर्गक धातुओं का प्रयोग किया गया है।)

१—हिमालय से गंगा निकलती है। २—चन्द्रमा के निकलने पर अन्धकार दूर हो गया। ३—यह पहलवान दूसरे पहलवान से टक्कर ले सकता है। ४—वह शीघ्र ही वियोग की पीड़ा का अनुभव करेगा।५—तुम ठीक ही कह रहे हो, तुम्हारी दलील में मुझे कोई दोष दिखाई नहीं देता है। ६—जो शारीरिक शत्रुओं को वश में कर लेते हैं वे ही सच्चे विजयी हैं। ७—जो रामायण की कथा करता है वह जनता की बहुत सेवा करता है। ८—गौओं को इकट्ठी करो, आओ घर को चलें। ९—जब मैं

तुम्हारे भाषण पर विचार करता हूँ तब उसमें मुझे अधिक गुण नहीं दिखाई देते। १०—चन्द्रमा चाण्डाल के घर से चाँदनी को नहीं हटाता।

*एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—हिमवतो गङ्गा उद्गच्छति (प्रभवति वा) २—आविर्भूते शशिनि अन्धकारस्तिरोऽभूत्। ३—अयं मल्लः अन्यस्मै मल्लाय प्रभवति। ४—अचिरमेव स वियोगव्यथाम् अनुभविष्यति। ५—युक्तमेव कथयति भवान्, नाहं भवतस्तर्के दोषं विभावयामि। ६—ये शरीरस्थान् रिपूनधिकुर्वते ते नाम जयिनः। ७—यो रामायणं प्रकुरुते स खलु साधिष्ठमुपकरोति लोकस्य। ८—गावः संह्रियन्तां, गृहं प्रति निवर्तावहे। ९—यदाहं तव भाषितं परिभावयामि तदा नात्र बहुगुणं विभावयामि। १०—न हि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनः।

(१३)

१—सूर्य निकल रहा है और अँधेरा दूर हो रहा है। २-लंका से लौटते हुए राम को लाने के लिए भरत आगे बढ़ा। ३—हमारे घर आज एक मेहमान आया है उसका आतिथ्य सत्कार करना है। ४—जो शिष्टाचार की सीमा लांघते हैं वे निन्दित हो जाते हैं। ५—बहुत से लोग इस सड़क से आते जाते हैं। ६—मोटर पास में लाओ जिससे मैं उसमें चढ़ सकूँ। ७—निःसन्देह तुम इस उज्ज्वल चरित्र से अपने वंश को ऊँचा उठा दोगे। ८—इस युक्ति का हम इस प्रकार विरोध करते हैं। ९—प्रत्येक वर्ष इस गाँव से एक सौ रुपये लगान प्राप्त होता है। १०—योगी लोगों को समाधि-विधिका उपदेश करता हुआ पृथ्वी पर खूब घूमा। ११—उस राज्य में पुत्र पिता के विरुद्ध आचरण करते थे और नारियाँ पति के विरुद्ध। १२—जब तक पृथ्वी पर पर्वत स्थिर रहेंगे और नदियाँ बहती रहेंगी तब तक लोगों में रामायण की कथा प्रचलित रहेगी।

एषां वाक्यानां संस्कृतानुवादः

१—भानुरुद्गच्छति तिमिरश्चापगच्छति। २—लङ्कातो निवर्तमानं रामं भरतः प्रत्युज्जगाम। ३—अद्यास्मद् गृहानेकोऽभ्यागतोऽभ्यागमत् स आतिथ्येन सत्करणीयः।

*इस पाठ में तथा आगे के में भिन्न-भिन्न उपसर्गों के साथ क्रियाओं का प्रयोग किया गया है। याद रखो सोपसर्गक धातुओं के प्रयोग से वाक्यों में सौष्ठव तथा एक विशेष चमत्कार आ जाता है।

४—ये समुद्राचारमुच्चरन्ते तेऽवगीयन्ते। ५—भूयांसोजना मार्गेणानेन संचरन्ते। ६—उपनय मोटरयानं यावदारोहयामि। ७—अवदातेनानेन चरितेन कुलमुज्ञेष्यसि नात्रसन्देहः। ८—इत्युक्ते एवं प्रत्यवतिष्ठामहे। ९—प्रत्यब्दं शतं रूप्यका उत्तिष्ठन्त्यस्माद् ग्रामात्। १०—योगी लोकं समाधिविधिमुपदिशन् भुवं विचचार। ११—तस्मिन् राज्ये पुत्राः पितृनत्यचरन् नार्यश्चात्यचरन् पतीन्। १२—

यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यते॥

(१४)

एक समय राजा दिलीप ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिए एक घोड़ा छोड़ा। उसकी रक्षा का भार रघु पर पड़ा। वह घोड़े के पीछे-पीछे चला। इन्द्र ने इस डर से कि 'सौ यज्ञ करके दिलीप मेरा पद लेगा' छिपकर उस घोड़े को चुरा लिया। नन्दिनी की कृपा से रघु को यह बात विदित हुई और पहले उसने सामनीति के अनुसार देवेन्द्र से वह घोड़ा माँगा। घोड़ा न मिलने पर रघु ने देवेन्द्र के साथ युद्ध आरम्भ किया। उनके बीच युद्ध होने पर रघु ने ही पहले देवेन्द्र के हृदय पर बाण मारा। प्रहार से क्रुद्ध होकर उसने भी रघु पर बाण मारा। दानवों के रक्त को निरन्तर पीते रहने के कारण और मनुष्य के खून का स्वाद न जानते हुए मानो वह रघु का खून पीने लगा। इसके बाद सुकुमार रघु ने भी अपने नाम वाले बाण को देवेन्द्र की बाँह पर मारा। बाण फेंक कर उसने देवेन्द्र की ध्वजा काट डाली। इस प्रकार उनका घोर युद्ध हुआ। इन्द्र के पास जो सिद्ध लोग स्थित थे और रघु के पास जो सैनिक थे वे युद्ध को देखते रहे। इन्द्र के आकाश में और रघु के भूमि पर होने के कारण उनके बाणों के मुख भी ऊपर और नीचे थे। समय पाकर रघु ने देवेन्द्र के धनुष की डोर काट डाली। इससे अति क्रुद्ध होकर देवेन्द्र ने पहाड़ों के पंखों को काटनेवाले वज्र से सुकुमार रघु के ऊपर प्रहार किया। उससे चोट खाकर रघु पृथ्वी पर गिर पड़ा। किन्तु क्षण भर में पीड़ा को भुला कर फिर युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। इस प्रकार रघु की अलौकिक वीरता को देखकर देवेन्द्र बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने युद्ध बन्द कर दिया।

उपरि लिखितस्य सन्दर्भस्य संस्कृतानुवादः

एकदा राजा दिलीपोऽश्वमेधयज्ञं कर्तुमश्वमेकं मुमोच। तस्य रक्षितृत्वेन नियुक्तो रघुस्तमनुययौ। "दिलीपः शतं यज्ञान् विधाय पदवीं मे ग्रहीष्यति" इति भयेन

प्रच्छन्नरूपो देवेन्द्रस्तं वाजिनमपजहार। नन्दिनीप्रसादाद् विदितवृत्तो रघुः प्रथमं साम्ना देवेन्द्रमश्वं ययाचे। अनुपलब्धेऽश्वे तेन सह योद्धुं प्रववृते। तयोर्मिथः युद्धे संप्रवृत्ते रघुरेव पूर्वं देवेन्द्रं बाणेन हृदि बिभेद। तत्प्रहारेण संक्रुद्धो देवेन्द्रोऽपि रघुं बाणेन प्रत्यविध्यत्। सायकः खलु यः सततमसुराणां रक्तपानेनाज्ञात-नररुधिरास्वादः कुतूहलेनेव तच्छोणितं पपौ। कुमारो रघुरपि स्वनामाङ्कितं सायकं देवेन्द्रस्य भुजे निचखान। इषुणा च तस्य पताकां चिच्छेद। तयोरेवं तुमुलं युद्धमजनि। इन्द्रपार्श्वे सिद्धाद्याः, रघोः समीपे च तस्य सैनिका युद्धप्रेक्षका बभूवुः। इन्द्ररघ्वोराकाशभूमिस्थायित्वेन तयोः सायका अप्यधोमुखा ऊर्ध्वमुखाश्च प्रासरन्। अवसरमुपलभ्य रघुर्देवेन्द्रस्य धनुर्ज्यामच्छिनत्। तेनातिक्रुद्धो मघवा पर्वतपक्षच्छेदनोचितं वज्रं सुकुमारे रघौ प्राहिणोत्। तेन ताडितो रघुर्भूम्यां पपात। तद्व्यथां च क्षणेनैवावधूय स पुनर्योद्धुं सज्जोऽभवत्। रघोस्तादृशमलौकिकं वीर्यं निरीक्ष्य भृशं तुतोष देवेन्द्रो युद्धाद् व्यरसच्च।

(१५)

राजा रघु ने विश्वजित् नामक यज्ञ में अपना समस्त खजाना यज्ञ करनेवालों और भिखमंगों को दान किया और अपना समस्त स्नानादि कार्य मिट्टी के बर्तन से करने लगा। कुछ ही समय के बाद महर्षि वरतन्तु का शिष्य कौत्सऋषि गुरुदक्षिणा प्राप्त करने के उद्देश्य से रघु के पास आया, क्योंकि चौदह विद्याएँ सीखकर वह गुरु को दक्षिणा देना चाहता था। रघु ने अपने घर पर आये हुए अतिथि कौत्स की अर्घ्यादि से यथाविधि पूजा की। रघु ने कुशल पूछी तो कौत्स ने कहा—"राजन् आपके समान धर्मात्मा प्रजापालक राजा के होते हुए प्रजा क्यों सुखी न हो? इस समय में आपके पास स्वार्थवश आया हूँ। किन्तु आपकी वर्तमान स्थिति को देखकर यही कल्पना करता हूँ कि अच्छा होता यदि मैं आपके पास पहले ही आ गया होता। इसलिए अब में गुरुदक्षिणा को प्राप्त करने के लिए किसी और राजा के पास जाऊँगा।" यह कहकर कौत्स जाना ही चाहता था कि रघु ने उसे रोक कर कहा—"विद्वन्. आपको कितने धन की आवश्यकता है?" तब कौत्स ने अपने गुरु महर्षि वरतन्तु के साथ हुई पहले की अपनी बातचीत सुनाई कि उन्हें देने के लिए चौदह करोड़ गुरु-दक्षिणा की आवश्यकता है। यह सुनकर रघु ने कहा—"आज तक कभी भी कोई अतिथि रघु के पास से बिफल मनोरथ नहीं गया। अतः आप दो तीन दिन मेरे अग्निगृह में निवास करके प्रतीक्षा करें, मैं प्रयत्न करता हूँ।" कौत्स ने रघु की बात मान ली।

तब रघु ने कुबेर पर चढ़ाई करने का निश्चय किया। सुबह वह रथ पर चढ़ कर जाना ही चाहता था कि भण्डारियों ने आकर निवेदन किया—'राजन्, रातको खजाने में सोने की वर्षा हुई।" रघु ने जाकर उसे देखा। उसने उस सुमेरु पहाड़ के समान सुवर्ण के ढेर को विद्वान् कौत्स को दान दे दिया। कौत्स भी उसे पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद देकर गुरु के आश्रम की ओर चल दिया। कुछ समय के बाद रघु की रानी के एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ, जिसका नाम "अज" पड़ा।

इस प्रकार शनैः शनैः उचित समय पर शिक्षा आदि प्राप्त करके अज जवान हुआ। पिता की आज्ञा से उसने इन्दुमती के स्वयंवर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में उसने हाथी के रूप धारण किये हुए उस प्रियंवद नामक गंधर्व को मारकर योनि-मुक्त किया, जिसको मातङ्ग महर्षि का शाप था। उसने प्रसन्न होकर अज को सम्मोहन नामक अस्त्र दिया। इस प्रकार अज विदर्भ के राजा भोज की नगरी में पहुँचा। भोज ने उसका स्वागत किया और खूब सजाये हुए अपने महल में उसे ठहराया। अज ने समस्त स्नानादि क्रियायें समाप्त की और विश्राम किया। दूसरे दिन प्रातःकाल वह वर के योग्य वेशभूषा बनाकर स्वयंवर की ओर चला जहां राजा लोग एकत्र थे।

उपरि लिखितस्य संदर्भस्य संस्कृतभाषयानुवादः

दिश्वजिन्नाम्नि यज्ञे सर्वमात्मीयं कोषजातमृत्विग्भ्यो याचकेभ्यश्च दत्त्वा मृण्मयपात्रेणैव रघुः सर्वमात्मीयं स्नानादिकं देहकृत्यं चकार।

ततः कियत्समयानन्तरं महर्षेर्वरतन्तोः शिष्यः कौत्सनामा ऋषिश्चतुर्दश विद्या अधिगत्य स्वगुरवे दक्षिणां दातुकामः रघोः समीपमाययौ। रघुः स्वगृहमागतमतिथि कौत्सं विलोक्य यथाविध्यर्घ्यादिभिस्तमपूजयत्। कुशलप्रश्नानन्तरं कौत्सस्तमभाषत "राजन्; भवादृशे धर्मात्मनि प्रजापालके भूपतौ सति कथं न प्रजाः सुखिताः स्युः? साम्प्रतमहं तु भवत्सन्निधौ स्वार्थं साधयितुमेवागतोऽस्मि, परं भावत्कीं वर्तमानस्थिति-मवलोक्य मया कल्प्यते यद्भवत्सन्निधौ ममागमनमतः प्रागेव समुचितमभवदिति। अतः सम्प्रत्यहं गुरुदक्षिणार्थमन्यस्यैव कस्यचिन्नरपतेः सविधे यामि"। इत्युक्त्वा यावत्कौत्सोऽन्यत्र गन्तुमैच्छत् तावद्रघुस्तं प्रत्यावर्त्यापृच्छत्—"विद्वन्! कियद्धनम-पेक्ष्यते भवता?" ततः कौत्सो गुरुणा सह कृतां सर्वां स्वां वार्तामुक्त्वा रघुं विज्ञा-पितवान्—"यदहं चतुर्दशकोटिपरिमितं द्रव्यं वाञ्छामीति।" तदाकर्ण्य रघुरपि

"मत्सकाशान्नाद्यावधि कश्चिदतिथिर्विफलीभूतमनोरथोऽन्यत्र गतः, इत्यतो भवान् मदीय आवासे द्वित्राणि दिनान्यतिवाहयन् प्रतीक्षतामहं तावद्भवदर्थं साधनाय प्रयते" इत्यवदत् । कौत्सोऽपि तदङ्गीचकार ।

रघुरपि प्रातः कुबेरं प्रत्यभियातुं निश्चकाय । ततो यावत् प्रातरेव रथमारुरुक्षुः स उदतिष्ठत् तावदेव भाण्डागारिकैरागत्य विनयावनतैः निवेदितम्—यन्महाराज ! रात्रौ कोषागारे हेमवृष्टिरभवदिति । ततो रघुरपि तामद्राक्षीत् । ततश्च सुमेरुपर्वतमिव स्थितं समस्तं सुवर्णराशिं कौत्साय अददात् । कौत्सोऽपि सुतप्राप्त्याशिषस्तस्मै दत्वा गुरोराश्रममाजगाम । ततोचिरादेव रघोर्महिष्याः सुतरत्नमेकमजायत यः खलु "अज" इति नाम्ना प्रसिद्धिमगात् ।

एवं क्रमेण यथाकालं शिक्षादिकं प्राप्य किशोरावस्थामत्यवाहयत् । ततः स पितुराज्ञयेन्दुमत्याः स्वयंवरे प्रातिष्ठत । मार्गे च मातङ्गमहर्षिशापवशाद् गजत्वं प्राप्तं प्रियंवदं वाणेनाहत्य गजयोनितस्तं मोचयामास । प्रसन्नो भूत्वा स च तस्मै सम्मोहननामकास्त्रं समर्पयत् । स चेत्थं विदर्भराजभोजस्य नगरीं प्रापत् । भोजोऽपि तस्य स्वागतं विधायैकस्मिन् सर्वालङ्कारभूषिते शोभने राजप्रासादे तं न्यवासयत् । ततोऽजः सकलाः स्नानादिकाः क्रियाः समाप्य विश्राममलभत । अन्येद्युः प्रातरेव वरोचितवेशभूषां विधाय राजाधिष्ठितं स्वयंवरं प्रति जगाम ।

U.P. HIGH SCHOOL BOARD EXAMINATION
SAMSKRIT SECOND PAPER

1940

2. Translate into Samskrit either Group A or B:—

A (i) King Dasharatha said to Kaikayi, 'I can give you anything that can be found in this world and can do anything else, you may wish but I cannot banish Rama.'

(ii) There was in ancient times a very powerful and famous king Dushyanta by name. His empire extended

---

(1940) A (i) you may wish—वाञ्छसि, I can not vanish प्रवासयितुं न प्रभवामि (ii) in ancient times—पुरा, very powerful ad famous प्रबलः, प्रख्यातश्च ।extended to ocean—आसमुद्रं विस्तीर्णम्,

to the ocean. There was no ruler at that time who could equal him in power or love towards his subjects.

(iii) Satyavrata had a son by name Trishanku. He was changed into a Chandala through the curse of Vashishtha. He, however, went to Heaven, alive, through the help of Vishwamitra.

(iv) Devadatta has recently performed his son's Upanayana ceremony. He distributed much wealth among Brahmanas on that occasion.

B (i) सूर्यवंशी राजा भगीरथ के पूर्वज कपिल मुनि के शाप से भस्म हो गये थे। उनको तारने के लिये उन्होंने घोर तप किया और तब स्वर्ग से उतरकर गंगा जी पृथ्वी पर आयीं।

(ii) पहले-पहल स्वर्ग से गंगा जी महादेव जी की जटाओं पर गिरी थीं, इसलिए यह कहा जाता है कि गंगा जी शिवजी की जटाओं से निकली हैं।

(iii) गंगाजी के विषय में हिन्दू धर्म-ग्रंथों में अनेक कथायें प्रचलित हैं। गंगाजी की उत्पत्ति की भी बड़ी मनोहर और विचित्र कथा है।

(vi) यह बात निर्विवाद है कि गंगाजी का जल अन्य नदियों के जल की अपेक्षा अधिक निर्मल, एवं पवित्र है। लोगों का यह भी अनुभव है कि गंगाजी का जल बहुत ही आरोग्य-बर्धक है।

1941

1. Translate into Samskrit either Group A or group B:—

---

who could equal him—यस्तमत्यक्रामत्। (iii) by name Trishanku—त्रिशङ्कुनामा, through the curse of Vasishtha—वसिष्ठशापेन। (iv) Ceremony— संस्कारः, on the occasion—अवसरे। (i) भस्म हो गये थे—भस्मीभूता आसन्, उनको तारने के लिए-उद्धरणाय, स्वर्ग से उतर कर—स्वर्गादवतीर्य।

A (i) Damayanti gave much wealth to Purnada, and said: 'I will give you more when Nala comes. Thou hast done much for me, none else will do so much; for now, as a consequence of your efforts, I shall soonb eunited to my husband.'

(ii) On a dark night the king heard a pitiful wail. He called his servants and ordered them to ascertain the cause of the cry. One of the servants made his way to the spot, being led by the sound, and found a young and beautiful woman.

(iii) There was at Hemakhta a king named Jimutavahana and his wife retired to a forest in the neighbourhood of Malaya with the intention of passing the remainder of their lives in the contemplation of God. The people were sorry at first, but they were soon glad to find that the young king was a worthy son of his father.

(iv) The young prince led Durga up into the palace. Sita was very happy to have found her little sister again. She was still more happy a few weeks later, for Durga became the wife of the young prince who had found her at the tank.

(1941) (i) as a consequence—परिणामस्वरूपम्, shall be united=संगमिष्ये। (ii) wail=क्रन्दनम्, to ascertain=विनिश्चेतुम्। (iii) in the contemplation=ध्याने (iv) of the young king युवराजस्य। (B) (i) ग्लानि हुई—क्लैव्यमगमत्।

B. (i) युद्ध के प्रारम्भ में जब अर्जुन ने देखा कि राज्य के लिए मुझे अपने सम्बन्धियों को मारना पड़ेगा तब उनको बड़ी ग्लानि हुई। उस समय श्री कृष्ण ने उन्हें उपदेश देकर शत्रुओं को मारने और अपने क्षत्रिय-धर्म का प्रतिपालन करने पर प्रस्तुत किया।

(ii) लोग कहते हैं—"आज कल संस्कृत कहीं नहीं बोली जाती।" काशी क्षेत्र में आपको प्रतिदिन संस्कृत संभाषण की ध्वनि सुनाई देगी। समस्त भारतवर्ष में हिन्दुओं के तीर्थस्थानों में प्रथम गणना काशीधाम की है। इसी कारण भिन्न-भिन्न प्रान्तों में असंख्य नरनारी काशी आकर अपने जन्म को सफल करते हैं।

(iii) भीष्म ने कहा—"राजा की सेवा को तो सब लोग करते ही हैं पर तुमने मेरी जब सेवा की तब तुम जानती न थी कि मैं राजा हूँ। परमात्मा की कृपा से मेरा राज्य मुझे फिर मिल गया है। मेरा पहला काम यह था कि मैं तुम्हें धन्य-वाद देता। अब तुम्हरा जो जी चाहे मुझसे मांग लो।"

(iv) भाद्रपद महीने के कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि को भगवान् कृष्णचन्द्र का जन्म हुआ था। इसी कारण हिन्दू लोग इस तिथि को अत्यन्त पवित्र दिन मानते हैं। आज के दिन लोग व्रत करते हैं और कृष्ण-जन्म की कथा बांचते हैं। आज के दिन स्थान-स्थान पर उत्सव मनाया जाता है। कृष्णमन्दिरों की शोभा देखने योग्य होती है।

1942

2. Translate into Samskrit either Group A or Group B—

A. (i) Formerly, in the Treta age, there reigned a King named Babhruvahana. He was very powerful, religious, and compassionate. He was a lover of Brahamanas.

(ii) Once that King, with his army, went for hunting.

(ii) सुनाई देगी श्रवणपथमवतरिष्यति। सफल करते हैं—सफलीकुर्बन्ति। (iii) जो जी चाहे—यदिच्छसि। (iv) देखने योग्य होती है—दर्शनीया भवति।

(1942) A. (i) formerly=पुरा, compassisonate=कृपालुः (ii) for hunting=मृगयार्थम्।

He entered a thick forest which was full of various kinds of trees. It was full of numerous birds and animals.

(iii) In the midst of the forest, the King saw a deer. The King wounded the deer with a sharp arrow. Then the deer ran into the interior of the forest.

(iv) The King pursued the deer, and came into another forest. He became hungry and tired and went to a lake where he drank water.

B. (i) एक दिन जीमूतवाहन समुद्र के किनारे के बनों को देखने गया। वहां उसे शङ्खचूड़ नामक नाग मिला, जिसकी माता 'हा पुत्र' 'हा पुत्र' इस प्रकार क्रन्दन कर रही थी।

(ii) कारण यह था कि सर्पों के राजा ने गरुड़ से यह निश्चय किया था कि वह प्रत्येक सर्प को न मारे। उसके भोजन के लिये प्रत्येक दिन एक सांप गरुड़ के पास जाया करेगा।

(iii) उस दिन गरुड़ के पास जाने का वार शङ्खचूड़ ही का था। इसीलिये उसकी माता पुत्र का अन्त निकट जानकर पुत्रशोक से व्याकुल होकर आर्त्तस्वर से विलाप कर रही थी।

(iv) जीवमूतवाहन ने शङ्ख से कहा कि यदि 'ऐसा है तो दुःख मत करो क्योंकि आज मैं तुम्हारी जगह गरुड़ के पास जाऊंगा और अपने जीवन को अर्पण करके तुम्हारी रक्षा करूंगा।

1943

2. Translate into Samskrit either Group A or B:—

A (a) One day a King went for hunting on horse-back. He saw a deer and followed it. After a short chase he struck the deer by an arrow.

(iii) the King wounded the deer with a sharp arrow राज्ञा तीक्ष्णबाणेनाहतोमृगः। B (iii) विलाप कर रही थी=विललाप। B (IV) अपने जीवन को अर्पण करके—स्वजीवनं समर्प्य। (१९४३) (a) on horse back—अश्वमारुह्य, Struck the deer मृगमाजघान।

(b) The deer fell down and spoke to the King: O King! you have wounded me badly for nothing. My young ones will curse you.

(c) In ancient days the students were very obedient to their teachers. They always tried to please their gurus by good conbuct and studies.

(d) At present the case is otherwise. The relation between the students and the teachers is quite artificial. The students do not respect their teachers properly and the teachers do not love the students much.

B. (a) लड़कों को चाहिये कि वे अपने बड़ों का सदा आदर करें। माता पिता को साक्षात् देवता समझें। उनकी आज्ञाओं का सदा पालन करें।

(b) लड़कों को अच्छी संगति करनी चाहिए। जीवन पर संगत का बड़ा प्रभाव पड़ता है। जैसे भले मनुष्य के साथ का अच्छा प्रभाव पड़ता है। अच्छी पुस्तकों के पढ़ने से चरित्र सुधरता है।

(c) व्यायाम से मनुष्य स्वस्थ रहता है। प्रत्येक मनुष्य को अपनी शक्ति के अनुसार व्यायाम करना चाहिये। प्रातः और संध्या व्यायाम के लिये उपयुक्त समय हैं।

(d) व्यायाम से शरीर में लाघव होता है और काम करने की शक्ति बढ़ती है। जो लड़के व्यायाम नहीं करते और सदा पढ़ते ही रहते हैं उनमें कार्य करने की कम शक्ति होती है।

(b) wrll curse you–त्वां शप्स्यन्ति, (c) Very obedient अतीवाज्ञाकारिणः, by good conduct and Studies—सदाचारेणाध्ययनेन च।
(1243) (d) otherwise अन्यथा, वीपरीतम्, artificial relation कृत्रिमः सम्बन्धः, do not respect नाद्रियन्ते। B. (a) सदा पालन करें—सदा पालयन्तु, अच्छी संगति करनी चाहिए–सत्संगतिः कर्तव्या।

1944

2. Translate into Samskrit *either* Group A *or* Group B—

A. (*a*) One day some children were playing near a tank. This tank was the home of some frogs. Some of the children began to throw stones into the tank. They did not know that they were hurting the frogs.

(*b*) The messenger went to the King, and said, 'O great King, the Sultan praises your bravery. He also praises the bravery of your Rajput soldiers. He desires peace.'

(*c*) Rats do a great deal of damage. They destroy everything they come across. They bite holes in boxes in which they smell food and they even bite through doors, when they cannot get in any other way.

(*d*) In Kashi there lived a Brahmana named Bhargava. Through pressed by his father, he did not acquire knowledge in his youth. Afterwards he felt sorry and went to the bank of the Ganges to perform penance in order to acquire knowledge,

B. (*a*) वङ्गदेश में एक विख्यात राजा था जो अपनी प्रजा को पुत्रवत् पालता था। एक समय उसके राज्य में अत्यन्त दुर्भिक्ष हुआ जिससे सारी प्रजा अत्यन्त पीड़ित हुई।

(*b*) जो धर्मात्मा हैं वे शरणागत का त्याग नहीं करते। विपति में भी धर्म में दृढ़ रहते हैं। इसी कारण उनका यश बढ़ता है। बड़ों का निरादर करने से मनुष्य नीच दशा को प्राप्त होता है।

(1944) (b) near a tank—उपसरः, Messenger—दूतः। damage—क्षतिः। bite holes—छिद्राणि कुर्वन्ति। did not acquire knowledge—ज्ञानं नालभत। to perform penance—तपः कर्तुम्। अत्यन्त पीड़ित हुई—अतीव व्यथामाप्नोत्।

(c) सूर्य्य की किरणों से व्याकुल होकर दो कुत्ते एक वृक्ष की छाया में बैठ गये और वार्तालाप करने लगे। एक ने कहा, 'भाई! संसार में मूर्ख लोग व्यर्थ ही लड़ते हैं और दुःखित होते हैं।' दूसरे ने उत्तर दिया, 'मित्र! तुम सत्य कहते हो। कलह करना अनुचित है।'

(d) अपने कर्तव्य को प्रसन्नता से करो। उसके करने में उदास वा निराश मत होओ। अपने कर्तव्य को मनोरञ्जक बनाओ। इस तरह वह कार्य सुख से सिद्ध होगा।

1945

2. Translate into Samskrit *either* Group A *or* B—

A. (i) Damayanti gave much wealth to the Brahamana and said, I will give you more when Nala comes.

(ii) Desiring to bathe in the holy water of the Ganges I went to Kashi and lived there for four years.

(iii) While going to his school the boy saw a fruit on the ground. He took it up and gave it to his teacher.

(iv) Prayaga is a beautiful place where blue water of the Yamuna meets with the white water of the Ganges.

B. (i) यह योग्य बालक है जो सदा स्कूल में उपस्थित रहता है।

(ii) महाराजा दशरथ ने विवश होकर राम को बन में भेजा।

(iii) ठीक है, बलवान् और निर्बल की लड़ाई में निर्बल की ही हानि होती है।

(iv) एक समय दो मित्रों ने साथ साथ यात्रा की और प्रतिज्ञा की कि विपत्ति में एक दूसरे की सहायता करेंगे।

(1945) four years—चत्वारि वर्षाणि। on the ground—भूमौ। blue water—नीलं जलम्। meets— संगच्छतु। एक दूसरे की सहायता करेंगे—मिथः साहाय्यं करिष्यावः।

1946

2. Translate into Samskrit *either* Group A *or* B-.

A. (*a*) You have done well in sending your younger brother to Banaras to learn Grammar.

(*b*) The gods went to the sage, bowed to him and praised his might.

(*c*) Rama and Lakshmana lived in the Dandaka forest with Sita and ate roots and fruits.

(*d*) In Varanasi (Banaras) there lived a Brahamana named Bhargava.

B. (*a*) नारद ने युधिष्ठिर से कहा कि सत्य श्रेष्ठ धर्म है।

(*b*) लड़का सो गया है, उसको जगाना उचित नहीं।

1947

2. Translate into Samskrit *either* Group A *or* B—

A. (*a*) All those who visit Banaras see the temple of Shiva. It is not far from the Ganges.

(*b*) Industrious persons obtain in this world whatever they desire.

(*c*) Some rich persons give money to the poor boys and encourage them to study.

(*d*) I always get up very early in the morning and then go out for a walk.

(1946) younger brother—लघुभ्राता। ate roots and fruit—मूलानि फलानि चाभक्षन्त। निवास करते थे—न्यवसन्। industrious persons—परिश्रमिणो जनाः।

B. (*a*) सच्चा मित्र वही है जो अपने मित्र के दुःख से दुखी होता है।
(*b*) जो संयमी होते हैं वही संसार में उन्नति कर सकते हैं।
(*c*) अनाथों के रक्षक दीनानाथ के सिवाय और कौन है।
(*d*) महाराज चन्द्रगुप्त राटलिपुत्र में निवास करते थे।
(*e*) राम ने पिता की आज्ञा से जङ्गल में जाना अपना कर्तव्य समझा।
(*f*) भारतवर्ष एक बार फिर संसार को शान्ति का मार्ग बतलावेगा।

1948

4. Translate into Samskrit *either* Group A *or* Group B:—

A. (a) These men rejoice at their king's victory. (b) There are many learned men in these villages. (c) I saw those women in the temple of Siva. (d) The sources of these rivers are in the Himalaya.

B. (a) मैं चाहता हूं कि सभी लोग सुखी रहें। (b) बालकों को अपना काम ध्यान से करना चाहिये। (c) गंगा स्नान करने से सभी प्रसन्न रहते हैं। (d) गंगा हिमालय से निकल कर समुद्र को जाती है।

1949

4. Translate into Samskrit *either* Group A *or* Group B:—

A. (a) India has got her independence after a long time. (b) She is surrounded by many enemies at present. (c) It is our duty to make her strong and prosperous. (d) One day we shall be a leading nation in the world.

B. (a) प्रत्येक मनुष्य को अपना काम ठीक समय पर करना चाहिये। (b) प्रातःकाल उठने से स्वास्थ्य को लाभ होता है। (c) मैंने ज्वर के कारण कल भोजन नहीं किया था। (d) हम आज तीसरे पहर वैद्यके पास जावेंगे।

(1948) (A) rejoice—अभ्यनन्दन्, (b) learned men—विद्वांसः, sources—प्रभवाः, (B) सुखी रहें—सुखिनःस्युः। निकल कर—उद्गम्य।

(1949) (A) independence—स्वातन्त्र्यम्, (b) is surrounded—परिवृतास्ति, (c) prosperous—समृद्धा, (d) leading nation—प्रमुखराष्ट्रम्। B. (d) तीसरे पहर—अपराह्णे।

1950

3. Translate into Samskrit either Group A or Group B :—

A. (a) Do'st thou hear what I say? (b) The cowherd milks the cows early in the morning before sun-rise. (c) May we live for hundred years and enjoy good health. (d) The king protects his subjects when the enemy attacks him.

B. (a) अध्यापक ने लड़कों से कई सवाल पूछ वे उत्तर न दे सके। (b) देखो देखो बच्चा रो रहा है। (c) गाय तिनके खाती हैं और हमको ताकत देनेवाला दूध देती है (d) जब हाथी तालाब में घुसा नाके ने उसकी टांग पकड़ ली।

1951

3. Translate into English either Group A or Group B :—

A. (i) I do not know what will happen after my death. (ii) Soldiers who will fight bravely will conquer their enemies. (iii) The pupils went to the school and saluted the teacher. (iv) The parents wish that theri children may livel ong.

B. (i) मैं नहीं जानता कि मेरे मरने के बाद क्या होगा। (ii) सिपाही जो बहादुरी के साथ लड़ेंगे अपने दुश्मनों को जीत लेंगे। (iii) विद्यार्थी पाठशाला गये और लध्यापक को नमस्कार किया। (iv) मां बाप यह चाहते हैं कि उनके बच्चे बहुत दिनों तक जीवें।

1952

(३) नीचे लिखे वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए—

(क) लड़कों को चाहिये कि वे अपमे माता-पिता तथा बड़ों को रोज सवरे

(ङ) व्यायाम से शरीर के अंग प्रत्यंग मजबूत होते हैं।

(1950) (A) Cowherd—गोपः, may we live—जीवेम। (B) तिनके खाती हैं तृणानि खादति, नाका—नक्रः। (1951) saluted—प्राणमन्।

प्रणाम करें। (ख) पिता को आज्ञा से सीता सहित राम वन को चले गये। (ग) वर्षा के मौसम में बादलों की आवाज सुनकर मोर नाचते हैं (घ) राजा दशरथ ने अपने प्यारे पुत्र राम और लक्ष्मण को ऋषि विश्वामित्र को यज्ञ की रचना करने के लिये दिया। (ङ) लगातार परिश्रम द्वारा ही विद्यार्थी परीक्षा में सफल हो सकेंगे।

अथवा

(a) It is the duty of boys that they should every morning pay their respects to their father, mother and elders. (b) Rama went to the forests with Sita and Lakṣmana at the bidding of his father. (c) Peacocks dance in the rainy season on hearing the rumblings of the clouds. (d) King Dasharatha gave his dear sons Rama and Lakshmana to the sage Vishvamitra for the protection of his sacrifice, (e) Students will succeed in examinations only through constant labour.

१९५३

३. नीचे लिखे वाक्यों का अपनी संस्कृत में अनुवाद कीजिए—

(क) कल मैंने एक मोर को जंगल में नाचते देखा। (ख) अन्धेरे में अकेला बच्चा भय मानता है। (ग) परमात्मा अन्यायियों को उचित सजा दे। (घ) जब तक जियो सत्य के रास्ते को मत छोड़ो। (ङ) स्वतंत्र देश के रहनेवालों को न्याय करना चाहिए।

१९५४

३. नीचे लिखे वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए :—

(क) सच बोलने वालों की सदा जीत होती है और झूठ बोलने वालों की हार। (ख) विजय के बड़े भाई का नाम प्रकाश है। (ग) रामचन्द्र लक्ष्मण और सीता के साथ जंगल गये थे। (घ) कालिदास संस्कृत के सब कवियों में श्रेष्ठ हैं।

(1952) प्रणाम करें–प्रणमेयुः, मोर नाचते हैं—मयूरा नृत्यन्ति, सफल हो सकेंगे—सफला भविष्यन्ति at the bidding of is father–स्वपितुराज्ञया, on hearing the rumblings of the clouds–मेघगर्जनम् श्रुत्वा, Sacrifice, यज्ञः। (१९५३) भय मानता है—बिभेति, सज़ा दे—दण्डयतु। (१९५४) कालिदास संस्कृत········श्रेष्ठ हैं—कालिदासः सर्वेषु संस्कृतकविषु श्रेष्ठः, अंग प्रत्यंग मजबूत–अंगानि प्रत्यंगानिच बलवन्ति भवन्ति।

ADMISSION EXAMINATION
(Banaras Hindu University)
(1926)

Translate the following sentences into Samskrit—

(a) In the fight with Rakshasas, Rama killed many hundreds of his enemies with his sharp weapons. (b) Raghu who took with him his great army going towards the eastern sea appeared like Bhagiratha who led the Ganges fallen from the matted hair of Shiva. (c) He has abandoned all worldly affairs and has now become a recluse. (d) We have drunk Soma and have become immortal. (e) He who walks by the path of truth attains prosperity. (f) The virtuous are always happy and deserve our respect.

(1927)

1. Translate into idiomatic Samskrit—

(a) On the bank of the Sarayu river stood the city of Ayodhya, famous in all three worlds, twelve yojanas long and three yojanas broad. (b) What is the use of pouring oil when the lamp has gone out? What is the use of carefulness when the thief has fled. (c) The night will pass, the sun will rise, the lotus will bloom—thus dreamed the bee at night. (d) May your path be pleasant and auspicious. (h) Let all men be happy and free from diseases.

(1926) (a) with his sharp weapons=तीक्ष्ण शस्त्रैः, matted hair of Shiva—शिवस्य जटाः, recluse—सन्यासी, (d) immortal—मर्त्याः, (e) attains prosperity - ऐश्वर्यं लभते। (1927) the lotus will bloom—पद्मं हसिष्यति, auspicious—मंगलप्रदः।

(1928)

Translate into idiomatic Samskrit—

(a) As the streams of the river go on, nor ever return so day and night bear ever away the life of mortals. (b) He caused a large pavilion to be erected by his servants for the marriage of his sons. (c) Alas! poverty is the root of all misery in this world. (d) I do not long for wealth but for immortal glory. (e) May you both get sons resembling you in all good qualities.

(1929)

6. Translate into Samskrit:—

(a) Try as far as possible, to depend upon your own exertions; for God helps those who help themselves, (b) If you try to get too much at once, you will lose even that which you have. (c) He who wishes to please a fool, wishes to cross the ocean with his hands. (d) As the father looks to the welfare of his children, so should a king have the good of his subjects at heart.

(1930)

Translate into Samskrit—

(a) The virtues of wise men are celebrated by poets. (b) Rama cut off the ten heads af Ravana. (c) Kausalya was the eldest of the three wives of Dasharatha and Kaikayi the youngest. (d) All enemies were killed by the five Pandavas. (e) The master teaches us eight times in a fortnight.

(1928) pavillion—मण्डपः, poverty—दारिद्रयम्, resembling—सदृशः। (1929) exertions—उद्यमाः, subjects—प्रजाः (1930) celebrated—गीयन्ते, eldest—ज्येष्ठा, in a fortnight—पक्षे।

(1931)

3. Translate the following sentences into Sasmkrit—

(a) Having experienced the sorrows of the world, he became an ascetic. (b) Sita was dearer to Rama than his very life. (c) The virtuous are happy and deserve respect. (d) We have drunk Soma and have become immortal (e) The wicked deeds of Bajiraja make us blush. (f) He is blind of one eye and lame of one leg.

(1932)

4. Translate the following sentences into Samskrit—

(i) The more you think of the miseries of your life the more your life will be full of grief. (ii) I do not consider my enemy worth even a straw. (iii) Milk is itself sweet; much more it is when mixed with sugar. (iv) The father asked his boy :—'When did you return from Madras ?' (v) As sun when down, the girl together with her sisters sat for study. (vi) Bhima was not inferior to Duryodhana in strength. (vii) The mother went to bathe leaving the child behind.

(1933)

4. Translate the following into Samskrit—

(1) May God protect us all. (2) Man can achieve salvation only through virtue. (3) One's nature can easily

---

(1931) having experienced—अनुभूय, ascetic—संन्यासी, wicked deeds—दुश्चरितानि, make blush—लज्जामुत्पादयन्ति, straw—तृणम् । (1932) much more—किं पुनः, when did you return—कदा परावर्तस्व, set for—प्रारभत, inferior—अधमः । (1933) only throhgh virtue—धर्मेणैव, greater—महत्तरम् ।

be known by one's actions. (4) Truth is greater than thousands of Ashwamedha sacrificies. (5) Who else than the king himself can save one? (6) Sita was by her nature dear to Rama. (7) They dwelt happily on the mountain for seven years. (8) The teacher treats his students as his own sons.

(1934)

4. Translate into Samskrit—

(i) The boy has finished the whole history within a month. (ii) The Brahmana begged a cow of the king. (iii) What do you know about this thing? (iv) He who desires wealth, will get in abundance. (v) The servant has gone to the forest to bring fuel. (vi) The young man is well-versed in Shastras.

(1935)

5. Translate into Samskrit—

(1) Nowhere have I seen such a beautiful garden. (2) Jumping from tree to tree. हनुमान saw the prineess of विदेह sitting at the root of the Asoka tree. (3) Within how many days, Sir, shall I finish this book? (4) Tell me not in mournful numbers. Life is but an empty dream. (5) Friend, cut off my bonds at once and save me.

(1933) The teacher treats his students as his own sons–शिक्षकः शिष्येषु स्वपुत्रवदाचरति। (1934) Within a month–मासाभ्यन्तरे, fuel–इन्धनम्, Well versed in shastras–सर्वशास्त्रपारंगतः। (1935) Nowhere–न क्वापि, Jumping–उत्पतन्, Sir–श्रीमन्, Mournful numbers—सखेदम्, But an empty dream—केवलनिःसारः स्वप्नः, dbons—बन्धनानि।

(6) Please, take me to her room. I wish to see my old friend as soon as possible.

(1936)

6. Translate the following into Samskrit :—

(a) For men may come and men may go, but I go on for ever. (b) Great men remain the same whether in prosperity or in adversity. (c) A coward dies many times but a brave man dies only once. (d) Oh ! mother tell me where is the great God Hari that I may go and find him. (e) 'Child' the mother answered, He is within your own heart. (f) Long Long ago there lived in this Land of ours a holy and merciful king by the name of Asoka.

(1953)

1. Translate into samskrit any ten of the following—

(a) Do not stand in front of me. मेरे सामने खड़े मत होओ ।

(b) I have a bad headache. मेरे सिर में बड़ा दर्द है ।

(c) How for is your home from here ? तुम्हारा घर यहाँ से कितनी दूर है ?

(d) She was thirsty all the day. वह दिन भर प्यासी रही ।

(e) Learning is a priceless wealth. विद्या अनमोल धन है ।

(1936) for ever—सततम्, in prosperity or in adeversity—सम्पत्तौ अथवा विपत्तौ, Coward—भीरुः, Within your own heart—त्वदीयमानसाभ्यन्तर एव, Holy and merciful king—धार्मिकः दयालुश्च राजा ।

(१९५३) In front of me—मम सम्मुखे, bad headache—अतीव शिरः पीड़ा,—from here—इतः, thirsty—तृषार्ता, priceless wealth—अमूल्यं धनम् you will reap—प्राप्स्यसि, by his matted hair—जटाभिः ।

(f) He will not go to Kashi. वह काशी नहीं जायगा।

(g) You will reap the fruit of this sin. तुमको इस पापका फल मिलेगा।

(h) The robber struck the traveller with a stick. डाकू ने पथिक को लाठी मारी।

(i) I acquire knowledge from Rama's study. रामायण के पढ़ने से मैं ज्ञान प्राप्त करता हूं।

(j) It is not proper to go again and again. बार-बार जाना अच्छा नहीं हैं।

(k) I had three Books here. मेरी तीन पुस्तकें यहां थीं।

(l) An ascetic is known by his matted hair. जटा से साधु मालूम पड़ता है।

काशीप्रथमपरीक्षायाः षष्ठं पत्रम्

(सन् १९३६)

एक ग्राम में एक निर्धन ब्राह्मण रहता था। उसको कोई सन्तान नहीं थी। उसने एक नेउला पाल रक्खा था। थोड़े दिनों बाद उसकी स्त्री के एक पुत्र उत्पन्न हुआ। ब्राह्मणी एक दिन पुत्र को खाट पर सुलाकर किसी काम से बाहर चली गयी। ब्राह्मण भी अपने काम में लग गया। इसी बीच में एक साँप बिल से निकला और बच्चे की ओर चला। नेउले ने सांप को देख लिया। उसने साँप के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। थोड़ी देर में ब्राह्मणी लौटी। उसने आते ही द्वार पर नेवले को देखा। उसके मुंह पर खून लगा हुआ था, वह समझी कि नेउले ने बच्चे को मार डाला है। क्रोध में आकर उसने वहीं नेउले के ऊपर एक पत्थर फेंक कर मारा। नेउला मर गया। जब ब्राह्मणी घर के अन्दर गयी तब उसने देखा कि लड़का खाट पर सो रहा है और

(१९३६) नेउला—नकुलः, खाट पर सुला कर—खट्वायां शाययित्वा, काम में लग गया—कार्यव्यापृतः सञ्जातः, टुकड़े-टुकड़े कर दिये—खण्डशः कृतवान्, खून लगा हुआ—रक्तरंजितः, पछताई—अनुशुशोच, धाड़ मार कर रोने लगी—भृशं रुरोद।

ास में एक साँप मरा पड़ा है। यह देख कर वह अपनी भूल पर पछताई और धाड़ ार कर रोने लगी।

(१९३७)

(क) एक दिन कछुआ कहीं जा रहा था। रास्ते में उसे एक शशक मिला। छुआ बोला—'भाई ! मैं भी तुम्हारे साथ साथ चलूंगा।' शशक ने हँसकर उत्तर िया—'तू तो धीरे-धीरे चलता है। मैं शीघ्रता से दौड़कर चलता हूँ। मेरा और ेरा कैसे साथ हो सकता है ?' 'कछुए ने कहा—में तुमसे चलने में न्यून नहीं हूं। मैं ड़ी दूर तक एक चाल से जा सकता हूँ। शशक ने कहा—'चलो दौड़ो, देखें कौन ागे जाता है।' शशक इतना कहकर छलांग मारता हुआ भागने लगा। कछुआ ीरे-धीरे चलने लगा।

(ख) सच बोलना धर्म है और झूठ बोलना पाप। सच बोलने से मन प्रसन्न हता है। सच बोलने वाले को कोई डर नहीं रहता। झूठ बोलने में सदा भय हता है कि झूठ खुल न जाय। झूठे मनुष्य की सब लोग निन्दा करते हैं। कभी कोई सकी बात पर विश्वास नहीं करता।

(१९३८)

(क) एक दिन दो मनुष्य किसी जङ्गल में साथ साथ जा रहे थे। रास्ते में सामने क रीछ आ रहा था। उसे दूर से ही देखकर दोनों आदमी बड़े घबराये। एक आदमी ो झट दौड़ कर पेड़ पर चढ़ गया और पत्तों में छिप गया। दूसरा पेड़ पर चढ़ना जनता था। इसलिए भूमि पर मृतक की भाँति लेट गया। रीछ ने पास आकर ूमि पर मृतक की भांति पड़े हुए आदमी के नाक मुंह आदि को सूंघा। रीछ सको मृतक समझ छोड़कर चल दिया। रीछ के चले जाने पर दूसरा आदमी पेड़ र से उतरा। अपने साथी के पास आकर वह बोला—"भाई ! रीछ तुम्हारे कान े पास मुंह करके तुम से कुछ कह रहा था। बताओ उसने तुमसे क्या कहा ?" ाथी ने कहा—'रीछ ने कहा कि जो आदमी कष्ट पड़ने पर साथी को छोड़कर ला जावे वह मनुष्य नहीं है, उससे मैत्री न करो।"

(१९३७) छलांग मारता हुआ—उत्पतन्, मन प्रसन्न रहता है—चेतः प्रफुल्लितं भवति, खुल न जाय—यदि प्रकटं भवेत्।

(१९३८ख) अब तक जगमगा रही है—अद्यावधि शोभते।

(ख) अनेक महापुरुषों ने इस देश में जन्म लिया, जिनकी किर्ति अब तक संसार में जगमगा रही है। यहीं जन्म लेकर भगवान् रामचन्द्र ने मर्यादापुरुषोत्तम का आदर्श संसार में खड़ा किया। यहीं जन्म लेकर भगवान् कृष्णचन्द्र ने कर्मयोग का महान् सन्देश सुनाया। दया की पावन धारा से समस्त संसार को आप्लावित करने वाले महात्मा बुद्ध ने भी यहीं जन्म धारण किया।

(१६३१)

१—अधो निर्दिष्टः संस्कृतसन्दर्भो विशुद्धहिन्दीभाषयाऽनूद्यताम्—

रामो मारीचं राक्षसं हत्वा स्वाश्रमं प्रतिनिवृत्तः। स दूरादेवायान्तं सुमित्रानन्दनं निरीक्ष्य चिन्तामापेदे। सौमित्रिः कथं सीतां त्यक्त्वा मदन्तिकमायाति निश्चित्यैवं लक्ष्मणमब्रवीत्—भ्रातः! कथमेकाकिनीं भ्रातृजायां विहायेहागतोऽसि? लक्ष्मणो रुदन् प्राञ्जलिरुवाच—आर्य! सीता देवी यत् दुर्वचो व्याहरत् तन्नाहं वक्तुं शक्नोमि। हा लक्ष्मण! इति भवद्वचनं श्रुत्वा सा मां भवत्साहाय्यार्थं प्राहिणोत् रामो द्रुतं पर्णशालां प्रविश्य परितः पत्नीमन्विष्यालब्ध्वा विललाप। विलपन्तं तं रुधिराप्लुतशरीर आश्रमसमीपस्थ एकः खग उवाच। सीतां रावणो जहार। स एव मामिमां दशां निनाय। रामः पक्षिराजं जटायुमङ्के निधाय धूलिधूसरं तदीयमङ्गं जटाभिरमार्जयत्। रामगात्रस्पर्शसुखमनुभूय जटायुस्त्रिदिवं जगाम। रामो लक्ष्मणेन चितां विरचय्य तस्यान्त्येष्टिसंस्कारं चकार। तस्मै तिलोदकं दत्त्वैव स शान्तिमाप।

२—विशुद्धस्वच्छसंस्कृतभाषयानूद्यतामधस्तनो हिन्दीसन्दर्भः—

मैं एक रोज पाठशाला जा रहा था। राह में दो छात्र मिले एक की देह ख़ूब मजबूत थी। एक का मुंह पीला था। मैंने पहले से पूछा "भाई तुम क्यों ऐसे हृष्ट पुष्ट हो?" उसने कहा—"मैं रोज चार बजे उठता हूं। उठकर लघुशङ्का करके हाथ मुँह धोता हूं। कुछ स्वाध्याय भी करता हूं। शौचक्रिया से निपट कर सूर्योदय से पहले नहा लेता हूँ। बाद सन्ध्या, व्यायाम और सूर्य नमस्कार करता हूं।" उसने दूसरे

(१६३१) निरीक्ष्य चिन्तामापेदे—देख कर चिन्तित हुआ, सौमित्रिः—लक्ष्मण, विहाय—छोड़कर, प्राञ्जलिः—हाथजोड़े हुए, प्राहिणोत्—भेजा, जहार—हर ले गया, निधाय—रख कर, त्रिदिवं जगाम—बैकुण्ठ चला गया, विरचय्य—बनाकर।

से पूछा—"कहो जी, तुम्हारा मुंह पीला क्यों है ?" वह रोने लगा। बहुत आग्रह करने पर बोला—"मेरी संगति बुरी है। मेरे सोने उठने का कुछ नियम नहीं है।" मैंने डांट कर कहा—देखो कुमित्रों को छोड़ो। नियम से सोओ और नियम से उठो। तुम भी ऐसा ही करो। एक दिन तुम भी वीर, धीर, विद्वान् और यशस्वी हो जाओगे।"

(१६४४)

१—(क) अधस्तनः संस्कृतसन्दर्भो हिन्दीभाषयाऽनूद्यताम् —

पञ्चविंशतिः शतानि, वत्सराणां व्यतीतानि यदा गौतमकुलोत्पन्नः सिद्धार्थः इमां भारतभुवमलञ्चकार निजजन्मना। भागीरथ्या उत्तरे तीरे कपिलवस्तु नाम महनीयं नगरमेकमासीत्। शाक्यवंशोत्पन्नः शुद्धोदनस्तत्र नयेन प्रजा अनुरञ्जयंश्चिरं राज्यमकरोत्। तस्य मायादेवी नाम रमणीरत्नमग्रणीः पतिव्रतानां भार्याऽभवत्। तस्याश्च सिद्धार्थो नाम सूनुर्जन्म लेभे। स शैशवादेव सुवृत्तो विवेकी चाभूत्। मृगयां गतस्य 'किमर्थमेते मृगा हन्तव्या' इति भूतदययाऽद्रवत्तस्य हृदयम्। ३०

(ख) निम्नाङ्कितानां संस्कृतेऽनुवादो विधेयः—

(१) बुरों का साथ छोड़ो और भलों की संगति करो। —३

(२) उस डरावने दृश्य को देखकर उसके हाथ पैर कांपने लगे। —४

(३) उसरातको बड़ा धना अँधेरा था और मूसलाधार वर्षा हो रही थी। —४

(४) तड़के सोकर उठने के बाद हम सबको अपने हाथ मुंह की खूब सफाई करनी चाहिये।

(५) इसी जंगल में किसी समय रामचन्द्र एक वृक्ष के नीचे कुटिया बनाकर मुनियों के साथ रहते थे और लक्ष्मण तथा सीता उनकी सेवा किया करते थे। यहीं पर किसी गुफा में रहनेवाले दुन्दुभि नामक राक्षस को वाली ने मारा था।

(१६३६–२) चार बजे—चतुर्वादनसमये, लघुशङ्काकर के—लघुशङ्कया निवृत्य। धोता हूं—प्रक्षालयामि निपट कर—समाप्य, सोने उठने का—शयनस्य जागरणस्य च, डांट कर कहा—निर्भर्त्सयनब्रवम्। (१६४४क) वत्सराणां पञ्चविंशतिः शतानि—पच्चीस सौ वर्ष, महनीयम्—पवित्र, सुवृत्तः—सच्चरित्र, अद्रवत्—पिघला। (१६४४ख) डरावने—भयावहम्, मुसलाधार वर्षा हो रही थी—धारासारैर्महती वृष्टिरभवत्, सेवा किया करते थे—असेवेताम्।

१९४५ (षष्ठं पत्रम्)

१—निम्नाङ्कितो निबन्धो हिन्दीभाषयाऽनूद्यताम्—

अथ कदाचिद्भोजराजो बहिरुद्यानमध्ये मार्गे प्रत्यागच्छन्तं कमपि विप्रं ददर्श। तस्य करे चर्ममयं कमण्डलुं वीक्ष्य तं चातिदरिद्रं ज्ञात्वा मुखश्रिया विराजमानं चावलोक्य तुरङ्गं तदग्रे निधाय प्राह। विप्र! चर्मपात्रं किमर्थं पाणौ वहसीति। स च विप्रो नूनं मुखशोभया मृदूक्त्या च भोज इति विचार्याह—देव! वदान्यशिरोमणौ भोजे पृथ्वीं शासति लोहताम्राभावः समजनि। तेन च चर्ममयं पात्रं वहामीति।

२—अधो लिखितस्य हिन्दीभागस्य संस्कृतेऽनुवादो विधेयः—

अयोध्या नगरी कोशल देश के राजा दशरथ की राजधानी थी। उसके राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न नाम के चार लड़के थे। उनमें राम सबसे बड़े थे, जो कि अत्यन्त धार्मिक, सच बोलनेवाले और हिम्मतवाले थे। उनका विवाह सीता नाम की एक रूपवती राजकुमारी से हुआ था। उन रामचन्द्र को अयोध्या राज्य का युवराज बनना था।

१९४६ (षष्ठं पत्रम्)

१—निम्नाङ्कितः सन्दर्भो हिन्दीभाषयानूद्यताम्—

पुरा हस्तिनाम्नि नगरे महम्मदनामा यवनेश्वरो बभूव। तस्मिन् आसमुद्रं धरणीतलं प्रशासति तदुत्कर्षासहिष्णुः काफरनरपतिस्तमभियोद्धुं सकलसैन्यसहितस्तत्राजगाम। यवनेश्वरस्तमायान्तं दृष्ट्वा ससैन्यः पुराद् बहिर्भूय तेन सममयुध्यत। तयोर्युद्धे समारब्धे महीयसा काफरसैन्येन हन्यमाना महम्मदयोधाः पलायिताः। ततः पलायमानः स्वबलं दृष्ट्वा यवनेश्वर उवाच—'रे रे मम सैन्यसुभटाः! युष्माकं मध्ये कोऽप्येतादृशो नास्ति य इदानीं रिपुभयेन पलायमानाया मे सेनाया गतिं निरुन्ध्यात्"

२—अधस्तनस्य हिन्दीसन्दर्भस्य संस्कृतेऽनुवादः कार्य्यः—

(१९४५—१) प्रत्यागच्छन्तम्—लौटते हुए, वदान्यशिरोमणौ—उदारश्रेष्ठ पर (१९४५—२) हिम्मत वाले—साहसी, सच बोलने वाले—सत्यवादी, (१९४६—१) आसमुद्रम्—समुद्रपर्यन्त, तदुत्कर्षासहिष्णुः—उसकी उन्नति से ईर्षा करनेवाला, निरुध्यात्—रोके। (१९४६—२) मुझसे क्या अपराध हुआ—किमपराद्धं मया, सेवा करने लगा—असेवत।

सूर्यवंश में दिलीप नामक एक प्रसिद्ध राजा था। वह प्रजापालन में सदैव रत रहता था। वह सब शुभ गुणों से अलंकृत था, परन्तु पुत्र के अभाव से सदा दुःखी रहता था एक समय वह पत्नी सहित अपने गुरु वसिष्ठजी के आश्रम को गया और प्रणाम करके बोला —"हे गुरो ! मुझसे क्या अपराध हुआ कि मैं पुत्रविहीन हूँ"। वसिष्ठजी ने विचार कर कहा—'हे पुत्र ! नन्दिनीनामक मेरी गाय की सेवा कर। उसके प्रसन्न होने पर तुमको पुत्र होगा।' गुरु जी से यह सुनकर वह राजा नन्दिनी के पास गया और उसकी सेवा करने लगा।

१९५३ वर्षे षष्ठं पत्रम्

१ अधोलिखितवाक्येषु केषाञ्चित्पञ्चानां हिन्दीभाषयाऽनुवादः कार्यः—

(क) सदाचारसम्पन्नो जनः केनापि प्रलोभनेन प्रभावितो न जायते, किन्तु महत उद्देश्यस्य पूर्त्यै सदा प्रयतते।

(ख) एतदनन्तरं राजा शोकसन्तप्तोऽभवत्। सोरस्ताडयन् स्वशिरो घूर्णयंश्च स आक्रन्दितुमारेभे।

(ग) ततो निखिलमपि नगरं विलोक्य कमपि मूर्खममात्यो नापश्यत्, यं निरस्य विदुषे गृहं दीयते। तत्र सर्वत्र भ्रमन् कस्यचित् कुविन्दस्य गृहं वीक्ष्य कुविन्दं प्राह।

(घ) आधुनिकशिक्षायां भारतीयादर्शाः समावेष्टव्याः येनाद्यतनो भारतीयश्छात्रो भवेदनुकरणीय आदर्शनागरिकः।

(ङ) परं ध्रियमाणः कपोतो मांसेनात्यरिच्यत। यदा कपोतेन समं धृतं मांसं न विद्यते, तदोत्कृत्तमांसोऽसौ स्वयं तुलामारुरोह।

(च) भारतीयराज्यानां भारतीयसंघे यदि विलयनं नाभवत्, तर्हि भारतमेकं शक्तिशालि राष्ट्रं कथमपि भवितुं नाशक्नोत्।

(छ) भारतीयप्रशासनेनाविलम्बं तथा प्रयतनीयं यथा देशस्य प्रत्येकनागरिकः संस्कृतज्ञः स्यात् संस्कृतं च राष्ट्र-भाषा-पदं लभेत। ...३०

(१९५४-१) सोरस्ताडयन्—छाती पीटता हुआ, निरस्य—निकालकर, कुविन्दस्य—कुम्हार का।

२ अधोलिखितवाक्येषु पञ्चानां संस्कृतभाषयाऽनुवादः कार्यः—

(क) वसन्त ऋतु में नियम से भ्रमण करना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है ।

(ख) एक ही समय में खेलना तथा पढ़ना उचित नहीं है ।

(ग) इस धर्मशाला में शरणार्थी चार वर्ष से रह रहे हैं ।

(घ) वे लोग, जो भारतीय संस्कृति में विश्वास रखते हैं, विदेशी वातावरण से कभी प्रभावित नहीं होते ।

(ङ) यह चर्चा थी कि मेरे गांव में चोरी हो गयी ।

(च) जब तक संस्कृत-भाषा की उन्नति न होगी, तब तक देश का उत्थान न होगा ।

(छ) पानी पीकर मैं मित्रों के साथ घूमने गया ।

(ज) बच्चे कक्षा में शोर मचा रहे हैं । ...५०

PATNA UNIVERSITY
Matriculation Exam.
1933 (Compulsory)

१—अज्ञानी लोग अपने नाश के लिए ही दुष्ट कर्म करते हैं । २—उसने व्याकरण पढ़ कर शास्त्र पढ़ा । ३—मोक्ष विद्वानों को ईप्सित होना चाहिए । ४—गङ्गा अपने निर्मल जल से मनुष्यों को पवित्र करती है । ५—मन की शान्ति के लिए लोभ छोड़ देना चाहिए ।

1933 (Additional)

(क) एक आदमी नदी के किनारे एक पेड़ को काट रहा था, दुर्भाग्य से उसने अपनी कुल्हाड़ी पानी में गिरा दी । (ख) कार्त्तवीर्य ने अपने शत्रुओं को परास्त

(१९५२)समावेष्टव्याः—रखने चाहिए, ध्रियमाणः—(तराजू पर)रखा हुआ, अत्यरिच्य त—बढ़ गया, उत्कृत्तमांसः—जिसका मांस नोचा गया था । (१९५३-२) चार वर्ष से—चतुर्वर्षम्, शोर मचा रहे हैं—आक्रोशं कुर्वन्ति ।

(१९३३) दुष्ट कर्म करते हैं—कुकर्माणि कुर्वन्ति, लोभ छोड़ देनाचाहिए—लोभं परित्यजेत्

किया और सम्पूर्ण देशों का विजय किया। उसकी कथा पुराणों तथा दूसरी पुस्तकों में लिखी है। (ग) आकाश के मेघ, पृथ्वी का पंक और जल का गंदलापन ये सब शरद् ने दूर कर दिये। (घ) उस दिन से लेकर उसने विश्वास किया कि ज्ञान का मार्ग भक्ति के मार्ग से अच्छा है। (ङ) एक दिन वह बाहर गया और भोजन करने के लिए नहीं लौटा। यह न जान कर, कि वह कहां गया, सभी शङ्कित थे।

1934 (Compulsory)

१—मनुष्यों को किसी के साथ शत्रुता न बढ़ानी चाहिए। २—आचार्यों से धर्म का उपदेश दिया जाता है। ३—कवियों से विद्वानों की प्रशंसा होनी चाहिए। ४—बालिकाएं पेड़ को सींच कर बैठ गयी। ५—मैंने दूध पीते हुए बालक को देखा।

1934 (Additional)

१—जब साँप ने मुझे शाप दिया तो मैं जङ्गल के पूरब की तरफ भ्रमण करने लगा और थक गया; तब एक दयालु पुरुष ने मुझे एक ऋषि के आश्रम पर पहुँचा दिया। २—कुछ गांव के रहने वालों ने किसी किसान की एक भैंस को पकड़ा और वटवृक्ष के नीचे देवी के सामने उसे मारा और बांट कर भोजन किया। भैंस वाले ने राजा के पास नालिश कर दी। ३—उसने ब्राह्मण को बुलाया और कहा कि सन्ध्या हो गयी, सामने बहुत बड़ा जङ्गल है और वह घोर हिंसक जन्तुओं से भरा है, इसलिए रात्रि का घर में बिताना उचित है। ४—कलिङ्ग देश में शोभावती नामक नगरी है। यहाँ यशस्कर नामक एक ज्ञानी और धनी ब्राह्मण रहता था, जिसकी प्रसिद्धि धर्मपरायणता के लिए थी। ५—जब वह उपवास कर रहा था, देवी ने स्वप्न में उससे कहा, मेरे बालक, उठो और काशी जाओ। वहां एक वटवृक्ष है। उसके तले से धन मिलेगा।

1935 (Compulsory)

(१) विष्णु ने क्षीर समुद्र से अमृत मथा। (२) सृष्टिकर्त्ता की महिमा का फल सब जगह देखा जाता है। (३) हरिण वन में दोपहर के समय पानी पीने की

(१९३३) गंदलापन—पंकिलता। (१९३४ C) आचार्यों से धर्म का उपदेश दिया जाता है—आचार्यैः धर्मः उपदिश्यते। (१९३४ A) थक गया—परिश्रान्तः, भैंस को पकड़ा—महिषमगृह्णन्, नालिश कर दी—अभियुक्तानकल्पयत्। (१९३५ C) पानी पीने की इच्छा करते हैं—पिपासन्ति।

इच्छा करते हैं। (४) उसने शत्रु से एक सौ गायें जीत लीं। (५) गुरु छात्रों के दुर्गुणों को छुड़ाता है।

1935 (Additional)

(१) तब राजा ने मुँह खोले आते हुए एक भयंकर राक्षस को देखा। राक्षस घोर गर्जन करके नीचे उतरा और बालिका को मुख में लेकर निगल गया। (२) संन्यासी ने कहा—"आप मेरे आश्रम पर भूखे आये हैं। इसलिए स्नान कीजिये और मेरे भिक्षाप्राप्त अन्न को ग्रहण कीजिए।" (३) जब वे वहाँ निवास करते थे, उस समय वहां एक भयानक दुर्भिक्ष पड़ गया और उस ब्राह्मण ने अपनी स्त्री से कहा, "यह देश दुर्भिक्ष में नष्ट हो गया है और मैं अपने सम्बन्धियों की विपत्तियों को नहीं देख सकता हूँ" (४) तब आँखवाले मनुष्य ने जन्मान्ध मनुष्य से कहा, "ठीक ही यहाँ महावीर आ गये हैं। मनुष्य उसकी पूजा और दण्डवत् करने जा रहे हैं।" (५) जब नापित राजा के निकट आया और हाथ जोड़कर बोला—"महाराज! कृपाकर बतलाइये मुझे क्या करना है।"

1936 (Compulsory)

(१) अहा! यह मेरी अँगूठी है। आठ दिनों से मैं इसकी खोज कर रहा था तुम्हें यह कहाँ मिली? (२) मैं यह कहता हूँ, क्योंकि कहना जरूरी है। हमारा ऐसा भाग्य नहीं है। कृपया अर्जुन से मेरी बात कहें। (३) कल गोपालराम सभी गायों को बाजार ले गया और कम मूल्य पर उन्हें बेच डाला। (४) यह मार्ग सीधा नदी को जाता है। दूसरा मार्ग जरा टेढ़ा है। जिसे चाहो, अपनाओ। (५) जेठे बेटे को अपने परिवार की रक्षा का भार सौंप कर वह बुढ़ा पवित्रस्थल जगन्नाथ के दर्शनार्थ चल पड़ा।

1936 (Additional)

(१) नदी के किनारे बहुत प्रकार के वृक्ष थे, जिनकी डालियों पर चिड़ियाँ चहक रही थीं। (२) पिता के मरने पर मैं बनारस पहुँचा और वहाँ जाकर विद्या-

---

(१९३५) हाथ जोड़ कर—कराञ्जलिं बद्ध्वा, (१९३६ C) अँगूठी—अङ्गुलीयकम्, खोजकर रहा था—अन्वेषणे रतः, बेच डाला—व्यक्रीणात्, टेढ़ा—तिरश्चीनः। अपनाओ—गृह्णीयात्, सौंपकर—नियोज्य। (१९३६ A) चहक रही थी—रवमकुर्वन्, कुछ दिन बीतने पर—कानिचिद् दिनानि व्यतीयाय। उसने........ सौ गायें जीत लीं—स शत्रुं शतं गा अजयत्, (१९३५ A) मुँह खोल कर—मुखं व्यादाय, निगल गया—व्यगिरत्।

प्राप्ति के लिए एक शिक्षक के पास गया। (३) अनन्तर व दोनों ब्राह्मण वहां से चले और कुछ दिन बीतने पर राजा के पास पहुँचकर अपना वृत्तान्त उनसे ठीक-ठीक कह सुनाया। (४) बहुत पहले उज्जैन में पुण्यसेन नाम के एक राजा थे। एक बार उनके राज्य पर किसी पराक्रमी शत्रु ने आकर आक्रमण किया। (५) दूसरे दिन मुनि शिष्य के साथ योगी के आश्रम में गये और वहाँ वृक्ष के नीचे ध्यान लगाकर बैठ गये।

1937 (Compulsory)

(१) राजा इन्द्रद्युम्न अपन हाथी पर चढ़ा और कई एक देशों में भ्रमण करता हुआ अन्त में जगन्नाथ धाम पहुँचा। (२) मगध में बहुत दिन पूर्व जरासन्ध नाम का राजा रहता था और एक समय कृष्ण के साथ भीमसेन वहाँ आये और उसको मार दिया। (३) उसके दूसरे दिन गुरु अपने शिष्यों के साथ योगी के आश्रम में गये और वहाँ गोदावरी नदी के किनारे ध्यान में बैठ गये। (४) जो धर्म के अनुकूल काम करते और दूसरों की भलाई करने में लगे रहते हैं केवल वे ही ईश्वर के कृपापात्र होते हैं। (५) उसकी सेना के शत्रु से पूरी तरह हराये जाने पर कुछ सिपाही पहाड़ों पर चढ़ गये, कुछ समुद्रों में उतर गये और दूसरे एकान्त कन्दराओं में घुस गये।

1937 (Additional)

(१) सब प्रजाओं को खबर दो कि अब चन्द्रगुप्त अपने ही राजकार्यों को देखेंगे। (२) अपने मां बाप की आज्ञा मानो, विद्वानों का आदर करो; दूसरों की निन्दा का एक शब्द भी कभी मत बोलो; और अपनी अवस्था से सन्तुष्ट रहो। (३) व्याध को अपनी ओर आते देख सब जानवर डर कर भिन्न-भिन्न दिशाओं में भाग गये। (५) मुझे आशा है कि आपको उस आदमी का स्मरण होगा जिसके बारे में एक महीना पहले आपसे मैंने कहा था। (५) पुराने समय में असित नाम का एक मुनि था, जिसने अपने धर्माचरण के लिए देवों के देव से देवल की पदवी प्राप्त की।

(१९३७C) ध्यान में बैठ गये—ध्यानमग्ना उपविष्टाः, हराये जाने पर—पराजिते सति। (१९३७A) भाग गये—पलायिताः।

1938 (Compulsory)

(१) धन से अच्छे और बुरे दोनों काम होते हैं। इसका जैसा व्यवहार करोगे वैसा ही फल मिलेगा। (२) तुमको उत्तम पुरुष होना चाहिए। इसके लिए सब की भलाई करो। (३) अपने बड़े भाई रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण ने सीता को वन में ले जाकर अकेली छोड़ दिया। (४) जब कोई तुम्हारे घर पर आ जाय तो उसका आदर करो, उसे बैठने के लिए आसन और पैर धोने के लिए जल दो। (५) धर्म को छोड़ कर सुख पाने का दूसरा कोई उपाय नहीं है। इस लिए अच्छे लोग धर्म के लिए प्राण तक भी दे देते हैं।

1938 (Additional)

(१) मन में अत्यन्त उद्विग्न होकर युवा संन्यासी नदी के किनारे टहलने के लिए निकला। (२) रात बहुत अन्धेरी थी; मधुमक्खियाँ ही गूंज रही थीं; सब विश्राम कर रहे थे। (३) जो हो युवा संन्यासी को विश्राम न था। उसने मानसिक शान्ति खो दी थी। (४) राजा अपनी प्रजाओं को पालता है। यदि कोई कुरास्ते जाय तो राजा को चाहिए कि उसे दण्ड दे। (५) यदि बदमाशों को दण्ड नहीं दिया जाय तो सम्पूर्ण समाज विश्रृङ्खल हो जाएगा।

1947 (Annual)

(१) मनुष्य किसी के साथ शत्रुता न करे। (२) आचार्य लोग धर्म का उपदेश देते हैं। (३) कवि सज्जनों की प्रशंसा करता है। (४) बालिका वृक्ष को देखकर बैठ गयी। (५) मैंने अति दुर्बल बालक को देखा। (६) मैंने गोदोहन काल में कृष्ण को देखा।

1947 (Supplementary)

(a) विष्णु ने क्षीर समुद्र को मथा। (b) ईश्वर की कृपा का फल सर्वत्र देखा जाता है। (c) हरिण वन में पानी पीने की इच्छा करता है। (d) उसने शत्रु

(१९३८C) इससे जैसा व्यवहार करोगे वैसा फल पाओगे–अनेन यथा व्यवहरिष्यथ तथैव फलं प्रापयिष्यथ, अकेली–एकाकिनीम्, प्राण तक दे देते हैं–प्राणानुत्सृजन्ति।

(१९३८A) (५) बदमाशों को–धूर्तान्, (१९४७A) धर्म का उपदेश देते हैं–धर्मम् उपदिशन्ति, बैठ गयी–उपाविशत्, (१९४७S) पीने की इच्छा करता है–पिपासति, उसने शत्रु से एक सौ गायें जीत लीं–स शत्रुं शतं गा अजयत्। पढ़ाते हैं–पाठयति, जानना चाहता हूँ–जिज्ञासे।

एक सौ गायें जीत लीं। (e) गुरु छात्रों को पढ़ाते हैं। (f) तुम कहाँ रहते हो, ह मैं जानना चाहता हूँ।

1948 (Annual)

(a) पिता की आज्ञा से रामचन्द्र बन गये। (b) कृपया मुझे फल दीजिए। (c) परमपिता परमेश्वर सर्वत्र है। (d) श्याम पुत्र के लिए पुस्तक लाता है। (e) तुम्हारा भाई कहाँ पढ़ता है ? (f) कब काशी जाओगे ?

1948 (Supplementary)

(a) कृपया ग्राम चलिए। (b) तुम्हारा घर कहाँ है ? (c) पिता आज आवेंगे। (d) कवियों में कालिदास श्रेष्ठ थे। (e) रामचन्द्र ने रावण को मारा। (f) मैं स्वयं कार्य करूँगा।

पञ्जाब यूनिवर्सिटी की एण्ट्रैंस परीक्षा के प्रश्न (संस्कृत अनुवाद)

(१६३२)

१—पहले इस देश का नाम आर्यावर्त्त था। २—यह देश सारे संसार से उत्तम है। ३—इसमें छःओं ऋतुएँ अपने यौवन में होती हैं। ४—यहाँ अनेक ऋषि मुनि जन्म ले चुके हैं। ५—वे ऋषि सच बोलने वाले और धर्म में स्थिर थे। ६—हमें चाहिए कि हम भी उन्हीं का अनुकरण करें। ७—इसी प्रकार से हमारा कल्याण होगा और दुःख कटेंगे। ८—उन ऋषियों का कथन है कि प्रत्येक बालक ब्रह्मचारी बने। ६—ब्रह्मचर्य बल और बुद्धि को बढ़ाने वाला है। १०—हे शिष्य ! उठो प्रातःकाल हो गया।

(१६३३)

१—नम्रता मनुष्य का गुण है। २—फलवान् वृक्ष ही झुकते हैं। ३—श्रीनानक आदि भक्त बड़े नम्र थे। ४—युधिष्ठिर के यज्ञ में भगवान् कृष्ण ने सबकी सेवा की थी। ५—राजा लोग विद्वानों की सेवा करना अपना भाग्य मानते थे। ६—अभिमान से

(१६४८S) कवियों में कालिदास श्रेष्ठ थे—कवीनां कविषु वा श्रेष्ठः कालिदासः।

(१६३२) पहले—पुरा, जन्म चुके हैं—उत्पन्ना अभूवन्। अनुकरण करें—अनुकर्म। प्रातःकाल हो गया है—प्रातःकालो जातः। (१६३३) झुकते हैं—नम्रा भवन्ति, सब की सेवा की थी—सर्वानसेवत। अभिमान से—दर्पात्।

बड़े-बड़े राजा नष्ट हुए । ७—विद्यार्थी को अतिनम्र होना चाहिए । ८—कई अमीर लोगों के लड़कों में यह गुण दिखाई नहीं देता । ९—अभिमानी बालक दूसरों से ज्ञान नहीं ले सकता । १०—शास्त्र में कहा है—अभिमान और सुरापान बराबर हैं ।

(१९३४)

१—मारा हुआ धर्म मनुष्य को मार देता है । २—अहिंसा नाम का धर्म परम धर्म है । ३—अहिंसक मर कर स्वर्ग को प्राप्त होगा । ४—प्राचीन आर्य हिंसा नहीं करते थे । ५—हिंसक कभी भी विश्वास योग्य नहीं होते । ६—दूसरे प्राणियों को मारना हिंसा है । ७—शास्त्र सुनने से ऐसी भावना उत्पन्न होगी । ८—अतः शास्त्र का पाठ अवश्य करना चाहिए । ९—ऐ विद्यार्थिजनों ! प्रातः स्नान करके स्वाध्याय करने वाला ईश्वरविश्वासी हो जाता है ।

(१९३५)

१—उन मूर्ख पण्डितों के इन वचनों को सुन कर सब लोग, जो उस सभा में बैठे थे, हँस पड़े । २—यह नदी हमारे देश में सब से छोटी है । ३—तुमको देख देख कर मेरा मन क्यों इतना प्रसन्न होता हैं । ४—यह पुस्तक पढ़ने योग्य है, अवश्य खरीद लो । ५—उससे पूछ कि पढ़ने के लिए कब गुरुजी के पास जायेगा । ६—पिताजी, मैं भी आपके साथ घूमने के लिए जाना चाहता हूँ । ७—कृपा करके मुझे अपना घर दिखा दें । ८—यहीं ठहर, मैं अभी नदी से जल पीकर आता हूं । ९—गुरुजी, मेरी चार बहिनें और तीन भाई हैं, मैं इनमें बड़ा हूँ । १०—बहुत दान देने से भी धन नष्ट नहीं होता, जैसे, सारे ग्राम के ले जाने पर भी किसी बड़े कुएँ का जल ।

(१९३६)

१—धन के लिए मनुष्य घर के सुख को छोड़ कर कहाँ-कहाँ फिरता है । २—चिन्ता करने से क्या मिलेगा ? अब क्या करना चाहिए ? यह आप कहें ।

(१९३३) अमीर लोगों के लड़कों में—धनिकपुत्रेषु । बराबर हैं—समाने स्तः । (१९३४) मरा हुआ—घातितः, सुनने से—श्रवणात् । हँस पड़े—प्रहसन्, सब से छोटी नदी—सर्वासां नदीनां लघुतमा (लघिष्ठा), 'देख-देख कर—दर्शंदर्शम्, खरीद लो—क्रीणीहि। मैं इन में बड़ा हूं—अहं सर्वेषां ज्येष्ठः, लेजाने पर भी—नीते सत्यपि । (१९३६) हाथों से पकड़ लिया—हस्ताभ्यामग्रहीत् । सब से छोटा—सर्वेषां कनिष्ठः ।

३—इन चारों चोरों को नगर से बाहर ले जाकर मार दो । ४—ऊपर से गिरते हुए बालक को पिता ने दोनों हाथों से पकड़ लिया । ५—आज ज्वर के कारण गुरु जी ने हमें पाठ नहीं पढ़ाया । ६—वह मेरा सब से बड़ा भाई है और यह सब से छोटा । ७—यहाँ बैठ जा और ध्यान देकर सुन, गुरुजी क्या कहते हैं । ८—यह काम कर, जिससे दुनियां में तेरी शोभा हो । ९—देख, कोई स्त्री बाहर आई है, जा उससे उसका नाम पूछ । १०—मैं इस घोड़ी को बेचकर नई घोड़ी मोल लेना चाहता हूँ—माता जी आप की क्या इच्छा है ?

(१९३७)

१—मैं हर दिन स्नान करके पाठशाला को जाता हूँ—पाठशाला से आकर भोजन खाता हूँ । २—हमारे गुरुजी के चार पुत्र हैं, तीन आज ग्राम से मेरे साथ आये हैं, चौथा वहीं ग्राम में है । ३—मैंने तुम्हारे छोटे भाई के लिए क्या-क्या नहीं किया, परन्तु वह मेरे किये को नहीं जानता । ४—जो सुनने योग्य था सुन लिया है, अब यहाँ ठहर कर क्या करूँगा । ५—देख-देख कर चल, नहीं तो तू जमीन पर गिर पड़ेगा । ६—पापी चोरों ने शाम के समय कन्या को मार कर नदी में डाल दिया । ७—यह दो विद्यार्थी सारा दिन खेलते हैं, न पढ़ते हैं, न पढ़ेंगे । ८—प्यारे भाई जल्दी जा, और यह पत्र पिताजी को दे दे । ९—माता ने कहा 'बोल तू क्या चाहता है ?' १०—मनुष्य संसार में रोने के लिए आया है या हँसने के लिए ?

(१९३८)

१—तू भी तो वहाँ ही था—मुझे सुना, वहाँ क्या क्या हुआ ? १२—तुम दोनों चलो, हम दोनों भी अपनी माताजी के साथ तुम्हारे पीछे आते हैं । ३—पूछो, जो पूछना है—जल्दी कर मुझे जाना भी है । ४—इन फलों को लेकर दोनों हाथों अपने गुरुजी के आगे रख दे । ५—विद्या के बिना मनुष्य कुछ नहीं—पशु के समान ही होता है । ६—दूसरे दिन वह स्त्री रोती हुई फिर हमारे घर रात के समय आ गई । ७—जो सोता है वह रोता है । यह किसी महात्मा ने ठीक कहा है । ८—तुम्हारे माता पिता किस दिन यहाँ से अपने ग्राम को जायेंगे ? ९—तू कौन है ? कहां से आया है ? कब और किस लिए ? १०—दूध पीकर पानी कभी नहीं पीना चाहिए—तू सुन, याद रख ।

(१९३८) स्त्री रोती हुई—रुदती स्त्री, तू सुन याद रख—शृणु स्मर च ।

(३९)

१—दूसरे ने कहा—तुम कैसे मूर्ख हो, मैं तुम्हारे वचन नहीं सुनूँगा। २—उसने कहा—मैं उस नरश्रेष्ठ की राजलक्ष्मी हूँ। मुझे अब उसे त्यागना पड़ेगा। अतएव अब मैं दुखी हूँ। ३—सूर्य, चन्द्रमा और तारे सब ईश्वरीय नियम के अधीन हैं। ४—मेरे ऊपर क्रोध मत करो। मैं जो कहता हूँ वह सत्य है। यद्यपि वह कटु है। ५—इस मास में सूर्य बड़ी जल्दी उदय हो जाता है और रात से दिन अधिक लम्बा होता है। ६—राम! जाओ, पचपन आम खरीद कर शीघ्र लौट आओ। ७—परमेश्वर के बिना आपद् में हमारा कौन बन्धु है? ८—शीघ्र ही उसे मार दिया गया। ९—माता तथा मातृ-भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं। १०—आप जाएं, फिर दर्शन दीजिएगा। ११—किसी साधु ने एक कुत्ते से पूछा—तू मार्ग में क्यों सोता है? कुत्ते ने कहा—मैं भले बुरे की परीक्षा करता हूँ। १२—श्रीराम मार्ग पूछते हुए सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में पहुंच गये। १३—महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में वर्णन किया है कि रावण को मारकर श्रीराम अपने प्रिय-जनों के साथ पुष्पक विमान में चढ़कर लंका से अयोध्या को आये।

पञ्जाब यूनिवर्सिटी की प्राज्ञ-परीक्षा

संस्कृत-अनुवाद, परीक्षा-पत्र (छठा)

(१९३९)

(अ) शूर्पणखा ने देखा कि यह तो बड़ी दुर्घटना हुई। अब क्या करूँ और इनसे कैसे बदला लूं। यह राम तो बड़ा बलवान् है। सेना कटी और दोनों भाई मारे गये। अब यह समाचार रावण को देना चाहिए। वह चाहे तो बदला ले सकता है। यह सोचकर वह लङ्का में पहुँची और रावण से उसके दरबार में बोली कि मेरी दशा पर रोओ। तुम्हारे जीते जी मेरी यह दुर्दशा! तुम तो यहीं पड़े-पड़े सुख से दिन बिता रहे हो और राज्य में क्या हो रहा है इसका तुम्हें कुछ भी पता नहीं।

(१९३९) अधिक लम्बा—दीर्घतरम् (दिनम्), माता तथा मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर हैं—जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। परीक्षा करता हूँ—परीक्षे।

(१९३९) कैसे बदला लूँ—कथं प्रतीकारं करवाणि, मेरी दशा पर रोओ—मम दयनीयां दशां पश्य, तुम्हारे जीते जी—त्वयि जीवति।

ऐसे ही राजाओं का राज्य नष्ट होता है। तुम्हारी पञ्चवटी में रहने वाली सारी सेना मारी गयी। खर और दूषण भी मारे गये।

(इ) महर्षि कण्व ने राजा के निमन्त्रण की चिरकाल तक प्रतीक्षा की। उसकी उपेक्षा का कारण अज्ञात था। उन्होंने यह सोचकर कि विवाहिता लड़की को बहुत दिन पिता के घर रहना उचित नहीं, उसे विना बुलाये ही भेज देने का निश्चय कर दिया। यह दृश्य अतीव हृदय-विदारक था। यद्यपि कण्व बड़े सिद्ध थे, तथापि वियोग के समय वह साधारण संसारियों की भाँति विलख-बिलख कर रोये, सखियों की दशा विचित्र थी। बेचारी शकुन्तला के हृदय की कौन कहे।

(उ) (१) उस सेठ के पास दो करोड़ पैंतीस लाख, सत्तर हजार, नौ सौ, सात रुपये थे। (२) जो उसने सुना, मुझे सब ही सुना दिया। (३) आओ, यहाँ बैठें और ईश्वर के गुण गावें। (४) संसार में पिता और पुत्र में भी धन के लिए झगड़ा हो जाता है।

(१९४३)

(क) नयनतोष नाम का राजा बड़ा प्रजापालक था। उठते बैठते सोते-जागते यही सोचा करता कि किस प्रकार प्रजा को सुखी रक्खूं। वह स्वयं कष्ट भोगता, परन्तु प्रजा को सदा सुखी रखना चाहता था। एक दिन राजा ने महल की छतपर चढ़कर देखा कि नगर में कई मकानों से सायङ्काल भोजन पकाते समय धुआं नहीं निकलता है। वह बहुत उदास होकर छत से उतरा। उस दिन से लेकर उसने एक ही बार भोजन करना आरम्भ किया। दिनरात प्रजा के दुखों को दूर करने में लगा रहता। तीन वर्ष तक उसने प्रजा से कर न लिया। इन दिनों में राजमहल भी गिरने लगा, परन्तु उसने कुछ ध्यान न दिया। तीन वर्षों के बाद एक दिन राजा राजमहल की छतपर चढ़े तो उन्होंने देखा कि हर एक घर से भोजन पकाते

(१९३९) विना बुलाये ही—अनाकारितोऽपि, दाया—धात्री, विलख-बिलख-कर भृशम्। हृदय को कौन कहे—चेतसः का कथा। दो करोड़पैंतीस लाख सत्तर हजार नौसौ सात रुपये—द्वे कोटी पञ्चत्रिंशत् लक्षानि, सप्ततिसहस्राणि, सप्ताधिकनवशतानि रूप्याणि। (१९४३) उठते-बैठते सोते-जगाते—अहर्निशम् (उत्थानोपवेशने शयनजागरणे), चाहता था—ऐच्छत्, महल की छतपर चढ़कर—प्रासादोपरि गत्वा, दूर करने के लिए—अपनेतुम्।

समय धुआँ निकाल रहा है। यह देखकर उसे अत्यन्त प्रसन्नता हुई और अपनी रानी से बोला—आज मैं प्रजा का सच्चा राजा हूं।

(ख) गोस्वामी तुलसीदास जी के जन्म के विषय में कुछ भी जाना नहीं जाता। कोई कहते हैं कि बाल्यावस्था में ही इनके माता पिता चल बसे थे। इसलिए इन्हें इनके गुरु नरहरिदास जी ने पाला। इनका विवाह हुआ। कुछ कारणवश इनको संसार से विरक्ति हो गयी थी और ये साधु हो गये। इन्होंने कई तीर्थों का भ्रमण किया। ये दशरथ के पुत्र राम के परम भक्त थे। इन्होंने जीवनपर्यन्त उन्हीं का भजन किया और उन्हीं के चरित्र को अनेक प्रकार से लिखा। ये अपने समय में अपनी भक्ति, अलौकिक शक्ति, विद्वत्ता और अपनी सुन्दर कविताओं के कारण बहुत आदरणीय थे। इन्होंने अधिक समय काशी में ही बिताया। वहीं गङ्गा के किनारे इनका शरीरान्त हुआ। इन्होंने विविधछन्दों में राम जी के चरित्र का ही वर्णन किया है। आपने बहुत पुस्तकें लिखीं, परन्तु रामचरितमानस नामक ग्रन्थ सब में अधिक प्रसिद्ध है।

(१६४८)

(क) किसी वन में मदोत्कट नामवाला सिंह रहता था। चीता, कौआ और गीदड़ उसके नौकर थे। एक बार इधर-उधर घूमते हुए व्यापारी के साथ से बिछुड़े हुए एक ऊँट को देखा। सिंह बोला, 'आश्चर्य है, यह अद्भुत प्राणी है। पता करो, यह वन का है अथवा गाँव का है।' यह सुनकर कौआ बोला—"हे स्वामी! ऊँट नामवाला यह गाँव का प्राणी-विशेष आपके खाने योग्य है, अतः इसे मारिये।" सिंह बोला, "मैं घर में आये को नहीं मारूँगा। इसे अभय का दान देकर मेरे पास ले आओ, जिससे इसके इधर आने का कारण पूछूँ।"

(ख) जेठ महीने की पूर्णिमा को पतिव्रता स्त्रियाँ वट वृक्ष का पूजा और उपवास करती हैं। इस तिथि को प्राचीन काल में सत्यवान् की भार्या सावित्री ने

(१६४३) चल बसे थे—पञ्चत्वं गतौ। बिताया—यापितः, शरीरान्त हुआ—दिवङ्गतः, विविध छन्दों में—विविधपद्येषु, सबमें अधिक प्रसिद्ध है—सर्वेषु अधिकप्रसिद्धः। (१६४८) चीता—द्वीपी, गीदड़—शृगालः, बिछड़े हुए—व्यस्तम्, घर में आये को—अभ्यागतम्।

यम से लिये जाते हुए अपने पति सत्यवान् को छुड़ाया था। तभी से इस व्रत का आरम्भ हुआ है। स्त्रियाँ यह मानती हैं कि इस व्रत के करने से उनके पति की आयु दीर्घ होती है। सब सोहागिन स्त्रियाँ इस व्रत को करती हैं।

(ग) १—धोबी मैले कपड़ों को गाड़ी में नदी पर ले जायगा ?

२—तू क्या चाहता है, स्पष्ट क्यों नहीं कहता ?

३—बारह वर्षों में चारों वेद छः अङ्गों सहित पढ़े जाते हैं।

४—खेलने के समय खेलना और पढ़ने के समय पढ़ना चाहिए।

५—ब्रह्मचारी भोग-विलास से सदा डरे और पाप से बचे।

६—यदि तुम परिश्रम करते तो परीक्षा में अवश्य सफल हो जाते।

७—प्राचीन काल में राजा लोग विद्वानों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझते थे।

८—संवत् २००३ में इस मकान में एक पुरुष, दो स्त्रियां, तीन बालक और चार कन्याएँ रहती थीं।

(१९४९)

(क) कुछ सोचकर वसिष्ठ ने दिलीप को कहा कि महाराज ! अब चिन्ता छोड़ो और एक काम करो। मेरे आश्रम में एक गाय है जिसका नाम नन्दिनी है और यह कामधेनु है। अब इसकी सेवा करो। यह तुम्हारे मनोरथ को पूरा करेगी। जहाँ वह जाए जाने दो। जैसा वह करे वैसा ही तुम भी करो।

राजा ने अपने गुरु की बात मान ली और उसकी सेवा बड़े प्रेम और श्रद्धा के साथ की, जिससे वह बहुत प्रसन्न हो गयी।

(ख) नन्दिनी ने मीठे स्वर से कहा—"बेटा ! उठ बैठो। यह सब मेरी ही माया थी। ऋषि की तपस्या के बल से यमराज भी मेरी ओर आँख नहीं उठा सकता। साधारण पशुओं की तो बात ही क्या है ! मुझे निरे दूध देने वाली ही गाय मत समझो। मैं दूध भी देती हूँ और वरदान भी।"

(१९४८) छुड़ाया था—विमोचितः, सहयोगिन स्त्रियाँ—सधवाः, धोबी—रजकः, भोगविलास से—विलासमयजीवनात्, संवत् २००३ में—त्र्युत्तरद्विसहस्रसंवत्सरे। (१९४९) बात मान ली—कथनं स्वीचकार, बेटा उठो—उत्तिष्ठ वत्स, आँख नहीं उठा सकता—किमपि कर्तुमसमर्थः।

राजा ने कहा कि मैं अपने राज्य का एक उत्तराधिकारी चाहता हूँ, तो नन्दिनी ने कहा कि तुम मेरा दूध पी लो। देखो, तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।

राजा ने उत्तर दिया कि आपके दूध में सबसे पहले बछड़े का भाग है, फिर गुरुजी का और तब मेरा। क्षमा करना, मैं गुरु की आज्ञा के बिना दूध नहीं पी सकता। इस बात को सुनकर नन्दिनी बहुत ही प्रसन्न हुई और उसे असीस दी।

सायङ्काल को आश्रम में पहुँचकर महाराज दलीप ने वसिष्ठ को सारा संवाद सुनाया और गुरु की आज्ञा से दूध पिया। नन्दिनी की कृपा से रानी सुदक्षिणा से रघु उत्पन्न हुए, रघु के बेटे अज और अज से महाराज दशरथ हुए। महाकवि कालिदास ने रघुवंश में इसका वर्णन किया है।

(ग) १—भले आदमी सदा भला ही काम करते हैं। २—सूर्य की गर्मी से जल सूख जाता है। ३—लोग सभा में चुपचाप बैठें और भाषण सुनें। ४—पिताजी! आप जाइये, मैं भी आ जाऊँगा। ५—यदि वह बात सुनना है तो बैठ जाइए। ६—विद्या को परिश्रम से पढ़ो, सुख पाओगे। ७—सन् उन्नीस सौ सैंतालीस में भारत स्वतन्त्र हुआ। ८—मूर्ख पुत्र को धिक्कार है। वह पढ़ता क्यों नहीं? ९—माता बच्चे को चाँद दिखाती है। १०—हमें सदा सत्य बोलना चाहिए। ११—इस समय भारत के प्रधान मन्त्री का नाम पं० जवाहरलाल है। १२—क्या तुमसे यहां ठहरा नहीं जाता है?

(१९५०)

(क) एक समय राजा उशीनर ने यज्ञ करना आरम्भ किया। यज्ञ के लिए सारी सामग्री एकत्र की। जहाँ पर राजा यज्ञ कर रहे थे वहाँ पर इन्द्र, राजा की परीक्षा लेने गये। राजा की जाँघ पर एक कबूतर आकर बैठ गया। इन्द्र ने कहा, राजन्! यह कबूतर मुझे दे दो। मैं इस कबूतर को खाऊँगा। यह मेरा भोजन है। मैं भूख से व्याकुल हूँ। अतएव तुम धर्म के लोभ से इसकी रक्षा मत करो। तुम्हारा धर्म नष्ट हो चुका। राजा ने कहा, तुम्हारे भय से व्याकुल होकर प्राण बचाने की इच्छा से, यह कबूतर हमारे पास आया है। हम इसकी रक्षा क्यों न करें?

(१९४९) भले आदमी—सत्पुरुषाः, गर्मी से—आतपेन, सन् उन्नीस सौ सैंतालीस में—सप्तचत्वारिंशदधिकैकोनविंशतिख्रिस्ताब्दौ, धिक्कार है—धिक्, ठहरा नहीं जाता है—स्थातुं न शक्यते। (१९५०) यज्ञ करना आरम्भ किया—यज्ञं कर्तुमारेभे। जांघ पर—जंघायाम्, कबूतर—कपोतः, तड़पता हुआ—विह्वलः।

इसकी प्राणरक्षा करने में क्या तुमको धर्म नहीं दिखाई पड़ता ? यह कबूतर तड़पता हुआ मेरे पास आया है। शरणागत की रक्षा करना मनुष्य का कर्त्तव्य है। जो पुरुष शरणागत की रक्षा नहीं करते वे महापापी हैं।

इन्द्र ने कहा, राजन् ! आहार से जगत् के सब जीव-जन्तु उत्पन्न होते हैं, आहार से बढ़ते हैं और आहार से जीते हैं। अन्य वस्तुओं के त्याग से मनुष्य कई दिन तक जी सकता है, परन्तु भोजन छोड़कर जीना असम्भव है। इसलिए भोजन न पाने से मेरे प्राण शरीर से निकल जायँगे। मेरे मरने से मेरे स्त्री और पुत्र सब मर जायँगे। आप एक कबूतर की रक्षा करके सब प्राणियों को मारते हैं। जिस धर्म से धर्म का नाश हो वह धर्म नहीं, अधर्म है।

राजा ने कहा, तुम ठीक कहते हो। परन्तु हम शरणागत को नहीं छोड़ सकते। जिससे तुम इस पक्षी के प्राण छोड़ो, मैं वही करूँगा।

(ख) (१) गंगा हिमालय से निकलती है। (२) गोपाल गौ का दूध दोहता है। (३) विद्या सीखने के लिए गुरु की आज्ञा मानना परम आवश्यक है। (४) विद्यार्थी को सुख कहाँ और सुखार्थी को विद्या कहाँ ? (५) विदुर की कथा शिक्षा से पूर्ण है। (६) झूठ बोलना सब पापों का मूल है। (७) विदुर के कहे उपदेश अनमोल हैं। (८) जुआ खेलना अच्छा काम नहीं है। (९) कोई न कोई कला सब को सीखनी चाहिए। (१०) मित्र वही है जो संकट में साथ देता है। (११) दुर्जन सदा दूसरों के छिद्र ढूँढता रहता है। (१२) राजमार्ग के दोनों तरफ हरे हरे वृक्ष हैं।

(१९५१)

(क) एक दिन सुदामा की स्त्री ने पति से विनयपूर्वक कहा—"पति जी ! आप कहा करते हैं कि श्रीकृष्ण जी आप के सखा हैं। आप इस समय दीन अवस्था में हैं। घर में खाने को कुछ नहीं। अतः आप उनके पास जाएँ और कुछ ले आएं। सुना है कि वे दीनों पर दया करते हैं। वे अवश्य आपकी सहायता करेंगे। आप को ऐसी अवस्था में मित्र के पास जाते हुए लज्जा नहीं करनी चाहिए। कहते हैं कि विपत्ति में मित्र ही मित्र के काम आता है। आप उनसे सहायता प्राप्त करें,

---

(१९५०) जुआ खेलना—द्यूतक्रीडनम्, छिद्र ढूँढता रहता है—छिद्राणि अन्विष्यति। (१९५१) कहते हैं—कथयन्ति, ।

जिससे हमारा निर्वाह भली भाँति हो। आशा है आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान देंगे और वहाँ जायंगे।

सुदामा अब कुछ न बोल सका और अपनी पत्नी के कथन को युक्तियुक्त जानकर श्रीकृष्ण के पास जाने को प्रस्तुत हो गया। उसके मन में विचार उठा कि मैं मित्र से कई वर्षों के पश्चात् मिलने जा रहा हूँ। भेंट में क्या ले जाऊँ? वहाँ था ही क्या जो सुदामा साथ ले जाता?

पर सुदामा की स्त्री ने झट पुराने कपड़े में थोड़े से चावल बांध कर पति को दिये और वह उन्हें लेकर अपने सखा के पास द्वारिका को चल पड़ा।

(ख) (१) वह क्यों व्यर्थ दुःख सहता है? (२) मैं तो देश की रक्षा के लिए कष्ट सहूँगा। (३) हम से गर्म दूध नहीं पिया जाता। (४) हे प्रभु! मेरी विपदा हरो। (५) तू गुणियों के साथ रह। (६) विद्वानों का सर्वत्र आदर होता है। (७) हमें गुरुओं की आज्ञा माननी चाहिये। (८) जो दान देना चाहता है दे। (९) वर्षा होती तो सुभिक्ष होता। (१०) तुम शीघ्र जल लाओ।

(१९५३)

(क) धर्म में लगा हुआ अशोक दिन प्रतिदिन अधिकाधिक दान करता रहता था। एक बार जब वह पुनः दान करने लगा तब मंत्रि-मण्डल ने उसे रोक दिया। खिन्न अशोक ने मंत्रियों से पूछा—अब पृथ्वी का स्वामी कौन है? मंत्री बोले—देव भूमि के अधिपति हैं। अश्रुपूर्ण नेत्रों से अशोक ने फिर कहा—क्यों आप असत्य कहते हैं? हम राज्य से भ्रष्ट हो चुके हैं। मंत्रिमण्डल जानता था कि यदि कोष समाप्त हो गया तो इतना बड़ा साम्राज्य क्षण भर में नष्ट हो जायगा। राजा और मंत्री दोनों एक दूसरे को समझते थे। राजा ने राज्य त्यागने का निश्चय

भेंट—उपहारः, झट—सपदि, पुराने कपड़े में—जीर्णवस्त्रे, चावल—तण्डुलान्, चल पड़ा—प्रस्थितः। वर्षा होती तो सुभिक्ष होता—यदि वर्षणमभविष्यत्तदा सुभिक्षमभविष्यत्। (१९५३) धर्म में लगा हुआ=धर्मनिरतः, रोक दिया=रुद्धः, कथा तो होती है पर कोई सुने भी=कथा तु भवति, परं कश्चित् शृणोत्वपि, क्या बाबूजी यहाँ आये थे? अपि 'बाबूजी' अत्र आगतः? अक्ल=बुद्धिः, क्षमा कीजिए, फिर ऐसा नहीं करूँगा=क्षम्यताम्, पुनरेवं न करिष्यामि, तुम्हारे जैसे बहुतेर देखे हैं=भवादृशाः बहवो दृष्टाः, वह इधर से आया और उधर चला गया=स इत आगतस्ततश्च गतः।

कर लिया । और मंत्रियों की निर्भयता कितनी विस्मयोत्पादक है । भला संसार के कितने विश्वविजयी राजा इतने महान् हुए हैं ? और कितनों के मंत्री इतने निर्भीक थे ?

(ख) (१) यह आपका अपना ही घर है । (२) श्याम खेल रहा होगा । (३) कथा तो होती है, पर कोई सुने भी । (४) क्या बाबू जी यहाँ आये थे ? (५) चलो, मैं अभी आता हूँ । (६) मुझमें इतनी अक्ल कहाँ ? (७) क्षमा कीजिए, फिर ऐसा नहीं करूँगा । (८) तुम्हारे जैसे बहुतेरे देखे हैं । (९) वह इधर से आया और उधर चला गया । (१०) आपके बिना यह काम नहीं बनेगा ।

षष्ठोऽध्यायः

*निबन्धरत्नमाला

१—अस्माकं राष्ट्रपतिः

(श्रीमन्तो देशरत्नराजेन्द्रप्रसादाः)

"विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ
प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥"

श्लोकेऽस्मिन् वर्णिताः समस्ता एव गुणा एकत्र देशरत्नराजेन्द्रप्रसाद-महानुभावेषु विद्यन्ते । ते खलु महानुभावा बाल्यात् प्रभृति प्रखरबुद्धिसमन्विता जनसेवानिरताः क्षमाशीला नम्रस्वभावा गम्भीराश्च सन्ति । तेषां खलु कृषकवत् सरलस्वभावः । अतः कृषकबहुलेऽस्मिन् देशे तेषां राष्ट्रपतिपद-सन्निवेशः समुचित एव । तत्रभवन्तो डाक्टरोपाधिभूषिता धीरा वीराः कर्मठाः त्यागमूर्तयो राजेन्द्रप्रसादा भारतीयविधानपरिषदा राष्ट्रपतिरूपेण निर्वाचिताः । इमे महाभागाः सर्वथा तत्स्थानायोपयुक्ताः । इमे महाभागा जन्मना

*आद्याः सरलातिसरलाः पञ्च निबन्धा मुख्यतो हाईस्कूलपरीक्षार्थिनां कृते सन्निवेशिताः ।

विहारभूमिम् अलङ्कुर्वन्ति, परमिदानीं भारतस्य राजनगर्यां नवदिल्ली-नामिकायां निवसन्ति। इमे खलु भारतीय संस्कृते हिन्दी भाषायाश्च समुपासकाः सन्ति। अतएव इमे महानुभावा देशवासिनां परमादरभाजनं सन्ति।

२— ऋतुराजो वसन्तः

वसन्तः ऋतूनां राजा कथ्यते। चैत्रवैसाखोपेतः ऋतुराजः समशीतोष्णकालो भवति तदा न करालशिशिरस्य शैत्यं न चापि प्रचण्डस्य ग्रीष्मस्यौष्ण्यम्। अतः कालोऽयमतीव समीचीनः प्रतिभाति। वसन्ते सौन्दर्यस्याभिनवं साम्राज्यं समुल्लसति। सर्वे प्राणिनः सुखमनुभवन्ति। तदा उद्यानेषु पुष्पाणां शोभा, फलानां समृद्धिः क्षेत्रेषु च शस्यसम्पत्तिः दरीदृश्यते। निर्मलासु चैत्रनिशासु नक्षत्राणां प्रोज्ज्वलप्रकाशोऽतीव विमुग्धकारी प्रतीयते। तडागानां सरितां च सुषमापि दर्शनीया। सर्वत्र सलिलमतीव प्रसन्नम्, कमलानि च विकसितानि प्रतिभान्ति। यत्र तत्र विहगानां सुमनोहरो विरावः। मन्दं मन्दं प्रवहमाणस्य पवनस्य सञ्चरणम्। सर्वत्रैव हरीतिम्नः साम्राज्यम्। सचेतसः कस्येदं न नयनानन्दकारि दृश्यम्।

३—देशाटनम्

देशाटनेन बहवो लाभा भवन्ति। नानादेशजल-वायु-प्रभावेणास्माकं स्वास्थ्यलाभो भवति। विदेशीयकला-कौशलज्ञानेन वयं स्वदेशमपि कला-कौशलसम्पन्नं कुर्मः। उन्नतदेशस्य नागरिकाः प्रायो भ्रमणप्रिया भवन्ति। ब्रिटिशशासनकाले शासका अत्र देशाटनं प्रति भारतीयानाभिरुचिं न प्रोत्सहन्तेस्म। भारतीयाश्च प्रेरणां विना न किमपि कुर्वन्तीति सर्वविदितम्। परमधुना वयं स्वतन्त्रदेशस्य नागरिकाः स्मः, अतः शासकानामेतदपि कर्त्तव्यं भवति यत्ते भारतीयानां देशाटनं प्रत्यभिरुचिं वर्धन्ताम्। अधुना बहवो भारतीया श्छात्रा अमरीका-इंगलैंड-जापानादिदेशेषु विविधविषयककला-कौशलज्ञानार्जनाय गताः सन्ति। स्वदेशमागत्य ते स्वोपार्जितज्ञानेन स्वदेशमवश्यमेवोन्नतं करिष्यन्तीति जानीमः।

४—उद्यानम्

इदमाम्रोद्यानम्। अत्राम्रस्य वृक्षाः सन्ति, येषु विकसिता मञ्जर्यः सन्ति। वसन्ते मञ्जर्यः फुल्लन्ति, मञ्जरीणां गन्धः मनोहरो जायते। आम्यो

मञ्जरीभ्यः फलान्युद्भवन्ति । पक्वानि चाम्रफलानि मधुराणि भवन्ति । गन्धेन मुग्धा भ्रमरा उपवनमायान्ति, मञ्जरीणामुपरि भ्राम्यन्ति गुञ्जन्ति च । मधुकरा मधु पिबन्ति ।

मधूकस्य वृक्षोऽपि विद्यतेऽत्र । वसन्तसमयेऽस्मिन्नपि पीतानि पुष्पाणि विकसन्ति । अस्य शाखायाम् कोकिलास्तिष्ठन्ति । ते मधुरेण स्वरेण कूजन्ति । पाटलकुसुमानि चापि सन्त्यत्र । पाटलवृक्षेषु कण्टका भवन्ति, परन्तु प्रसूनानि तेषामतीव सुन्दराणि भवन्ति ।

५---जन्तुशाला

जन्तुशालायां बहवो जन्तवो विद्यन्ते । तत्र विचित्रा विचित्राः पक्षिणः, सर्पाः, पशवश्च सन्ति । तत्र खरनखस्य करालदंष्ट्रस्य सिंहस्य गर्जनं भयमुत्पादयति दर्शकानाम् । स सर्वेषु चतुष्पदेषु बलवत्तमः, अत एव वनराज इति कथ्यते । तत्र गजोऽपि पशुषु विशालतमो विद्यते । गजस्य द्वौ दीर्घौ दन्तौ स्तः, अत एव गजा दन्तिनः कथ्यन्ते । तत्र पारसीकाः काम्बोजा विविधाः प्रकारा अश्वा आसन् । केचन घोटका रथहारकाः केचन चाश्व-भारहारका आसन् । गावो वृषभादयश्चापि तत्रासन् । कपिला गावः, कृष्णा गावः । दृढाः पुष्टाङ्गा धौरेयाश्च वृषभाः सन्ति, ये खलु हलकर्षणे समर्थाः, भारवहने शक्ताश्च । वानरस्य वृत्तान्तमतीव विचित्रम् । एको मर्कट-स्तत्र बहुप्रकारा क्रीडाः प्रदर्शितवान् । अन्येच बहवः रक्तमुखाः, कृष्णमुखा लाङ्गूलिनः वन्यमानुषाश्च तत्रासन् । पक्षिणस्तु तत्र इयन्तः सन्ति येषां गणनामपि कर्तुं न पार्यते । बहुविधाः शुकास्तत्रासन् ।

६---सत्यम् (सत्यमेव जयते नानृतम्)

अथ विचार्यते तावत् किंनाम सत्यम् । सते (मङ्गलाय) हितं सत्यं भवति, यत् लोकहिताय भवति तत् सत्यम् । यद् वस्तु यथा वर्तते तस्य तथैव कथनं, लेखनं, प्रकाशनं वा सत्यमित्युच्यते । विधात्रा अस्मभ्यं जिह्वा सदुप-योगायैव दत्ता, तस्याश्च सदुपयोगः सत्यभाषणेनैव क्रियते । अत एवोच्यते—

"अश्वमेधसहस्रं च सत्यं च तुलया धृतम् ।
अश्वमेध-सहस्राद् हि सत्यमेव विशिष्यते ॥"

यादृक् सत्यस्य महत्त्वं न तादृग् अन्यस्य कस्यापि वस्तुनः । सत्येनैव

अस्माकं स्थितिः, समाजस्य स्थितिः संसारस्य च स्थितिः वर्तते । सत्यस्यैव महिम्ना मानवाः समाजेऽन्यमानवानां विश्वासं कुर्वन्ति । यदि सर्वेऽपि जना असत्यवादिनः स्युस्तदा न कोऽपि कस्यापि विश्वासं कुर्यात, लोकस्य च स्थितिः क्षणमपि भवितु नार्हति ।

सत्यभाषणेन निर्भीका भवामः । सत्यभाषणेन चास्माकं यशः प्रतिष्ठा गौरवं च वर्धते । सत्यव्रतो न कस्मिंश्चिदपि पापे प्रवर्त्तते । स तु 'यद्यहमसत्यं वदिष्यामि तदा सर्वेषां दृष्टिषु हीनो भविष्यामीति' विचार्य सर्वेभ्यः पापेभ्यः विरमति ।

महाराजो दशरथः सत्यस्य पालनार्थैव प्राणेभ्योऽपि प्रियं पुत्रं रामं वनं प्रेषयति स्म । युधिष्ठिरः सत्यकथनप्रभावेणैव विजयं लभते स्म । महाराजो हरिश्चन्द्रः सत्यस्य पालनायैव विविधानि दुःखानि सहते स्म । महात्मागान्धि-महोदयः सत्यस्य पालनार्थमेव प्राणानत्यजत् । तस्य सिद्धान्त आसीत्--"नहि सत्यात्परो धर्मो नानृतात् पातकं महत् ।" अत एवास्माकं राष्ट्रचिह्नेऽपि 'सत्यमेव जयते' इत्युल्लिखितम् ।

सत्यस्य प्रतिष्ठायैव लोक-कल्याणस्य, उन्नतेरभ्युदयस्य च सम्भवः । अत एवोच्यते 'सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्' । यः सत्यमाश्रयति तस्य जीवनं सफलम्; यश्चासत्यं भजते स महापातकं करोति, तत्प्रभावेण तस्य नाशश्च भवति । असत्यभाषणेन समाजस्य, देशस्य, संसारस्य च नाशो जायते ।

७--विद्याविहीनः पशुः

विद्याविरहितस्य मानवस्य जीवनं व्यर्थमेव । यतः स न किमपि कर्तुं प्रभवति, जनैस्तस्य निरादरः क्रियते, उपहस्यते च सः । स तु धराया भारभूत एव ।

"विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्" इति यदुक्तं तत्सत्यमेव । विद्याधनस्य विशेषता वर्तते यत् सर्वं धनं व्ययात् क्षयमाप्नोति, परन्तु विपरीतमस्मात् विद्याधनं सञ्चयात् नाशमायाति व्ययाच्च वृद्धिं गच्छति । कुबेरस्यापि असंख्यः कोशो व्ययात् कस्मिंश्चिद् दिने निश्चितमेव रिक्तो भविष्यति, परन्तु अहो विद्याधनस्य वैचित्र्यं यदिदं मुहुर्मुहुर्व्ययमापन्नमपि नैव क्षयं गच्छति ।

ज्ञानार्थकस्य विद्-धातोः विद्याशब्दः । कस्यचिदपि पदार्थस्य सम्यक्

ज्ञानं विद्येति कथ्यते । विद्यया वयं स्वकीयं कर्त्तव्यं जानीमः । विद्ययैव धर्म-ज्ञानं भवति । कर्त्तव्याकर्त्तव्ययोः पापपुण्ययोश्च ज्ञामपि विद्ययैव भवति । यो मानवो विचाररहितोऽस्ति स कर्त्तव्याकर्त्तव्ययोरज्ञानात् पशुवद् आचरति । अतः 'विद्याविहीनः पशुः' इति कथ्यते ।

विद्ययैव मानवः सर्वत्र प्रतिष्ठामाप्नोति। नृपतयोऽपि विदुषः पुरस्तात् नतशिरसो भवन्ति । विद्या मानवस्य दिक्षु कीर्तिं विस्तारयति ।अधुनापि सर-राधाकृष्णन्-रवीन्द्रवेङ्कटेशरमणप्रभृतयः विद्ययैव जगत्प्रसिद्धाः पुरुषा जाताः। विद्यायाः प्रभावेणैव कालिदासभवभूतिबाणहर्षप्रभृतयः कवयो जगति ख्यातिं गताः ।

विद्या मानवस्य सदा बन्धुवत् साहाय्यं करोति । विविधेन प्रकारेण तस्य उपकारं करोति। सा मानवं मातेव रक्षति, पितेव हितकार्ये नियोजयति, राजसभायां विद्वानेव समादरः प्रतिष्ठां चाप्नोति ।विद्याधनमेव श्रेष्ठधनमस्ति। विद्यां न कश्चित् चोरयितुं समर्थः, नकश्चित् वण्टयितुं शक्तः । विद्या कुरूपस्य रूपम् । सा निम्नपदस्थमपि पुरुषं उन्नतपदे स्थापयति। अतो विद्यासदृशं नान्यत् धनमस्ति संसारे ।

चतुर्वर्गफलप्राप्तिरपि सुखाद् विद्ययैव संभवति। विद्याया विनयो जायते, विनयेन मानवः योग्यतां गच्छति, योग्यतया धनं प्राप्नोति । धनेन दानं ददाति, दानात् पुण्यमर्जयति । पुण्येन स धर्मस्य संचयं करोति । धनेनैव काम-स्यापि प्राप्तिर्भवति । धनेन मानवः अभ्रंलिहं प्रासादं निर्माति, नानास्वादजन-कानि भोजनानि भुङ्क्ते, बहुमूल्यवस्त्राणि परिधत्ते। अनेन प्रकारेण मानवः तृतीयवर्गस्य कामस्यार्जनं करोति । विद्यया मानवः आत्मपरमात्मनोरभेदं पश्यति । "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" इति श्रुत्यापि प्रतिपादितम् । अनेन विधिना मानवः स्वजीवनस्य समग्रं फलं चतुर्वर्गाख्यरूपं विद्ययैव प्राप्नोति । अत एवोक्तम्——

"मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते कान्तेव चाभिरमयत्यनीय खेदम् ।
लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या।।"

८—— आचारः परमो धर्मः (सदाचारः)

सताम् (सज्जनानाम्) आचारः सदाचारो भवति । सत्पुरुषाः स्वकीया-

नीन्द्रियाणि वशीकृत्य मानवैः सह शिष्टतापूर्वकं व्यवहरन्ति। ते सत्यं वदन्ति, गुरुजनानां वृद्धानां च आदरं कुर्वन्ति, तेषामाज्ञां सदा पालयन्ति, सदा सत्कार्ये एव च ते प्रवृत्ता भवन्ति। मानवः तद्वदाचरणेन सदाचारी, विनीतः, बुद्धिमान् च जायते।

आहारनिद्रादयोः भावाः पशौ मानवे च समानाः। अस्ति खलु कश्चिद् विशिष्टो भावो यो हि मानवं पशोर्विशिनष्टि। सोऽयं धर्म एव। येन मानवो ध्रियते, यो मानवं धरति स धर्मः। धर्मो हि दशाङ्गः मनुस्मृतौ वर्णितः—

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥"

दशाङ्गेन धर्मेण सम्पन्न एव मानवः 'मानव' इति शक्यते वक्तुम्। धर्माचरणेन च शुद्धं जायतेऽन्तःकरणम्। धर्म एव जगतः प्रतिष्ठा, धार्मिक एव सर्वेषां पूज्यः, धर्म एव सर्वेषां पापानां निवारकः, सर्वं चेदं धर्मे प्रतिष्ठितम्। यथाहुस्तैत्तिरीयाः—"धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा, लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति धर्मेण पापमपनुदन्ति, धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद् धर्मं परमं वदन्ति।" धर्माचरणमेव पुंसो वास्तविकं परमात्मपूजनं येन सर्वा सांसारिकी व्यवस्था पुरुषस्य वैयक्तिकं जीवनं च सर्वोच्चतरं भवितुमर्हति।

मानवजन्मैवास्ति सर्वोत्तमः अवसरः, यत्र समस्तमपि कल्याणमभ्युदयो निःश्रेयसं वा साधयितुं शक्यते; मनुष्यः कर्मणि स्वतन्त्रः शुभाशुभं वा यथेच्छं कर्त्तुं पारयति। तत्रायं धर्माचरणेन अभ्युदयं निःश्रेयसं वा अधिगन्तुं क्षमते अन्यथा च नीचान्नीचतरं जडभावमपि प्रयाति। सर्वशास्त्रेषु च मूलभूतो वेदः, स एव विस्तरेण मानवकर्त्तव्यमाचरणीयं सर्वतोभावेन शिक्षयति।

मनुष्यो हि सामाजिकः प्राणी, समाजाश्रितं च तस्य जीवनम्। सदाचरणेनैव जनस्य, समाजस्य, देशस्य च उन्नतिर्भवति। सदाचरणेन मानवा ब्रह्मचारिणो भवन्ति, सदाचरणेन तेषां बुद्धिः वर्धते, सदाचरणेन शरीरं परिपुष्टं भवति। सदाचारिणो बुद्धिः विशुद्धा भवति, स पापानि न चिन्तयति। स सदैव लोकस्य, देशस्य वा हितचिन्तने प्रवृत्तो भवति। सदाचारिणः सर्वत्रैव आदरं लभन्ते।

९---सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम् (सन्तोषः)

अस्मिन् जगति सर्वे जनाः सुखमिच्छन्ति। परं सन्तुष्ट एव सुखी नेतरः। "सन्तोषमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः" इति मनोः स्मरणात्। सुखं शान्तिश्च तदैव सम्भाव्यते यदा वयं संन्तुष्टा भावामः। यत्किञ्चिदपि स्वकीयेन परिश्रमेण प्राप्नुमः यदि तस्मिन्नेव सुखानुभवं कुर्मस्तदा वयं सन्तुष्टाः। ये खलु असन्तुष्टाः सन्ति ते धनलाभेऽपि अधिकं धनं प्राप्तुमिच्छन्ति इतस्ततो भ्रमन्ति, न कदापि सुखमनुभवन्ति। एवं तेषां जीवनं दुःखमयं शान्तिहीनं च भवति। उक्तं च---

सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्॥

संसारे न हि कश्चित् परमबुद्धिमानस्ति, वीरः, पराक्रमी अपि वर्तमानं सर्वं धनं प्राप्तुं समर्थः। अधिकाधिकं सुखोपकरणं वाञ्छन् न कश्चित् परमार्थतः सुखी भवति। सन्तोषस्य सद्भावेनैव ऋषयो मुनयश्च जगद्वन्द्या जाताः। सन्तोष एव सुखमस्ति न चासन्तोषे।

सन्तोषस्य नायमर्थः कदापि यत् मानवः सर्वं कर्म त्यजेत्; सन्तोषस्य तु अयमेवार्थः यत् यत्किञ्चिद्वस्तु श्रमेण प्राप्नुयाम तत्रैव सन्तोषं कुर्याम। अनुचितप्रकारेण धनस्यार्जने प्रयत्नो न विधेयः। धनस्यार्थे निजं स्वास्थ्यं न विनाशयेम न च सर्वेषामप्रिया भवेम। सुखार्थं शान्त्यर्थं च धनं भवति। धनं तावत् अस्माकं कृते अस्ति, न वयं धनार्थे स्मः। अतोऽस्माभिः सुखशान्तिप्राप्त्यर्थं सन्तोष उपादेयः। सन्तोषे हि महती श्रीरस्ति। तथाहि---

सर्पाः पिबन्ति पवनं न च दुर्बलास्ते,
शुष्कैस्तृणैर्वनगजा बलिनो भवन्ति।
कन्दैः फलैर्मुनिवरा गमयन्ति कालं,
सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम्॥

१०---परोपकाराय सतां विभूतयः (परोपकारः)

परेषाम् (अन्येषाम्) उपकारः परोपकारो वर्तते। अन्यप्राणिनां हितसम्पादनार्थं यत्किञ्चित् दीयते तेषां सहायता वा क्रियते तत् सर्वं परोपकारपदेन व्यवह्रियते। शास्त्रेषु परोपकारस्य बहु महत्त्वं वर्णितमस्ति।

परोपकारेण संसारस्य कल्याणं जायते ; मानवानां शान्तिः सुखं च वर्धते। परोपकारः सर्वेषामुपदेशानां सारो विद्यते। उक्तं च—

अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

परोपकारः स गुणः येन मानवेषु प्राणिषु वा सुखं वर्धते। एतत् परोपकारगुणस्य माहात्म्यं यत् मानवेषु समाजसेवाया भावना, देशभक्ति-भावना, दीनोद्धरणभावना सहानुभूतिगुणोदयः वर्तते। यः खलु परोपकारं करोति तस्य मानसं पवित्रं, विनयोपेतं, सदयं, सरसं च जायते। परोपकारिणः अन्येषां कष्टं स्वकीयं कष्टं मत्वा तन्नाशाय चेष्टन्ते। ते खलु बुभुक्षितेभ्योऽन्नम् पिपासितेभ्यो जलम्, वस्त्रहीनेभ्यो वस्त्रम्, निर्धनेभ्यो धनम्, अशिक्षितेभ्यश्च शिक्षां ददति। सत्पुरुषाः स्वकीयं दुःखं विस्मृत्य परोपकारकरणे प्रसन्ना भवन्ति। तथा हि—

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन दानेन पाणिर्नतु कङ्कणेन।
विभाति कायः खलु सज्जानानां परोपकारेण न चन्दनेन॥

न केवलं मानवेष्वेव परोपकार-भावना वर्तते, देवेषु पशुपक्षिवृक्षादिष्वपि च विद्यते। दृश्यतां केन स्वार्थेन रात्रिदिवं पवनो वाति, किं निमित्तं भगवान् भास्करःसततं प्रकाशते, किं कारणं निशानाथश्चन्द्रो नैशमन्धकारमपनयति? न हि गावो महिष्यश्च स्वार्थाय अमृतोपमं दुग्धं ददति। परोपकारनिरता वृक्षा ओषध्यश्च प्रत्यहं छायाप्रदानेन नीरोगताकरणेन च स्वपोकारिणमप्युपकुर्वन्ति।

परोपकारभावनयैव महाराजः शिविः कपोतस्य रक्षार्थं स्वहस्ताभ्यां नैजं मांसमुत्कृत्योत्कृत्य श्येनाय प्रायच्छत्। जीमूतवाहनो भूपतिः सर्पं त्रातुं स्वदेहं गरुत्मते समार्पयत्। महाराजो दधीचिः सुराणां हिताय स्वकीयानि अस्थीनि प्रादात्। वर्तमानसमयेऽपि मदनमोहनमालवीय-बालगङ्गाधरतिलक-गान्धिप्रभृतयः देशसेवायै कष्टानि अनुभवन्तिस्म प्राणांश्च प्रादुः। अतोऽस्माभिरपि सर्वदा परोपकारो विधेयः। उक्तं च—

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः, स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
धाराधरो वर्षति नात्महेतोः परोपकाराय सतां विभूतयः॥

११—सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम् (सत्सङ्गतिः)

सतां (सज्जनानां) सङ्गतिः सत्सङ्गतिरुच्यते। सज्जनानां सङ्गत्या मानवः सज्जनो विनीतः शिष्टश्च भवति, असज्जनानां च सङ्गत्या मानवः दुर्जनो भवति; तस्याधः पतनं च निश्चितमेव। मानवः यादृशानां पुरुषाणां सङ्गतिं करोति स तादृश एव भवति। मानवस्योपरि सङ्गत्याः प्रबलः प्रभावो भवति, यतः स यादृशैः जनैः सह उपविशति, खादति, पिबति, निवसति च स तादृशं स्वभावं धारयति। तथोच्यते—"संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति।"

सत्सङ्गत्या मानवः उन्नतिपदं प्राप्नोति। सत्सङ्गत्या मानवस्य प्रतिष्ठा कीर्तिश्च वर्धते। अत एवोच्यते—

"सद्भिरेव सहासीत सद्भिः कुर्वीत सङ्गतिम्।
सद्भिर्विवादं मैत्रीं च नासद्भिः किञ्चिदाचरेत्॥"

मानवस्योपरि सङ्गत्याः प्रबलः प्रभावो भवति। बालकस्य कोमलं शरीरम् अपरिपक्वं च मस्तिष्कं भवति। स यादृशैः बालकैः सह पठिष्यति, क्रीडिष्यति, गमिष्यति तादृश एव भविष्यति। दुष्टबालानां संसर्गेण अनेका हानयः भवन्ति। तेषां सङ्गतिः बालकैः कदापि न करणीया। दुर्जनसंसर्गेण मानवः असद्वृत्तः दुर्विचारवान् च भवति, तस्य बुद्धिर्दूषिता भवति। दूषितबुद्धिर्मानवः दुर्व्यसनग्रस्तः क्षीणशरीरश्च भवति। तस्य यशो नश्यति सर्वत्रानादरश्च भवति। अतः विद्यायशोबलसुखवृद्धये सत्सङ्गतिः कर्तव्या, दुर्जनसंसर्गश्च हेयः। अतः साधूक्तं कविना—

"पापान्निवारयति योजयते हितायं,
गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटीकरोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले,
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।"

१२—उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः (उद्योगः)

संसारे परमेश्वरः समस्तमपि भूतजातम् उद्योगनिरतं निर्मितवान्। या हि पृथ्वी चक्रवत् भ्रमति वसंतादीन् ऋतून् च चालयति। सूर्यो द्वादश-

राशिषु भ्रमन् अखिलं जगत् प्रकाशयति, वायुः सर्वेषां जीवनं रक्षति, जलं नदीनदादिरूपेण विविधानि कार्याणि करोति। अतः सत्यमेतत् यत् भूतजातं स्वभावत एव उद्योगनिरतं वर्तते।

सर्वे एव मानवाः सुखमिच्छन्ति। तत् हि पुरुषार्थेन उद्योगेन वा विना नैव सिद्धयति। उद्योगेनैव मानवः संसारे विद्यां धनं प्रतिष्ठां वा लभते। उद्योगेन विना न कोऽपि सुखं प्राप्नोति। उक्तं च——

उद्योगेन च सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः॥
न दैवमिति संचिन्त्य त्यजेदुद्योगमात्मनः।
अनुद्योगेन तैलानि तिलेभ्यो नाप्तुमर्हति॥

अनुद्योगं आलस्यं वा मानवस्य प्रबलः शत्रुः, स खलु सदैव दुःखस्य कारणम्। तथा हि——

"आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः॥
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः यं कृत्वा नावसीदति॥"

अतोऽस्माभिः सदा उद्योगपरायणैर्भाव्यम्। परमेश्वरेण अस्माकं हस्ते उद्योगः समर्पितः, दैवं तेन स्वायत्तीकृतम्। उद्योगमाश्रित्य मर्यादापुरुषोत्तमेन भगवता रामचन्द्रेण सुग्रीवः सुहृत् कृतः लङ्कामुपेत्य सह लक्ष्मणेन रावणं हत्वा सीता समासादिता। उद्योगबलेनैव पाण्डवा नष्टमपि राज्यम् उपलब्धवन्तः। उद्योगेनैव निर्धना धनिनो भवन्ति, निर्बलाः सबला भवन्ति, अज्ञानिनो ज्ञानवन्तो भवन्ति। उद्योगेनैव महाकविः कालिदासः कविकुलचूडामणिः बभूव, आदिकविर्वाल्मीकिः कविवरः सञ्जातः। उद्योगेनैव सर्वं सिद्धयति। अनुद्योगेन मानवः भाग्यनिर्भरतया दुःखमाप्नोति। अतोऽस्माभिः सदा उद्योगः करणीयः। उक्तं च——

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः॥

१३——जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी

"अस्ति यद्यपि सर्वत्र नीरं नीरजराजितम्
रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना॥"

माता, मातृभूमिश्च द्वे एवैते संसारे श्रेष्ठे। बालकं प्रति मातुः स्वाभाविकं प्रेम भवति। बालकस्य कृते सा सर्वमपि वस्तुजातं त्यक्तुं शक्नोति। तस्याः सदैव एषा इच्छा यन्मम बालकः सदा सुखी, गुणवान् विद्वान् च भवतु। बालकस्य कृते सा निजं कष्टं नैव चिन्तयति, सा सदा तस्य सुखचिन्तामेव करोति। अतः पुत्रस्यापि मातुरुपरि असाधारणं प्रेम स्वाभाविकमेव वर्तते। स बाल्यादेव मातरमेव सर्वाधिकं मन्यते। यथा माता बालकं स्वसर्वस्वं मन्यते तथैव पुत्रोऽपि मातरं स्वसर्वस्वं मन्यते। मानवः कदाचिदपि मातुरनृणतां गन्तुं न समर्थः।

यत्र मानवः जन्म लभते सैव तस्य जन्मभूमिः। सा मानवस्य सर्वदैव आदरस्य पात्रं जायते। मानवः देशे विदेशे वा महान्तमादरं सम्मानं वा प्राप्नोतु, किन्तु जन्मभूमिं सदा स्मरत्येव, स्वदेश-दर्शनलालसा तस्य हृदये वर्तत एव। भारतवर्षमस्माकं देशः। स्वदेशं-प्रति अस्माकं हृदये सम्मानः, आदरश्च स्वाभाविक एव। सर्वे देशा अद्यत्वे संसारे स्वदेशस्योन्नत्यै संलग्ना दृश्यन्ते। अतः स्वदेशोन्नयनम् अस्माकमपि कर्त्तव्यम् अस्ति। अद्यास्माकं देशः स्वाधीनोऽस्ति। तस्य उन्नतिः, रक्षा च अस्माकं परमकर्त्तव्यमस्ति।

देशं प्रति भक्तिभावना देशोन्नत्याः मूलकारणम् अस्ति। देशभक्तिभावनयैव मानवो देशोन्नयनाय चेष्टते; समाजोद्धारस्य प्रयत्नं करोति, देशस्य दारिद्र्यं दूरीकरोति, अशिक्षितान् शिक्षयति, स्वदेशीयव्यापारस्योन्नतिं करोति, मातृभूमिरक्षणाय च स्वप्राणान् त्यक्तुमपि सन्नद्धो भवति। ये हि स्वार्थसिद्ध्यर्थं देशस्योपकुर्वाणा इव दृश्यन्ते ते हि मिथ्या भक्ता एव ज्ञातव्याः। अतो देशभक्तिभावना हि भव्या। अस्माकं देशे पौरुषस्य, प्रतापस्य, झांसीराज्ञ्याश्च वृत्तान्ता अस्मान् विचलयितुमुत्साहयितुं च शक्नुवन्ति। ते खलु अस्माकं पथप्रदर्शनायालम्।

१४—संस्कृतभाषाया महत्त्वम्

व्याकरणसम्बन्धिदोषादिरहिता व्यवस्थित-क्रियाकारक-विभागसमन्विता या भाषा सा संस्कृतभाषेति कथ्यते। इयं भाषा सर्वविधदोषशून्या अस्ति, अतः देववाणी, गीर्वाणभारती, अमरभाषा इत्यादिभिः शब्दैः संबोध्यते। भाषागतमुदारत्वं, मार्दवं मनोज्ञत्वं चास्याः वैशिष्ठ्यं वर्तते।

सेयं संस्कृतभाषा संसारस्य सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा, सर्वोत्कृष्ट-

साहित्यसंयुक्ता च वर्तते । अनन्तानन्तवर्षेषु व्यपगतेष्वपि अस्या माधुर्यम्, उदारत्वं च नाद्यापि विकृतम् । पाश्चात्यदेशीया विचारशीला मैकडानाल्ड-कीलहार्न-मक्समूलरकीथादयः संस्कृतभाषायाः प्रशंसामकुर्वन् । सर्वासामार्य-भाषाणामुत्पत्तिः अस्या एव बभूव । पुरा सर्वेजनाः संस्कृतभाषयैवाभाषन्त । अतः सर्वमपि प्रचीनसाहित्यं संस्कृतभाषायामेव उपलभ्यते । सर्वप्राचीन-ग्रन्थाः चत्वारो वेदाः संस्कृतभाषायामेव सन्ति । वेदेषु ज्ञानवकर्तव्याकर्त्तव्ययोः सम्यक् निर्धारणमस्ति । ततो वेदानां व्याख्यानभूता ब्राह्मणग्रन्था वर्तन्ते । तत्पश्चात् अध्यात्मविषयप्रतिपादिका उपनिषदो विद्यन्ते, यासां गरिमा पाश्चात्यबहुज्ञैरपि गीयते । ततोऽस्माकं गौरवग्रन्थाः षड्दर्शनानि सन्ति । एषामद्यापि संसारसाहित्ये महत्त्वम् वर्तते । ततः श्रौतसूत्राणां, गृह्यसूत्राणां वेदस्य व्याख्यानभूतानां षडङ्गानां गणनास्ति । महर्षिवाल्मीकिरचितस्य रामायणस्य, महर्षिव्यासरचितस्य महाभारतस्य निर्माणमपूर्वघटनैव वर्तते संसारसाहित्ये । तत्र दुर्लभस्य कवित्वस्य, नैसर्गिकसौदर्न्यस्य, अध्यात्मज्ञानस्य नीतिशास्त्रस्य च दर्शनं जायते । ततोऽश्वघोषकालिदास-भास-भवभूति-दण्डि-बाण-सुबन्धु -हर्षप्रभृतयो महाकवयो नाटचकाराश्च समायान्ति, येषामुदयेन न केवलमार्यावर्तः अपितु समस्तमेतत् जगत् धन्यमात्मानं मन्यते । कवि-वराणामेतेषां वर्णने विद्वांसोऽपि न क्षमाः । श्रीमद्भगवद्गीता, स्मृतिग्रन्थाः पुराणानि च संस्कृतसाहित्यस्य माहात्म्यं प्रकटयन्ति ।

संस्कृतसाहित्यं भारतस्य गौरवमुद्घोषयन्ति । तत् समस्तं देशं च एकस्मिन् सूत्रे बध्नाति । अस्य साहित्यस्य प्रचारः प्रसारश्च विधेयः साहित्यहीनस्तु पशुरिव भवति, यतः--

"साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः ।"

१५--कः परः प्रियवादिनाम् (प्रियवादी)

संसारेऽस्मिन् कठोरभाषणतया शत्रुता वर्धते ; प्रियभाषणेन च परकीया अपि जनाः स्वकीया भवन्ति । इदं हि वशीकरणम् अमन्त्रतन्त्रं वर्तते । परं किमस्ति कोऽपि जगति तादृशः पुण्यशाली यस्य सर्वे मित्राण्येव स्युः, येन सर्वे सहानुभूतिमेव कुर्युः, यं च सर्वे प्रशंसेयुरेव? उच्यते आम्, अस्ति तादृशो-ऽपि । यतो हि विचित्रेऽस्मिन् संसारे नास्ति किमपि दुर्लभम् ।"प्रियवादी"

एव जनस्तादृशोऽस्ति यः निजवचनामृतेन सर्वेषामपि प्रीतिभाजनं भवति, यः सर्वदा प्रफुल्लवदन प्रसन्नमनाः अखिलानन्दसाधनं जायते ।

एतत् खलु विचारणीयं यत् यदि ज्ञानशून्यानां कोकिलप्रभृतीनामर्थहीना वाक् अस्माकं मनांसि वशीकरोति तदा उच्चैर्ज्ञानवतां प्रियभाषणशीलानां मनुष्याणामर्थवती मधुरा वाक् यदि तथा करोति तदा नैतद् आश्चर्यम् । प्रियवाणी खलु अमित्रानपि मित्राणि करोति, चिन्ताग्रस्तानां विषादं दूरीकरोति, अशान्तानाम् मनसि शान्तिं जनयति । अतो यत्परानपि सहसा स्वान् करोति, सर्वाणि कार्याणि साधयति तत् अमृतवत् स्वादु प्रियं वचनं प्रयोक्तव्यम् । सत्यमपि अप्रियं वचनं न कदापि प्रयोक्तव्यम् । उक्तं च—

"ब्रूतेऽप्रियं योऽत्र वचो विमूढधीर्न तद्वचः स्याद्विषमेव तद्वचः ।"

सर्व एव जानन्ति यत् कोकिलः काकश्च द्वावपि कालिम्ना तुल्यौ, एकस्यामेव शाखायां तिष्ठतः । यावद् वाचं नोच्चारयतः तावत्तयोः भेदो न ज्ञायते । परं वागुच्चारणसमकालमेव कोकिलस्तु सादरं सस्नेहञ्च ईक्ष्यते प्रशस्यते च, परं वराकः काकस्तु 'कां कां' शब्दं कर्तुमारब्ध एव प्रस्तरशकलैः ताडयत एव । प्रियभाषणे हि न कश्चिद् व्ययो भवति, नान्यत् कष्टं चापतति, प्रत्युत प्रियवचसः प्रयोगेण वशीभूता लोकास्तस्मै सहायतां ददति । प्रियवचनेऽपूर्वा आकर्षिणी शक्तिरस्ति । इत्थं प्रियभाषिणां नास्ति कोऽपि परः । अतोऽस्माभिः प्रियवादिभिर्भाव्यम् ।

१६—संघे शक्तिः कलौ युगे (एकता)

एकत्वभावनया यत् कार्यं क्रियते तत् "एकता" इति कथ्यते । एकतया मानवो बलवान् भवति । एकतया समाजः, राष्ट्रम्, संसारश्च उन्नतिपथमधिरोहति ।

अद्यत्वे संसारे एकताया अतीवाश्यकता वर्तते । यस्मिन् देशे अद्य एकताया अभावोऽस्ति स निजस्वातन्त्र्यं रक्षितुं नैव शक्नोति । अस्माकं देशोऽपि एकताया अभावात् चिरं पारतन्त्र्यपाशबद्ध आसीत् । परं यदा भारते एकत्वभावनाया जागर्तिरभवत् तदा तत् स्वातन्त्र्यमलभत । एकताया अद्भुत एव प्रभावः । तन्तुसमूहेन सुदृढः पटो जायते । जलबिन्दुसमूहेन महानदी सागरश्च भवति । क्षुद्राणि तृणानि यदा रज्जुरूपं धारयन्ति तदा महाबलवान् गजोऽपि तेन बध्यते । अत एवोच्यते—

अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका ।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः ॥"

संसारे आदिकालत एव एकताया माहात्म्यं वर्तते । श्रुतौ स्मृतौ च अनेकस्थलेषु एकताया महिमा वर्णितोऽस्ति । ऋग्वेदस्यान्तिमे सूक्ते एकताया महत्त्वं प्रतिपादितमस्ति। सर्वे मानवा एकत्वभावनया प्रेरिता भवेयुः । तेषां विचाराः, मनांसि, गमनं, भाषणं सङ्कल्पादचैकत्वभावनयैव युक्ताः स्युः । इत्थं जगति सुखस्य शान्तेश्च प्राप्तिः संभवति । तथा हि—

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् ॥
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन हविषा जुहोमि ।
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ॥
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

अत एतत्सत्यं वर्तते यत् यत्रैकता विद्यते तत्र सुखशान्तिसमृद्धयो जायन्ते; यत्रैकताया अभावो वर्तते तत्र हानिः विनाशश्च दृश्यते ।

१७—व्यायामः

व्यायामपुष्टगात्रस्य बुद्धिस्तेजो यशो बलम् ।
प्रवर्धन्ते मनुष्यस्य तस्माद् व्यायाममाचरेत् ॥

सर्वसम्मतोऽयं सिद्धान्तः यदस्माकं शरीरस्य प्रतिक्षणं क्षयो भवति, अतस्तस्य पूर्तिरपि परमापेक्षिता वर्तते । नियमत एव क्रियमाणो व्यायामः फलप्रदो भवति । यथा वयं शयनासनविहारादिषु नियमान् पालयामस्तथैव व्यायामेऽपि नियमस्य पालनं परमावश्यकं भवति ।

द्विप्रकारो व्यायामो भवति—शारीरो मानसश्च । भ्रमणधावनक्रीडनादिकं शारीरो व्यायामः । मनन-कल्पन-निदिध्यासनादिकं च मानसो व्यायामः कथ्यते । परमद्यत्वे व्यायामशब्देन प्रायेण शारीरिकश्रम एव ज्ञायते । स्वस्थे शरीरे मस्तिष्कस्यापि व्यापारः सम्यक् परिचलति । परं कालनियमेन रहितः कादाचित्को व्यायाम इष्टफलं न ददाति । व्यायामकरणेन शरीरस्य सर्वेषु भागेषु सम्यक्तया रक्तसंचारो जायते । मनसि स्फूर्तिरुदेति, रोगाः समीपं नायान्ति, जीवनमाह्लादमयं च जायते । व्याया-

मेन देहस्य सर्वावयवेषु कर्मण्यता, ऊर्जस्विता, सहिष्णुता चायाति। नियमयुक्तेन व्यायामेन उदरे परिपाकशक्तिर्वर्धते। पाचनशक्तिप्रभावेण मनोऽपि प्रसन्नं जायते। मनःप्रसादेन च समस्तान्यपि कार्याणि सिध्यन्ति। स्वस्थः स मानवो यो रोगशून्यगात्रः सदा प्रसन्नमुख उत्साहसम्पन्नश्च भवति।

इह संसारे यावन्तः सुप्रसिद्धा महापुरुषा जाताः, ते सर्वे व्यायामप्रिया आसन्। हिन्दुकुलदिवाकरः कीर्तनीयचरितः श्रीराणाप्रतापसिंहः, व्यायामस्य परमोपासक आसीत्। तन्महिम्नैव तस्य वक्षःस्थलं विशालं, बाहू पीनौ, कन्धरा च सुदृढा समजायत। तस्य नेत्रयोर्दुर्दर्श तेजो व्यायामेन समुत्पादितम्। महाराष्ट्रकेसरी श्रीशिववीरोऽपि व्यायामस्य बलेनैव स्वशरीरं स्फूर्तेः अदम्योत्साहस्य च केन्द्रमकरोत्। तस्य सर्वे सैनिका अश्वारोहणनिपुणा आसन्। व्यायामस्य अनेके प्रभेदाः सन्ति; केनापि सर्वाङ्गीणः श्रमो जायते, केनचिच्चावयवविशेष एव पुष्टो भवति। यथा वारितरणम् हाकीक्रिकेटादिक्रीडनं च। एषु मानवः स्वरुचिं चावश्यकतां च विचार्य एकतममाश्रयेत्। येऽधिकं व्यायामं कर्तुं न पारयन्ति ते केवलं भ्रमणमेव कुर्वन्तु। भ्रमणं हि सर्वोत्कृष्टो व्यायामोऽस्ति। अनेन मनोविकासः, शक्तिवृद्धिः, पाचनसामर्थ्यं च जायते। नगराद् बहिः शुद्धवायुसमन्विते क्षेत्रे धावनमपि छात्राणां कृते लाभप्रदं वर्तते।

१८—अस्माकं विद्यालयः

अस्माकं विद्यालयः समया नगरमेकस्मिन् सुरम्ये स्थले स्थितोऽस्ति। विद्यालयस्याकर्षकाणि अभ्रंकषाणि भवनानि दर्शकानां चेतांसि बलात् हरन्ति। अस्माकं विद्यालयः सुन्दरोद्यानमध्यगतोऽस्ति, यस्य विशालप्रधानद्वारस्योपरि दोधूयमाना पताका दूरादेव दृश्यते।

अस्माकं विद्यालयेऽध्यापकानां संख्या षष्टिः, तथा छात्राणां संख्या पञ्चाशदधिकं सहस्रं वर्तते। विद्यालयस्याध्यापकाः विविधविद्याप्रवीणाः शिक्षणकलानिपुणाश्च सन्ति। सर्व एव स्वस्वविषये पारङ्गताः सन्ति। तेषां मनोरमया शिक्षापद्धत्या आकृष्टाश्छात्रा घंटानादसमाप्तावपि बहिर्गन्तुं नोत्सुकाः। अस्माकं विद्यालये छात्रा अपि व्युत्पन्नधियः सन्ति। शिक्षाविषयेऽस्माकं विद्यालयः समस्तप्रदेशे ख्यातिं गतः,अतो दूरतोऽपि छात्रा अत्राध्य-

यनार्थमागच्छन्ति । अत्र पुस्तकानामेव पठनं पाठनञ्च न भवति, अपितु सदाचारस्य पाठोऽपि पाठ्यते; विनयस्यानुशासनस्यापि शिक्षणं भवति; देश-भक्तेः समाजसेवायाश्चापि शिक्षां छात्रा गृह्णन्ति । कर्त्तव्याकर्त्तव्ययोः सम्यग् ज्ञानमपि छात्राणामत्र भवति । प्रतियोगिता-परीक्षासु अस्मद्विद्यालयीया-श्छात्राः प्रदेशे सदैव विशिष्टं स्थानं प्राप्नुवन्ति । ते खलु न केवलं पठन एव निपुणतमाः सन्ति; अपितु क्रीडने, धावने, तरणे, भाषणप्रतियोगितासु चापि। देशसेवायां समाजसेवायामपि ते विशिष्टस्थानं लभन्ते ।

अस्मद्विद्यालये छात्राणां क्रीडनाय सुविस्तृतं क्रीडाक्षेत्रं विद्यते । अत्र सैनिकशिक्षाया अपि प्रबन्धो वर्तते । क्रीडनादिप्रतियोगितासु योग्यतमा-श्छात्राः पारितोषिकमपि प्राप्नुवन्ति । विविधभाषासु वाक्पाटवार्थं विविधाः परिषदो वर्तन्ते । विद्यार्थिनां स्वास्थ्यवृद्धयै व्यायामस्यापि प्रबन्धोऽस्ति । अत्र प्रायेण सर्वे छात्रा हृष्टपुष्टशरीराः विकसितवदना भद्रवेषाश्च सन्ति ।

अस्माकं विद्यालयः सर्वत्रैव स्वगुणानुरूपां ख्यातिं प्राप्तः । अस्माकमपि कर्त्तव्यमेतदस्ति यद् वयं अस्य कीर्तिं चतुर्दिक्षु विस्तारयितुं प्रयतेम ।

१९—ग्रामोत्सवः ।

अपदेशेन केनचिदपि प्रमुदितचेतसां ग्रामीणानामेकत्र सम्पातः ग्रामोत्सवो जायते । कदाचित् कस्याश्चिद् ग्रामाधिदेवताया गुणानुवर्णनाय, कदाचित् कस्यचिद् वीरप्रवरस्य यशःकीर्तनाय, कदाचित् कस्यचित्साधोः दर्शनायोपदेशलाभाय च, कदाचित् कस्यचिदपि महापुरुषस्य चरित्रश्रवणाय वा ग्रामीणा एकत्र सम्मिलन्ति । यथा यथा चायमुत्सवः समीपमागच्छति तथा तथा लोकानामौत्सक्यं वर्धतेतराम् । उत्सवदिने जना उज्ज्वल-वस्त्राणि परिधार्य विविधवस्तूनि क्रेतुं पर्याप्तं धनराशिमादाय स्त्रीभिः सह ते मोदमानाः प्रहृष्टाः गृहेभ्यः निष्क्रामन्त उच्चावचैराक्रन्दैः हृदयोल्लासं प्रकटयन्ति ।

उत्सवेऽस्मिन् आपूपिकाः मौदकिकाश्च अपूपान् मोदकान् अन्यानि च मिष्टान्नानि सम्पाद्य तेषां प्रदर्शनेन आगन्तुकान् प्रलोभयन्ति । येऽपि आपणिकाः लवणमयानि चणकचूर्णादीनि खाद्यान्नानि विक्रीणते तेषां पार्श्वेऽपि बहवो ग्रामीणाः क्रेतुं समायान्ति । इत्थं ग्रामोत्सवे चिन्तारहितानां ग्रामीणानां केवलं खादमोदोल्लासः हर्षोन्मादिता चैव प्रवर्तते ।

अत्रोत्सवे अनेकत्र बालमनोविनोदार्थं मण्डलपरिवर्तीनि प्रेङ्खणानि विद्यन्ते, येषु बालाः पौनःपुन्येनारुह्यापि न तृप्तिं गच्छन्ति। क्वचिदैन्द्रजालिकाः प्रेक्षकाणां कुतूहलमुत्पादयन्ति, क्वचिदाहितुण्डिक आश्चर्यंकरीः खेलाः प्रदर्श्य बहु धनमर्जति। क्वचित् स्वल्पसामुद्रिकज्ञानः सामुद्रिकः भविष्यत्पृच्छोत्सुकान् जनान् प्रतारयति। क्वचिद् द्यूतकारकाः ग्रामीणान् प्रतारयितुं द्यूतमाचरन्ति। अत्र दीव्यन्तो मूर्खा ग्रामीणाः चिरसंचितं प्रयत्नैरर्जितं स्वधनं क्षणेनैव हापयन्ति। सुरापायिनश्चापानमुपेत्य सुरां पीत्वा मत्ताः स्खलद्गतयो भूत्वा कथं कथमपि ग्रामाय प्रयान्ति।

इत्थमस्तं जिगमिषति भगवति सूर्ये मेलको भवति समाप्तः। प्रमुदितचेतसो जनाः त्वरया गृहान् प्रतियान्ति। गृहं गतास्ते मोदमानाः स्वानुभवानुकूलं परस्परं सम्भाषन्ते।

२०—दीपमाला।

दीपमालोत्सवोऽवश्यमेव पूर्वघटितघटनया सम्बद्धो वर्तते। श्रूयते यदस्मिन्नेव दिने भगवान् श्रीरामचन्द्रो जगद्रावणं रावणं हत्वा अयोध्यामाययौ। तदा रामदर्शनलोलुपैरयोध्यावासिभिः प्रहृष्टैः गृहा रथ्या राजमार्गाश्च परिमार्जिताः। तैः स्थाने स्थाने दीपकानि प्रज्वालितानि, विप्रेभ्यो याचकेभ्यो बालेभ्यश्च मिष्टान्नं वितीर्णम्।

अयमुत्सवः प्रतिवर्षं कार्तिककृष्णामावस्यायां महता समारोहेणानुष्ठीयते सहर्षम्। सर्वत्र प्रहृष्टैः जनैरविरलानि दीपकानि प्रज्वाल्यन्ते, अत एवास्योत्सवस्य दीपमालेति नाम ख्यातिं प्राप्तम्।

एवमप्यनुश्रूयते यदस्मिन्नेव दिने बलिना बन्दीकृता लक्ष्मीः भगवता वामनरूपमास्थाय मोचिता। अत एवास्मिन्दिने लक्ष्मीपूजनं क्रियते यत्ततो मुक्ता लक्ष्मीरस्माकं गृहमागच्छेत्। अस्मिन्नेव दिने जैनमतप्रवर्तकस्य अन्तिमतीर्थङ्करस्य भगवतो महावीरस्यापि निर्वाणं बभूव। अयमेव च आर्यसमाजप्रवर्तकस्य स्वामिनो दयानन्दस्य महाप्रयाणदिवसः।

अपरं च भारतं कृषिप्रधानो देशोऽस्ति। उपर्युक्तवृष्टेरुत्पन्नोऽन्नराशिर्गृहे समायातः, तं च दृष्ट्वा हृष्टाः कृषि-गोरक्षा-वाणिज्यकर्माणो वैश्या उत्सवं कुर्वन्ति। किं च यथा च शरत्पूर्णिमा विशिष्टा भवति प्रकाशेन सर्वासु रात्रिषु,तथैव कार्तिककृष्णामावस्या तिमिरेण विशिष्टा भवति।

चिराय पूर्वमेव जना उत्सवेऽस्मिन् संलग्ना जायन्ते । धनत्रयोदशी, नरकचतुर्दशी अप्येतस्योत्सवस्य द्वे अङ्गे। प्रथमदिने त्रयोदश्यां जनाः पात्राणि क्रीणन्ति । द्वितीयदिने नरकचतुर्दशी जायते । अस्मिन्दिने भगवता श्रीकृष्णेन नरकासुरो हतः । लोका अपि मलरूपधरं नरकं गृहान्निःसारयन्ति । रात्रौ यमप्रीत्यर्थं च दीपदानं क्रियते ।

अस्योत्सवस्य प्रधानो दिवसोऽमावस्या वर्तते । अस्मिन् दिने सर्वे प्रसन्ना दृश्यन्ते । सर्वे गृह-द्वार-रथ्या-शालामार्गान् संशोधितान् कुर्वन्ति । नरा नार्यश्च आत्मानं विभूषयन्ति, बालकानां मनांसि मोदकानि विविधानि च मिष्टान्नानि दृष्ट्वा प्रमुदितानि भवन्ति । पण्यवीथयः खलु नानापक्वान्न-द्रव्यैः समलङ्कृता भवन्ति । रात्रौ तु स्वर्गायते मर्त्यलोकः । परस्परं मिष्टान्नस्य आदानप्रदानं भवति ।

अस्य महोत्सवस्य 'द्यूतक्रीडा' कलङ्कोऽस्ति । अस्मिन्नुत्सवे महती कुप्रथा । अतिनिन्द्यं कर्मैतत्, न चापि अस्य विधानं वर्तते क्वापि । द्यूत-क्रीडया देशस्य महान् अपकारो भवति, बहवो जना द्यूते सर्वस्वं विनाशयन्ति अस्य निराकरणं कृत्वा अस्मिन्दिने रामायण-महाभारतकथा-कीर्तनं कर्तव्यम् येन देशस्य यथार्थो लाभो भवेत् ।

२१—महामना मदनमोहनमालवीयः

प्रचलिताङ्ग्लशिक्षाप्रणालीं भारतीयसंस्कृतेः गौरवस्य च अननुकूला-महितकरीं च विलोक्य तेषां पुनरुद्धरणाय राष्ट्रियताप्रसाराय उत्तमशिक्षा-प्रचालनाय च श्रीमान् मदनमोहनमालवीयमहोदयः १९१६ ख्रिष्टाब्दे भार-तीयपुण्यभूमौ काश्यां हिन्दूविश्वविद्यालयं संस्थापितवान्, तत्पीठोपकुलपतिपदं चालञ्चकार । प्रयोणार्धशताब्दीपर्यन्तं राजनीतिकक्षेत्रे, सामाजिकक्षेत्रे धार्मिकक्षेत्रे च महामनाः, चिरस्मरणीयाः सेवा अकरोत् ।

श्रीमान् मदनमोहनः दिसम्बरमासस्य २५ तारकायां १८६१ ख्रिष्टाब्दे प्रयाग-समीपवर्तिनि ग्रामे ब्राह्मणकुले जनिमुपलेभे । स प्रयागस्थ-म्योर सेण्ट्रलमहाविद्यालये शिक्षामवाप। १८८४ ख्रिष्टाब्दादारभ्य १८८७ पर्यन्तं गवर्नमेण्ट-हाईस्कूलेऽध्यापनं कृत्वा कालाकांकरस्य राज्ञः व्यक्तिगतमन्त्रि-त्वकार्यं कुर्वन् 'दैनिकहिंदुस्तान' इति वृत्तपत्रस्य, 'इंडियन ओपेनियन' इति साप्ताहिकस्य च संपादकत्वमकरोत् ।

१८८५ खिष्टाब्दतः प्रचलन्त्या राष्ट्रियमहासभायाः स प्रथमसञ्चालकेषु प्रमुखतमो बभूव ।१९३२-३३ खिष्टाब्दयो राष्ट्रियमहासभाधिवेशनयोरध्यक्षपदे निर्वाचितोऽयमधिवेशनात्पूर्वमेव शासकवर्गेण निगृहीतोऽभूत् ।१९२२-२३ खिष्टाब्दयोर्हिंदूमहासभाया अध्यक्षो बभूव । १९२४ खिष्टाब्दे केन्द्रीयप्रधानसभायाः सदस्यत्वं विरोधिदलस्य नेतृत्वं चोपलभ्य समुन्नतटकरविधानस्य विरोधप्रदर्शनार्थमत्यजत् । १९३०-३३ खिष्टाब्दाभ्यां पूर्वमनेन देशनायकत्वमङ्गीकृत्य कारावासयात्रापि कृता । परमस्मै राष्ट्रियमहासभायाः (कांग्रेसस्य) यवनतोषी नीतिर्न कदापि रोचते स्म ।

महामनाः सदैव हिन्दूनामुत्थानाय तेषामुपरि चात्याचाराणां निराकरणार्थं सर्वस्वमपि समर्पयितुं सन्नद्ध आसीत् । अतन्तो यवनप्रायेषु स्थानेषु नोआखालीप्रभृतिषु मुस्लिमलीगस्य 'प्रत्यक्षक्रियायाः' परिणामे धर्मान्धयवनानां निरपराधहिन्दुषु हत्याकांडसतीत्वभ्रंशादिदुर्वृत्तानि आकर्ण्य अतीव दुःखितहृदयो महामना वृद्धत्वेन जर्जरितगात्रः १९४६ खिष्टाब्दस्य नवम्बरमासस्य द्वादशतारिकायां देशवासिनः शोकाकुलीकुर्वन् पञ्चत्वं गतः ।

२२—भारतः सर्वभूतानां गावः सर्वसुखप्रदाः (गौः)

"गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
गावो मे सर्वतः सन्तु गावां मध्ये वसाम्यहम् ॥"

मानवजीवनस्य कोऽपि भागो नास्ति यत्र गोभिरुपकारो न क्रियते । यथा माता पुत्रं सर्वतो रक्षति, पालयति च तथैव गौरपि अस्मान् सर्वापद्भ्यो रक्षति पालयति च दुग्धादिना । अतीव सरला मुग्धा चास्या आकृतिः । तृणानि चरित्वा अमृतमयं दुग्धं ददाति मानवेभ्यः । अस्या वत्सा बलीवर्दा भूत्वा हलशकटादिषु युज्यन्ते । गावो हि श्वेताः, कृष्णाः, कपिलाः, पीताः, कर्बुराश्चेति नकविधाः । कृषिप्रधानस्य भारतवर्षस्य तु गाव एव सर्वस्वम् । गोजाताः वृषा हलैर्भूमिं कर्षन्ति, उर्वरां कुर्वन्ति, तैरेव क्षेत्राणि सिच्यन्ते कूपेभ्यो जलमुद्धृत्य । परिपक्वं च सस्यं तैरेव संशोध्यते गृहमानीयते च ।

ऐहलौकिक-पारलौकिक-श्रेयःसाधनीभूतस्य धर्मस्य गावः सर्वप्रधानमङ्गम् । गवामेव दुग्ध-दधि-घृतादिभिः परिपुष्टानि भवन्ति मानवशरीराणि । आयुर्वेदशास्त्रेषु सर्वदुग्धेभ्यः गोदुग्धस्यैव उत्तमत्वमुद्घोष्यते, सर्वरोगेषु तस्यै-

वोपयोगः क्रियते। गव्यं घृतं बलं ददाति। गवां श्वासैरनन्ता रोगा विनश्यन्ति। गवां मूत्रं गोमयं चापि अनेकरोगाणां परमौषधम्। गोमूत्रेणोदररोगा विनश्यन्ति। गोमूत्रस्य निरन्तरपानेन स्नानेन च कुष्ठं सर्वथा विनश्यति। गोमयं च पामादिचर्मरोगाणां सिद्धमौषधम्। गोमयस्य गन्धेनैव संक्रामक-रोगाणामसंख्याः कीटाणवो विनस्यन्ति। गोजातानां बलीवर्दानां कृपया उप-लब्धानामिक्षुरस-सितशर्करागुडादीनां सम्मिश्रणेन प्रगुणीकृतैर्गव्यैरेव पाय-सघृतादिभिः निर्मितैरनेकविधैर्मिष्टान्नैः प्रतिदिनं रसास्वादानन्दमनुभवन्ति मानवाः मरणकालेऽपि गोदानमेव पारलौकिकश्रेयः साधकं मन्यते हिन्दु-धर्मानुयायिभिः।

यत्र हि भारते दधि-घृतानां नद्य इव प्रवहन्ति स्म तत्राद्य गवां रुधिरस्य नद्यः प्रवहन्ति; दुग्धदधिघृतादयो दुर्लभा जाताः। कथमद्य वयं बलिनो भवेम, शुष्कभोजनभक्षिणामस्माकं कथं दीर्घम् आयुः स्यात्। अद्य अस्माकं देशः स्वाधीनः। आशास्महे यद् भारतीयगोवंशस्य रक्षा भविष्यति राष्ट्रं च समृद्धं भविष्यति पुनः शोभनानि दिनानि द्रक्ष्यामः।

गवामेव सेवया लौकिकं पारलौकिकं च श्रेयः लब्धवन्तो मानवा इति कथयन्तीतिहासविदः। को न जानाति यद्रघुवंशावतंसो राजा दिलीपो गोसेवाफलभूतं पुत्ररत्नं लेभे। गौतमशिष्यस्य सत्यकामस्यापि गोसेवयैव तत्त्वज्ञानप्राप्तिर्बभूव।

भारतवर्षमिदं गां मातरं मन्यते। वस्तुतः सा मातैव। सा सर्वा-ण्यपि साम्येन पालयति। न केवलं गोरक्षकेभ्य एव ददाति सुखानि, अपितु गोघातकेभ्यस्तथैव सुखानि वितरति। नात्र संशयस्य लेशः यद् भारतवर्षं गवामेव कृपया समृद्धिमाप्स्यति।

२३—विज्ञानं, वैज्ञानिका आविष्काराश्च

परमात्मना विचारशक्तिः केवलं मानवायैव प्रदत्ता। वस्तुतः साधा-रणज्ञानानन्तरं तस्य प्रवृत्तिः विशेषज्ञानाय संजाता। प्राकृततत्त्वानां वर्ध-मानज्ञानेन मानवमस्तिष्के सामाजिकभावोत्पत्त्या शनैः शनैः तस्यावश्यकता अपि वृद्धिं गताः यासां पूर्त्यै बहव आविष्कारा वैज्ञानिकैः कृताः। यत आवश्यकता हि आविष्काराणां जननी वर्तते।

विज्ञानप्रधानं युगमिदं नास्त्यत्र सन्देहः । वर्षशतद्वयात् विज्ञानस्य आविष्काराणां च वेगेन प्रगतिर्जाता । परं मानवस्य प्रबलया लिप्सया, लोलुपतया स्वार्थपरायणतया च आधुनिकं विज्ञानम् आविष्कारजातं च रचनात्मकमसम्पद्य विध्वंसात्मकमभवत् । परं मानवेन मानवतालाभार्थं प्राकृतिकशक्तीनां वशीकरणे यत्साफल्यं प्राप्तं तदपि न विस्मर्तुं शक्यते । कतिपये आविष्काराः—

(१) पत्रप्रेषणप्रणाली—पुरा सूचनाप्रेषणे अब्देषु अपि समाचारज्ञानं दुष्करमासीत्, परमद्य द्विचक्रिकाणां, मोटराणां, वाष्पशकटीनां च साहाय्येन स्वल्प एव काले सहस्रक्रोशानामपि ज्ञानं जायते । अतः जगतः प्रतिकोणं वृत्तपत्रवितरणकेन्द्राणि संस्थापितानि वर्तन्ते ।

(२) टेलिफोन-टेलिग्राफौ—एतद् द्वयमपि विद्युत्साहाय्येन कार्यं करोति । दूरदेशस्थिता अपि मानवाः परस्परं वार्तालापं कर्तुं शक्नुवन्ति । इत्थं व्यापारप्रसारः, सुरक्षाप्रबन्धश्च सुकरः सञ्जातः ।

(३) विद्युच्छक्तिः—अद्य प्रत्येकमपि कार्यं विद्युच्छक्त्या अल्पव्ययेन सम्पादयितुं पार्यते । शकटीगमनं यन्त्रसञ्चालनं, प्रकाशः, गृहाणामुष्णीकरणं शैत्यापादनं, भोजनपक्तिः, गृहपरिमार्जनं च विद्युच्छक्त्या सम्पादयितुं शक्यते ।

(४) यातायातप्रणाली—अद्य बाष्पेण विद्युता च चाल्यमानानां मोटरवाष्पशकटीनां समुद्रपोतानां विमानानां चाविष्कारेण प्रसारेण च संसारभ्रमणं सुकरं जातम् ।

(५) चित्रकला—पुरा महता परिश्रमेण स्वहस्तेन चित्रं निर्मीयतेस्म, परमधुना अपठितोऽपि सपदि चित्रं ग्रहीतुं शक्यो भवति ।

(६) मुद्रणकला—अद्य मुद्रणयन्त्रप्रभावेण अतिदुर्लभमपि ग्रन्थरत्नम् अल्पमूल्येन लब्धुं शक्यते । वृत्तपत्राणि अधुना प्रतिगृहं पठ्यन्ते ।

(७) अणुवीक्षणयन्त्रम्—दूरवीक्षणयन्त्राणां पारदर्शकयन्त्राणाम् (Radium) चाविष्कारेण कीटाणुज्ञाने, खगोलविद्यायां, शल्यचिकित्सायां च चमत्कारो जातः ।

(८) चित्रपटः—अद्य चित्रपटस्य समाजे यादृशः प्रभावः न तादृशोऽन्यस्य कस्यापि वस्तुनः । बहवो जना अद्य भोजनं त्यक्तुम् समर्थाः, परं न चित्रपटावलोकनमिति महदाश्चर्यम् ।

(९) विमानानां समुद्रपोतानां, जलान्तर्गामिनीनौकानामाविष्कारेण अधुना विदेशयात्रा सुकरी जाता, परं युद्धं नितरां भीषणं जातम् ।

(१०) टैङ्कप्रभृतीनां शस्त्रास्त्राणाम्, अग्निचूर्णादीनां विध्वंसकपदार्थानां निर्माणेनाद्य मानवसमाजस्य शान्तिमयं जीवनं दुष्करं जातम् ।

(११) ध्वनिप्रसारकयन्त्राणां (Radio) टेलिविजनयन्त्राणां (Television) चाविष्कारेण मानवसमाजोऽपूर्वमुन्नतिपथमारूढः । अधुना मानवः सहस्रक्रोशेभ्योऽपि वृत्तं गीतादिकं च शृणोति । टेलिविजनसाहाय्येन च भाषणकर्तुर्गायकस्य वा आकृतिरपि दृष्टिपथमायातीति महदाश्चर्यम् ।

(१२) अणुबम्बोऽणुशक्तिश्च—अणुबम्बो विनाऽऽयासेन लक्षशो मानवान् मृत्युपथं नेतुं समर्थः । उद्गनबम्बस्तु अशीतिक्रोशपर्यन्तं विध्वंसं कर्तुं शक्तः । अधुना संसारस्य प्रतिकोणं मानवो मृत्युमुख इवात्मानमनुभवति ।

(१३) कृषियन्त्राणाम् (Tractors) आविष्कारेण विज्ञानप्रधानेऽस्मिन् युगे उत्पादनकर्मणि महती प्रगतिरवलोक्यते ।

परमतीव खेदस्यायं विषयो यदियं विज्ञानस्य प्रगतिः मानवसामाजस्य कृते न सुखावहा । यतोऽद्य विज्ञानं रचनात्मकं नास्ति, अपितु विध्वसात्मकं वर्तते । अनादिकालतः उन्नतिपथं गच्छन्त्याः संस्कृतेः सभ्यतायाश्च कृते मानवद्वारैव नाशस्य बिभीषिका उत्पन्ना ।

सप्तमोऽध्यायः

संक्षिप्त धातु पाठ

इस धातु-पाठ में मुख्य-मुख्य धातुओं के रूप दिये गये हैं। प्रत्येक धातु के बाद कोष्ठ में निर्दिष्ट है कि वह किस गण की है और किस पद में उसके रूप चलेंगे। धातु-पाठ अकारादि क्रम से रखा गया है।

प्रत्येक धातु के रूप लट्, लोट्, लङ् विधिलिङ् और लृट् में सुविधानुसार दिये गये हैं और अन्त में कोष्ठ में कर्मवाच्य या भाववाच्य के प्रथम पुरुष के एक वचन का रूप दिया गया है। संकेतों का प्रयोग इस प्रकार संक्षेप में किया गया है—

(१) भ्वादिगण। (२) अदादिगण। (३) जुहोत्यादिगण। (४) दिवादिगण। (५) स्वादिगण। (६) तुदादिगण। (७) रुधादिगण। (८) तनादिगण। (९) क्र्यादिगण। (१०) चुरादिगण। (क) कण्ड्वादिगण।

प० = परस्मैपदी। आ० = आत्मनेपदी। उ० = उभयपदी। यदि सोपसर्ग (यथा आ+गम्) धातु का प्रयोग लङ् में करना हो तो अ अथवा आ शुद्ध धातु के पहले लगाना चाहिए, उपसर्ग के पूर्व नहीं; जैसे नि+अवसत् = न्यवसत्। (अनिवसत् अशुद्ध है।)

प्रत्येक लकार के प्रथम पुरुष के एक वचन का रूप ही दिया गया है। जो धातु जिस गण की है उस धातु के रूप उस गण की धातुओं के समान चलेंगे। कुछ उभयपदी धातुएँ परस्मैपद में ही अधिक प्रचलित हैं, उनके परस्मैपद के ही रूप दिये गये हैं।

अत् (निरंतर चलना, १ प०) अतति, अततु, आतत्, अत्यात् अतस्यति। (अत्यते)
अद् (खाना, २ प०) अत्ति, अत्तु, आदत्, अद्यात्, अत्स्यति। (अद्यते)
अय् (जाना, १ आ०) अयते, अयताम्, आयत, अयेत, अयिष्यते। (अय्यते)
अर्च् (पूजना, १ प०) अर्चति, अर्चतु, आर्चत्, अर्चेत् अर्चिष्यति। (अर्च्यते)
अर्ज् (पैदा करना, १ प०) अर्जति, अर्जतु, आर्जत् अर्जेत्, अर्जिष्यति। (अर्ज्यते)
अश् (खाना, ९ प०) अश्नाति, अश्नातु, आश्नात्, अश्नीयात्, अशिष्यति। (अश्यते)
अस् (फेंकना, ४ प०) अस्यति, अस्यतु, आस्यत्, अस्येत्, असिष्यति। (अस्यते)
अस् (होना, २ प०) अस्ति, अस्तु, आसीत्, स्यात्, भविष्यति। (भूयते)
असूय् (दुःखदेना, क० उ०) असूयति,असूयतु,आसूयत्,असूयेत्, असूयिष्यति। (असूय्यते)
आप् (पाना, ५ प०) आप्नोति, आप्नोतु, आप्नोत्, आप्नुयात्, आप्स्यति। (आप्यते)
आप् (पहुँचाना, १०प०) आपयति, आपयतु, आपत्,आपयेत्,आपयिष्यति। (आप्यते)
आस् (बैठना, २ आ०) आस्ते, आस्ताम्, आस्त, आसीत, आसिष्यते (आस्यते)
इ (पढ़ना, २ आ०) अधीते, अधीताम्, अध्यैत, अधीयीत, अध्येष्यते (अधीयते)
इ (जाना २ प०,) एति, एतु, ऐत्, इयात्, एष्यति। (ईयते)
इष् (चाहना ६ प०) इच्छति, इच्छतु, ऐच्छत्, इच्छेत्, एषिष्यति। (इष्यते)
ईक्ष् (देखना १ आ०) ईक्षते, ईक्षताम्, ऐक्षत, ईक्षेत, ईक्षिष्यते। (ईक्ष्यते)
ईर् (प्रेरणा० १० उ०) ईरयति, ईरयतु, ऐरयत्, ईरयिष्यति। (ईर्यते)
ईर्ष्य् (ईर्ष्या० करना १ प०) ईर्ष्यति, ईर्ष्यतु, ऐर्ष्यत्, ईर्ष्यिष्यति। (ईर्ष्यते)

ईह् (चाहना १ आ०) ईहते, ईहताम्, ऐहत, ईहेत, ईहिष्यते (ईह्यते)

कथ् (कहना १० उ०) प०—कथयति, कथयतु, अकथयत्, कथयेत्, कथयिष्यति।
आ०—कथयते, कथयताम्, अकथयत, कथयिष्यते। (कथ्यते)

कम्प् (कांपना १ आ०) कम्पते, कम्पताम्, अकम्पत, कम्पेत, कम्पिष्यते। (कम्प्यते)

कुप् (क्रोध० ४ प०) कुप्यति, कुप्यतु, अकुप्यत्, कुप्येत्, कोपिष्यति। (कुप्यते)

कूर्द् (कूदना १ आ०) कूर्दते, कूर्दताम्, अकूर्दत, कूर्देत, कूर्दिष्यते। (कूर्द्यते)

कृ (करना ८ उ०) प०—करोति, करोतु, अकरोत्, कुर्यात्, करिष्यति।
आ०—कुरुते, कुरुताम्, अकुरुत, कुर्वीत, करिष्यते। (क्रियते)

क्लृप् (समर्थ होना १ आ०) कल्पते, कल्पताम्, अकल्पत, कल्पेत, कल्पिष्यते। (कल्प्यते)

कृष् (खींचना १ प०) कर्षति, कर्षतु, अकर्षत्, कर्षेत्, कर्क्ष्यति। (कृष्यते)

कॄ (बखेरना ६ प०) किरति, किरतु, अकिरत्, किरेत्, करिष्यति। (कीर्यते)

कृत् (नाम लेना १० उ०) कीर्तयति, कीर्तयतु, अकीर्तयत्, कीर्तयेत्, कीर्तयिष्यति (कीर्त्यते)

क्रन्द् (रोना १ प०) क्रन्दति, क्रन्दतु, अक्रन्दत्, क्रन्देत्, क्रन्दिष्यति। (क्रन्द्यते)

क्रम् (चलना १ प०) क्रामति, क्रामतु, अक्रामत्, क्रामेत्, क्रमिष्यति। (क्रम्यते)

क्री (खरीदना ९ उ०) प०—क्रीणाति, क्रीणातु, अक्रीणात्, क्रीणीयात्, क्रेष्यति।
आ०—क्रीणीते, क्रीणीताम्, अक्रीणीत, क्रीणीत, क्रेष्यते। (क्रीयते)

क्रीड् (खेलना १ प०) क्रीडति, क्रीडतु, अक्रीडत्, क्रीडेत्, क्रीडिष्यति। (क्रीड्यते)

क्रुध् (क्रुद्ध होना ४ प०) क्रुध्यति, क्रुध्यतु, अक्रुध्यत्, क्रुध्येत् क्रोत्स्यति। (क्रुध्यते)

क्लम् (थकना ४ प०) क्लाम्यति, क्लाम्यतु, अक्लाम्यत्, क्लाम्येत्, क्लमिष्यति। (क्लम्यते)

क्लिश् (खिन्न होना ४ आ०) क्लिश्यते, क्लिश्यताम्, अक्लिश्यत, क्लिश्येत, क्लेशिष्यते (क्लिश्यते)।

क्लिश् (दुःख देना ९ प०) क्लिश्नाति, क्लिश्नातु, अक्लिश्नात्, क्लिश्नीयात्, क्लेशिष्यति। (क्लिश्यते)

क्षम् (क्षमा करना १ आ०) क्षमते, क्षमताम्, अक्षमत, क्षमेत, क्षमिष्यते। (क्षम्यते)

क्षल् (धोना १० उ०)प०—क्षालयति, क्षालयतु, अक्षालयत्, क्षालयेत्, क्षालयिष्यति
आ०—क्षालयते, क्षालयताम्, अक्षालयत, क्षालयेत, क्षालयिष्यते। (क्षाल्यते)

क्षिप् (फेंकना, ६ उ०) क्षिपति, क्षिपतु, अक्षिपत्, क्षिपेत्, क्षेप्स्यति। (क्षिप्यते)

क्षुभ् (क्षुब्ध होना १ आ०) क्षोभते,क्षोभताम्, अक्षोभत,क्षोभेत,क्षोभिष्यते। (क्षुभ्यते)

खण्ड् (खंडन करना १० उ०) खण्डयति,खण्डयतु, अखण्डयत्, खण्डयेत्, खण्डयिष्यति। (खण्ड्यते)

खन् (खोदना १ उ०) खनति, खनतु, अखनत्, खनेत्, खनिष्यति। (खन्यते)

खाद् (खाना १ प०) खादति, खादतु, अखादत् खादेत्, खादिष्यति। (खाद्यते)

गण् (गिनना १० उ०) गणयति, गणयतु, अगणयत्, गणयेत् गणयिष्यति। (गण्यते)

गम् (जाना १ प०) गच्छति, गच्छतु, अगच्छत् गच्छेत्, गमिष्यति। (गम्यते)

गर्ज् (गरजना १ प०) गर्जति, गर्जतु, अगर्जत्, गर्जेत्, गर्जिष्यति। (गर्ज्यते)

गर्ह् (निन्दा करना १० उ०) गर्हयति, गर्हयतु, अगर्हयत्, गर्हयेत्, गर्हयिष्यति (गर्ह्यते)

गवेष् (खोजना १० उ०) गवेषयति, गवेषयतु, अगवेषयत्, गवेषयेत्, गवेषयिष्यति। (गवेष्यते)

गाह् (घुसना १ आ०) गाहते, गाहताम्, अगाहत, गाहेत, गाहिष्यते। (गाह्यते)

गुप् (निन्दा करना १ आ०) जुगुप्सते, जुगुप्सताम्, अजुगुप्सत, जुगुप्सेत, जुगुप्सिष्यते। (जुगुप्स्यते)

गॄ (निगलना ६ प०) गिरति, गिरतु, अगिरत्, गिरेत्, गरिष्यति। (गीर्यते)

गै (गाना १ प०) गायति, गायतु, अगायत्, गायेत्, गास्यति। (गीयते)

ग्रस् (खाना १ आ०) ग्रसते, ग्रसताम्, अग्रसत्, ग्रसेत, ग्रसिष्यते। (ग्रस्यते)

ग्रह् (पकड़ना ९ उ०) प०—गृह्णाति, गृह्णातु, अगृह्णात्, गृह्णीयात्, ग्रहीष्यति।
आ०—गृह्णीते, गृह्णीताम्, अगृह्णीत, गृह्णीत, ग्रहीष्यते। (गृह्यते)

घट् (लगना १ आ०) घटते, घटताम्, अघटत, घटेत, घटिष्यते। (घट्यते)

घुष् (घोषित करना १० उ०) घोषयति, घोषयतु, अघोषयत्, घोषयेत्, घोषयिष्यति। (घोष्यते)

घ्रा (सूंघना १ प०) जिघ्रति, जिघ्रतु, अजिघ्रत्, जिघ्रेत्, घ्रास्यति। (घ्रायते)

चर् (चलना १ प०) चरति चरतु, अचरत्, चरेत्, चरिष्यति। (चर्यते)

चल् (चलना १ प०)चलति, चलतु, अचलत्, चलेत्, चलिष्यति। (चल्यते)

चि (चुनना ५ उ०) चिनोति, चिनोतु, अचिनोत्, चिनुयात्, चेष्यति। (चीयते)

चिन्त् (सोचना १० उ०)प०–चिन्तयति,चिन्तयतु,अचिन्तयत्,चिन्तयेत्,चिन्तयिष्यति।
आ०–चिन्तयते, चिन्तयताम्, अचिन्तयत, चिन्तयेत, चिन्तयिष्यते,। (चिन्त्यते)

चुर् (चुराना १० उ०) प०—चोरयति, चोरयतु, अचोरयत्, चोरयेत्, चोरयिष्यति ।
आ०—चोरयते, चोरयताम्, अचोरयत, चोरयेत्, चोरयिष्यते । (चोर्यते)
चेष्ट् (चेष्टा करना १ आ०) चेष्टते, चेष्टताम्, अचेष्टत, चेष्टेत, चेष्टिष्यते (चेष्ट्यते)
छिद् (काटना ७ उ०) छिनत्ति, छिनत्तु, अच्छिनत्, छिन्द्यात्, छेत्स्यति । (छिद्यते)
जन् (पैदा होना ४ आ०) जायते, जायताम्, अजायत, जायेत, जनिष्यते । (जायते)
जप् (जपना १ प०) जपति, जपतु, अजपत्, जपेत्, जपिष्यति । (जप्यते)
जि (जीतना १ प०) जयति, जयतु, अजयत्, जयेत्, जेष्यति । (जीयते)
जीव् (जीना १ प०) जीवति, जीवतु, अजीवत्, जीवेत्, जीविष्यति । (जीव्यते)
जॄ (वृद्ध होना ४ प०) जीर्यति, जीर्यतु, अजीर्यत्, जीर्येत्, जरिष्यति । (जीर्यते)
ज्ञा (जानना ९ उ०) प०—जानाति, जानातु, अजानात् जानीयात्, ज्ञास्यति ।
आ०—जानीते, जानीताम्, अजानीत, जानीत, ज्ञास्यते । (ज्ञायते)
ज्वल् (जलना १ प०,) ज्वलति, ज्वलतु, अज्वलत्, ज्वलेत्, ज्वलिष्यति । (ज्वल्यते)
डी (उड़ना ४ आ०,) डीयते, डीयताम् अडीयत, डीयेत, डयिष्यते । (डीयते)
तड् (पीटना १० उ०,) ताडयति, ताडयतु, अताडयत्, ताडयेत्, ताडयिष्यति ।
(ताड्यते)
तन् (फैलाना ८ उ०,) प०—तनोति, तनोतु, अतनोत्, तनुयात्, तनिष्यति ।
आ०—तनुते, तनुताम्, अतनुत, तन्वीत, तनिष्यते । (तायते—तन्यते)
तप् (तपना १ प०) तपति, तपतु, अतपत्, तपेत्, तप्स्यति । (तप्यते)
तर्क् (सोचना १० उ०) तर्कयति, तर्कयतु, अतर्कयत्, तर्कयेत्, तर्कयिष्यति (तर्क्यते)
तर्ज् (डाँटना १० उ०) तर्जयति—ते, यर्जयतु, अतर्जयत्, तर्जयेत्, तर्जयिष्यति ।
(तर्ज्यते)
तुद् (दुःख देना ६ उ०) तुदति-ते, तुदतु, अतुदत्, तुदेत्, तोत्स्यति । (तुद्यते)
तुल् (तोलना १० उ०,) तोलयति, तोलयतु अतोलयत्, तोलयेत्, तोलयिष्यति ।
(तोल्यते)
तुष् (तुष्ट होना ४ प०) तुष्यति, तुष्यतु अतुष्यत् तुष्येत्, तोक्ष्यति । (तुष्यते)
तृप् (तृप्त होना ४ प०) तृप्यति, तृप्यतु, अतृप्यत्, तृप्येत्, तर्पिष्यति । (तृप्यते)
तृप् (तृप्त करना १० उ०) तर्पयति, तर्पयतु, अतर्पयत्, तर्पयेत्, तर्पयिष्यति (तर्प्यते)
तॄ (तैरना १ प०) तरति, तरतु, अतरत्, तरेत्, तरिष्यति । (तीर्यते)

त्यज् (छोड़ना १ प०) त्यजति, त्यजतु, अत्यजत्, त्यजेत्, त्यक्ष्यति । (त्यज्यते)
त्रप् (लजाना १ आ०) त्रपते, त्रपताम्, अत्रपत, त्रपेत, त्रपिष्यते । (त्रप्यते)
त्रै (बचाना १ आ०) त्रायते, त्रायताम्, अत्रायत, त्रायेत, त्रास्यते । (त्रायते)
त्वर् (जल्दी करना १ आ०) त्वरते, त्वरताम्, अत्वरत, त्वरेत, त्वरिष्यते (त्वर्यते)
दण्ड् (दंड देना १० उ०), दण्डयति-ते, दण्डयतु, अदण्डयत्, दण्डयेत्, दण्डयिष्यति, (दण्ड्यते)
दम् (दमन करना ४ प०), दाम्यति, दाम्यतु, अदाम्यत्, दाम्येत्, दमिष्यति (दम्यते)
दह् (जलाना १ प०) दहति, दहतु, अदहत्, दहेत्, धक्ष्यति । (दह्यते)
दा (देना ३ उ०) प०—ददाति, ददातु, अददात्, दद्यात्, दास्यति ।
आ०—दत्ते, दत्ताम्, अदत्त, ददीत, दास्यते । (दीयते)
दिव् (जुआ खेलना ४ प०) दीव्यति, दीव्यतु, अदीव्यत्, दीव्येत, देविष्यति (दीव्यते)
दिश् (देना, कहना ६ उ०) दिशति-ते, दिशतु, अदिशत्, दिशेत्, देक्ष्यति । (दिश्यते)
दीक्ष् (दीक्षा देना १ आ०) दीक्षते, दीक्षताम्, अदीक्षत, दीक्षेत, दीक्षिष्यते (दीक्ष्यते)
दीप् (चमकना ४ आ०) दीप्यते, दीप्यताम् अदीप्यत, दीप्येत, दीपिष्यते । (दीप्यते)
दुह् (दुहना २ उ०) दोग्धि, दोग्धु, अधोक्, दुह्यात्, धोक्ष्यति । (दुह्यते)
दृ (आदर करना ६ आ०) आ+आद्रियते, आद्रियताम्, आद्रियत, आद्रियेत, आदरिष्यते । (आद्रियते)
दृश् (देखना १ प०) पश्यति, पश्यतु, अपश्यत्, पश्येत्, द्रक्ष्यति । (दृश्यते)
द्युत् (चमकना १ आ०) द्योतते, द्योतताम्, अद्योतत, द्योतेत, द्योतिष्यते (द्योत्यते)
द्रुह् (द्रोह करना ४ प०,) द्रुह्यति, द्रुह्यतु, अद्रुह्यत्, द्रुह्येत्, द्रोहिष्यति। (द्रुह्यते)
धा (धारण करना ३ उ०) प०—दधाति, दधातु, अदधात् दध्यात्, धास्यति ।
आ०—धत्ते, धत्ताम्, अधत्त, दधीत, धास्यते । (धीयते)
धाव् (दौड़ना १ उ०) धावति-ते, धावतु, अधावत्, धावेत्, धाविष्यति । (धाव्यते)
धृ (पहनना, रखना १० उ०) धारयति, धारयतु, अधारयत्, धारयेत्, धारयिष्यति । (धार्यते)
ध्यै (ध्यान करना १ प०) ध्यायति, ध्यायतु, अध्यायत् ध्यायेत्, ध्यास्यति । (ध्यायते)
ध्वंस् (नष्ट होना १ आ०) ध्वंसते, ध्वंसताम्, अध्वंसत, ध्वंसेत, ध्वंसिष्यते (ध्वंस्यते)
नम् (झुकना १ प०) नमति, नमतु, अनमत्, नमेत, नंस्यति । (नम्यते)

नश् (नष्ट होना ४ प०) नश्यति, नश्यतु, अनश्यत्, नश्येत्, नशिष्यति (नश्यते)
निन्द् (निन्दा करना १ प०) निन्दति, निन्दतु, अनिन्दत्, निन्देत्, निन्दिष्यति। (निन्द्यते)
नी (ले जाना १ उ०) प०—नयति, नयतु, अनयत्, नयेत्, नेष्यति।
आ०—नयते, नयताम्, अनयत, नयेत, नेष्यते। (नीयते)
नुद् (प्रेरणा देना ६ उ०) नुदति–ते, नुदतु, अनुदत्, नुदेत्, नोत्स्यति। (नुद्यते)
नृत् (नाचना ४ प०,) नृत्यति, नृत्यतु, अनृत्यत्, नृत्येत्, नर्तिष्यति। (नृत्यते)
पच् (पकाना १ उ०) पचति–ते, पचतु, अपचत्, पचेत्, पक्ष्यति। (पच्यते)
पठ् (पढ़ना १ प०) पठति, पठतु, अपठत्, पठेत्, पठिष्यति। (पठ्यते)
पत् (गिरना १ प०) पतति, पततु, अपतत्, पतेत्, पतिष्यति। (पत्यते)
पद् (जाना ४ आ०) पद्यते, पद्यताम्, अपद्यत, पद्येत, पत्स्यते। (पद्यते)
पा (पीना १ प०) पिबति, पिबतु, अपिबत्, पिबेत्, पास्यति। (पीयते)
पा (रक्षा करना २ प०) पाति, पातु, अपात्, पायात्, पास्यति। (पायते)
पाल् (रक्षा करना १० उ०) पालयति-ते, पालयतु, अपालयत्, पालयेत्, पालयिष्यति (पाल्यते)
पीड् (दुःख देना १० उ०) पीडयति, पीडयतु, अपीडयत्, पीडयेत्, पीडयिष्यति (पीड्यते)
पुष् (पुष्ट करना ४ प०) पुष्यति, पुष्यतु, अपुष्यत्, पुष्येत्, पोक्ष्यति। (पुष्यते)
पॄ (पालना १० उ०) पारयति-ते, पारयतु, अपारयत्, पारयेत्, पारयिष्यति। (पूर्यते)
प्रच्छ् (पूछना ६ प०) पृच्छति, पृच्छतु, अपृच्छत्, पृच्छेत्, प्रक्ष्यति। (पृच्छ्यते)
प्रथ् (फैलना १ आ०) प्रथते, प्रथताम्, अप्रथत, प्रथेत, प्रथिष्यते। (प्रथ्यते)
प्र+ईर् (प्रेरणा देना १० उ०) प्रेरयति, प्रेरयतु, प्रैरयत्, प्रेरयेत्, प्रेरयिष्यति। (प्रेर्यते)
बन्ध् (बाँधना ९ प०) बध्नाति, बध्नातु, अबध्नात्, बध्नीयात्, भन्त्स्यति। (बध्यते)
बाध् (पीड़ा देना १ आ०) बाधते, बाधताम्, अबाधत, बाधेत, बाधिष्यते। (बाध्यते)
बुध् (जानना ४ आ०) बुध्यते, बुध्यताम्, अबुध्यत, बुध्येत, भोत्स्यते। (बुध्यते)
ब्रू (बोलना २ उ०) ब्रवीति, ब्रवीतु, अब्रवीत्, ब्रूयात्, वक्ष्यति। (उच्यते)
भक्ष् (खाना १० उ०) प०—भक्षयति, भक्षयतु, अभक्षयत् भक्षयेत् भक्षयिष्यति
आ०—भक्षयते, भक्षयताम्, अभक्षयत, भक्षयेत, भक्षयिष्यते। (भक्ष्यते)
भज् (सेवाकरना १ उ०) भजति-ते, भजतु, अभजत्, भजेत्, भक्ष्यति। (भज्यते)
भा (चमकना २ प०) भाति, भातु, अभात्, भायात्, भास्यति। (भायते)

भाष् (बोलना १ आ०) भाषते, भाषताम्, अभाषत, भाषेत, भाषिष्यते। (भाष्यते)

भास् (चमकना १ आ०) भासते, भासताम्, अभासत, भासेत, भासिष्यते। (भास्यते)

भिक्ष् (माँगना १ आ०) भिक्षते, भिक्षताम्, अभिक्षत, भिक्षेत, भिक्षिष्यते। (भिक्ष्यते)

भिद् (तोड़ना ७ उ०) भिनत्ति, भिनत्तु, अभिनत्, भिन्द्यात्, भेत्स्यति। (भिद्यते)

भी (डरना ३ प०) बिभेति, बिभेतु, अबिभेत्, बिभीयात्, भेष्यति। (भीयते)

भुज् (पालना ७ उ०) प०—भुनक्ति, भुनक्तु, अभुनक्, भुज्यात्, भोक्ष्यति।
(खाना ७ आ०) आ०—भुङ्क्ते, भुङ्क्ताम्, अभुङ्क्त, भुंजीत, भोक्ष्यते। (भुज्यते)

भू (होना १ प०) भवति, भवतु, अभवत्, भवेत्, भविष्यति। (भूयते)

भृ (पालन करना १ उ०) भरति-ते, भरतु, अभरत्, भरेत्, भरिष्यति। (भ्रियते)

भृ (धारण पोषण क० ३ उ०) बिभर्ति, बिभर्तु, अबिभः, बिभृयात्, भरिष्यति। (भृयते)

भ्रम् (घूमना १ प०) भ्रमति, भ्रमतु, अभ्रमत् भ्रमेत्, भ्रमिष्यति। (भ्रम्यते)

भ्रम् (घूमना ४ प०) भ्राम्यति, भ्राम्यतु, अभ्राम्यत्, भ्राम्येत्, भ्रमिष्यति। (भ्रम्यते)

भ्रंश् (गिरना १ आ०) भ्रंशते, भ्रंशताम्, अभ्रंशत, भ्रंशेत, भ्रंशिष्यते। (भ्रश्यते)

भ्राज् (चमकना १ आ०) भ्राजते, भ्राजताम्, अभ्राजत, भ्राजेत, भ्राजिष्यते। (भ्राज्यते)

मण्ड् (मंडन करना १० उ०) मण्डयति, मण्डयतु, अमण्डयत्, मण्डयेत्, मण्डयिष्यति,। (मण्ड्यते)

मथ् (मथना १ प०) मथति, मथतु, अमथत्, मथेत्, मथिष्यति। (मथ्यते)

मद् (खुश होना ४ प०) माद्यति, माद्यतु, अमाद्यत्, माद्येत्, मदिष्यति। (मद्यते)

मन् (मानना ४ आ०) मन्यते, मन्यताम्, अमन्यत, मन्येत, मंस्यते। (मन्यते)

मन्त्र् (मंत्रणा करना १० आ०) मन्त्रयते, मन्त्रयताम्, अमन्त्रयत, मन्त्रयेत, मन्त्रयिष्यते।
(परस्मै०) मन्त्रयति, मन्त्रयतु, अमन्त्रयत्, मन्त्रयेत्, मन्त्रयिष्यति। (मन्त्र्यते)

मन्थ् (मथना९प०) मथ्नाति, मथ्नातु, अमथ्नात्, मथ्नीयात्, मन्थिष्यति। (मथ्यते)

मा (नापना २ प०) माति, मातु, अमात्, मायात्, मास्यति। (मीयते)

मुच् (छोड़ना ६ उ०) प०-मुञ्चति, मुञ्चतु, अमुञ्चत्, मुञ्चेत्, मोक्ष्यति।
आ०—मुञ्चते, मुञ्चताम्, अमुञ्चत, मुञ्चेत, मोक्ष्यते। (मुच्यते)।

मुद् (खुश होना१आ०) मोदते, मोदताम्, अमोदत, मोदेत, मोदिष्यते,। (मुद्यते)

मुष् (चुराना ९ प०) मुष्णाति, मुष्णातु, अमुष्णात्, मुष्णीयात्, मोषिष्यति। (मुष्यते)

मूर्च्छ् (मूर्छित होना १ प०) मूर्च्छति, मूर्च्छतु, अमूर्च्छत्, मूर्च्छेत्, मूर्च्छिष्यति।
(मूर्च्छ्यते)।

मृ (मरना ६ आ०) म्रियते, म्रियताम्, अम्रियत, म्रियेत, मरिष्यति । (म्रियते)
म्लै (मुरझाना१प०) म्लायति, म्लायतु, अम्लायत् म्लायेत्, म्लास्यति । (म्लायते)
यज् (यज्ञ करना १उ०) यजति-ते, यजतु, अयजत्, यजेत्, यक्ष्यति । (इज्यते)
यत् (यत्न करना १आ०) यतते, यतताम्, अयतत, यतेत, यतिष्यते । (यत्यते)
या (जाना २ प०) याति, यातु, अयात्, यायात्, यास्यति । (यायते)
याच् (मांगना १ उ०) प०—याचति, याचतु, अयाचत्, याचेत्, याचिष्यति ।
आ०—याचते, याचताम्, अयाचत, याचेत, याचिष्यते । (याच्यते) ।
यापि (बिताना णिच्, प०) यापयति, यापयतु, अयापयत्, यापयेत्, यापयिष्यति । (याप्यते)
युज् (लगाना १० उ०) योजयति, योजयतु, अयोजयत्, योजयेत् योजयिष्यति । (योज्यते)
युध् (लड़ना ४ आ०) युध्यते, युध्यताम्, अयुध्यत, युध्येत, योत्स्यते । (युध्यते)
रक्ष् (रक्षा करना १ प०) रक्षति, रक्षतु, अरक्षत्, रक्षेत्, रक्षिष्यति । (रक्ष्यते)
रच् (बनाना १० उ०) रचयति-ते, रचयतु, अरचयत्, रचयेत्, रचयिष्यति । (रच्यते)
रञ्ज् (खुश होना ४ उ०) रज्यति-ते, रज्यतु, अरज्यत्, रज्येत्, रंक्ष्यति । (रज्यते)
रम् (रमना १ आ०) रमते, रमताम्, अरमत, रमेत, रंस्यते । (रम्यते)
(वि+रम्, पर०) विरमति, विरमतु, व्यरमत्, विरमेत्, विरंस्यति (विरम्यते)
राज् (चमकना १ उ०) प०—राजति राजतु, अराजत्, राजेत, राजिष्यति ।
आ०—राजते, राजताम्, अराजत, राजेत, राजिष्यते । (राज्यते)
रुच् (अच्छा लगना, १ आ०) रोचते, रोचताम्, अरोचत, रोचेत, रोचिष्यते । (रुच्यते)
रुद् (रोना, २ प०) रोदिति, रोदितु, अरोदीत्, रुद्यात्, रोदिष्यति । (रुद्यते)
रुध् (रोकना, ७ उ०) प०—रुणद्धि, रुणद्धु, अरुणत्, रुन्ध्यात्, रोत्स्यति ।
आ०—रुन्धे, रुन्धाम्, अरुन्ध, रुन्धीत, रोत्स्यते । (रुध्यते)
रुह् (उगना १ प०) रोहति, रोहतु, अरोहत्, रोहेत्, रोक्ष्यति । (रुह्यते)
लंघ् (लांघना, १ आ०) लंघते, लंघताम्, अलंघत, लंघेत, लंघिष्यते । (लंघ्यते)
लप् (बोलना १ प०) लपति, लपतु, अलपत् लपेत्, लपिष्यति । (लप्यते)
लभ् (पाना १ आ०) लभते, लभताम्, अलभत, लभेत, लप्स्यते । (लभ्यते)
लम्ब् (लटकना १ आ०,) लम्बते, लम्बताम्, अलम्बत, लम्बेत, लम्बिष्यते । (लम्ब्यते)
लष् (चाहना १ उ०,) लषति-ते, लषतु, अलषत्, लषेत्, लषिष्यति । (लष्यते)

लिख् (लिखना ६ प०,) लिखति, लिखतु, अलिखत्, लिखेत्, लेखिष्यति। (लिख्यते)
लिप् (लीपना ६ उ०,) लिम्पति-ते, लिम्पतु, अलिम्पत्, लिम्पेत्, लेप्स्यति। (लिप्यते)
ली (लीन होना ३ आ०) लीयते, लीयताम्, अलीयत, लीयेत, लेष्यते। (लीयते)
लुप् (नष्ट करना ६ उ०,) लुम्पति-ते, लुम्पतु, अलुम्पत्, लुम्पेत्, लोपिष्यति। (लुप्यते)
लुभ् (लोभ करना ४ प०,) लुभ्यति, लुभ्यतु, अलुभ्यत्, लुभ्येत्, लोभिष्यति। (लुभ्यते)
लोक् (देखना १ आ०) लोकते, लोकताम्, अलोकत, लोकयेत, लोकिष्यते (लोक्यते)
लोच् (देखना १० उ०) लोचयति-ते, लोचयतु, अलोचयत्, लोचयेत्, लोचयिष्यति। (लोच्यते)

वद् (बोलना १ प०) वदति, वदतु, अवदत्, वदेत्, वदिष्यति। (उद्यते)
वन्द् (प्रणाम करना १ आ०,) वन्दते, वन्दताम्, अवन्दत, वन्देत, वन्दिष्यते। (वन्द्यते)
वप् (बोना १ उ०) वपति-ते, वपतु, अवपत्, वपेत्, वप्स्यति। (उप्यते)
वस् (रहना १ प०) वसति, वसतु, अवसत्, वसेत्, वत्स्यति। (उष्यते)
वह् (ढोना १ उ०) वहति-ते, वहतु, अवहत्, वहेत्, वक्ष्यति। (उह्यते)
वा (हवा चलना २ प०) वाति, वातु, अवात्, वायात्, वास्यति। (वायते)
विद् (जानना २ प०) वेत्ति, वेत्तु, अवेत्, विद्यात्, वेदिष्यति। (विद्यते)
विद् (होना ४ आ०) विद्यते, विद्यताम्, अविद्यत, विद्येत, वेत्स्यते। (विद्यते)
विद् (पाना ६ उ०) विन्दति-ते, विन्दतु, अविन्दत्, विन्देत्, वेदिष्यति। (विद्यते)
विद् (कहना १० आ०) वेदयते, वेदयताम्, अवेदयत, वेदयेत, वेदयिष्यते। (वेद्यते)
विश् (घुसना ६ प०) विशति, विशतु, अविशत्, विशेत्, वेक्ष्यति। (विश्यते)
वृ (चुनना ५ उ०) वृणोति, वृणोतु, अवृणोत्, वृणुयात्, वरिष्यति। (व्रियते)
वृत् (होना १ आ०) वर्तते, वर्तताम् अवर्तत, वर्तेत, वर्तिष्यते। (वृत्यते)
वृध् (बढ़ना १ आ०) वर्धते, वर्धताम्, अवर्धत, वर्धेत, वर्धिष्यते। (वृध्यते)
वृष् (बरसना १ प०) वर्षति, वर्षतु, अवर्षत्, वर्षेत्, वर्षिष्यति। (वृष्यते)
वे (बुनना १ उ०) वयति,-ते, वयतु, अवयत्, वयेत्, वास्यति। (ऊयते)
वेप् (कांपना, १ आ०) वेपते, वेपताम्, अवेपत, वेपेत, वेपिष्यते। (वेप्यते)
व्यथ् (दुःखित होना १ आ०) व्यथते, व्यथताम्, अव्यथत, व्यथेत, व्यथिष्यते। (व्यथ्यते)
व्यध् (वेधना ४ प०) विध्यति, विध्यतु, अविध्यत्, विध्येत्, व्यत्स्यति। (विध्यते)
शक् (सकना ५ प०) शक्नोति, शक्नोतु, अशक्नोत्, शक्नुयात्, शक्ष्यति। (शक्यते)

शंक् (शंका करना १ आ०) शंकते, शंकताम्, अशंकत, शंकेत, शंकिष्यते । (शंक्यते)
शप् (शाप देना १ उ०) शपति-ते, शपतु, अशपत्, शपेत्, शप्स्यति । (शप्यते)
शम् (शान्त होना ४ प०) शाम्यति, शाम्यतु, अशाम्यत्,शाम्येत्,शमिष्यते । (शम्यते)
शास् (शिक्षा देना २ प०) शास्ति, शास्तु, अशात्, शिष्यात्, शासिष्यति । (शिष्यते)
शिक्ष् (सीखना १ आ०) शिक्षते, शिक्षताम्, अशिक्षत, शिक्षेत, शिक्षिष्यते ।(शिक्ष्यते)
शी (सोना २ आ०) शेते, शेताम्, अशेत, शयीत, शयिष्यते । (शय्यते)
शुच् (शोक करना) शोचति, शोचतु, अशोचत्, शोचेत्, शोचिष्यति । (शुच्यते)
शुध् (शुद्ध होना ४ प०) शुध्यति, शुध्यतु, अशुध्यत्, शुध्येत्, शोत्स्यति । (शुध्यते)
शुभ् (अच्छा लगना १ आ०) शोभते, शोभताम् अशोभत, शोभेत, शोभिष्यते (शुभ्यते)
शुष् (सूखना ४ प०) शुष्यति, शुष्यतु, अशुष्यत्, शुष्येत्, शोक्ष्यति । (शुष्यते)
शॄ (नष्ट होना ६ प०) शृणाति, शृणातु, अशृणात्, शृणीयात्, शरिष्यति । (शीर्यते)
श्रि (आश्रय लेना १ उ०) श्रयति-ते, श्रयतु, अश्रयत्, श्रयेत्, श्रयिष्यति (श्रीयते)
श्रु (सुनना १ प०) शृणोति, शृणोतु, अशृणोत्, शृणुयात्, श्रोष्यति । (श्रूयते)
श्लिष् (आलिंगन करना ४ प०) श्लिष्यति, श्लिष्यतु, अश्लिष्यत्, श्लिष्येत्, श्लेषिष्यति । (श्लिष्यते)
श्वस् (सांस लेना २ प०) श्वसिति, श्वसितु,अश्वसीत्,श्वस्यात् श्वसिष्यति ।(श्वस्यते)
सद् (बैठना १ प०) सीदति, सीदतु, असीदत्, सीदेत्, सत्स्यति । (सद्यते)
सह् (सहना १ आ०) सहते, सहताम्, असहत, सहेत, सहिष्यते । (सह्यते)
सान्त्व् (धैर्य बँधाना १० उ०) सान्त्वयति, सान्त्वयतु, असान्त्वयत्, सान्त्वयेत्, सान्त्वयिष्यति । (सान्त्व्यते)
सिच् (सींचना ६ उ०) सिंचति-ते, सिंचतु, असिंचत्, सिंचेत्, सेक्ष्यति । (सिच्यते)
सिव् (सीना ४ प०) सीव्यति, सीव्यतु, असीव्यत्, सीव्येत्, सेविष्यति । (सीव्यते)
सु (निचोड़ना ५ उ०) प०—सुनोति, सुनोतु, असुनोत्, सुनुयात्, सोष्यति ।
आ०—सुनुते, सूनुताम्, असुनुत, सुन्वीत, सोष्यते । (सूयते)
सृ (चलना १ प०) सरति, सरतु, असरत्, सरेत्, सरिष्यति । (स्रियते)
सृज् (बनाना ६ प०) सृजति, सृजतु, असृजत्, सृजेत्, स्रक्ष्यति । (सृज्यते)
सेव् (सेवा करना १ आ०) सेवते, सेवताम्, असेवत, सेवेत, सेविष्यते । (सेव्यते)
सो (नष्ट होना ४ प०) स्यति, स्यतु, अस्यत्, स्येत्, सास्यति । (सीयते)

स्तु (स्तुति करना २ उ०) स्तौति, स्तौतु, अस्तौत्, स्तुयात्, स्तोष्यति। (स्तूयते)
स्था (रुकना १ प०) तिष्ठति, तिष्ठतु, अतिष्ठत्, तिष्ठेत्, स्थास्यति। (स्थीयते)
स्ना (नहाना २ प०) स्नाति, स्नातु, अस्नात्, स्नायात्, स्नास्यति। (स्नायते)
स्निह् (स्नेह करना ४ प०) स्निह्यति, स्निह्यतु, अस्निह्यत्, स्निह्येत्, स्नेहिष्यति। (स्निह्यते)
स्पन्द् (हिलना १ आ०) स्पन्दते, स्पन्दताम्, अस्पन्दत, स्पन्देत, स्पन्दिष्यते। (स्पन्द्यते)
स्पर्ध् (स्पर्धा करना १ आ०) स्पर्धते, स्पर्धताम्, अस्पर्धत, स्पर्धिष्यते। (स्पर्ध्यते)
स्पृश् (छूना ६प०) स्पृशति, स्पृशतु, अस्पृशत्, स्पृशेत्, स्पर्क्ष्यति। (स्पृश्यते)
स्पृह् (चाहना १० उ०) स्पृहयति, स्पृहयतु, अस्पृहयत् स्पृहयेत्, स्पृहयिष्यति। (स्पृह्यते)
स्मृ (याद करना १ प०) स्मरति, स्मरतु, अस्मरत्, स्मरेत्, स्मरिष्यति। (स्मर्यते)
स्रंस् (गिरना १ आ०) स्रंसते, स्रंसताम्, अस्रंसत, स्रंसेत, स्रंसिष्यते। (स्रस्यते)
स्वद् (स्वादलेना १० उ०) आ+स्वादयति, आस्वादयतु, आस्वादयत्, आस्वादयेत्, आस्वादयिष्यति। (आस्वाद्यते)
स्वप् (सोना २ प०) स्वपिति, स्वपितु, अस्वपत्, स्वप्यात् स्वप्स्यति। (सुप्यते)
हन् (मारना २प०) हन्ति, हन्तु, अहन्, हन्यात् हनिष्यति। (हन्यते)
हस् (हँसना १ प०) हसति, हसतु, अहसत्, हसेत् हसिष्यति। (हस्यते)
हा (छोड़ना ३ प०) जहाति, जहातु, अजहात्, जह्यात्, हास्यति। (हीयते)
हु (यज्ञ करना ३ प०) जुहोति, जुहोतु, अजुहोत्, जुहुयात्, होष्यति। (हूयते)
हृ (लेजाना, चुराना १ उ०) प०–हरति, हरतु, अहरत्, हरेत्, हरिष्यति। आ०–हरते, हरताम्, अहरत, हरेत, हरिष्यते। (ह्रियते)
हृष् (प्रसन्न होना ४ प०) हृष्यति, हृष्यतु, अहृष्यत्, हृष्येत्, हर्षिष्यति। (हृष्यते)
ह्रेष् (हिन हिनाना १आ०) ह्रेषते, ह्रेषताम्, अह्रेषत, ह्रेषेत, ह्रेषिष्यते। (ह्रेष्यते)
ह्लाद् (आनन्दित होना १ आ०) ह्लादते, ह्लादताम्, अह्लादत, ह्लादिष्यते। (ह्लाद्यते)
ह्वे (पुकारना १ उ०) आह्वयति, आह्वयतु, आह्वयत्, आह्वयेत्, आह्वयिष्यति। (आहूयते)



54
55
6
115